भाग 1

शेख अबुल फज़ल कृत

अकबरनामा

अनुवादक : डॉ. मथुरालाल शर्मा

अकबरनामा में दो हजार से अधिक पृष्ठ है। इसका अधिकांश भाग अकबर की स्तुति है या भोज, आनन्द, प्रमोद या सेना संचालनों का वर्णन है, जो ऐतिहासिक दृष्टि से उपयोगी नहीं है। इसकी मूल भाषा फारसी जटिल और आडम्बरपूर्ण है। इसके विद्वान अंग्रेजी अनुवादक बिवरिज ने लिखा है कि यदि कोई लेखक परिश्रम करके इसके व्यर्थ स्थलों को निकालकर और ऐतिहासिक स्थलों को ज्यों के त्यों रखकर संक्षेप कर दे तो इतिहास की बड़ी सेवा हो। लेखक डॉ. मथुरा लाल शर्मा ने इसी लक्ष्य को दृष्टि में रखकर अबुल फजल के अकबर नामें की तीन जिल्दों की दो जिल्द बना दी है जिसमें 707 पृष्ठ है। अकबर के समय की महत्वपूर्ण घटना कोई नहीं छोड़ी गई है और यथा-संभव अबुल फजल के शब्दों में ही उनका वर्णन है, परन्तु भाषा की जटिलता निकालकर सरलता कर दी गई है।

यत्र-तत्र मूल लेखक के चाटुतापूर्ण उल्लेखों का भी समावेश कर दिया गया है जिससे पाठकों को उसकी मनोवृति का अनुमान हो सकेगा। अकबर के समय के इतिहास को जानने के लिये अकबरनामा सर्वाधिक प्रमाणित ग्रन्थ है।
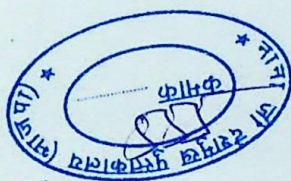
शेख अबुल फजल कृत

अकबरनामा

भाग — 1

अनुवादक और संक्षेपक
डॉ० मथुरालाल शर्मा
एम.ए., डी.लिट
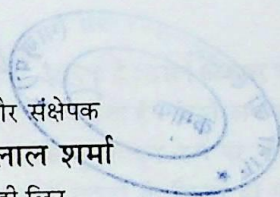
प्रकाशक

राधा पब्लिकेशन

नई दिल्ली-110002
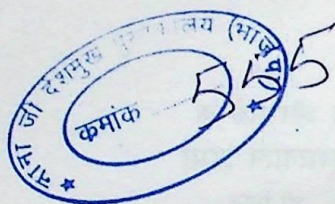
भूमिका

अकबरनामा का लेखक अबुल फजल अपनी विद्वत्ता के कारण प्रायः समस्त मध्यकालीन मुस्लिम जगत् में प्रसिद्ध था। उसको अनेक विषयों का ज्ञान था और फारसी भाषा पर उसका बड़ा अधिकार था। उसका पिता शेख मुबारक राजस्थान के नागौर नगर का निवासी था और सूफी सम्प्रदाय का अनुयायी था। अबुल फजल भी अपने पिता की भांति उदार सूफी था। उसका छोटा भाई फैजी भी फारसी भाषा का अच्छा लेखक और कवि था। अबुल फजल की गणना अकबर के नौ रत्नों में थी। वह खुसरू का अध्यापक था और 2500 का मनसवदार था। वह अकबर का घनिष्ठ मित्र था।

अबुल फजल का जन्म जनवरी, 1550 में हुआ था और उसकी मृत्यु 1602 में हुई थी। अकबर तीन वर्ष और जीवित रहा। इस समय का वृत्तान्त इनाय-तुल्ला ने लिखकर अकबरनामा पूरा किया था।

अबुल फजल की भाषा जटिल और आडम्बरपूर्ण है। उसने अकबर की ऐसी अत्यधिक प्रशंसा की है जिसको लज्जाजनक चाटुता कहा जा सकता है। उसने अकबर के प्रत्येक कार्य को उचित और आवश्यक बतलाया है और उसके क्रूरातिक्रूर कर्म पर भी औचित्य का पर्दा डालने का प्रयास किया है। अकबरनामा के तीनों खण्डों के कितने ही पृष्ठ चाटुता से भरे हुए हैं। अबुल फजल अकबर की कृपा से ही इतने ऊँचे पदपर पहुँचा था। इसलिये यह चाटुता अस्वाभाविक तो नहीं थी, परन्तु इसका इतिहास से कोई सम्बन्ध नहीं है। इस चाटुता का एक संक्षिप्त-सा उदाहरण निम्नलिखित है :

''अकबर की आंख सूर्य के समान है। उसका हृदय सत्यान्वेषण के लिये गुणों की वेधशाला है। उसके ध्येय शुद्ध हैं। उसकी बुद्धि पूर्ण है। वह प्रतिभा सम्पन्न है। उसमें अपार क्षमाशीलता है। उसका हृदय शुद्ध है। उस पर सांसारिकता का कोई धब्बा नहीं है। इतने असंख्य गुण न जाने कैसे एक व्यक्ति में एकत्र हो गये हैं। मेरी भाषा में इतनी शक्ति नहीं है कि उसकी पर्याप्त प्रशंसा कर सकूं। उसके गुणों का ज्ञान केवल फरिश्तों को ही है।''

अबुल फजल अकबर को ही खलीफा मानता था। उसका खयाल था कि अकबर सर्वगुण सम्पन्न था और ईश्वर में लीन रहता था और उसके समय में कोई मुस्लिम दरवेश या फकीर उसके समान पहुँचा हुआ भगवद्-भक्त नहीं था।

अकबरनामा में अकबर की स्तुति के अतिरिक्त अनेक विषयन्तर हैं। अभियानों के साथ जाने वाले उच्च राजकर्मचारियों की लम्बी-लम्बी सूचियों हैं और कितनी ही दैनिक तुच्छ घटनाओं का वृत्तान्त है। अतः अकबरनामा के विद्वान् अंग्रेजी अनुवादक एच बैवेरिज ने ठीक लिखा है कि—

''मैं चाहूँगा कि कोई व्यक्ति इस पुस्तक को संक्षिप्त करे। इसमें से जन्म पत्रिकाएं और अकबर के वास्तविक या कल्पित पूर्वजों का वृत्तान्त, ज्योतिष और धूम्रकेतुओं का वर्णन तथा विषयान्तर निकाल दिये जायें और बड़ी-बड़ी नामावलियां भी छोड़ दी जायें तथा शब्दाडम्बर को हटाकर भाषा सरल कर दी जाये।''

इस अनुवाद में उपरोक्त सुझावों को मानकर तीनों खण्डों को संक्षेप किया गया है परन्तु महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना कोई नहीं छोड़ी गई है। अकबर के समय की मुख्य घटनायें अविकल रहने दी हैं। मूल और अंग्रेजी अनुवाद का शब्दानुवाद नहीं, भावानुवाद किया गया है और भाषा को यथासंभव सरल बनाया गया है।

मथुरा लाल शर्मा

अनुक्रमाणिका

भाग 1

प्रकरण 1 से 63 पृष्ठ 1 से 129

भाग 2

प्रकरण 1 से 79 पृष्ठ 131 से 345

***

भाग 1

(अकबर के पूर्वजों का वृत्तान्त, बाबर और हुआयूं का इतिहास, अकबर का जन्म, उसकी धायें, उसके अध्यापक)

प्रकरण 1 से 8

जन्म एवं जन्म-कुण्डली

इसमें लेखक ने बतलाया है कि कई बड़े-बड़े विद्वानों ने और महिलाओं ने भविष्यवाणी की थी कि एक महापुरुष का जन्म होने वाला है। मरियम मकानी के ललाट पर उसके भाई को एक अद्भुत प्रकाश दिखाई दिया था। इसी प्रकार की कहानी मिर्जा अजीज, कोकलतास की माता ने कही थी।

अकबर का जन्म 19 इसफन्दरमिज (यजदर्जिद) को हुआ था, यह रविवार 5 रजब हिजरा का दिन था। उस दिन विक्रम संवत 1599 के कार्तिक मास की छठ थी। जन्मस्थल अमरकोट का दुर्ग था, उस समय शाही सेना ठट्ठा देश को दबाने के लिए कूच कर चुकी थी और बेगम मरियम मकानी को दुर्ग में ही रहने दिया था, क्योंकि प्रसव समय निकट था।

जन्म होते ही सन्देशवाहक (घुड़सवार और ऊँट सवार) बादशाह को सूचना देने के लिए भेजे गये। उस समय हुमायूं का शिविर 16 मील दूर था। समाचार मिलने पर बादशाह ने पृथ्वी पर मस्तक टिका कर ईश्वर को प्रणाम किया और फिर दरबारी डेरे में प्रवेश किया। हुमायूं स्वयं गणित-शास्त्र का अच्छा ज्ञाता था। उसने स्वयं अकबर की जन्मकुण्डली बनाई और फिर अन्य ज्योतिषियों द्वारा बनाई हुई जन्मकुण्डलियों से निजनिर्मित कुण्डली का मिलान किया तो देखा कि वे परस्पर मिलती हैं।

जब जन्मोत्सव हो चुका तो नवजात पुत्र का नाम अकबर रखा गया।

प्रकरण—2, 3, 4, 5 में अकबर की जन्मकुण्डलियों का मुस्लिम यूनानी और भारतीय-ज्योतिष के अनुसार फलादेश दिया गया है।

प्रकरण—6, 7, 8 में भी यही विषय है।

***

प्रकरण 9

जीजी अनगा

अकबर का जन्म होते ही धार्मिक और आदरणीया धायों ने उसको अपना दूध पिलाया। शमसुद्दीन मुहम्मद गजनवी की पत्नी को धाय नियुक्त किया गया और उसे जीजी अनगा की उपाधि दी गई। शमसुद्दीन मुहम्मद गजनवी ने हुमायूं (जहांबानी जन्नत आशिआनी) की कन्नौज में अच्छी सेवा की थी।[1] अकबर के जनम से पहले ही हुमायूं ने शमसुद्दीन को आशा दिलाई थी कि उसकी पत्नी को नये बच्चे की धाय नियुक्त किया जायेगा।

इसके अनुसार मरियम मकानी कदसी अरकानी (शुद्धता की स्तम्भ) ने शुभ मुहूर्त पर पुत्ररत्न को उसकी आशापूर्ण गोद में रखा परन्तु यह धाय अभी गर्भवती थी और अभी उसका प्रसव समय नहीं आया था। इसलिए बेगम ने आदेश दिया कि धाय भावल बच्चे को कुछ समय तक दूध पिलाये। प्रारम्भ में अकबर ने अपनी मां का ही दूध पिया। फिर नदीम कोका की पत्नी फखरे निशा को यह सम्मान प्राप्त हुआ। इसके उपरान्त भावल अनगा को धाय बनाया गया, फिर ख्वाजा गाजी की पत्नी को इस पद पर नियुक्त किया गया; इसके पश्चात् हकीमा की इस कार्य के लिए नियुक्ति हुई। इन धायों के पश्चात् जीजी अनगा को स्थायी आनन्द प्राप्त हुआ। उसके बाद तोग बेगी की पत्नी कोकी अनगा और उसके बाद बीबी रूपा[2] को अवसर प्राप्त हुआ। इसके बाद सादत-यार कोका[3] की माता खालदार अनगा को धाय बनाया गया। अन्त में जैन खां कोका की माता पीजाजान अनगा धाय बनी। इनके अतिरिक्त कई अन्य स्त्रियों को धाय बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अकबर जन्म लेते ही मुस्करा दिया था। इसको शकुन शास्त्रियों ने भावी आशा, शान्ति और सौभाग्य का चिन्ह समझा था।

(अकबर की धायों की नामों की सूची में माहम अनगा का नाम नहीं है। यह सम्भव है कि उसको बाद में धाय माना गया हो) माहम अनगा शायद धायों की निरीक्षिका होगी और स्वयं धाय नहीं होगी। अकबर ने उसका दूध नहीं पिया था। उसने जीजी अनगा का दूध पिया था। अकबरनामा के दूसरे खण्ड में लिखा हुआ है कि माहम अनगा ने बचपन से ही अकबर की सेवा की थी। परन्तु उसके कोई ऐसा पुत्र नहीं था जो अकबर का समवयस्क हो उसका पुत्र आदम खां अकबर से कई वर्ष बड़ा था।

***

1. शमसुद्दीन ने हुमायूं को गंगा नदी के ढालू तट पर चढ़ने में सहायता दी थी। शेरशाह से हारने के बाद हुमायूं ने हाथी पर नदी पार की थी। (ब्लोच मैन 321)
2. यह हिन्दुस्तानी और सम्भवतः हिन्दू होगी।
3. अकबरनामा के तीसरे खंड में यह नाम 3 बार आया है। इसके भाई की लड़की का विवाह अकबर ने अबुल फजल के पुत्र अब्दुर रहमान से करवाया था। सादतयार खां की मृत्यु अत्यधिक मद्यपान से हुई थी। अकबर सादत की बहिन हाजी कोका के मकान पर शोक प्रकट करने गया था।

प्रकरण 10 से 15

शिशु अकबर प्रशंसा, मुग़ल पूर्वज बेगम आलन कुआ

हुमायूं पुत्र को देखने के लिए लालायित था। इसलिए उसने आदेश दिया कि उसको बेगम मरियम मकानी के साथ शिविर [1] में लाया जावे। मरियम मकानी को लिवा लाने के लिए ख्वाजा मौज्जम नदीम कुकलताश और शमसुद्दीन गजनवी को भेजा गया। अतः ग्यारह शाबान को अपने पुत्र के साथ मरियम मकानी पालकी [2] में अमर कोट से रवाना हुई। जब अकबर की पालकी दो मंजिल की दूरी पर आ पहुँची तो आदेश दिया गया कि उसके स्वागत के लिए प्रधान अधिकारी राज्य के स्तम्भ और जनता के छोटे और बड़े लोग जावें जब पालकी एक मंजिल दूर रह गई तो हुमायूं ने कहा था कि यह बालक बड़ा सौभाग्यशाली है क्योंकि ज्यों-ज्यों वह निकट आता जाता है त्यों-त्यों ऊपर आकाश में दर्शक लोग एकत्रित हो रहे हैं। अकबर से हुमायूं के पैर छुवाये गये, हुमायूं ने प्रेमपूर्वक उसको गोद में लिया और उसका चुम्बन किया, फिर हुमायूं ने ईश्वर को धन्यवाद दिया।

अकबर के मुख पर बुद्धि के चिन्ह थे, आध्यात्मिकता प्रकट हो रही थी, न्यायप्रियता झलक रही थी। उसके स्वभाव में लोक हितैषिता थी। उसकी दृष्टि में गहन रहस्य था और बड़े उच्च विचार थे।

फिर कुशल लोगों ने बधाई की ऐसी कवितायें लिखीं जिनसे अकबर के जन्म की तारीख निकलती थी। इनमें मौलाना नूरुद्दीन तरखान की कविता की हुमायूं ने प्रशंसा की।

इस प्रकरण में लेखक अबुल-फजल ने अकबर को धन्यवाद दिया और अकबर की सेवा करने का अवसर मिला, उसको अपना सौभाग्य माना है।

इस प्रकरण में अबुल-फजल ने आदम से अमीर तुरागाई तक अकबर के 45 पूर्वजों की सूची लिखी है। इनमें कितने की नाम काल्पनिक हैं। 46 वां नाम अमीर तीमूर का है, जो अकबर का ऐतिहासिक पूर्वज था। उसके पश्चात् 47-48-49-50-51 और 52 वें पूर्वज मीरान शाह, सुल्तान मुहम्मद मिर्जा, सुल्तान अबू सईद मिर्जा और उमर शेख मिर्जा है। ये अकबर के ज्ञात पूर्वज हैं। उमर शेख मिर्जा के बाद बाबर, बाबर के बाद हुमायूं और हुमायूं के बाद अकबर हुआ।

इसके पश्चात् अबुल फजल ने जैनियों के मतानुसार अतीतकाल का संक्षिप्त-सा वर्णन करके फिर चारों युगों का वर्णन किया है।

इसमें आदम और उसके वंशजों का वर्णन है जो ऐतिहासिक नहीं है।

---

1. निजामुद्दीन ने लिखा है कि हुमायूं ने नवजात अकबर का परगना जून में देखा था।
2. तख्त-ए-रवां।

इसमें पहिले बेगम आलन कुआ का वर्णन है। जो कियात जाति के जूना बहादुर की पुत्री थी। इसका विवाह मुगलिस्तान के बादशाह जूनू नियान से हुआ था। अपने पति के मर जाने के बाद वहीं राज्य करने लग गई थी। इसके तीन पुत्र हुए और उनसे मुगल जाति बनी।

***

प्रकरण 16

अमीर तीमूर गुर्गान

तीमूर का पिता, अमीर तरगाई था। उसकी मृत्यु 1361 ईसवी में हुई थी। उसके चार पुत्र और दो पुत्रियां थीं। चार पुत्रों के नाम साहिब करानी (अमीर तीमूर) आलम शेख, सियुरुगतमश, अउर जूकी थे। लड़कियों के नाम, कतलग तर्खान आगा और सीरी बेगी आगा थे।

जब तीमूर 34 वर्ष का हुआ तो उसने विश्व विजय का आरम्भ किया (1370) और अगले 36 वर्ष में उसने ट्रान्स ओविजयाना ख्वारिज्म, तुर्किस्तान, खुरासान, दोनों ईराक, अजर बेजान, ईरान, माजिन्दरान, किरमान, दियार बक्र, खुजिस्तान, इजिप्ट सीरिया और लघु ऐशिया आदि जीत लिये। इस्पहान के लोगों ने विद्रोह किया तो उनका उसने संहार करवा दिया। उसने फारस की राजधानी सिराज पर आक्रमण किया तो वहाँ के राजवंश ने उसकी सेवा करना शुरू कर दिया। फिर उसने दशतकिपचाक पर दो बार हमला किया और उसको जीत लिया। उसके बाद तीमूर ने बगदाद और जोरजिया पर विजय प्राप्त की। 23 सितम्बर, 1398 को उसने पुल बनाकर सिन्धु नदी को पार किया और हिन्दुस्तान पर विजय प्राप्त की। अक्टूबर, 1400 ईसवी में उसने सीरिया के विरुद्ध प्रयाण किया। वहाँ उसे विजय मिली, उसी समय उसने अलीप्पो और दमशकश को जीता और सीरिया के शासकों को कारागार में डाल दिया। अगले वर्ष रूस को जीत कर 20 जुलाई, 1402 में अंगोरा पर चढ़ाई की और इलदेरिम बायाजीद को बन्दी बनाया। फिर तीमूर ने अजरबेजान पर प्रयाण किया और वहाँ 18 मास तक निवास किया। वहाँ कितने ही सुल्तानों ने आकर अधीनता प्रकट की। इजिप्ट के शासक ने तीमूर के नाम का सिक्का चलाया, दूसरे शासकों ने भी उसकी अधीनता मानी। मक्का मदीना और अन्य पवित्र स्थानों पर उसके नाम का खुत्बा पढ़ा गया। फिर एक ही दिन में फिरोजाकूह पर विजय प्राप्त करके (मई, 1404) उसने खुरासान पर आक्रमण किया। 9 या 10 जुलाई, 1404 को वह ट्रान्स ओविजयाना पहुँचा जो उसका स्वदेश था और वहाँ उसने ऐसा भोज दिया जिससे संसार चकित हो गया।

इसके पश्चात् उसने चीन पर प्रयाण किया।

18 फरवरी, 1405 को समरकन्द के उतरार नामक गांव में उसकी मृत्यु हो गई। उसके शव को समरकन्द में दफनाया गया।

तीमूर के चार पुत्र थे : (1) गयासुद्दीन जहांगीर मिर्जा, (2) मिर्जा उमर शेख, (3) जलालुद्दीन मीरानशाह मिर्जा, (4) मिर्जा शाहरूख।

जलालुद्दीन मीरानशाह मिर्जा, अकबर का छठा पूर्वज था। उसका जन्म 769 हिज्री में हुआ था। अपने पिता के समय में वह ईराक अजरबेजान दियारबकर और सीरिया पर राज्य करता था। तीमूर की मृत्यु के बाद मीरानशाह तबरीज में रहने लगा और उसने सारा राजकाज अपने पुत्र अबाबकर के सुपुर्द कर दिया। 21 अप्रैल, 1408 ईसवी को तबरेज के पास जलालुद्दीन मीरानशाह एक लड़ाई में मारा गया। उसके आठ पुत्र थे, जिनमें अबाबकर सबसे बड़ा था और सुल्तान मुहम्मद मिर्जा सातवां था। जलालुद्दीन के बाद सुल्तान मुहम्मद मिर्जा उसकी गद्दी पर बैठा। इसके दो पुत्र थे, सुल्तान अबू सईद मिर्जा और मनुचिहर मिर्जा। सुल्तान मुहम्मद की मृत्यु के बाद अबू सईद मिर्जा उसकी गद्दी पर बैठा। इसका जन्म 1427 ईसवी में हुआ था और गद्दी पर बैठा उस समय वह 25 वर्ष का था। उसने 18 वर्ष तक तुर्किस्तान, ट्रान्स ओविजयाना, बदखशां, काबुल, गजनी, कन्धार और हिन्दुस्तान की सीमा पर राज्य किया। उसकी मृत्यु से पहिले ईराक पर भी उसका कब्जा हो गया था।

उमर शेख मिर्जा

यह अबू सईद मिर्जा का चतुर्थ पुत्र था। अबू सईद के दस पुत्र थे। उमर शेख का जन्म 1455 में हुआ था। इसको अबू सईद मिर्जा ने कुछ समय के लिये काबुल का शासक बना दिया था परन्तु फिर वापस बुला लिया था और फिर अन्दीजान और तख्ती-ए-ओझन्द का शासन उसके सुपुर्द कर दिया था। अन्दीजान मंगोलिया की सीमा पर स्थित था। उमर शेख ने ऐसी व्यवस्था की कि उधर से कोई शत्रु उसके राज्य में नहीं आ सका। उमर शेख नपे-तुले शब्द बोलता था। उसको कवियों की संगति पसन्द थी वह स्वयं भी कविता करता था। वह शाहनामा सुना करता था। प्रशासनिक योग्यता में उस समय उसके बराबर कोई नहीं था। वह धार्मिक लोगों की संगति में रहा करता था। अपने पिता के बाद उसने अन्दीजान में राज्य किया। यह फरमाना और ताशकन्द की राजधानी थी। उसने शाहरूखिया और सीराम पर भी कब्जा कर लिया था। उसने समरकन्द पर कई बार चढाई की थी। इसमें उसने युनूस खां से सहायता ली थी। युनूस खां सहायता करके वापिस मुगलिस्तान चला जाता था।

उमर शेख के अन्तिम दिनों में युनूस खां का ज्येष्ठ पुत्र महमूद खां मुगलों का शासक था। महमूद खां, उमर शेख के भाई अहमद मिर्जा से मिल गया था। अहमद मिर्जा समरकन्द का शासक था। इन दोनों ने मिलकर मिर्जा उमर शेख पर चढ़ाई की। अहमद मिर्जा खजन्द नदी के दक्षिण से और महमूद खां उसके उत्तर से कूच करने लगा। उसी समय एक असाधारण घटना घटी जिसका वर्णन निम्नलिखित है—

फरगाना में सात कस्बे हैं जिनमें एक अख्सीकात या अख्सी है। उमर शेख ने इसको अपनी राजधानी बना लिया था। यह कस्बा एक ढालू पहाड़ी पर स्थित था। 9 जून, 1494

को उमर शेख अपने कबूतरखाने के पास बैठा हुआ था तो पहाड़ी टूटने लगी। खबर मिलते ही मिर्जा उठा परन्तु वह एक ही जूता पहन पाया था कि सारी पहाड़ी गिर पड़ी। उस समय वह 39 वर्ष का था।

फरगाना के पर्व में कासगर, पश्चिम में समरकन्द, दक्षिण में पर्वत और बदखशां की सीमा और उत्तर में कुछ नहीं है। समरकन्द की ओर भी पर्वत है। इस देश में घुसने के लिये इधर से ही मार्ग है। सीहून नदी उत्तर-पूर्व से निकल कर पश्चिम की ओर जाती है और तुर्किस्तान में पहुंच कर रेत में समाप्त हो जाती है। इस देश के सात कस्बों में से 5 सीहून नदी के दक्षिण में और 2 उसके उत्तर में हैं। दक्षिण के कस्बों के नाम अन्दीजान उश, मरगीनान असफरा और खजन्द है। उत्तर के कस्बे अख्सी और कासान हैं।

उमर शेख के तीन पुत्र और पाँच पुत्रियाँ थीं। ज्येष्ठ पुत्र फिर-दोस मकानी जहीरुद्दीन मुहम्मद बाबर बादशाह था। जहांगीर मिर्जा दूसरा पुत्र था और बाबर से 2 वर्ष छोटा था। तीसरा पुत्र नासिर मिर्जा था, जो जहांगीर से 2 वर्ष छोटा था। इन तीनों की मातायें जुदी-जुदी थीं। सबसे बड़ी पुत्री खान जादा बेगम थी, जो बाबर की सगी बहिन थी। दूसरी पुत्री मिहरबानू बेगम थी, जो नासिर मिर्जा की सगी बहिन थी। इससे छोटी यादगार सुल्तान बेगम थी। इससे भी छोटी रजिया सुल्तान बेगम थी। इन तीनों की मातायें अलग-अलग थीं। उमर शेख की मृत्यु के बाद दो पुत्रियां और उत्पन्न हुई थीं।

***

प्रकरण 17

स्वर्गीय जहीरुद्दीन मुहम्मद बाबर बादशाह गाजी

बाबर का शुभ जन्म 6 मुहर्रम 888 हिर्जी (14 फरवरी, 1483) को कुतलक निगार खानम के गर्भ से हुआ था। जो यूनुसखां की द्वितीय पुत्री थी और सुल्तान महमूद खां की बड़ी बहिन थी। इसके पूर्वजों का क्रम इस प्रकार था : यूनुस खां, शेरअली, ओगलान मुहम्मद खां, खिजर ख्वाजा खाँ, तुगलक तीमूर खां, इसान उगा खां, दबा खां, बराक खां, ईसून तबा, मुत्ताकन, चगताई खां, चंगेज खां।

मौलाना हिसामी कराकुली ने बाबर को जन्मतिथि पर एक शेर लिखा था जिससे 888 हिर्जी निकलती है। शस-ए-मुहर्रम से भी उसके जन्म की तारीख निकलती है। शस हरफ और अदद-ए-खेर से भी 888 बनता है। इसमें इकाई दहाई, और सैकड़े सब में आठ आठ है। ख्वाजा अहरार ने उसका नाम जहीरुद्दीन मुहम्मद रखा था, परन्तु तुर्क लोग इस शब्द का उच्चारण आसानी से नहीं कर सकते थे इसलिए उसका नाम बाबर भी रखा गया।

बाबर उमर शेख मिर्जा के पुत्रों में सबसे बड़ा था। अपनी आयु के 12 वें वर्ष में

मंगलवार 5 रमजान 899 (10 जून, 1494) को वह अन्दीजान में गद्दी पर बैठा। कुछ ही शासकों को उसके समान विपत्तियों का सामना करना पड़ा होगा। रणक्षेत्र में और खतरों में उसने अमानवीय साहस, आत्मविश्वास और धैर्य प्रकट किया था। जब अखशी में उमर शेख की मृत्यु हो गई तो बाबर अन्दीजान के चारबाग में था। अगले दिन मंगलवार 5 रमजान को यह खबर अन्दीजान पहुंची तो पल भर में ही घोड़े पर सवार होकर वह अन्दीजान के दुर्ग के लिए रवाना हो गया। जब वह द्वार पर घोड़े से उतरा तो शीरम तगाई उसके घोड़े की लगाम पकड़कर उसको नमाजगाह में ले गया। वह बाबर को पहाड़ियों के नीचे ओज कन्द में ले जाना चाहता था। उसका ख्याल था कि अहमद मिर्जा बड़ी सेना सहित आ रहा है इसलिए धोखेबाज अधिकारी लोग देश को उसके सुपुर्द कर देंगे। यदि स्वामीद्रोह करके वे ऐसा करेंगे तो बाबर इस प्रकार इस खतरे से बचकर अपने मामा इलजा-खां या सुल्तान महमूद खां के पास चला जायेगा। जब अधिकारियों को इस विचार का पता लगा तो उन्होंने तगाई की इन चिन्ताओं को हटाने के लिए ख्वाजा मुहम्मद दर्जी को भेजा। जब ख्वाजा मुहम्मद पहुंचा तो बाबर नमाजगाह तक पहुँच गया था। ख्वाजा ने बाबर को शान्त किया और वापिस आने के लिए प्रेरित किया। जब बाबर अन्दीजान के दुर्ग पर घोड़े से उतरा तो सब अधिकारियों ने उसकी सेवा में आकर उसकी कृपा प्राप्त की। यह पहले लिखा जा चुका है कि सुल्तान अहमद और सुल्तान महमूद खां मिलकर उमरशेख मिर्जा के विरुद्ध आ रहे थे। अब भाग्य को अनिवार्य विधान हो चुका था। इसलिए छोटे और बड़े सब दुर्ग की रक्षा के लिए एक हो गये। सुल्तान अहमद मिर्जा, उरातिप्पा, खजन्द और मर्गीनान पर जो फरगाना के जिले हैं अधिकार कर चुका था और अन्दीजान से 4 कोस की दूरी पर आ पहुंचा था। यद्यपि उसके पास राजदूत भेजे गये और शान्ति का द्वार खटखटाया गया परन्तु उसने कुछ नहीं सुना और वह प्रयाण करता रहा। परन्तु बाबर के कुटुम्ब की ईश्वर ने रक्षा की। दुर्ग बड़ा दृढ़ था, अधिकारी सब एक हो गये थे। सुल्तान अहमद मिर्जा के शिविर में बीमारी फैल गई थी। उसके कितने ही घोड़े मर गये थे। इसलिये सुल्तान अहमद की विपत्तियां बढ़ गईं और उसको निराशा हो गई। इसलिये उसने सन्धि कर ली और वह वापिस लौट गया। खजन्द, नदी के उत्तर की ओर से सुल्तान महमूद खां ने आकर अकशी को घेर लिया। बाबर का भाई जहांगीर मिर्जा और बहुत से स्वामिभक्त अधिकारी वहाँ विद्यमान थे। खान ने कई हमले किये। अधिकारियों ने जोरदार सामना किया। खान ने भी जोर से लड़ाई की परन्तु वह अपना उद्देश्य पूरा नहीं कर सका और बीमार हो जाने के कारण प्रयास छोड़ कर उसको स्वदेश लौट जाना पड़ा। फिर 11 वर्ष तक बाबर ने ट्रान्स-ओग्जियाना में चगताई शासकों और उजबेगों से युद्ध किये। उसने समरकन्द को 3 बार जीता। एक बार 903 हिर्जी (नवम्बर, 1497) में। जब वह अन्दीजान से आ रहा था तो उसने सुल्तान महमूद मिर्जा के पुत्र बायसंगर मिर्जा से इसको छीना। दूसरी बार 906 हिर्जी (1500 ई०) में शैबानी खां से जीता और तीसरी बारी शैबानी खां को 917 हिर्जी (अक्टूबर, 1511 ई०) में मारकर इस नगर को जीता। ईश्वर की इच्छा थी कि बाबर के लिये हिन्दुस्तान का दरवाजा खुले और वह देश उसको प्राप्त हो जावे। इसलिये बाबर के देश में अनेक विपत्तियां उत्पन्न कर दी गईं और उसको छोटी-सी सेना के साथ बदखशां और काबुल की ओर प्रयाण करना पड़ा। जब वह

बदखशां पहुंचा तो वहाँ के शासक खुसरुशाह के सब लोगों ने उसकी सेवा करना स्वीकार किया और खुसरुशाह ने भी विवश होकर ऐसी ही किया। उसने बायसंगर का वध करवा दिया था और सुल्तान मसूद मिर्जा की आंखें फुड़वा दी थीं। ये दोनों शाहजादे बाबर के चचेरे भाई थे। जब बाबर की सेना बदखशां में होकर जा रही थी तो इस खुसरु ने बड़ी निर्दयता और अमानवता की थी।

बाबर ने खुसरु के प्रति उदारता का बर्ताव किया और आदेश दिया कि वह अपने साथ जितनी सम्पत्ति ले जा सके, लेकर खुरासान चला जावे। तो वह 5-6 खच्चर और ऊँट सोने और जवाहरात से लादकर खुरासान से चला गया, फिर बदखशां की व्यवस्था करके बाबर काबुल लौट गया।

उस समय जूनून अरगून के पुत्र मुहम्मद मुकीम ने अब्दुल रज्जाक मिर्जा से काबुल छीन लिया था। अब्दुल रज्जाक मिर्जा, अबू सईद मिर्जा का प्रपौत्र था। जब उसने सुना कि बाबर की सेना आ रही है तो उसने लड़ने की तैयारी की थी परन्तु कुछ दिन पश्चात् उसने सन्धि के लिये प्रार्थना की और उसको ईजाजत दे दी गई कि वह अपनी सम्पत्ति के साथ अपने भाई शाहबेग के पास कन्धार चला जावे। रबी उल अव्वल 910 हिर्जी के अन्त में (अक्टूबर, 1504 के आरम्भ में) काबुल बाबर के सेवकों के हाथ में आ गया। तब 911 हिर्जी में बाबर ने कन्धार की ओर प्रयाण किया और किलात जो कन्धार के अधीन था, जीत लिया। फिर राजनीति के विचार से उसने कन्धार पर विजय प्राप्त करने का विचार त्याग दिया और दक्षिण की ओर प्रयाण किया। वहाँ सवासंग और अलाताग नामक अफगान जातियों पर आक्रमण करके वह काबुल वापिस लौट गया।

इस वर्ष के आरम्भ में काबुल और उसके समीपस्थ स्थानों में बड़ा भूकम्प आया। दुर्ग की प्राचीर और अन्दर की कई ईमारतें तथा नगर के कितने ही मकान गिर गये। पेमघान नामक गांव के मकान सारे गिर गये। एक दिन में भूकम्प के 33 धक्के लगे और फिर एक मास तक प्रतिदिन दो-तीन धक्के लगते रहे। अनेक लोगों की मृत्यु हो गई। पेमघान और बकतुब के बीच में एक भूमिखण्ड, जिसकी चौड़ाई एक पत्थर फेंका जा सके उतनी थी, अलग हो गया और एक बाण की मार की लम्बाई के बराबर अन्दर धँस गया। इसमें से पानी के चश्मे निकल पड़े। स्थिरघात से मैदान तक जो छ: परसंग की दूरी है भूमि इतनी हिल गई है कि कहीं-कहीं वह हाथी के बराबर ऊंची हो गई। जब भूकम्प शुरू हुआ तो पर्वतों के शखरों से धुयें के बादल उठने लगे। उसी वर्ष भारतवर्ष में भी भूकम्प आया था।[1]

इस समय एक घटना यह हुई कि शेबक (शेबानी) खां ने सेना एकत्र करके खुरासान की ओर प्रयाण किया। सुल्तान हुसैन मिर्जा ने अपने पुत्रों को एकत्र करके उसका सामना करने के लिये कूच किया। उसने सईद अफजल को बाबर के पास भेजकर निवेदन करवाया कि वह भी सहायता करे। अत: मुहर्रम 912 हिर्जी (मई, 1506) के अन्त में उसने खुरासान

---

1. एयर स्कीन ने लिखा है कि 5 जुलाई, 1505 में आगरे में भूकम्प आया था। इलियट ने इसकी तारीख 6 जुलाई लिखी है।

की ओर प्रयाण किया। जब वह काहमद पहुंचा तो उसको खबर मिली कि सुल्तान हुसैन मिर्जा की मृत्यु हो चुकी है। फिर भी बाबर ने प्रयाण करते रहना आवश्यक समझा। राजनीतिज्ञों के अनुमान से यह ठीक नहीं था, तो भी वह खुरासान की ओर प्रयाण करता रहा। उसके खुरासान पहुंचने से पहिले ही अदूरदर्शी लोगों ने मिर्जा के पुत्रों (बदी उज् जमान और मुजफ्फर हुसैन) को गद्दी पर बिठा दिया था।

सोमवार 8 जुमादल आखिर को बाबर इन दोनों मिर्जाओं से मुर्गाब में मिला और उनकी प्रार्थना पर वह हैरात पहुंचा परन्तु उसने देखा कि उनमें शासन करने की क्षमता नहीं है। इसलिये 8 शाबान (24 दिसम्बर, 1506) को उसने वापिस काबुल की ओर प्रयाण शुरू कर दिया। जब वह हजारा की पहाड़ियों में पहुंचा तो उसको खबर मिली कि मुहम्मद हुसैनमिर्जा दगलात और सुल्तान संजर बरलास ने उन तमाम मुगलों को जो काबुल में थे अपनी ओर मिलाकर खान मिर्जा को सरदार बना लिया है और काबुल को घेर लिया है, उन्होंने लोगों में यह बात फैला दी थी कि सुल्तान हुसैन मिर्जा के पुत्र बाबर के साथ विश्वासघात करने का विचार कर रहे हैं। मुल्ला बाबाई बसागरी, अमीर मुहिब्ब अली खलीफा, अमीर मुहम्मद कासिम कोहबर, अहमद युसूफ और अहमद कासिम के सुपुर्द काबुल की रक्षा करने का काम किया गया था। वे दुर्ग की रक्षा कर रहे थे। यह खबर सुनते ही बाबर ने सारा सामान जहांगीर मिर्जा के जो उस समय बीमार था सुपुर्द कर दिया और थोड़े-से आदमियों को साथ लेकर उसने हिन्दू कोह को पार किया। यह उस समय हिम से ढका हुआ था इसलिए बाबर को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा। फिर एक दिन प्रातःकाल वह काबुल आ पहुंचा। उसके आने की खबर सुनते ही सारे विद्रोही छिप गये। सर्वप्रथम वह अपनी सौतेली नानी के पास गया। उसका नाम शाह बेगम था। उसने ही खान मिर्जा को आगे किया था। बाबर ने अपने घुटने टिका कर उससे बात की कि वह उसकी मानसिक स्थिति को जानता था। तथापि उसने नम्रता से बात की और कहा—"यदि माता एक बच्चे से विशेष प्रेम करती है तो दूसरे बच्चे को इससे दुःख नहीं होना चाहिये। माता के अधिकार की कोई सीमा नहीं है। मैं बड़ी दूर से आया हूं।" यह कह कर बाबर ने उसकी गोद में सिर रख दिया और सो गया। उसको पूरी नींद नहीं आई थी कि उसकी चाची मिहर निगार खानुम आई तो बाबर ने उठ कर उसको प्रणाम किया। फिर लोग मुहम्मद हुसैन मिर्जा को पकड़ कर बाबर के पास लाये तो बाबर ने उसको खुरासान जाने की ईजाजत दे दी। तत्पश्चात् मिहर निगार खानुम खान मिर्जा को ले आई और बोली "मैं तुम्हारे अपराधी भाई को ले आई हूं। तुम्हारी क्या मर्जी है?" बाबर ने उसको बगलगीर किया और उससे कृपापूर्वक बात की और फिर उसी पर छोड़ दिया कि वह चाहे तो जाए या ठहरे। खान मिर्जा इतना लज्जित था कि उसको ठहरने का साहस नहीं हुआ। वह बिदा होकर कन्धार चला गया।

दूसरे वर्ष बाबर ने कन्धार पर प्रयाण किया और जूनन अरगून के पुत्र शाह बेग और उसके छोटे भाई मुहम्मद मुकीम से लड़ाई लड़ी। खान ने वहाँ अच्छी सेवा की। बाबर ने कन्धार जहांगीर मिर्जा के छोटे भाई नासिर मिर्जा को दे दिया और फिर वह काबुल लौट आया। उसने शाह बेगम और खान मिर्जा को बदखशां जाने की ईजाजत दे दी। फिर खान

मिर्जा ने जबीर रागी को मार कर बदखशां पर अपना राज्य जमा लिया परन्तु वह बाबर के प्रति स्वामिभक्त बना रहा।

916 हिज्री (दिसम्बर, 1510) में आवश्यक खबर आई कि शेबानी खां मारा जा चुका है और बाबर के लिए उधर की ओर कूच करना उचित है। अतः शव्वाल मास में बाबर ने प्रयाण किया और उजबेगों से बड़ी-बड़ी लड़ाईयां लड़ीं जिनमें वह विजयी हुआ, और उसने 917 हिज्री (1511) में समरकन्द पर तीसरी बार अपना कब्जा कर लिया और वहाँ 8 मास तक शासन किया। परन्तु सफर 918 (अप्रैल, 1512) को उबयदुल्ला खां के साथ कुलमलिक में उसकी बड़ी लड़ाई हुई। इसमें हार कर वहाँ हिसार की ओर चला गया।

दूसरे अवसर पर उसने गजदीवान के दुर्ग के नीचे उजबेगों से लड़ाई लड़ी, जिसमें उसका साथी नजमबेग मारा गया। फिर वह काबुल की ओर रवाना हो गया। अब बाबर ने हिन्दुस्तान पर विजय प्राप्त करने के लिए प्रयाण किया। उसने उधर की ओर चार बार कूच किया और चारों बार परिस्थितिवश वह वापिस लौट गया। प्रथम प्रयाण साबान 910 हिज्री (जनवरी 1505) में किया और वह बादाम चश्मा [1] और जगदलिक तक पहुँच गया। फिर खैबर की घाटी को पार करके वह जमरूद में ठहरा। अपने हाथ से लिखी हुई वाकियात-ए-बाबरी में बाबर ने लिखा है कि छः मंजिल के बाद वह काबुल से अदीनापुर [2] पहुंचा। बाबर ने गर्मसीर या हिन्दुस्तान पहले कभी नहीं देखा था। वह लिखता है कि 'यहाँ पहुंचने पर मैंने एक नया संसार देखा। वहाँ के घास, वृक्ष, जंगली पशु-पक्षी और लोगों के तरीके और ही प्रकार के थे। मुझे बड़ा अचम्भा हुआ और अचम्भा होना भी चाहिए था।' इस स्थान पर नासिर मिर्जा गजनी से बाबर को सलाम करने के लिये आया। बाबर जमरुद पर ठहरा और अपने साथियों से उसने सिन्धु (नीलाब) को पार करने के विषय में सलाह की। परन्तु बाकी चगनायनानी के लोभ के कारण सिन्धु नदी को पार करना स्थगित रखा गया और बाबर ने कोहाट पर कूच किया। फिर सेना ईसाखेल पहुंची और तरबिला के समीप ठहरी। यह मुलतान के प्रदेश में सिन्धु नदी पर स्थित एक गांव है। फिर नदी के नीचे की ओर कई मंजिल तक कूच किया गया और डूकी की सीमा तक पहुँच कर कुछ दिन बाद गजनी पहुँचा। जिलहज्जा मास (मई, 1505) में वह वापिस काबुल लौट गया।

दूसरी बार हिन्दुस्तान की विजय के लिए बाबर की सेना ने जमादल अव्वल 913 हिज्री (सितम्बर, 1507) में खुर्द काबुल के मार्ग से प्रयाण किया। सेना ने मन्दरौर से अतर और सिवे के मार्ग द्वारा प्रयाण किया परन्तु अधिकारियों के मतभेद के कारण वह वापिस लौट गई। उन्होंने कूनेर और नूरगिल के पास नदी पार की थी। कूनेर से बाबर एक बेड़े (तंगड़) पर रवाना हुआ और अपने शिविर में पहुंचा और फिर बादीज के मार्ग से वह काबुल आया। बाबर के आदेश से नदी पार करने की तारीख बादीज के ऊपर की ओर एक पत्थर पर खुदवा दी गई। यह आश्चर्यजनक शिलालेख अब भी विद्यमान है। अब तक तो बाबर

1. बादाम चश्मा एक घाटी है जो काबुल नदी के दक्षिण में स्थित है।
2. अब यह जलालाबाद कहलाता है।

के बन्धु-बान्धव मिर्जा कहलाते थे। बाबर ने आदेश दिया कि इस शिलालेख में उसको पादशाह लिखा जावे।

मंगलवार चार जिल्कदा (6 मार्च, 1508 ई०) को काबुल के दुर्ग में स्वर्गीय हुमायूं का जन्म हुआ। इसका वृत्तान्त आगे लिखा जावेगा।

तीसरी बार जब सोमवार एक मोहर्रम 924 हिज्री (तीन जनवरी, 1519 ई०) को सेना बाजौर पर प्रयाण कर रही थी तो एक बड़ा भूचाल आया जो आधे घण्टे तक होता रहा। सुल्तान देस सिवादी की ओर से स्वात निवासी सुल्तान अल्लाउद्दीन सिवादी राजदूत के रूप में आया। थोड़े-से समय में ही बाजौर का दुर्ग जीत कर ख्वाजा किलान बेग को दे दिया गया। यह मौलाना मुहम्मद सदर का पुत्र था। जो मिर्जा उमर शेख के समय में एक बड़ा अधिकारी था। इस ख्वाजा की बाबर से रिश्तेदारी थी इसके 6 भाईयों ने उसकी सेवा करते हुए अपने प्राण न्यौछावर कर दिये थे। अपनी बुद्धि और दूरदर्शिता के कारण यह ख्वाजा बाबर का कृपापात्र था। जब बाबर स्वात पर चढ़ाई करने का और युसुफ जाई लोगों पर विजय प्राप्त करने का विचार कर रहा था तो शाह मंसूर का छोटा भाई तोस खां, जो युसुफ जाई जाति का सरदार था, शाह मंसूर की पुत्री को लेकर आया और बड़ी दीनतापूर्वक उसने बात की [1] जंगली पशुओं के इस प्रदेश में अन्न प्राप्ति की बड़ी कठिनता थी। बाबर का दृढ़ निश्चय था कि हिन्दुस्तान पर अभियान किया जावे। इसलिये वह सिवाद (स्वात) से लौट गया यद्यपि भारत पर अभियान करने की तैयारियाँ नहीं की गई थीं और अधिकारी लोग इस पक्ष में नहीं थे तथापि उसने साहस करके भारत पर प्रयाण कर दिया। वृहस्पतिवार 16 मोहर्रम को उसके घोड़ों, ऊंटों और सामान ने सिन्धु नदी पर की। उसका शिविर तंगड़ों पर पार किया गया। फिर कचा कोट में डेरे लगे।

भीड़ा से सात कोस उत्तर की ओर एक पर्वत है जिसका नाम जफरनामा में और अन्य पुस्तकों में जूद की पहाड़ी है। वहाँ पर डेरे लगाये गये। बाबर ने अपनी आत्म जीवनी में लिखा है 'पहिले तो मैं नहीं जानता था कि इस नाम की उत्पत्ति कैसे हुई परन्तु फिर ज्ञात हुआ कि इस पर्वत में दो मानव-जातियां रहती हैं। जो एक ही पिता की सन्तानें हैं। एक जाति जूध और दूसरी जैन्जुहे कहलाती है।' बाबर ने अब्दुर रहीम सवावल को भीड़ा भेज कर लोगों को सन्तोष दिलाया और किसी को उन पर अत्याचार नहीं करने दिया। सायंकाल वह भीड़ा के पूर्व की ओर झेलम नदी के तट पर ठहरा। उसने भीड़ा पर 4 लाख शाहरुख [2] का दण्ड लगाया। इसके देने पर ही वह नगर सुरक्षित रह सकता था। यह प्रदेश हिन्दू बेग को दे दिया गया। इसकी आय से उसका निर्वाह होना था। खुशाब का परगना शाह हसन के सुपुर्द कर दिया और उसे आदेश दिया कि हिन्दु बेग की सहायता करें। फिर बाबर ने मुल्ला मुर्शी को राजदूत बना कर सुल्तान सिकन्दर लोदी के पुत्र सुल्तान इब्राहीम लोदी के पास भेजा। सुल्तान इब्राहीम 5-6 वर्ष पहिले ही हिन्दुस्तान की सल्तनत में अपने पिता का

---

1. इस लड़की से बाबर ने विवाह कर लिया। उसका नाम बीबी मुबारक था। बाबरनामा में उसका नाम बीबी मचरिकाह लिखा है।
2. एक शाह रुख 10 पेन्स के बराबर था। इसलिये दंड की मात्रा 20000 पौंड थी।

उत्तराधिकारी बना था। मुल्ला मुर्शी को इसलिये भेजा था कि वह उचित सलाह दे। इस राजदूत को मूर्खतावश लाहौर के गवर्नर दौलतखां ने रोक लिया और फिर वापिस भेज दिया। इसलिये वह अपना दूत-कार्य पूरा नहीं कर सका। शुक्रवार दो रबी-उल-अव्वल (4 मार्च, 1519) को दूसरे पुत्र के जन्म का समाचार आया। उस समय हिन्दुस्तान के विरुद्ध प्रयाण हो रहा था। इसलिये उसका नाम हिन्दाल रक्खा (रखा) गया। सोमवार 5 रबी-उल-अव्वल को भीड़ा का प्रशासन हिन्दु बेग के सुपुर्द करके राज्य-कार्य-वश बाबर काबुल की ओर वापिस लौटने लगा। रबी-उल-अव्वल के अन्तिम दिन जब वृहस्पतिवार था और 31 मार्च थी तो वह काबुल पहुंचा 25 रबी-उल-आखिर (25 अप्रैल) हिन्दु बेग जो प्रमादवश भीड़ा से रवाना हो गया था काबुल आया।

चौथे आक्रमण की तारीख अभी ज्ञात नहीं हुई है परन्तु ऐसा प्रकट होता है कि लाहौर को ले लेने के बाद बाबर वापिस लौट गया और दीपालपुर पर कब्जा करने की तारीख से भी जो आगे चलकर बतलाई जावेगी। ऐसा जान पड़ता है कि यह आक्रमण 930 हिज्री (1524 ई०) बाद में हुआ था (प्रत्यक्ष में तो इसका कारण अधिकारियों की सुस्ती और उसके भाईयों का असहयोग था। अन्त में पांचवी बार ईश्वर के निर्देश से और भाग्य की प्रेरणा से शुक्रवार एक सफर 932 हिज्री (17 नवम्बर, 1525 ई०) को अकबर की सेना ने प्रयाण किया और उसने भारत विजय के लिये घोड़े पर सवारी की। कन्धार और काबुल मिर्जा कामरान के सुपुर्द किये गये। जब यह अभियान हुआ तो एक विजय के बाद दूसरी विजय होती गई। लाहौर और भारत के अन्य बड़े-बड़े नगर जीत लिये गये फिर 17 सफर (3 दिसम्बर) को बदखशां से अपनी सेना के साथ नासिरुद्दीन मुहम्मद हुमायूं शिविर में आ पहुंचा। जो उस समय बाग-ए बफा [1] में था। ख्वाजा किलांबेग भी गजनी से इसी समय आया था।

एक रबी-उल-अव्वल (16 दिसम्बर) को कचकोट के सपीप बाबर ने सिन्धु नदी को पार करके अपनी सेना की गणना की। उसमें बारह हजार घुड़सवार, तुर्क ताजिक सौदागर आदि थे। फिर उन्होंने बिहत (झेलम) नदी को जिलूम (झेलम) के ऊपर की ओर पार किया। बुहलुलपुर के समोप उन्होंने चिनाव नदी को पार करके डेरे लगाये।

शुक्रवार 14 रबी-उल-अव्वल (29 दिसम्बर) को शियाल कोट में डेरे लगा कर बाबर ने योजना बनाई कि वहाँ की बस्ती को बुहलुलपुर भेज दिया जावे। उसी समय खबर आई कि शत्रु एकत्रित हो रहा है। जब बाबर कालानूर पहुंचा तो मुहम्मद सुल्तान मिर्जा, आदिल सुल्तान और अन्य अधिकारी लोग जिनको लाहौर की रक्षा करने के लिये नियुक्त किया गया था, आये और उन्होंने बादशाह को सलाम किया।

शनिवार 22 रबी उल अव्वल को मिलवत का दुर्ग छीन लिया गया। बहुत-सी लूट हाथ लगी। वहाँ गाजी खां की पुस्तकें थीं। उन पर कब्जा कर लिया गया। इनमें से कुछ पुस्तकें हुमायूं को दे दी गईं और कुछ कामरान को भेंट स्वरूप कन्धार भेज दी गईं। यह सूचना मिली कि हिसार फिरोजा का फौजदार हामिद खां 2-3 मंजिल आगे बढ़ आया है

1. यह बाग बाबर ने 1508 में बनवाया था और काबुल नदी के दक्षिण में अदीनापुर के सामने जलालाबाद से दक्षिण में लगभग 1 मील की दूरी पर स्थित था।

तो रविवार 13 जुमादल अव्वल को अम्बाला से सेना रवाना हुई और एक तालाब की पाल पर ठहरी। हामिद खां के विरुद्ध हुमायूं को भेजा गया था उसके साथ अमीर ख्वाजा किलाबेग आदि 9 अफसर थे। हुमायूं को आसानी से विजय प्राप्त हो गई।

इसी मास की 21 तारीख़ को हुमायूं डेरों में वापिस लौट आया। पादशाह ने हिसार फिरोजा और उसके अधीन इलाके जो एक करोड़ दाम के थे, जागीर में दिये और इस विजय के लिये एक करोड़ दाम नकद दिये। इसके बाद इसी प्रकार की अगणित विजय प्राप्त हुई। सेना का प्रयाण जारी रहा। बार-बार यह खबर आती थी कि सुल्तान ईब्राहीम एक लाख सवारों और एक हजार हाथियों सहित आगे बढ़ता आ रहा है। उस समय सेना सिरसावा (सिरसा) में थी। यहाँ पर ख्वाजा किलाबेग का सेवक हैदर कुली जो जानकारी प्राप्त करने के लिये आगे भेजा गया था, खबर लाया कि दाऊद खां और हेतिम खां 5 या 6 हजार सवारों के साथ सुल्तान ईब्राहीम के शिविर से आगे बढ़ आये हैं, इसलिये रविवार 18 जुमादल आखिर (1 अप्रैल) को चीन-तीमूर-सुल्तान आदि को सेना के साथ इस सेना के विरुद्ध रवाना किया गया। इन वीरों ने शीघ्रता से रणभूमि में पहुंच कर बहुत-से शत्रुओं को तलवारों और तीरों से मार डाला। हेतिम खां को 70 अन्य लोगों के साथ बन्दी बनाकर डेरे में लाया गया, जहाँ उनको प्राण-दण्ड दिया गया। फिर आदेश हुआ कि पहियेदार गाड़ियां एकत्रित की जावें। उस्ताद अली कुली को आदेश हुआ कि रूमी विधि से उनको जंजीरों से और चमड़े के रस्सों से परस्पर बांध दे। प्रति दो गाड़ियों के बीच छः या सात तुरा रखे गये। जिससे उनके पीछे सुरक्षित रहकर बन्दूकची अपनी बन्दूकें चला सकें। कुछ दिनों में ही व्यवस्था पूरी हो गई।

अन्त में बृहस्पतिवार जुमादल आदिर की अन्तिम तारीख (12 अप्रैल) को पानीपत में विजय प्राप्त हुई। सारी सेना का उत्तम विधि से व्यूह बनाया गया। दायीं ओर का पक्ष नगर और उसके पास के गांव पर था। गाड़ियां और तुरा मध्य भाग के सामने खड़े किये गये थे। बायीं ओर के पक्ष की वृक्षों और खाईयों से रक्षा की गई। सुल्तान ईब्राहीम अपनी विशाल सेना सहित नगर से 6 कोस के अन्तर पर खड़ा था। एक सप्ताह तक बाबर की सेना के नवयुवक और अनुभवी सैनिक शत्रु के शिविर के किनारों और उसकी टुकड़ियों से प्रतिदिन झड़पें किया करते थे और हमेशा विजयी होते थे। अन्त में शुक्रवार 8 रजब (20 अप्रैल) को सुल्तान इब्राहीम ने अपनी विशाल सेना और हाथियों की पंक्ति के साथ बाबर के विरुद्ध प्रयाण किया।

बाबर ने भी अपनी सेना निम्नलिखित विधि से जमाई—

बाबर और सुल्तान इब्राहीम के बीच लड़ाई और व्यूह का वर्णन

सेना के मध्य भाग में बाबर था। मध्य भाग के दायीं ओर (अंक गुल) तीमूर सुल्तान, सुलेमान मिर्जा आदि खड़े किये गये, मध्य भाग के बायीं ओर (सूलउल) अमीर खलीफा, ख्वाजा मीर मीरान सदर आदि नियुक्त किय गये। दायां पार्श्व हुमायूं की अध्यक्षता में था। उसके साथ अमीर ख्वाजा कलांबेग आदि पांच बड़े-बड़े सरदार थे। बायें पार्श्व पर मुहम्मद

सुल्तान मिर्जा आदि 9 बड़े-बड़े सरदार और अन्य वीर नियुक्त किये गये थे। अग्र भाग में खुसरू कोकलताश और मुहम्मद अली जंग-जंग थे। अमीर अब्दुल अजीज को सुरक्षित सेना का अध्यक्ष नियुक्त किया गया था। दायें पार्श्व के बाहर की ओर वली का-जिल आदि तीन अफसर मुगलों के साथ तुलगामा में नियुक्त किये गये थे। बायें पार्श्व के बाहर की ओर इसी प्रकार कराकूजी आदि पांच बड़े अफसर भी तुलगामा के लिये नियुक्त हुए थे।

अन्त में शत्रु की हार हुई। सुल्तान इब्राहीम मारा गया, वह एक कोने में पड़ा हुआ था। उसको कोई पहचानता नहीं था। अगणित अफगान तलवार के शिकार हो गये। सुल्तान इब्राहिम के शरीर के निकट 5 या 6 हजार मृतकों का ढेर लगा हुआ था जब युद्ध आरम्भ हुआ तो सूर्य एक भाले के बराबर क्षितिज से ऊपर आया था। दोपहर के समय विजय प्राप्त हो गई।

जब सुल्तान महमूद गजनवी हिन्दुस्तान आया तो खुरासान उसके अधीन था। समरकन्द दारुलमर्ज और ख्वारिज्म के शासक, उसके नीचे थे और उसके पास एक लाख सेना थी। भारत भी एक राजा के अधीन नहीं था। राजा और राय जहां तहां राज करते थे और उनमें परस्पर मेल नहीं था। सुल्तान शिहाबुद्दीन गोरी 1,20,000 सवारों सहित भारत विजय के लिये आया था। उस समय भी इस विशाल देश का एक राजा नहीं था। यद्यपि उसका भाई गयासुद्दीन खुरासान पर शासन कर रहा था परन्तु वह उसके प्रभाव के बाहर नहीं था। भारत की विजय के समय तीमूर ने समाना के मैदान में अपनी सेना की गणना करवाई थी। मौलाना सरफुद्दीन अली यजदी लिखता है कि (जफरनामा, दूसरा भाग, पृष्ठ 83) सेना लम्बाई में 6 फरसख तक फैली हुई थी। सेना विशेषज्ञों का कहना है कि एक फरसख में 12,000 सवार होते हैं। इस हिसाब से सेना में 72,000 सवार थे। नौकरों के नौकर दो कोस तक जमे हुए थे। तीमूर के विरोधी मल्लू खां के साथ 10,000 सवार और 120 हाथी थे। तथापि तीमूर के बहुत से सैनिक भयभीत हो गये। तीमूर ने स्वयं अपने सैनिकों की घबराहट सुनी और उन्हें शान्त करने के लिये उसने अपनी सेना के सामने वृक्षों की शाखाओं की आड़ बनाई। उसके सामने एक खाई खुदवाई और उसके पीछे बैल और भैंसे एक दूसरे के सामने खड़े किये और उनकी गर्दनें और पैर चमड़ों के रस्से से बांध दिये गये। इसके अतिरिक्त लोहे के त्रिकोण कांटे बनवाये गये जो प्यादों को दे दिये गये और उनसे कहा गया कि जब लड़ाई शुरू हो और हाथी आगे बढ़ें तो इन कांटों को उनके पैरों में फेंका जाये। बाबर भारत का चतुर्थ विजेता था, इस युद्ध में उसके साथ 12,000 सैनिकों से अधिक नहीं थे। इससे भी अधिक आश्चर्य की बात यह थी कि उसका राज बदखंशा कन्धार और काबूल पर ही था और इन देशों से उसकी सेनाओं को कोई सहायता नहीं मिली थी। आय की अपेक्षा उसका खर्च अधिक था। फिर यह युद्ध सुल्तान इब्राहीम के साथ हुआ था। जिसके पास एक लाख सवार और एक हजार हाथी थे और भीड़ा से बिहार तक उसका राज्य था। वहाँ उसका सामना करने वाला कोई नहीं था। विजय प्राप्ति पर बाबर ने ईश्वर को धन्यवाद दिया और समस्त मनुष्य जाति के लिये भेंटों की घोषणा की और अपने सेवकों को सब देशों और प्रदेशों में भेजा।

परन्तु हिन्दुस्तान को जीतने वालों की अपेक्षा अकबर की विजय जो उसने सरहिन्द

में प्राप्त की थी बढ़कर है। आगे चलकर वर्णन किया जायेगा कि 3,000 आदमियों के द्वारा उसने सिकन्दर सूर से जिसके पास 80,000 आदमी थे भारत वर्ष कैसे छुड़ा लिया। इससे भी अधिक भाग्य का चमत्कार यह है कि अकबर ने ईश्वर की सहायता से भारत को थोड़े से आदमियों के द्वारा अनेक विद्रोही सरदारों से बचा लिया।

विजय दिवस पर पादशाह बाबर ने अमीर ख्वाजा कलांबेग आदि 6 बड़े-बड़े सरदारों और अन्य लोगों को सेना सहित आगरा भेजा जो सुल्तान ईब्राहीम की राजधानी थी और आदेश दिया कि वहाँ के कोष पर कब्जा कर लिया जाये। उन्होंने नगर निवासियों को आश्वस्त किया और उनके साथ न्याय किया। सईद महन्दी ख्वाजा आदि पांच बड़े अधिकारियों को दिल्ली भेजा और आदिश दिया कि वहाँ के कोष की और गुप्त भण्डारों की रक्षा करें तथा प्रजा को सूचित करें कि पादशाह उन पर कृपा करेगा। उसी दिन विजय घोषणा लिखी गई और ऊंट सवारों के द्वारा काबुल बदखंशा और कन्धार भेजी गई। पादशाह स्वयम् बुद्धवार 12 रजब (25 अप्रैल, 1526) को दिल्ली पहुंचा। शुक्रवार 21 रजब (4 मई) को उसने आगरा पहुंच कर वहाँ के अन्धकार को दूर किया।

हिन्दुस्तान में प्रत्येक छोटे और बड़े को बाबर की कृपा प्राप्त हुई। सुल्तान इब्राहीम की माता बच्चों और आश्रितों के लिये विशेष निर्वाह वृत्तियां नियत की गईं। इब्राहीम की माता के लिये सात लाख टंक की सम्पत्ति दी गई। उसके अन्य रिश्तेदारों को भी इसी प्रकार वृत्तियाँ दी गईं। हुमायूं ने बाबर को एक हीरा भेंट किया जिसका वचन 8 मिस्काल था जौहरियों ने इसका मूल्य समस्त संसार के आधे दिन के खर्च के बराबर बतलाया था। लोग कहते थे कि यह ग्वालियर के राजा विक्रमाजीत से प्राप्त हुआ था। बाबर ने पहिले तो यह हीरा ले लिया और फिर हुमायूं को ही लौटा दिया।[1]

शनिवार 29 रजब को बाबर ने राजकोष और भंडारों को जिनमें कितने ही शासकों का संग्रह था देखना और बांटना शुरू किया। उसने हुमायूं को 70 लाख सिकन्दरी टंक दिये। और एक ऐसा कोष प्रदान किया जिसका कोई हिसाब नहीं था। अमीरों को उनके पदानुसार 5 से 10 लाख टंक प्रदान किये। प्रत्येक सैनिक सेवक को उसकी स्थिति से अधिक भेंट दी गई। छोटे और बड़े सब विद्वानों को भेंटे देकर प्रसन्न किया गया। उर्दू बाजार में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं था जो इस सौभाग्य के भाग से वंचित रहा हो। बदखंशा काबुल और कन्धार के शाही घरानों के लोगों को भी भेंटे प्राप्त हुईं। कामरान मिर्जा को 17 लाख टंक, मुहम्मद जमान को 15 लाख टंक और इसी प्रकार उसकरी मिर्जा, हिन्दाल मिर्जा और अन्तःपुर की समस्त महिलाओं को, खिलाफत के सब प्रकाशमान सितारों को और उन अधिकारियों और सेवकों को जो अनुपस्थित थे अपने अपने पद के अनुसार रत्न, स्वर्ण और चांदी के सिक्के मिले। समरकन्द, खुरासान, काशगर और ईराक में निवास करने वाले सब आश्रितों को मूल्यवान भेंटें भेजी गई। खुरासान, समरकन्द आदि के मजारों और कब्रों के लिये भी भेंटें

1. आठ मिस्काल 320 रत्ती के बराबर होता है। शायद यही हीरा औरंगजेब ने खेर नियर को बतलाया था और इसका मूल्य 8 लाख 88 हजार पाउंड आंका गया था। यह कोहेनूर हीरा था। हुमायूं ने यह शाह तहमास्प को दिया था। उसने अहमद नगर के सुल्तान को भेज दिया था।

रवाना की गईं। यह आदेश दिया गया कि काबुल, सद्दरा, वरस्क, खुस्क, (खुस्त) और बदखंशा के प्रत्येक स्त्री और पुरुष को एक शाहरुखी भेजा जाये।

इस विजय और उदारता में एक दोष था। वह यह था कि भारत वर्ष के लोगों को अन्य लोगों के समान नहीं समझा गया।

भारत के सैनिकों और कृषकों ने आक्रमणकारियों से कोई सम्पर्क नहीं किया। यद्यपि दिल्ली और आगरे पर अधिकार हो चुका था तथापि ईलाके विरोधियों के हाथ में थे। सम्बल (रोहिल खण्ड) कासिम सम्बली के हाथ में था। बयाना दुर्ग निजाम खां के कब्जे में था। हसन खां मेवाती मेवात में जमा हुआ था। उसने विद्रोह का झण्डा ऊंचा कर रखा था। मुहम्मद जेतून धौलपुर में विद्रोह के लिये तैयार था। ग्वालियर तातार खां सारंगखानी के हाथ में था। हुसेन खां लोहानी रापरी को दबाये हुए था। कुतुब खां के पास ईटावा और आलम खां के पास काल्पी था। सुल्तान ईब्राहीम के मरगूब नामक दास ने महावन (मथुरा) पर कब्जा कर रखा था। कन्नौज और गंगापार के दूसरे नगर अफगानों के अधीन थे। इनके नेता नासिर खां लोहानी और मारूफ फरमूली थे। जो सुल्तान ईब्राहीम का मुकाबला किया करते थे। उसकी मृत्यु के बाद इन्होंने कई और भी ईलाकों पर कब्जा कर लिया था और कुछ मंजिल आगे बढ़कर दरियाखां के पुत्र बहारखां को सुल्तान मुहम्मद के नाम से शासक बना दिया था।

इस वर्ष जब बाबर आगरे में टिका हुआ था तो बड़ी ही गर्म हवायें चल रही थीं। शिविर में निराशा छा रही थी। इसके अतिरिक्त एक बुरी बीमारी फैल गई थी। बहुत से सैनिक भाग गये थे। मार्ग दुष्कर थे, व्यापारियों के आने में विलम्ब हो गया था इसलिये अन्न संकट उपस्थित हो गया था। लोगों की दशा बहुत बुरी थी। बहुत से अधिकारियों ने हिन्दुस्तान छोड़कर काबुल जाने का निश्चय कर दिया था। यद्यपि बहुत से पुराने अफसरों ने और अनुभवी सैनिकों ने पादशाह की विद्यमानता में अनुचित भाषा का प्रयोग किया और गुप्तरूप से भी उसकी बुराई की तथापि पादशाह ने इसकी उपेक्षा करके देश पर प्रशासन जमाने का काम शुरू कर दिया। इस अवसर पर अहमद पखांची और वली खाजिन का वर्ताव अच्छा नहीं था। ख्वाजा कलांबेग का व्यवहार और भी आश्चर्यजनक था। सारे रणक्षेत्रों में और विशेषकर भारत के अभियान के समय उसने सदैव विरोचित बातें की थीं परन्तु अब उसके विचार बदल गये थे और प्रत्यक्ष या गुप्तरूप से वह हिन्दुस्तान को छोड़कर चले जाने की राय देने में सबसे आगे था। अन्त में बाबर ने अपने अधिकारियों को बुलाया और उन्होंने बतलाया कि उनकी कल्पनायें और आशंकायें झूठी हैं। उसने अपना दृढ़ निश्चय घोषित करके कहा हमने इस देश पर श्रम और कठिनता से विजय प्राप्त की है। थोड़ी-सी थकान और प्रतिकूलता के कारण इसको छोड़ जाना न तो विश्व विजेताओं के अनुरूप है और न बुद्धिमान पुरुषों के अनुसार है। सुख और दुःख साथ-साथ जुड़े हुए हैं। अब हमारे सब श्रमों और कष्टों का अन्त आ गया है। अतः निश्चित ही शनैः-शनैः विश्राम और शान्ति के दिन आवेंगे। आप लोगों को चाहिये कि ईश्वर पर दृढ़ विश्वास रखे और ऐसे व्यर्थ शब्द न बोले जिनसे फूट हो जाये। जो व्यक्ति काबुल जाना चाहता है और अपना निकम्मापन प्रकट करना चाहता है, वह चला जाये कोई बात नहीं है। परन्तु हमने ईश्वर पर भरोसा करके साहस पूर्वक भारत

में रहने का ईरादा कर लिया है। अन्त में अफसरों ने विचार और मनन करके कहा कि पादशाह का कहना ठीक है और उसका शब्द सर्वोत्तम शब्द है। वे दिल और जान से पादशाह के अधीन हो गये और उन्होंने भारत में रहने का निश्चय कर लिया। ख्वाजा कंला को काबुल जाने की अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक उत्सुकता थी इसलिये उसको ईजाजत दे दी गई और शाहजादों और अन्य लोगों की भेटें उसके साथ भेज दी गईं। गजनी गरदेज और सुल्तान-मसूदी हजारचा उसको जागीर में दे दिये गये। हिन्दुस्तान में उसको गुराम का [1] परगना जागार में दे दिया गया।

ख्वाजा को वापिस लौट जाने की ईजाजत 28 अगस्त को मिल गई। बाबर ने आगरा को अपना निवास बना लिया। फिर हिन्दुस्तान के बहुत से अफसरों ने और शासकों ने उसकी सेवा करना शुरू कर दिया। इसमें शेख गुराम था। जो अपने साथ 3,000 आदमी लेकर आया। इन सब को अपनी स्थिति से अधिक कृपा प्राप्त हुई।

फिरोज खां शेख बायजीद, महमूद खां लोहानी, काजी जिया आदि ने बाबर की सेवा आरम्भ कर दी। फिरोज खां को जौनपुर में एक करोड़ टंक की जागीर प्रदान की गई। शेख बायजीद को अवध में इतनी ही बड़ी जागीर मिली। महमूद खां को गाजीपुर में 90 लाख टंक की जागीर दी गई। काजी जिया को जौनपुर में 20 लाख टंक की जागीर प्रदान की गई। थोड़े अर्से ने ऐसी शान्ति और सुख स्थापित हो गये जो स्थाई शासन में हुआ करते हैं। फिर शव्वाल की ईद के पश्चात् सुल्तान इब्राहीम के महल में आगरा नगर में एक बहुत बड़ा उत्सव मनाया गया और लोगों को राजकोष से भेंटे दी गईं। सम्बल जहांबानी को जागीर में दिया गया। सरकार हिसार फिरोजा इसको पहिले ही वीरता के उपलक्ष में दिया जा चुका था अमीर हिन्दू बेग को उस जिले में इसका नायब नियुक्त किया गया, सम्बल के दुर्ग को बीबन ने घेर रखा था इसलिये जहांबानी, किताबवेग आदि अमीरों को शीघ्र ही वहां भेजा गया। बीबन उनसे लड़ा परन्तु हार गया। इसके पश्चात् उसका भाग्य कभी नहीं जागा।

***

प्रकरण 18

बाबर का अपने सरदारों से परामर्श और हुमायूं का पूर्व की ओर अभियान

बाबर विजय प्राप्त करके आगरा नगर में जो राज्य की राजधानी थी, स्थिर हो चुका था। अब वर्षा ऋतु समाप्त हो गई थी और अभियान का समय आ गया था। बाबर ने अपने

1. गुराम पटियाला जिले में घघर नदी के तट पर अम्बाला से 24 मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है।

मंत्रियों स परामर्श किया कि पहिले पूर्व की ओर प्रयाण किया जाये या राणा सांगा से युद्ध किया जाये। पूर्व में 50,000 सवारों के साथ लोहानी लोग कन्नौज के उधर की ओर आ पहुँचे थे। राणा सांगा बड़ा बलवान था और अभी हाल उसने खण्डार [1] के दुर्ग पर कब्जा कर लिया था। परामर्श के बाद यह निश्चय हुआ कि अभी राणा सांगा के विरुद्ध प्रयाण करना ठीक नहीं है। उसने बार-बार काबुल पत्र भेज कर स्वामि-भक्ति प्रकट की थी परन्तु फिर उसने ऐसा नहीं किया और मकन के पुत्र हसन से उसने खण्डार ले लिया परन्तु यह स्वामिद्रोह का पर्याप्त प्रमाण नहीं था इसलिये उचित यह था कि उसके रुख को जानने के लिये योग्य आदमी भेजे जाते और जब तक सत्य का पता न लग जाये तब तक उसके विरुद्ध प्रयाण करना स्थगित रख कर पूर्व की ओर प्रयाण किया जाये और लौहानियों का दमन किया जाये। पादशाह ने कहा कि वह स्वयं ही यह कार्य करेगा परन्तु हुमायूं ने निवेदन किया कि यदि यह महत्वपूर्ण कार्य उसको सौंप दिया जाये तो वह इसको सफल करने का यत्न करेगा। पादशाह ने इस प्रार्थना का अनुमोदन किया और प्रसन्नतापूर्वक हुमायूं की बात मान ली, फिर आदेश हुआ कि आदिल सुल्तान आदि (9) नौ बड़े-बड़े सरदार हुमायूं के साथ जायें। इन सब सरदारों को आदेश दिया गया कि वे चन्दवार में हुमायूं से मिले। ईटावे का जागीरदार सईद महन्दी ख्वाजा भी आगरे से निकला और तीन कोस के अन्तर पर उसके डेरे लगे। जब हुमायूं 15 कोस की दूरी पार था तो नासिर खां जिसने जाजमू में सेना जुटा रखी थी, भाग गया और गंगा पार करके खरीद [2] के ईलाके में चला गया। हुमायूं ने भी उसी दिशा में प्रयाण किया और कुछ गर्मी और कुछ नरमो से उस प्रदेश को अपने अधीन करके फिर जौनपुर की ओर उसने कूच किया। जौनपुर को भी उसने दबा लिया। जब वह दलमऊ के निकट पहुंचा तो फतेह खां सरवानी ने हुमायूं के प्रति अधीनता प्रकट की। सरवानी भारत का एक बड़ा सरदार था। इसके पिता को सुल्तान इब्राहीम ने आजम हुमायूंनी को उपाधि प्रदान की थी। हुमायूं ने सरवानी को सईद महन्दी ख्वाजा और मुहम्मद सुल्तान मिर्जा के साथ शाही दरबार में भेज दिया। वहाँ उसके साथ शाही बर्ताव किया गया और उसे खिलत प्रदान की गई। उसे अपने पिता की वृत्तियां मिल गयीं और एक करोड़ छः लाख दाम इसके अतिरिक्त दिये गये। वह अपने पिता की उपाधि चाहता था परन्तु उसकी खान जहाँ की उपाधि मिली और उसे अपनी जागीरों पर भेज दिया गया। उसके पुत्र महमूद खां को स्थाई सेवा प्राप्त हो गई।

मुहर्रम 933 (अक्टूबर, 1526) को काबुल से सुख समाचार आया कि हुमायूं की माता से एक पुत्र उत्पन्न हुआ है। पादशाह ने उसका नाम मुहम्मद फारुक रखा। उसका जन्म 23 शव्वाल 932 (2 अगस्त, 1526) को हुआ था और 934 हिज्री में उसकी मृत्यु हो गई। उसका पिता उसे देखने भी नहीं पाया।

---

1. खण्डार रणथम्भोर से पूर्व की ओर कुछ मील के अन्तर पर एक दृढ़ दुर्ग है।
2. यह बलिया जिले का एक परगना है।

राणा सांगा के विद्रोह की खबर, हुमायूं की बाबर से भेंट (933 हिज्री)

बुधवार 24 सफर (30 नवम्बर, 1526) को हुमायूं के नाम आदेश हुआ कि जौनपुर कुछ अधिकारियों के सुपुर्द करके वह शीघ्रातिशीघ्र वापिस आये क्योंकि राणा सांगा हिन्दू और मुसलमानों की एक बड़ी सेना के साथ आ रहा है। यह सन्देश हुमायूं के पास पहुंचाने के लिये मिहतर-हैदर-रिकाबदार के पुत्र मुहम्मद अली को दिया गया।

इस वर्ष बियाना के फौजदार निजाम खां ने रफी-उद्दीन सफवी [1] के द्वारा दरबार में आकर सलाम की और बयाना दुर्ग सम्राट के अधिकारियों के सुपुर्द कर दिया।

तातार खां ने भी ग्वालियर अर्पण कर दिया। और मुहम्मद जैतून ने धौलपुर सुपुर्द करके अधीनता स्वीकार कर ली।

इस वर्ष सोलह रबी उल अव्वल (21 दिसम्बर) मुल्तान इब्राहीम की माता ने भोजन बनाने वालों से मिलकर षडयन्त्र किया परन्तु इसका परिणाम अच्छा ही हुआ। दुष्ट लोगों की भद्दी कल्पनाएं व्यर्थ गईं। और उन्हें दण्ड भोगना पड़ा।

जब हुमायूं को आदेश प्राप्त हुआ तो उसने शाहमीर हुसैन और अमीर मुल्तान जुनैद बरलास को जौनपुर क्षेत्र की सेना का नेतृत्व दे दिया और काजी जिया को इन दोनों की सहायकतार्थ उनके पास छोड़ दिया। हुमायूं राजधानी की ओर रवाना हो गया। उसने शेख बायजीद को अवध के लिये नियुक्त किया। उस समय काल्पी पर आलम खां का अधिकार था इसलिये उसको भी शान्तिपूर्वक या बलपूर्वक समाप्त करना था। अतः हुमायूं ने अपनी सेना उधर की ओर चलाई। आलमखां को आशा दिलाकर और डर दिखा कर आज्ञापालन के मार्ग पर लाया गया और अपने साथ ले जाकर उसे दरबार में उपस्थित कर दिया गया। रविवार तीन रबी उस्सानी को हुमायूं चारबाग पहुंचा [2] जो बाद में हश्त बिहिश्त कहलाने लगा और पादशाह के सामने उपस्थित हुआ। उसी दिन ख्वाजा दोस्त खावंद काबुल से आया। उसका सम्मानपूर्वक स्वागत किया।

इस समय महंदी ख्वाजा बयाने में था। वह निरन्तर राणा सांगा के विद्रोह की और युद्ध की तैयारियों की खबरें भेजा करता था।

***

1. यह फारस की खाड़ी के निकटस्थ इज का निवासी था और अबुल फजल के पिता का अध्यापक था। यह आगरा के निकट दफनाया गया था।
2. यह अब रामबाग कहलाता है। यहाँ अबुल फजल का जन्म हुआ था। यह आगरे के सामने स्थित है।

प्रकरण 19

राणा सांगा से युद्ध करने के लिये बाबर का सेना सजाना

सोमवार 9 जुमादल अव्वल (11 फरवरी, 1527) को बाबर ने राणा सांगा के राजद्रोह को निर्मूल करने के लिये आगरा से प्रयाण किया और उस नगर के सपीप ही अपने डेरे लगाये। लगातार यह खबर आ रही थी कि राणा ने एक बड़ी सेना सहित बयाना पर आक्रमण किया था और जिस सेना ने नगर में से निकल कर उसका सामना किया वह उसके सामने नहीं टिक सकी और वापिस चली गई। इस अवसर पर संकार खां जानूजहा मारा गया और अमीर किताबेग घायल हो गया। चार दिन तक वहाँ ठहर कर बाबर ने पांचवें दिन प्रयाण किया और मंधाकर के मैदान में अपना शिविर लगाया। उसको सुझा कि सीकरी के सिवाय सेना के लिये कहीं पानी नहीं है। ईश्वर को धन्यवाद देने के पश्चात् बाबर ने सीकरी का नाम शुक्री रखा। अब शाहंशाह की उदारता के कारण यह फतहपुर कहलाती है। दूसरे दिन वह फतेहपुर की ओर चला और अमीर दरवेश मुहम्मद सारबान को इसलिये आगे रवाना किया कि वह शिविर लगाने के लिये उचित मैदान तलाश करे। इसने फतेहपुर झील के पास एक मैदान देखा और वहीं डेरा लगाया गया। वहाँ से महन्दी ख्वाजा और अन्य अधिकारियों को बयाने से बुलाने के लिये सन्देशवाहक भेजे गये। हुमायूं के एक सेवक बेगमिराक को और बादशाह के कई विशेष अनुचरों को जानकारी प्राप्त करने के लिये भेजा गया। प्रातःकाल खबर आई कि विरोधी सेना बिसावर से एक कोस परली तरफ आ पहुंची है और अट्ठारह कोस की दूरी पर है। उसी दिन महन्दी ख्वाजा मुहम्मद सुल्तान मिर्जा और अन्य अधिकारी जो बयाना भेजे गये थे वापिस लौट आये। इस अर्से में बाहर की चौकियों पर प्रतिदिन झपटें हुआ करती थीं और वीर सैनिकों के कार्यों की पादशाह प्रशंसा किया करता था।

अन्त में शनिवार 13 जुमादल आखिर 933 हिज्री (16 मार्च, 1527) को राणा सांगा अपनी विशाल सेना के साथ खानवा नामक गांव के निकट एक पहाड़ी के पास आ पहुंचा। खानवा सरकार बयाने में है। अब राणा की सेना शाही सेना से दो कोस दूर थी।

पादशाह ने अपनी आत्मजीवनी में लिखा है कि भारतीय हिसाब से एक लाख की आमदनी से एक सौ सवार रखे जा सकते हैं और दस हजार सवार रखने के लिये एक करोड़ की आय आवश्यक है। राणा के साथ एक लाख सवार थे इसलिये उसकी आय दस करोड़ होनी चाहिये। ऐसे बहुत से सरदारों ने जो उसके अधीन कभी नहीं थे इस समय उसकी सहायता की थी। जिससे उसकी सेना की वृद्धि हो गई थी। इस प्रकार रायसिन और सारंगपुर आदि के शासक शिलाउद्दीन तीस हजार सवारों सहित आया था। नागौर के रावल उदय सिंह के साथ बारह हंजार सवार थे। मेवात के शासक हसनखां मेवाती के साथ बारह हजार, बिहारीमल इदारी के साथ चार हजार, नरपत हाड़ा के साथ सात हजार, और सितारवी कच्छी

के साथ छः हजार, मेरठा के शासक धरनदेव के साथ चार हजार, नरसिंह देव चौहान के साथ चार हजार और सिकन्दर सुल्तान के पुत्र महमूद खां के साथ दस हजार सवार थे। महमूद खां के साथ कोई प्रदेश नहीं था परन्तु वह अपनी गद्दी को पुनः प्राप्त करने की आशा से इतने सवार लाया था। इस प्रकार सब मिलकर दो लाख एक हजार सवार थे।

जब पादशाह ने शत्रु की सेना के आगमन का समाचार सुना तो उसने अपनी सेना का व्यूह बनाया। वह स्वयम् मध्य भाग में रहा। दायें पार्श्व में चीन तीमूर सुल्तान, मिर्जा सुलेमान, ख्वाजा दोस्त खावन्द, यूनूस अली, शाहमन्सूर बरलाश, दरवेश मुहमन्द सारबान, अब्दुल्ला किताबदार, दोस्त इश्हाक आका और अन्य बड़े-बड़े अधिकारियों को नियुक्त किया। बायें पार्श्व में सुल्तान बहलोल लोदी का पुत्र अलाउद्दीन, शेख जैन ख्वाफी, अमीर मुहिव्ब अली (निजामुद्दीन अली खलीफा का पुत्र), कूचबेग का भाई तारदी बेग, कूचबेग का पुत्र शिराफगन, आराईश खां और ख्वाजा हुसैन तथा सल्तनत के बड़े-बड़े लोग थे। दायें पार्श्व में हुमायूं था। उसके दाये ओर कासिम हुसैन, सुल्तान अहमद-युसूफ ओगलाका, हिन्दू बेग कुलीन खुसरू कोकुलताश, ख्वाजा पहलवान बदख्शी, अब्दुल शकूर और बहुत से अन्य वीर थे। हुमायूं के बांयी ओर मीर हमामुहम्मदी कोकुलताश ओर ख्वाजगी असद जामदाई थे।

दायें पार्श्व में भारत के सरदार थे। बायें पार्श्व में सईद महन्दी ख्वाजा आदि बड़े-बड़े लोग थे। भारतीय सरदारों में जलाल खां आदि कितने ही वीर थे। तुलगामा के लिये दायीं ओर तारदी ईवका और बांयी ओर सुमन अतका आदि खड़े किये गये थे। आत्मरक्षार्थ रूमी शैली का अनुसरण किया गया था। गाड़ियों की एक पंक्ति बनाई गई थी, जिन्हें एक दूसरी से जंजीरों से बांध दिया गया था। इनके पीछे बन्दूकची खड़े किये गये थे। गाड़ियों से उनका बचाव होता था। इस पंक्ति का नेतृत्व निजामुद्दीन अली खलीफा को दिया गया था। सुल्तान मुहम्मद बख्शी पादशाह के पास खड़ा था और उसका आदेश सुनता था और तवाचीदान तथा सवारों के द्वारा इन आदेशों को अन्य अधिकारियों के पास पहुंचाता था। जब इस प्रकार सेना का व्यूह बन गया तो आदेश दिया गया कि हुक्म के बिना कोई भी सैनिक अपने स्थान से नहीं हिले और न रणभूमि की ओर एक कदम आगे बढ़े। जब एक पहर दिन निकल गया तब युद्ध की अग्नि चमकी और घमासान युद्ध होने लगा। शत्रु के बायें पार्श्व ने शाही सेना के दायें पार्श्व पर आक्रमण किया और वह खुसरू कोकुलतास मुल्क कासिक और बाबा कुस्का पर टूट पड़ा। तब उन्हें सहायता देने के लिये चीन तीमूर को आदेश हुआ तो उसने शत्रु की सेना को पीछे धकेल दिया। इसके लिए तीमूर सुल्तान को अच्छा पुरस्कार दिया गया। मुस्तफा रूमी हुमायूं की सेना मध्य भाग से गाड़ियां लाया और अपनी बन्दूकों और जर्बजनूं के द्वारा उसने शत्रु की पंक्ति को भंग कर दिया। शत्रु के बहुत से आदमी समाप्त हो गये। उसके सैनिक बार-बार आगे बढ़ते थे। पादशाह भी अपने सैनिकों को उनकी ओर बार-बार बढ़ाता था।

शत्रु के दायें पार्श्व ने पादशाह की सेना के बायें पार्श्व पर आक्रमण किया परन्तु शाही सैनिकों ने बाणों की बौछार करके और खंजरों और तलवारों से शत्रुओं को धराशायी कर दिया।

लड़ाई बहुत समय तक चली। शत्रु की संख्या भी बहुत बड़ी थी इसलिये गाड़ियों से पीछे खड़े हुए निजी सैनिकों को आदेश दिया गया कि वे मध्य भाग की दायीं ओर बायीं ओर से निकल कर बीच में बन्दूकचियों के लिये स्थान छोड़ते हुए दोनों बाजुओं पर पहुंच कर शत्रु सेना पर आक्रमण करें। इस आदेश के अनुसार वीरों ने आक्रमण किया। तब घमासान लड़ाई हुई ओर फिर गाड़ियों को आगे बढ़ाया गया। पादशाह भी शत्रु के विरुद्ध आगे बढ़ा। यह देखकर सेना में आवेश उमड़ पड़ा और सायंकाल होते-होते पादशाह की सेना के दायें और बायें पक्ष ने शत्रु के बायें और दायें पार्श्व पर जोर का आक्रमण किया। शत्रु बढ़ता हुआ बहुत पास आ गया परन्तु गाजी लोग दृढ़तापूर्वक अचल खड़े रहे। ईश्वर ने सहायता की और शत्रु अधमरे होकर भागने लगे। कितने ही मारे गये और कितने ही आहत हो गये। हसन खां मेवाती गोली का शिकार हो गया। रावल उदयसिंह, मानकचन्द चौहान, राय चन्द्र भान, दलपत राय गंगू, कर्मसिंह राव नगरसी और बहुत से सरदार मारे गये। हजारों आहत लोग विजयी सेना के घोड़ों से कुचल कर मर गये। मुहम्मदी कोकुलताश अब्दुल अजीज मीर आखूर, अली खां और कुछ अन्य लोगों को राणा का पीछा करने का आदेश हुआ। विजय प्राप्त करके बाबर ने ईश्वर को धन्यवाद दिया और रणभूमि से एक कोस तक शत्रु का पीछा किया। जब रात हो गई तो पीछा करना छोड़ दिया, सूर्यास्त के बाद बाबर वापिस अपने शिविर में आया। ईश्वर की इच्छा थी कि राणा सांगा नहीं पकड़ा जावे इसलिये जो लोग उसका पीछा करने कि लिये भेजे गये थे उनसे कुछ नहीं बना। पादशाह ने कहा—समय बड़ा नाजुक था। स्वयं मुझे ही जाना चाहिये। यह काम दूसरों पर नहीं छोड़ना चाहिये था। शेख जैन सदर ने इस विजय की तारीख के लिये ये शब्द लिखे—"फतह-ए-बादशाह-ए-ईस्लाम।[1]" काबुल से मीर गेसू ने भी यह तारीख इसी प्रकार निकाली। बाबर ने अपनी आत्मजीवनी में लिखा है कि दीपालपुर की विजय की तारीख भी दो विद्वानों ने "बसत-ए-शहर-ए-रबीउल अव्वल[2]" से निकाली थी।

इस विजय के बाद राणा सांगा का पीछा करना या उसके राज्य पर आक्रमण करना स्थगित करके मेवात की विजय पर ध्यान दिया गया। कोयिल में इलियास खां ने राजद्रोह करके वहाँ के फौजदर कचक अली को बन्दी बना लिया था। उसका दमन करने के लिये मुहम्मद अली जंगजंग, शेख गुरान और अब्दुल मलूक कुरची को रवाना किया गया। जब शाही सेना पास आई तो इलियास खां सामना नहीं कर सका और पीछे हट गया। जब शाही सेना आगरा पहुंची तो उस विद्रोही को शाही दरबार में प्रस्तुत किया गया और उसे प्राणदण्ड दिया गया।

अब पादशाह ने मेवात की ओर प्रयाण किया। बुधवार छः रजब (7 अप्रैल, 1527) को वह मेवात की राजधानी अलवर में पहुंचा। अलवर का राजकोष हुमायूं को प्रदान किया गया और उस प्रदेश को अपने राज्य में मिलाकर पादशाह वापिस राजधानी में लौट आया। अब वह पूर्वी प्रदेशों का दमन करना चाहता था।

---

1. इससे 933 बनता है।
2. इससे 930 बनता है।

हुमायूं का काबुल और बदखशां के लिये प्रस्थान और शाही सेना का आगरा की ओर प्रयाण

काबुल और बदखशां के प्रशासन की व्यवस्था करना आवश्यक था। 917 हिज्री (1511 ईसवी) में मिर्जा खान की मृत्यु हुई तब ही बदखशां हुमायूं को दे दिया गया था इसलिये 11 अप्रैल, 1527 को अलवर से 8 कोस की दूरी से उसको बदखशां रवाना कर दिया गया और पादशाह बिहन अफगान के दमन करने मे लग गया। इस अफगान ने राणा के साथ जब लड़ाई हो रही थी तो घेरा डालकर लखनऊ पर कब्जा कर लिया था। उसके विरुद्ध कासिम हुसैन सुल्तान आदि चार अमीर बाबर के साथ और अली खां फरमूली आदि चार अमीर हिन्दुस्तान के लिए रवाना किये गये। इन सब का नेतृत्व मुहम्मद सुल्तान मिर्जा के सुपुर्द किया गया। शाही सेना के आगमन की खबर सुनकर बिहन अफगान अपना सारा सामान छोड़कर अपने प्राण बचाने के लिये भाग गया। इस वर्ष के अन्त में बाबर फतहपुर और बारी (धौलपुर के पास) गया और फिर आगरा चला गया। 934 हिज्री में वह कोहिल गया और वहाँ से शिकार करने के लिये सम्बल पहुंचा। तत्पश्चात् राजधानी में लौट आया। 28 सफर (23 नवम्बर) को फख्र-ए-जहाँ बेगम और खादिजा [1] सुल्तान बेगम काबुल से आई। पादशाह बड़ी उदारतापूर्वक उनसे मिला।

बार-बार यह खबर आती थी कि चंदेरी का शासक मेदिनीराय सेना जुटा रहा है और राणा भी युद्ध की तैयारी कर रहा है इसलिये पादशाह ने चन्देरी के विरुद्ध प्रयाण किया और चीन तीमूर सुल्तान के नेतृत्व में काल्पी से छ: या सात हजार वीर चन्देरी भेजे। बुधवार 7 जुमादल अव्वल (29 जनवरी, 1528) को चन्देरी में बड़ी विजय प्राप्त हुई। इस विजय की तारीख फतह-ए-दारुल हरब से निकलती है। और 934 हिज्री है। इसके पश्चात् चन्देरी को सुल्तान नासिरुद्दीन के पौत्र अहमद शाह के सुपुर्द करके पादशाह रविवार 11 जुमादल अव्वल (2 फरवरी) को वापिस लौट गया।

विश्वसनीय इतिहासकारों ने लिखा है कि राणा सांगा ने फिर युद्ध करने का विचार करके सेना जुटा ली थी। अभी पादशाह ने चन्देरी पर प्रयाण नहीं किया था। जब राणा ईरिज पहुंचा तो बाबर के एक सेवक ने जिसका नाम अफाक था, इंरिज की रक्षा की व्यवस्था कर ली थी। राणा ने उस स्थान को घेर लिया परन्तु एक दिन उसने दुःस्वप्न देखा जिससे घबराकर वह वापिस लौटने लगा और मार्ग में ही उसकी मृत्यु हो गई। पादशाह की विजयी सेना ने बुहरानपुर की नदी पार की तो पादशाह को खबर मिली कि बिहन और वायजीद ने सेनायें जुटा ली हैं और शाही सेवक कन्नौज और राबेरी से भाग गये हैं और शत्रु ने अबूल मुहम्मद नेजाबाज से शमसाबाद का दुर्ग छीन लिया है। अत: सेना उधर की ओर चली और कितने ही वीरों को आगे भेजा गया। सैनिकों को देखते ही मारुफ का पुत्र हक्का बक्का रह गया और कन्नौज से भाग गया। बिहन, बायजीद और मारुफ शाही सेना की खबर सुनकर गंगा

1. ये दोनों बाबर के पिता की बहिनें थी। गुलबदन बेगम ने लिखा है कि अबू सईद मिर्जा के कुल सात लड़कियां थी।

पार कर गये और उसके पूर्व की ओर कन्नौज के सामने पहुँच गये। वे शाही सेना को नदी पार करने से रोकना चाहते थे। शाही सेना ने कूच जारी रखा और शुक्रवार 3 मुहर्रम 935 हिज्री (18 सितम्बर, 1528) को मिर्जा असकरी काबुल आ गया और सेवा में प्रविष्ट हो गया। उसको चन्देरी के अभियान से पूर्व मुलतान के विषय में सलाह करने के लिये बुलाया गया था। शुक्रवार (10 मुहर्रम) को पादशाह ग्वालियर ठहरा और अगले दिन प्रात:काल उसने विक्रमाजीत और मानसिंह के महल देखे और फिर उसने राजधानी की ओर प्रयाण किया। बृहस्पतिवार 25 मुहर्रम को वह राजधानी में पहुंचा।

सोमवार 10 रबी उल अव्वल को बदखशां से हुमायूं के सवार आये और शुभ समाचार लाये। हुमायूं के पत्र में लिखा था कि यादगार तगाई की पुत्री से पुत्र उत्पन्न हुआ है और उसका नाम अल अमान रखा गया है। इस नाम के दो अर्थ होते थे और आम लोगों में इसका अर्थ अच्छा नहीं समझा जाता था इसलिये इसके नाम का अनुमोदन नहीं किया गया। अनुमोदन का एक कारण यह भी था कि बाबर से पहिले अनुमति नहीं ली गई थी। इस बालक की थोड़े अर्से बाद ही मृत्यु हो गई। जब बादशाह राजधानी में स्थिर हो गया तो उसने तुर्की और भारतीय सरदारों की एक सभा करवाई और बड़ा भोज दिया और पूर्वीय इलाकों की व्यवस्था के विषय में तथा विद्रोह की ज्वालाओं को शान्त करने के लिये उनसे परामर्श किया। बहुत कुछ बहस के बाद यह ठहरा कि स्वयम् पादशाह रणभूमि में जाये इससे पहिले बहुत बड़ी सेना देकर मिर्जा असकरी को पूर्व की ओर भेजा जाये और जब गंगा पार के अमीर अपनी सेनाओं सहित उसके साथ हो जाये तब कोई अभियान किया जाये। इस निश्चय के अनुसार सोमवार 7 रबी उल आखिर को असकरी ने प्रयाण किया और पादशाह स्वयम् बौलपुर की ओर शिकार करने के लिये चला गया।

3 जुमादल अव्वल को खबर आई कि इसकन्दर के पुत्र महमूद ने बिहार छीन लिया है और विद्रोह खड़ा कर दिया है। पादशाह शिकार से आगरा लौट आया और यह निश्चय हुआ कि वह स्वयम् पूर्वी इलाकों की ओर प्रयाण करें।

इस समय बदखशां से सवार यह खबर लेकर आये कि हुमायूं ने उन प्रान्तों से सेना जुटाकर सुल्तान वैस को साथ लेकर 40-50 हजार सेना सहित समरकन्द पर प्रयाण कर दिया है। यह भी खबर आई कि सन्धि वार्ता चल रही है। तब यह संदेश भेजा गया कि यदि सन्धि वार्ता का समय समाप्त नहीं हो गया हो तो सन्धि कर ली जावे। जब तक कि भारत के मामले साफ न हो जावे इस पत्र द्वारा हिन्दाल मिर्जा को बुलाया गया और कहा गया कि काबुल साम्राज्य में सम्मिलित माना जावे। बाबर ने लिखा कि ''ईश्वर ने चाहा तो जब हिन्दुस्तान के मामले ठीक हो जावेंगे तो स्वामिभक्त सेवकों को यहाँ छोड़कर हम अपने पैतृक राज्यों को देखेंगे। यह उचित होगा कि इन देशों के सेवक अभियान की तैयारी रखे, और शाही सेना के आगमन की प्रतीक्षा करें।''

बृहस्पतिवार तारीख 17 (उपरोक्त मास) को बाबर जमुना नदी पार करके पूर्वी प्रदेशों की ओर प्रयाण किया।

इन दिनों बंगाल के सुल्तान नसरत शाह के राजदूत बहुमूल्य भेंटें लेकर आये।

सोमवार 19 जुमादल आखिर को मिर्जा असकरी ने गंगा के तट पर आकर अपने कर्तव्य का पालन किया। उसको आदेश दिया गया कि अपनी सेना के साथ नदी के दूसरे तट के सहारे-सहारे कूच करे। कर्रा [1] के निकट सुल्तान सिकन्दर के पुत्र महमूद खां के पराजय का समाचार आया। गाजीपुर की सीमा तक पहुंच कर बाबर भोजपुर और बिहिया के पास ठहरा। वहाँ बिहार मिर्जा मुहम्मद जमान को प्रदान किया गया। सोमवार 5 रमजान को बंगाल और बिहार के विषय में निश्चित होकर विहन और बायाजीद का दमन करने के लिये बाबर ने सिरवार की ओर प्रयाण किया। शाही सेना की शत्रु के साथ लड़ाई हुई जिसमें वह हार गया। खरीद और सिकन्दरपुर जाकर वहाँ की व्यवस्था के विषय में सन्तुष्ट होकर वह शीघ्र आगरे [2] की ओर लौट गया और थोड़े से समय में ही पहुंच गया।

हुमायूं ने बदखशां में एक वर्ष आनन्दपूर्वक व्यतीत किया था। एकाएक ही उसको पादशाह से मिलने की इच्छा हुई और बदखशां मिर्जा सुलेमान के श्वसुर सुल्तान वैस के सुपुर्द करके उसने अपने पिता से मिलने के लिये प्रयाण कर दिया। इस प्रकार वह एक दिन में काबुल पहुंच गया। मिर्जा कामरान कन्धार से वहाँ आ गया था। वे दोनों ईदगाह में मिले। कामरान उसको देखकर अचम्भित हो गया और उसने पूछा कि इस यात्रा का क्या कारण है। हुमायूं ने उत्तर दिया कि मैं पादशाह से मिलना चाहता हूं। हुमायूं ने मिर्जा हिन्दाल को आदेश दिया कि बदखशां की रक्षा के लिये वह काबुल से रवाना हो जावे। फिर हुमायूं थोड़े अर्से में ही आगरा आ पहुंचा।

आश्चर्य की बात यह हुई कि उस समय बाबर खाना खा रहा था और हुमायूं की माता से उसी के विषय में बात कर रहा था। अचानक ही हुमायूं आ गया। पिता-पुत्र दोनों बड़े प्रसन्न हुए।

मिर्जा हैदर ने तारीख-ए-रसीदी में लिखा है कि हुमायूं 935 हिज्री (1528-29 ईसवी) में बाबर के बुलाने पर हिन्दुस्तान में आया था और वह फक्र अली को बदखशां में छोड़ आया था।

इस समय मिर्जा अनवर [3] की मृत्यु हो गई जिससे पादशाह को बड़ा दुःख हुआ।

इसलिये हुमायूं के आगमन से बाबर के हृदय को बड़ी सान्त्वना मिली। जब हुमायूं बदखशां से भारत के लिये रवाना हुआ तो सुल्तान सईद खां ने जो काशगर का खान था। बदखशां पर आक्रमण किया। यह खान पादशाह का रिश्तेदार था। और उसकी सेवा कर चुका तथा उसका कृपापात्र भी था। बदखशां के सुल्तान बैस और अन्य अमीरों के सन्देशों से प्रेरित होकर उसने यह आक्रमण किया था परन्तु उसके आने से पहिले ही मिर्जा हिन्दाल

1. यह इलाहाबाद जिले में इलाहाबाद से 42 मील उत्तर पश्चिम में स्थित है।
2. इसका कारण यह था कि काबुल से उसके कुटुम्बी आ पहुंचे थे। बाबर अपनी पत्नी से रविवार, 27 जून, 1521 के मध्य रात्रि को मिला था।
3. गुलबदन ने इसका नाम अलूर मिर्जा लिखा है। यह गुलबदन की माता दिलदार बेगम का पुत्र था। मृत्यु के समय वह बच्चा ही था क्योंकि बाबर की मृत्यु के समय गुलबदन भी 8 वर्ष की थी।

बदखशां पहुंच कर किलाजफर में जम गया था। सईद खां तीन मास तक किले को घेरे रहा और फिर हार कर काशगर लौट गया। पादशाह ने जब सुना कि काशगर के लोगों ने बदखशां पर कब्जा कर लिया है तो उससे ख्वाजा खलीफा को आदेश दिया कि वह जाकर सब व्यवस्था करें, परन्तु ख्वाजा ने मूर्खतावश आदेश का पालन करने में विलम्ब किया। तब पादशाह ने हुमायूं से सलाह की और पूछा कि वह स्वयं वापिस जा सकता है क्या? हुमायूं ने उत्तर दिया कि ''मैं बहुत अर्से से आपके आशिर्वाद से वंचित था। अब मैंने प्रण कर लिया है कि स्वेच्छा से मैं देश-निर्वासित नहीं होऊंगा। यदि मुझे जाने का आदेश दिया जायेगा तो दूसरी बात है।''

''इसलिये मिर्जा सुलेमान को बदखशां भेजा गया और सुल्तान सईद को पत्र लिखा गया कि मेरा तुम्हारे पर कई प्रकार से हक है इसका तुमको विचार करना चाहिये। यह मामला विचित्र है। मैंने मिर्जा हिन्दाल को वापिस बुलाकर सुलेमान को भेजा है। यदि तुमको कुलक्रमानुगत अधिकारों का कोई विचार है तो तुम सुलेमान पर कृपा करोगे और बदखशां पर उसका कब्जा रहने दोगे। हम दोनों के लिये वह पुत्र के समान है। अन्यथा मेरा कोई उत्तरदायित्व नहीं है, मैं उत्तराधिकारी के ही हाथ में उत्तराधिकार सौंप दूंगा, शेष बात तुम जानो।''

मिर्जा सुलेमान काबुल पहुंचा उससे पहिले ही बदखशां में शान्ति स्थापित हो चुकी थी। जब सुलेमान बदखशां पहुंचा तो बाबर के आदेशानुसार हिन्दाल बदखशां को उसके हवाले करकर भारत के लिये रवाना हो गया।

कुछ दिन हुमायूं को अपने पास रखकर बाबर ने उसे सम्भल [1] भेज दिया जो उसकी जागीर थी। हुमायूं सम्भल छः महीने ठहरा और फिर उसको अचानक ज्वर हो गया, जो धीरे-धीरे बढ़ता गया। इस खबर से पादशाह को बड़ी चिन्ता हुई। उसने हुमायूं को दिल्ली बुला लिया और दिल्ली से आगरा उसको जलमार्ग से बुलाया। पादशाह चाहता था कि उसके सामने ही योग्य चिकित्सक उसकी चिकित्सा करे। चिकित्सकों ने अपनी सारी योग्यता लगा दी परन्तु उसकी स्थिति नहीं सुधरी। एक दिन जब बाबर जमुना के तट पर बैठा हुआ था तो उस समय के प्रसिद्ध सन्त मीर अबू बकर ने उससे कहा कि जब चिकित्सक लोग कुछ नहीं कर सके तो सर्वोत्तम पदार्थ दान देना चाहिये और ईश्वर से स्वास्थ्य लाभ की प्रार्थना की जानी चाहिये। बाबर ने उत्तर दिया कि ''मैं ही सर्वाधिक मूल्यवान वस्तु हूं। मैं हुमायूं के लिये अपना बलिदान कर सकता हूँ। ईश्वर से प्रार्थना है कि वह इसको स्वीकार करे।''

ख्वाजा खलीफा और अन्य लोगों ने निवेदन किया कि ईश्वर की कृपा से हुमायूं स्वस्थ हो जावेगा। आप ऐसे शब्द क्यों बोल रहे हैं। पुराने लोगों का तो कहना यह है कि सर्वाधिक मूल्यवान वस्तु का दान किया जाये, इसलिये कोहनूर हीरा जो हुमायूं को दिया गया था। उसको दान कर दिया जाये। ''बाबर ने उत्तर दिया'' सांसारिक सम्पत्ति का क्या मूल्य है, हुमायूं के

1. यह जहांगीर हुमायूं को 1526 में दी गई थी। सम्भल मुरादाबाद जिले में आगरे के उत्तर में और दिल्ली के पूर्व में स्थित है।

लिये तो मैं ही अपना बलिदान करूंगा। हुमायूं की ताकत जाती रही है। मैं उसकी बेताकती को नहीं देख सकता। इसके बाद उचित क्रियायें करके बाबर हुमायूं के चारों ओर तीन बार घूमा। ईश्वर ने उसकी प्रार्थना सुनी और स्वयं उसको भी ऐसा ही अनुभव हुआ। तुरन्त ही पादशाह को ज्वर हो गया और हुमायूं को आराम होने लगा। इस प्रकार थोड़े समय में ही हुमायूं का स्वास्थ्य सुधर गया और बाबर का स्वास्थ्य गिरने लगा और उसकी मृत्यु स्पष्ट दिखाई देने लगी।

फिर बाबर ने अपने अमीरों और अधिकारियों को बुलाया और उनके सामने उसको तख्त पर बिठा दिया और स्वयं तख्त के नीचे रोगशैय्या पर लेटा रहा। उसने दान और न्याय की शिक्षा दी और कहा कि ईश्वर की कृपा प्राप्त करनी और प्रजा से प्रेम करना चाहिये तथा कर्त्तव्यविमुख लोगों की क्षमायाचना स्वीकार कर लेनी चाहिये। पादशाह को चाहिये कि अच्छे सेवकों का सम्मान करे और विद्रोहियों का दमन करे। उसने जोर के साथ कहा— हमारा मुख्य आदेश यह है कि "अपने भाईयों के विरुद्ध कोई काम न करना, चाहे वे दण्ड के योग्य भी हों।" पादशाह के इस आदेश के कारण ही हुमायूं को अपने भाईयों से अनेक कष्ट सहन करने पड़े परन्तु उसने बदला नहीं लिया। इतिहास इसका साक्षी है।

जब बाबर की स्थिति अत्यन्त बिगड़ गई तो मीर खलीफा ने चाहा कि महन्दी ख्वाजा [1] को तख्त पर बिठाया जाये। ख्वाजा का स्वभाव बुरा था। वह मूर्ख और दुष्ट भी था इसलिये उसने गड़बड़ की। अन्त में भले लोगों ने हस्तक्षेप किया तो मीर खलीफा सन मार्ग पर आ गया। इस प्रकार ईश्वर की कृपा से जो बात उचित थी, वही हो गई।

जमादल अव्वल 937 को आगरे में जमुना नदी के तट पर स्थित चहार बाग में बाबर की मृत्यु हो गई। उस समय के विद्वानों ने उसकी मृत्यु पर मरसिये (शोक छन्द) लिखे। मौलाना शिहाब मुअम्माई ने हुमायूं के तख्त पर बैठने की तारीख पर ये शब्द लिखे—"हुमायूं गुवद वारिस-ए-मुंलके-ए-वै।"

बाबर का भाग्य ऊंचा था। उसमें विजय शक्ति थी, प्रशासनिक क्षमता थी, सेना से उसको प्रेम था। ईश्वर के भक्तों पर उसकी कृपा थी। वह अपने समय का महापुरुष था। वह उच्च श्रेणी का कवि और गद्य लेखक था। तुर्की भाषा में वह विशेषकर अच्छी कविता करता था। उसका तुर्की दीवान बड़ा मधुर है, उसकी मसनवी की आलोचकों ने प्रशंसा की है। उसने ख्वाजा अहरार लिखित "रिसाल-ए-वालीदिया" का छन्दोबद्ध रूपान्तर किया है। उसने अपने शासन के आरम्भ से जीवन के अन्त तक का सुन्दर और सरल शैली में वृत्तान्त लिखा है। इस पुस्तक का बैराम खां के पुत्र मिर्जा खान खाना ने 34 वें ईलाही सन् में फारसी में अनुवाद किया था। उस समय अकबर कश्मीर और काबुल से वापिस लौटा था।

---

1. महन्दी ख्वाजा बाबर का बहनोई था। मोर खलीफा जानता था कि हुमायूं को अफीम खाने की आदत है। वह हुमायूं को अयोग्य समझता था।

बाबर संगीत में भी बड़ा निपुण था। उसने फारसी में मनोहर शेर लिखे हैं। उसको छन्दशास्त्र का भी अच्छा ज्ञान था। उसने इस विषय पर मुफस्सल नामक ग्रन्थ लिखा था।

बाबर के चार पुत्र और तीन पुत्रियां थीं। पुत्र—(1) हुमायूं (2) कामरान मिर्जा, (3) असकरी मिर्जा, (4) हिन्दाल मिर्जा थे। पुत्रियां—(1) गुलरंग बेगम, (2) गुलचहरा बेगम और (3) गुलबदन बेगम थी।

बाबर के दरबार में निम्नलिखित विद्वान, कवि, हकीम आदि थे—

1. **मीर अबुल बका**—बुद्धि और विद्या में प्रसिद्ध।
2. **शेष जैन सदर**—यह पत्र-लेखन में कुशल था, और बाबर के साथ इसका लम्बे अर्से से साथ था। यह हुमायूं के दरबार में भी प्रसिद्ध था।
3. **शेष अबुल वजद फरिशी**—यह कवि था और सभा चतुर था।
4. **सुल्तान मुहम्मद कुसा**—यह काव्य का अलोचक था।
5. **मौलाना शिहाब मुअम्माई**—यह कविता लिखता था और तारीख लिखने में चतुर था।
6. **मौलाना युसूफी**—यह कुशल हकीम था।
7. **सुर्ख विदाई**—यह फारसी और तुर्की भाषा में कविता करता था।
8. **मुल्ला बकाई**—यह मसनवी लिखने में निपुण था।
9. **ख्वाजा निजामुद्दीन अली खलीफा**—इसका बाबर के दरबार में ऊंचा स्थान था और यह सफल चिकित्सक भी था।
10. **मीर दरवेश मुहम्मद साखान**—यह प्रसिद्ध विद्वान था और बाबर के दरबार में विश्वसनीय पुरुष माना जाता था।
11. **ख्वान्द मीर**—यह इतिहासकार था। इसने हबीबुस-शियार, खुलासा तुल अखबार दस्तूरुल वुजरा आदि ग्रन्थ लिखे थे।
12. **ख्वाजा किलांबेग**—यह एक बहुत बड़ा अधिकारी था। बाबर के दरबार में इसकी बैठक थी। यह गम्भीरता और विवेक के लिये प्रसिद्ध था। इसका भाई कीचक ख्वाजा भी विश्वस्त और योग्य अधिकारी था।
13. **सुल्तान मुहम्मद दुलदाई**—यह एक चरित्रवान उच्चाधिकारी था।

मैं अन्य लोगों को उल्लेख नहीं कर रहा हूँ क्योंकि इस ग्रन्थ का उद्देश्य पादशाह अकबर के पूर्वजों का कुछ वर्णन करना है। अब मैं हुमायूं का वृत्तान्त लिखता हूँ।

***

प्रकरण 20

स्वर्गीय बादशाह नासिरुद्दीन मुहम्मद हुमायूं

हुमायूं का जन्म मंगलवार 4 जिल्कदा 913 हिज्री (6 मार्च, 1508) की रात्रि में काबुल के दुर्ग में माहम बेगम के गर्भ से हुआ था।

यह वेगम खुरासान के प्रतिष्ठित कुल की महिला थी और सुल्तान हुसेन मिर्जा से इसकी रिश्तेदारी थी। मैंने विश्वसनीय लोगों से सुना है कि जैसे अकबर की माता शेख (अहमद जाम) के कुल की वंशजा थी इसी प्रकार माहम बेगम की भी उससे रिश्तेदारी थी। बाबर का इससे उस समय विवाह हुआ था जब वह सुल्तान हुसेन मिर्जा के पुत्रों के साथ शोक-संवेदना प्रकट करने के लिये हैरात गया हुआ था। मौलाना मसनदी ने हुमायूं के जन्म की तारीख के लिये सुल्तान हुमायूं खां शा ए-फिरोज के लिये सुल्तान हुमायूं के जन्म की कादर और पादशाह-ए-सफशिकन तथा खुशवाद वाक्यांश लिखे जिनसे 913 हि० निकलती है।

हुमायूं का राज्याभिषेक आगरे में 9 जुमादल अव्वल 933 हि० (29 दिसम्बर 1530) को हुआ था। यह तारीख 'खैरउल मुलूक' से निकलती है। कुछ दिन बाद वह नाव में बैठकर नदी के ऊपर की ओर गया और उस दिन नाव भरकर मोहरें लोगों को दी। इस घटना की तारीख किश्तियेजर से 937 हि० निकलती है।

हुमायूं में शक्ति, ज्ञान और दया का समन्वय था। गणित के ज्ञान में उसकी समानता करने वाला कोई नहीं था। वह सिकन्दर जैसा वीर और अरस्तु जैसा विद्वान् था।

दरबार से सम्बन्ध रखने वाले सभी लोगों को पद और वृत्तियां प्राप्त हुई। मिर्जा कामरान को काबुल और कन्धार, मिर्जा असकरी को सम्भल और मिर्जा हिन्दाल को सरकार अलवर जागीर में दिये गये। सामन्त, उच्चाधिकारी और सेना सब हुमायूं के आदेश का पालन करने लगे। जिसने भी राजद्रोह प्रकट किया उसको आदेश मानना पड़ा। ऐसे लोगों में मोहम्मद जमान मिर्जा था। अदूरदर्शिता और अज्ञान के कारण उसने राजद्रोह किया था परन्तु उसका दमन हो गया और वह आज्ञा मानने लगा।

कालिन्जर और चुनार की विजय

पांच-छः मास पश्चात् हुमायूं ने कालिन्जर की ओर ध्यान दिया और उस दुर्ग को घेरा। घेरा एक मास तक चला जब दुर्ग के अन्दर के लोगों का संकट बढ़ गया तो दुर्गाध्यक्ष ने 12 मन सोना और अन्य भेंटे भेजकर सन्धि की प्रार्थना की तो उसको क्षमा कर दिया गया।

वहां से हुमायूं ने चुनार की ओर प्रयाण किया और उस दुर्ग को घेर लिया। सुल्तान इब्राहीम के समय में यह दुर्ग जमाल खां, खासा खेल सारंग खानी के हाथ में था। सुल्तान इब्राहीम की मृत्यु के पश्चात् जमाल खां के पुत्र ने जमाल खां को मार डाला। फिर उसको

विधवा लाड मलका (मल्का) से शेर खां ने विवाह कर लिया और इस युक्ति से वह दुर्ग का स्वामी बन गया। जब शेर खां ने सुना कि हुमायूं की विजयी सेना आ रही है तो वह अपने पुत्र जलाल खां को कुछ विश्वसनीय लोगों के साथ दुर्ग में छोड़ कर बाहर आ गया। उसने चतुर राजदूत भेजकर बड़ी चालाकी की बातें की। हुमायूं ने अपने पुत्र अब्दुर रशीद को हुमायूं की सेवा में भेज दिया। अब्दुर रशीद ने लम्बे अर्से तक सेवा की परन्तु जब हुमायूं सुल्तान बहादुर का दमन करने के लिये मालवा गया तो अब्दुर रशीद शाही सेना से भाग गया। 939 हि० में बी-बंग और बाइजीद नामक अफगानों ने विद्रोह खड़ा कर दिया तो बादशाह ने पूर्व की ओर प्रयाण किया। बाइजीद युद्ध में मारा गया और जौनपुर तथा उसके पास का प्रदेश सुल्तान जुनैद बरलास को देकर पादशाह वापस राजधानी को लौट गया।

सुल्तान बहादुर द्वारा भेंटें भेजना आदि घटनाएं

पादशाह की विजयों की खबर सुनकर गुजरात के शासक सुल्तान बहादुर ने 94 हि० में अपने अनुभवी राजदूतों द्वारा बहुमूल्य भेंटें भेजकर हुमायूं से मित्रता स्थापित की इनको स्वीकार करके पादशाह ने भी उसको मित्रतापूर्ण पत्र भेजे। इसी वर्ष दिल्ली के निकट जमुना के तट पर एक नया नगर बसाया गया और उसका नाम दीन पनाह रक्खा गया। इसकी नींव 940 हि० में रक्खी गई थी। इसके बाद मुहम्मद जमीन मिर्जा और मुहम्मद-सुल्तान मिर्जा ने अपने पुत्र उलूग मिर्जा सहित विद्रोह कर दिया। उनके दमन के लिये पादशाह ने रवाना होकर भोजपुर के पास गंगा के तट पर डेरे लगाये, विद्रोहियों के विरुद्ध यादगार नासिर मिर्जा को एक बड़ी सेना देकर भेजा गया तो उसको विजय प्राप्त हुई और मिर्जा लोग बन्दी बना लिये गये। मोहम्मद जमान मिर्जा को बयाना भेज दिया गया और शेष दोनों की आंखें फुड़वा दी गईं। मोहम्मद जमान मिर्जा कारागार से भागकर सुल्तान बहादुर के पास गुजरात चला गया।

***

प्रकरण 21

मिर्जा कामरान का पंजाब में आना

जब मिर्जा कामरान ने बाबर की मृत्यु की खबर सुनी तो उसने कन्धार मिर्जा असकरी के सुपुर्द किया और कुछ लाभ की आशा से भारत की ओर प्रयाण किया। उस समय मीर युनूस अली लाहौर का फौजदार था। एक दिन मिर्जा कामरान ने कपटलीला रची और दिखावे के लिये कराच बेग के प्रति क्रोध प्रकट किया तो बेग मिर्जा का शिविर छोड़कर लाहौर आ गया। मीर युनूस अली ने उसके साथ कृपा का व्यवहार किया परन्तु एक दिन अवसर देखकर

कराच बेग ने युनूस को कारागार में रख दिया और दुर्ग द्वारों पर अपने आदमी नियुक्त कर दिये तथा इसकी खबर कामरान को पहुंचा दी, तब कामरान ने शीघ्र ही वहां पहुंच कर नगर पर अपना अधिकार कर लिया। उसने युनूस अली को मुक्त करके कहा कि वह लाहौर का फौजदार रह सकता है। परन्तु युनूस ने कामरान की सेवा करना उचित नहीं समझा और वह हुमायूं के पास चला गया। फिर कामरान ने सतलज तक पंजाब को दबा लिया। इसके पश्चात् उसने हुमायूं की बड़ी चाटुता की तो अपने पिता के अन्तिम शब्दों का स्मरण करके बादशाह ने काबुल कन्धार और पंजाब कामरान को दे दिये। कामरान ने धन्यवाद दिया और पादशाह की प्रशंसा में एक कविता लिखी। फिर हुमायूं ने हिंसार फिरौजा भी कामरान को दे दिया। 939 हि० (1532-33 ई०) में मिर्जा कामरान ने कन्धार का शासन ख्वाजा किलाबेग को सौंप दिया। इसका कारण यह था कि जब मिर्जा असकरी काबुल आ रहा था तो मार्ग में हजारों लोगों ने उसको हरा दिया था। इससे अप्रसन्न होकर मिर्जा कामरान ने कन्धार असकरी से छीन लिया था।

***

प्रकरण 22

बंगाल के दमन के लिये हुमायूं का प्रयाण, योजना का परित्याग और राजधानी को वापसी

जब साम्राज्य के कामों से बादशाह हुमायूं को अवकाश मिला तो 94 हि० (1534 ई०) में उसने पूर्व की ओर बंगाल की विजय पर ध्यान दिया जब उसकी सेना काल्पी के निकट पहुंची तो उसको खबर मिली कि चित्तौड़ के घेरे के बहाने से सुल्तान बहादुर ने सुल्तान अल्लाउद्दीन के पुत्र तातार खां के नेतृत्व में एक बड़ी सेना खड़ी कर ली है और बड़ी-बड़ी योजनाएं बना रहा है। सलाह करके हुमायूं ने जुमादल अव्वल 94 हि० (नवम्बर-दिसम्बर 1534 ई०) में शत्रु के दमन के लिये सेना भेजी और वह स्वयं वापस लौट गया।

सुल्तान बहादुर हुमायूं के राज्य पर आक्रमण करने से डरता था क्योंकि उसने हुमायूं और सुल्तान इब्राहीम का युद्ध देखा था। परन्तु तातार खां ने उसको प्रेरित किया तो उसने कहा कि 'गुजरात की सेना शाही सेना का सामना करने के योग्य नहीं है परन्तु मैं युक्ति से उसकी सेना को अपनी ओर मिला लूंगा। तो उसने खूब रुपया लुटा कर दस हजार आदमी खड़े कर लिये। इस समय मुहम्मद जमान मिर्जा भी कारागार से भागकर गुजरात पहुंच गया। हुमायूं ने सुल्तान बहादुर को लिखा कि जो लोग भागकर उसके दरबार में गये हैं, उन्हें वापस कर दिया जाये सुल्तान बहादुर ने उत्तर दिया यदि कोई उच्च कुलीन व्यक्ति हमारी शरण में आता है और उसके साथ अच्छा व्यवहार किया जाता है तो इसमें क्या बुराई है और इसमें

कौन-सी सन्धि का उल्लंघन होता है। सिकन्दर लोदी के समय मेरे पिता सुल्तान मुजफ्फर की उससे पूरी मित्रता थी फिर भी सिकन्दर का भाई सुल्तान अल्लाउद्दीन और उसके कई पुत्र आगरा और दिल्ली से गुजरात आ गये थे इसके कारण परस्पर की मित्रता में कोई अन्तर नहीं आया। हुमायूं ने प्रत्युत्तर दिया कि—मेरी सलाह को ध्यान से सुनो और उस परित्यक्त व्यक्ति को हमारे तख्त के सामने भेज दो अन्यथा आपकी मित्रता पर कैसे विश्वास किया जा सकता है।

सुल्तान बहादुर ने मूर्खतावश उपयुक्त उत्तर नहीं दिया ओर तातार खां उसको उकसाता रहा। उसने कहा कि—मुझे साम्राज्य के विरुद्ध रवाना कर दो तब सुल्तान बहादुर ने तातार खां को रणथम्भोर के विरुद्ध रवाना किया और 40 करोड़ दाम खर्च के लिये दिये। सुल्तान बहादुर ने तातार खां के पिता सुल्तान अल्लाउद्दीन को एक बड़ी सेना देकर कालिंजर की ओर भेजा और आदेश दिया कि उधर के प्रदेश में विद्रोह खड़ा किया जाये। इसी प्रकार उसने बुरहानुल मुल्क और कुछ गुजरातियों को नागौर की ओर रवाना किया और पंजाब पर भी सेना भेजी। बहादुर खां स्वयं चित्तौड़ के घेरे में व्यस्त रहा।

सुल्तान अल्लाउद्दीन का नाम आलम खां था। वह सिकन्दर लोदी का भाई था और सुल्तान इब्राहीम का चाचा था। सुल्तान सिकन्दर की मृत्यु के बाद उसने सुल्तान इब्राहीम के विरुद्ध युद्ध किया था। और सरहिन्द में सुल्तान अल्लाउद्दीन की उपाधि धारण करके अफगानों की सेना के साथ आगरे की ओर प्रयाण किया था। सुल्तान इब्राहीम के साथ उसकी हौंडाल [1] के पास लड़ाई हुई। सुल्तान अल्लाउद्दीन ने रात में आक्रमण किया परन्तु उसको क्षति उठाकर वापस लौटना पड़ा। फिर वह बुरे उद्देश्य से काबुल चला गया और जब बाबर की सुल्तान इब्राहीम से लड़ाई हुई तो वह बाबर के साथ था। भारत पर विजय प्राप्त होने पर बाबर ने उसके वास्तविक उद्देश्य को समझ लिया और उसे बदखशा भेज दिया। अफगान सौदागरों की सहायता से वह किला जफर से भाग कर अफगानिस्तान आया और वहां से बलुचिस्तान गया। अन्त में वह गुजरात पहुंच गया।

तातार खां ने 40,000 सवार खड़े कर लिये और बयाना छीन लिया। यह खबर सुनकर हुमायूं पूर्व के अभियान से वापस आगरा लौट आया और मिर्जा असतकरी, मिर्जा हिन्दाल आदि सात बड़े-बड़े सरदारों के नेतृत्व में उसने 18,000 सवार इस विद्रोह के दमन के लिये भेजे। शाही सेना के आगमन की खबर सुनकर तातार खां के सवार उसे छोड़ कर भागने लगे तो उसके पास केवल 3,000 सवार रह गये तातार खां लज्जावश न तो वापस लौट सकता था और न आगे बढ़ सकता था। अन्त में जान से हाथ धोकर मण्डरेल [2] के निकट रणभूमि में उतरा। वह कुछ समय तक लड़ा और फिर घातक बाणों का शिकार हो गया।

***

---

1. सूबा आगरे के सरकार सहार में एक गाँव।
2. यह स्थान बयाना से दूर नहीं है और आगरे के दक्षिण में है।

प्रकरण 23

हुमायूं का गुजरात पर अभियान, गुजरात विजय और सुल्तान बहादुर की पराजय

सुल्तान बहादुर की कार्यवाहियों के कारण हुमायूं ने गुजरात पर आक्रमण करने का निश्चय कर लिया और जमादल अव्वल 941 हि० (8 नवम्बर, 1534) को उसने गुजरात की ओर प्रयाण किया। जब शाही सेना राय सेन दुर्ग के पास पहुंची तो दुर्गाध्यक्ष ने प्रार्थना की कि जब सुल्तान बहादुर का मामला तय हो जायेगा तो यह दुर्ग स्वतः ही बादशाह के हाथ में आ जायेगा। यह बात मानकर हुमायूं ने मालवा की ओर प्रयाण किया। जब शाही सेना सारंगपुर [1] पहुंची तो सुल्तान बहादुर को इसकी खबर मिली। उस समय उसने चित्तौड़ को घेर रक्खा था। जब सुल्तान बहादुर ने अपने साथियों से सलाह की तो उन्होंने कहा कि—चित्तौड़ दुर्ग को तो बाद में भी जीता जा सकता है, अभी तो शाही सेना का मुकाबला करना चाहिये। परन्तु सदर खां ने जो उच्च श्रेणी का बुद्धिमान सरदार था, कहा कि—आप काफिरों से लड़ रहे हैं इसलिये बादशाह आप पर आक्रमण नहीं करेगा। इसलिये सुल्तान बहादुर ने घेरा जारी रक्खा और 3 रमजान 941 हि० (8 मार्च, 1535) को उसने चित्तौड़ दुर्ग को जीत लिया। फिर उसने शाही सेना पर आक्रमण किया जो उस समय उज्जैन के पास थी। बादशाह ने भी प्रयाण किया और दोनों सेनाएं मन्दसौर के परगने में पहुंच गई और एक बहुत बड़ी झील के आमने सामने के तट पर खड़ी हो गई। बादशाह की ओर सुल्तान बहादुर की अग्रसेनाओं में युद्ध हुआ। शाही सेना का नेतृत्व बचक बहादुर और सुल्तान बहादुर की अग्रसेना का नेतृत्व सईद अली खां और मिर्जा मुकीम कर रहे थे। इस लड़ाई में सुल्तान बहादुर की अग्रसेना की हार हुई। तोपखाने के नायक रुमी खां ने बहादुर से कहा ''अपने पास अच्छा बड़ा तोपखाना है, इसलिए हमको तलवारों से लड़ाई करने की क्या आवश्यकता है। यह अच्छा होगा कि हम अराबा (तोप की गाड़ियों की पंक्ति) बनाकर उसके आसपास एक खाई बना लें और फिर दूर से शत्रु पर गोड़े डालें जिससे वह क्षीण होकर छिन्न-भिन्न हो जायेगा। यह युक्ति स्वीकार कर ली गई और निरन्तर लड़ाई होती रही जिसमें गुजराती लोग हारते रहे। [2]''

दो सौ आदमियों का युद्ध

एक दिन शाही सेना के 200 आदमियों ने आदेश के बिना ही शत्रु पर आक्रमण कर दिया। उनका एक गुजराती सेनानायक ने सामना किया। उसके साथ 4 हजार सैनिक थे, परन्तु गुजराती हार कर अपने शिविर में चले गये, फिर शाही सेना के सैनिकों ने गुजराती शिविर में अन्न का जाना बन्द कर दिया।

---

1. यह काली सिन्ध पर स्थित है और इन्दौर से 80 मील दूर है।
2. निरात-ए-सिकन्दरी में लिखा है कि रूमी खां ने धोखा दिया था।

सुल्तान बहादुर का पलायन

4 अप्रैल, 1535 को मुहम्मद जमान मिर्जा 500 या 600 सैनिकों के साथ लड़ने के लिये आगे बढ़ा। गुजराती लोग छिन्न-भिन्न तो हो गये परन्तु शाही सेना तोपों की मार के अन्दर पहुंच गई जिससे उसके कितने ही सैनिक मारे गये। 17 दिन पश्चात् बादशाह ने निश्चय किया कि सुल्तान बहादुर के शिविर पर आक्रमण किया जाये। गुजरातियों की विपत्ति बढ़ती जाती थी। अन्त में 25 अप्रैल को सुल्तान बहादुर बड़ा परेशान हो गया और उसने आदेश दिया कि तोपों में खूब बारूद भर कर उन्हें फोड़ दिया जाये। फिर मिरान मुहम्मद शाह और कुछ अन्य मित्रों के साथ वह अपने डेरों में से भाग गया। पहले तो वह आगरे के मार्ग पर चला जिससे पीछा करने वाले भुलावे में पड़ जायें। वास्तव में वह माण्डु की ओर जा रहा था। सदर खां और इमादुल मुल्क खासा खेल 20 हजार सवारों सहित सीधा माण्डु की ओर प्रयाण कर गया। मुहम्मद जमान मिर्जा कुछ सेना लेकर लाहौर की ओर चला गया। वह वहाँ उपद्रव करना चाहता था। उस दिन हुमायूं 30 हजार सशस्त्र सैनिकों के सहित सायंकाल से प्रातःकाल तक खड़ा रहा और इस रहस्यमयी विजय के समाचार की प्रतीक्षा करता रहा। एक पहर के बाद ज्ञात हुआ कि सुल्तान बहादुर माण्डु की ओर भाग गया है। तब शाही सेना ने उसका शिविर लूट लिया जिसमें बहुत से हाथी और घोड़े मिले। खुदावन्द खां को बन्दी बना लिया गया और उसके साथ अच्छा बर्ताव किया गया। वह सुल्तान मुजफ्फर का उस्ताद और वजीर था। भागी हुई सेना का पीछा करने के लिये यादगार नासीर मिर्जा, कासिम सुल्तान और मीर हिन्दू बेग को भेजा गया।

जब सदर खां और इमादुल मुल्क रवाना हो गये तो शाही सेना सीधी माण्डु दुर्ग पर गई। उसके पीछे ही बादशाह गया और नलचा में ठहर कर उसने दुर्ग के चारों ओर अपना शिविर लगा दिया। रोमी खां विरोधी सेना को छोड़कर बादशाह की सेना में आ गया और उसको प्रतिष्ठा-सूचक खिल्लत प्रदान किया गया। 4 थे दिन इधर-उधर घूमकर सुल्तान बहादुर ने माण्डु के दुर्ग में प्रवेश किया, फिर दोनों शासकों में सन्धि वार्ता शुरू हुई जिसके अनुसार गुजरात और चित्तौड़ सुल्तान बहादुर के पास रहते थे और माण्डु तथा उसके पास का प्रदेश बादशाह के हाथ में आना था। जब यह बात चल रही थी। तो प्रातःकाल माण्डु के पहरेदारों ने इधर-उधर गश्त लगाना छोड़ दिया और 200 शाही सैनिकों ने पीछे से सीढ़ियों और रस्सों के द्वारा प्रवेश किया और अन्दर उतर कर दुर्ग का द्वार खोल दिया और अपने घोड़े अन्दर लेकर उन पर सवार हो गये। इसकी खबर माण्डु के मल्लु खां को जिसकी उपाधि कादिर शाह थी, मिली। वह घोड़े पर चढ़कर सुल्तान के पास गया जो उस समय सोया हुआ था। जगाने पर वह तीन चार आदमियों के साथ अर्द्ध निद्रा में ही भाग गया। मार्ग में सिलहदी का पुत्र भूपतराय लगभग 20 सवार साथ लेकर उससे आ मिला। जब वे दुर्ग द्वार से बाहर निकल रहे थे तो शाही सेना के लगभग 200 सवारों ने उनका सामना किया तो सुल्तान बहादुर मल्लू खां और कुछ अन्य साथी अपना रास्ता चीरकर सूनगढ़ [1] दुर्ग पर पहुंच गये। बहादुर

1. यह माण्डु दुर्ग के अन्दर का भाग है।

ने रस्सों से बांधकर घोड़े दुर्ग प्राचीर से नीचे उतार दिये और फिर उसने गुजरात का रास्ता लिया। उस समय कासिम हुसेन खां दुर्ग के निकट खड़ा हुआ था। बूरी नामक एक उजबेग ने जो सुल्तान की नौकरी छोड़कर कासिम हुसेन खाँ की नौकरी करने लगा था, बहादुर को पहचान लिया और हुसेन खां को सूचित किया। परन्तु हुसेन खां ने कोई ध्यान नहीं दिया। अतः बहादुर अपनी जान लेकर भाग गया और चांपानेर पहुंचते-पहुंचते उसके साथ 1,500 आदमी हो गये। वहाँ पहुंचने पर उसने चांपानेर से यथा शक्ति अधिक से अधिक कोष दीयू के बन्दरगाह पर भेज दिया।

इस विजय का वृत्तान्त

सदर खां और उसके आदमी उसके मकान के पास लड़ रहे थे। वह आहत हो गया था परन्तु उसने लड़ना बन्द नहीं किया था। फिर सरदार लोग उसके घोड़े की लगाम पकड़ कर उसको सुनगड़ ले गये। उसके साथ अन्य लोगों ने भी वहाँ शरण ली। उनमें सुल्तान आलम भी था। शाही सैनिकों ने तीन दिन तक शत्रु के मकानों को लूटा। फिर लम्बी वार्ता के बाद घिरे हुये लोगों को प्राण दान दिया गया। सुल्तान आलम ने राजद्रोह किया था इसलिये उसकी बड़ी दुर्गति की गई परन्तु सदर खां के प्रति कृपा प्रकट की गई। तीन दिन बाद हुमायूं ने 30,000 सवारों सहित गुजरात की ओर प्रयाण किया। शिविर के लिये आदेश हुआ कि वह पीछे-पीछे चले।

चांपानेर के पास पहुंच कर हुमायूं ठहर गया। उसने एक तालाब के पास डेरे लगाये जिसका घिराव तीन कोस है। यह खबर सुनकर सुल्तान बहादुर दुर्ग को दृढ़ करके खम्भात को भाग गया। उसके आदेशानुसार चांपानेर को आग लगा दी गई। हुमायूं ने आग बुझवाई और मीर हिन्दू बेग और अन्य लोगों को चांपानेर में छोड़कर एक हजार सवारों सहित उसने सुल्तान बहादुर का पीछा करना शुरू किया। जब सुल्तान खम्भात पहुंचा तो तुरन्त ही वह दीयू की ओर चल दिया। उसने उन एक सौ युद्ध पोतों को जला दिया जो उसने पुर्तगालियों के विरुद्ध तैयार किये थे। उसको आशंका थी कि उनका उपयोग करके शाही सेना उसका पीछा करेगी जिस दिन सुल्तान ने दीयू की ओर प्रस्थान किया। उस दिन हुमायूं ने खम्भात पहुंचकर समुद्र के तट पर डेरे लगवाये और सुल्तान बहादुर का पीछा करने के लिये वहां से कुछ सेना भेजी। जब सुल्तान दीयू पहुंच गया तो शाही सैनिक बहुत-सी लूटमार करके वापस आ गये। ईश्वर की कृपा से माण्डु और गुजरात पर 942 हिज्री (1535 में) विजय प्राप्त हो गई।

शाही सेना पर आक्रमण

जब शाही सेना खम्भात में ठहरी हुई थी तो मलिक अहमद लाड और रुकन दाऊद ने जो सुल्तान बहादुर के सैनिक अफ़सर थे उस प्रदेश के कोली और गंवार लोगों से मिलकर सोचा कि पादशाह के साथ केवल थोड़े से लोग हैं इसलिये रात में उस पर आक्रमण करने का यह अच्छा अवसर है। उन्होंने तैयारी कर ली परन्तु सौभाग्यवश एक वृद्धा स्त्री ने पादशाह को इसकी खबर दे दी और कहा—मेरे पुत्र को आपके एक आदमी ने रोक रखा है, इस

खबर का मैं यही पुरस्कार चाहती हूं कि उसको छोड़ दिया जाये। तब शाही सेना तैयार रखी गई। प्रात:काल होते-होते 6,000 भीलों और बंवारों ने शाही डेरों पर आक्रमण किया। बादशाह और कुछ सेना पहिले ही एक ऊंची पहाड़ी पर चले गये थे। आक्रमणकारियों ने शिविर को लूटना शुरू किया। जिसमें बहुत से दुर्लभ ग्रन्थ लुट गये। शाहजहां अपने साथ ऐसे ग्रन्थ रखा करता था। इनमें एक ग्रन्थ तीमूर नामा था जिसका अनुवाद मुल्ला सुल्तान अली ने किया था और जिसमें उस्ताद बीहजाद ने चित्र बनाये थे। इस समय यह पुस्तकालय में है। फिर थोड़ी देर बाद शाही सेना लुटेरों पर टूट पड़ी और बाणों की वर्षा करके उन्हें भगा दिया। उस वृद्धा स्त्री की इच्छा पूरी हो गई। फिर हुमायूं ने क्रोध के आवेश में खम्भात को लूटने और जलाने का आदेश दिया।

चांपानेर का घेरा

सुल्तान बहादुर का पीछा करना छोड़कर हूमायूं चांपानेर वापस लौट आया और उसको चार मास तक घेरे रहा। इख्तियार खां ने बड़ी दृढ़ता के साथ दुर्ग की रक्षा की। आसपास के लकड़हारे नदी-नालों और सघन जंगलों में से दुर्गरक्षकों के पास अन्न और घी पहुंचा दिया करते थे जो रस्सों से ऊपर खीच लिया जाता था और रस्सों द्वारा ही रुपये डाल दिये जाते थे।

बादशाह दुर्ग में प्रवेश करने का मार्ग टटोला करता था। एक बार उसको वे लोग मिल गये जो अन्न और घी बेचकर वापस जा रहे थे। उनको दबाया गया तो उन्होंने सच बात कह दी और वह स्थान बतला दिया जहां से अन्न अन्दर पहुंचाया जाता था। वह 60-80 गज ऊंचा था और बड़ा ढालू था। इसलिये उस पर चढ़ना कठिन था। तब बादशाह के आदेश से लोहे की 70-80 कीलें एक एक गज के अन्तर पर दायीं और बांयीं ओर गाड़ दी जिनके द्वारा वीर लोग ऊपर चढ़ गये। जब 39 आदमी चढ़ चुके तो बादशाह भी चढ़ गया परन्तु बादशाह से भी आगे बैराम खां था। इस प्रकार 300 आदमी अन्दर पहुंच गये। फिर आदेश दिया कि जो सेना तोपों के पास नियत है वह आक्रमण करे। दुर्ग की सेना हक्की बक्की हो गई। उसने देखा कि 300 आदमी पीछे से आ गये हैं और बाणों की वर्षा कर रहे हैं। जब उनको मालूम हुआ कि बादशाह स्वयं उस सेना में है तो वे व्याकुल हो गये विजय के बाजे बजने लगे। इख्तियार खां एक ऊँचे स्थान पर जाकर छिप गया। दूसरे दिन उसको प्राणदान देकर बुलाया गया और उस पर बड़ी कृपा की गई। यह अच्छा कवि था और ज्योतिष तथा गणित जानता था। यह विजय 19-26 जुलाई, 1536 को प्राप्त हुई थी।

सुल्तान बहादुर फिर संभल गया

शाही सेवकों ने महेन्द्री तक गुजरात पर कब्जा कर लिया था परन्तु वहां के प्रशासन के लिये किसी को नियुक्त नहीं किया गया था। अत: कृषकों ने सुल्तान बहादुर से निवेदन किया कि भूमि कर तैयार है, कोई संग्रह करने वाला चाहिये। तब सुल्तान बहादुर ने ईमादुलमुल्क को इस कार्य के लिये नियुक्त किया और वह 200 सवारों सहित अहमदाबाद की ओर रवाना हो गया। अहमदाबाद पहुंचते-पहुंचते दस हजार सवार इकट्ठे कर लिये। थोड़े

समय में ही उसके पास तीस हजार सवार हो गये। फिर जूनागढ़ का सुबेदार मुजाहिद खां दस हजार सवारों सहित उससे आ मिला।

चांपानेर में आमोद-प्रमोद

चांपानेर की विजय से बादशाह को विपुल कोष प्राप्त हुआ था इसलिये वह बड़े-बड़े भोज देने लगा और दुरुया तालाब की पाल पर आमोद-प्रमोद करने लगा। इसमें उसने बहुत समय नष्ट कर दिया।

अहमदाबाद की ओर प्रयाण और गुजरात की व्यवस्था

फिर हुमायूं ने चंपानेर से अहमदाबाद की ओर प्रयाण किया और महेन्द्री नदी के तट पर अपने डेरे लगाये। ईमादुलमुल्क ने सामना करने का साहस किया और बादशाह की ओर कूच किया। बादशाह एक मंजिल चलता था तो ईमाद भी एक मंजिल ही चलता था। मिर्जा असकरी शाही सेना के अग्रभाग में था और मुख्य सेना से कई मंजिल आगे कूच कर रहा था। उसके साथ ईमाद का युद्ध हुआ। जिसमें मिर्जा असकरी हार ही रहा था कि यादगार नासिर मिर्जा कासिम हुसने खां और हिन्दू बेग आ गये और उन्होंने शोर मचाया कि शाही सेना आ गई है तब तुरन्त ही शत्रु हार गया। यादगार नासिर मिर्जा सबसे आगे था। उसी ने सब से अधिक वीर कार्य किया। लड़ाई में से ईमाद अधमरा होकर वापस लौटा। इतने में ही शाही सेना भी आ गई और शत्रु के 4,000 आदमी मारे गये। इस विजय के बाद बादशाह ने गुजरात के प्रशासन की व्यवस्था की और इस कार्य के लिये हिन्दू बेग को नियुक्त किया। पट्टन में मिर्जा यादगार नासिर भडोच नोसारी और सूरत कासिम हुसेन सुल्तान के सुपुर्द किये। खम्भात और बड़ौदा दोस्त बेग ईश्हाक आका को दिये गये और महमूदाबाद मीर बूचक को सौंपा गया।

बादशाह की वापसी

जब गुजरात की व्यवस्था हो गई तो बादशाह ने दीऊ बन्दरगाह की ओर प्रयाण किया। जब सेना प्रस्थान कर रही थी तो राजधानी आगरा से खबर आई कि बादशाह की अनुपस्थिति के कारण विद्रोही लोगों ने राजद्रोह और उत्पात खड़ा कर दिया है। मालवा से भी सवार यह खबर लेकर आये कि सिकन्दर खां और मल्लू खां ने हिन्दिया के जागीरदार मिहत्तर जम्बूर पर आक्रमण करके उसकी सम्पत्ति छीन ली है। विद्रोही बहुत से खड़े हो गये हैं। दरवेश अली किताबदार बन्दूक की गोली से मारा गया है और बहुत-से लोगों ने आत्मसमर्पण कर दिया है। तब बादशाह ने निश्चय किया कि वापस लौट कर कुछ समय के लिये माण्डु को राजधानी बनाया जाये जिसमें मालवे के विद्रोहियों का उच्छेद हो सके और वहां से गुजरात की भी व्यवस्था की जा सके। अतः गुजरात मिर्जा असकरी के सुपुर्द किया गया और उसके पास बहुत-से अधिकारी नियत किये गये। फिर बादशाह वापस लौटा और खम्भात बड़ौदा, भड़ौच और सूरत होता हुआ वह असीर और बुहरानपुर पहुंचा। बुहरानपुर में सात दिन ठहर कर वह माण्डु आया। उसके आते ही विद्रोही लोग लुप्त हो गये। बादशाह को माण्डू का

जलवायु बहुत अच्छा लगा। वहां ठहर कर उसने अपने सेवकों और जागीरदारों को सन्तुष्ट किया।

***

प्रकरण 24

मिर्जा असकरी का विद्रोह की भावना से गुजरात से प्रयाण

असकरी गुजरात में लगभग तीन मास ही टिका होगा कि शत्रु ने उपद्रव करना शुरू कर दिया। खां जहां सिराजी और रूमी खां ने मिलकर नौसारी पर कब्जा कर लिया। जो उस समय कासिम हुसेन खां उजबेग के रिश्तेदार अब्दुल्ला खां के सुपुर्द था। अब्दुल्ला खां वहां से भडौच आ गया। इसी समय विद्रोहियों ने सूरत का बन्दरगाह भी छीन लिया। खां जहां स्थल-मार्ग से भडौच आया और रूमी खां जहाजों द्वारा आया जो तोपों और बन्दूकों से सुसज्जित थी। कासिम हुसेन खां भयभीत होकर चांपानेर चला गया और फिर वहां से मिर्जा असकरी और हिन्दू बेग के पास सहायतार्थ अहमदाबाद जा पहुंचा। सईद ईसहाक ने खम्भात पर कब्जा कर लिया। तब मिर्जा असकरी ने यादगार नासिर मिर्जा को पाटन से अहमदाबाद बुला लिया। दरिया खां और मुहाफिज खां राईसेन से सुल्तान के पास दीऊ जा रहे थे। उन्होंने जाते हुए पाटन छीन लिया। अधिकारियों में परस्पर फूट थी इसलिये यादगार नासिर मिर्जा का गजनफर नामक सेवक 300 सवारों सहित सुल्तान बहादुर से जा मिला। उसने सुल्तान को अहमदाबाद बुलवाया और कितने ही लोगों ने सुल्तान को स्वामिभक्ति के पत्र लिखे। तब सुल्तान बहादुर अहमदाबाद की ओर रवाना हुआ। असकरी मिर्जा यादगार नासिर मिर्जा, हिन्दू बेग और कासिम हुसेन खां ने असावल के सपीप 20,000 सवारों के साथ सुल्तान का सामना किया। तीन दिन तक सेनायें आमने-सामने खड़ी रहीं परन्तु फिर असकरी मिर्जा आदि बिना लड़े ही चांपानेर चले गये।

सुल्तान बहादुर ने उनका पीछा किया। उसकी अग्रसेना का नेतृत्व सईद मुबारक बुखारी कर रहा था। शाही सेना के पृष्ठ भाग का नायक यादगार नासिर मिर्जा था। वह सुल्तान की सेना से वीरतापूर्वक लड़ा और उसके कितने ही सैनिक मारे गये। परन्तु मिर्जा की बाहु में भी घाव लग गया। शत्रु महमुदाबाद के निकट ठहर.गया और मिर्जा मुख्य सेना में आ गया। मिर्जा असकरी का उत्साह भंग हो गया था। उसने ज्यों-त्यों महिन्द्री नदी को पार किया और उसके बहुत-से सैनिक उसके बहाव में समाप्त हो गये। सुल्तान नदी के तट पर आ पहुँचा और मिर्जा चांपानेर चला गया। तर्दी बेग खां उनके स्वागत की व्यवस्था करके वापस अपने स्थान पर चला गया।

अगले दिन मिर्जाओं ने तर्दी बेग को कपट सन्देश भेजा कि हम लोग बड़ी विपत्ति में हैं इसलिये सैनिकों के लिये कोष का कुछ भाग भेज दिया जाये। हम ताजा होकर शत्रु पर आक्रमण करेंगे। हम माण्डु सूचना भेज रहे हैं परन्तु सवार को वहां पहुंचने में छः दिन लगेंगे। तर्दी बेग ने यह बात नहीं मानी तो मिर्जाओं ने उसको पकड़ कर सारा कोष हस्तगत कर लेने का और मिर्जा असकरी की सर्वोपरि सत्ता स्थापित करने का षड़यन्त्र किया। वे चाहते थे कि यदि सुल्तान बहादुर नहीं हराया जा सकेगा तो वे आगरे की ओर कूच करेंगे क्योंकि—हुमायूं को मालवे का जलवायु पसंद है और राजधानी आगरा की रक्षा का उस समय कोई उपाय नहीं है। तर्दी बेग मिर्जाओं से मिलने के लिये आ ही रहा था कि—उसको इस षड्यन्त्र का पता लग गया। उसने वापस दुर्ग में पहुंच कर मिर्जाओं से कहलाया कि उनका वहां ठकरे रहना उचित नहीं है। उन्होंने उत्तर भेजा कि हम जा रहे हैं। परन्तु आप बाहर आयें तो ही कुछ विषयों पर परामर्श करें और फिर आपसे विदा लें। तर्दी बेग उनके आशय को जानता था इसलिये नहीं आया और अगले दिन प्रातःकाल उन पर तोपें चलाईं। मिर्जा लोग कुभावनाओं सहित आगरे की ओर चले। जब तक मिर्जा लोग चांपानेर में थे तब तक सुल्तान बहादुर ने महिन्द्री नदी को जो चांपानेर से 15 कोस दूर है पार नहीं किया, परन्तु जब उसे मालूम हुआ कि मिर्जा लोग आगरे की ओर कूच कर गये हैं तो नदी पार करके उसने चांपानेर पर आक्रमण किया। तर्दी बेग खां दुर्ग को छोड़ गया और माण्डु में बादशाह के पास चला गया। उसने मिर्जाओं के दुष्ट इरादों की बादशाह को सूचना दी तो वह चित्तौड़ के मार्ग से रवाना हो गया। चित्तौड़ के पास वह उनके निकट पहुंच गया तो मिर्जाओं ने उसके प्रति अधीनता प्रकट की। बादशाह ने उनको क्षमा कर दिया और उनको अच्छी भेंटे दीं।

मुहम्मद सुल्तान मिर्जा का विद्रोह

बादशाह के आगरा वापस जाने का एक कारण यह भी था कि मुहम्मद सुल्तान मिर्जा और उसके पुत्र उलूक मिर्जा ने विद्रोह कर दिया था। इसका उल्लेख पहिले ही किया जा चुका है। अब उन्होंने फिर उत्पात शुरू कर दिया और बेग्राम परगने पर आक्रमण करके कन्नौज की ओर बढ़ने लगे। वहाँ खुसरो कोकलताश के पुत्रों ने कन्नौज सुपुर्द करके प्राणों की भिक्षा मांगी। मिर्जा हिन्दाल जो उस समय आगरा में था इस उत्पात को दबाने के लिये रवाना हुआ। जब उसने बिलग्राम के पास गंगा नदी को पार किया तो दोनों सेनाओं में लड़ाई हुई, जिसमें शाही सेना तुरंत ही विजयी हो गई और फिर शत्रु का पीछा करती हुई अवध पहुंच गई। वहाँ उलूक बेग मिर्जा और उसके पुत्रों ने सेना खड़ी कर रक्खी थी जिससे पुनः युद्ध हुआ। इसी बीच खबर आई कि शाही सेना गुजरात से आगरा आ पहुंची है। मिर्जा हिन्दाल विजय प्राप्त करके वापस आया और बादशाह के दरबार में उपस्थित हुआ।

सुल्तान बहादुर का अन्त

जब शाही सेना आगरा आ गयी तो बीजागढ़ के फौजदार भूपाल राय ने माण्डु को अरक्षित समझकर वहाँ प्रवेश किया। कादिर शाह भी माण्डु आ गया और मीरान मुहम्मद

फारुकी बुरहानपुर से वापस लौट आया। सुल्तान बहादुर दो सप्ताह तक चांपानेर में ठहर कर दीऊ को लौट गया। फिर उसने फिरंगी वाइसराय को जो बन्दरगाहों का अध्यक्ष था भेंटे भेजकर मिलने के लिये बुलाया। जब सुल्तान दीऊ आया उसी समय वाइसराय भी समुद्रमार्ग से जहाजों द्वारा वहां पहुंचा। उसके सैनिक थे। वाइसराय ने समझा कि अब सुल्तान स्वतन्त्र है इसलिये भेंट के साथ कपट-व्यवहार करेगा। अत: बीमारी का बहाना करके उसने सुल्तान से कहलाया कि अच्छा हो जाने पर भेंट होगी। तब 3 रमजान 943 हिज्री (13 फरवरी, 1537) को सायंकाल नाव द्वारा वह वाइसराय की कुशल पूछने के लिये गया तो उसे विदित हुआ कि बीमारी केवल बहाने की बात थी। यह देखकर तुरन्त ही वह आने लगा तो वाइसराय ने उसे रोका और कहा कि आपके लिये कुछ भेंटें आ जाने दीजिये। सुल्तान यह कहकर कि भेंटें बाद में भेज दीजिये अपने जहाज की ओर आने लगा तो फिरंगी काजी ने उसको रोका। तब सुल्तान ने तुरन्त ही तलवार से उसे चीर डाला और वह कूद कर अपने जहाज में चला गया। तब पुर्तगाली नावों ने उसको सब ओर से घेर लिया। यह देकर सुल्तान और रुमी खां[1] समुद्र में कूद पड़े। रूमी खां को तो उसके एक फिरंगी मित्र ने निकाल लिया परन्तु सुल्तान डूब कर मर गया। 'फिरंगी-यान-ए-बहादुर कुश' से उसके मरने की तारीख 943 हिज्री जो 1531 के बराबर है, निकलती है।

जब सुल्तान बहादुर की इस प्रकार मृत्यु हो गई तब मुहम्मद जमान मिर्जा ने शोक मनाया और मिथ्याचार द्वारा गुजरात के कोष के एक भाग पर अपना अधिकार कर लिया। कोष का दूसरा भाग फिरंगियों के हाथ में पड़ गया और कुछ लूट लिया गया। यह मिर्जा अपने को सुल्तान बहादुर की माता का पुत्र बतलाता था और फिरंगियों से कहता था कि मेरे नाम का खुत्बा पढ़वाओ। फिर ईमादुलमुल्क ने उसको हरा कर वहां से निकाल दिया और उसने हुमायूं बादशाह की शरण ली।

जब हुमायूं आगरा पहुंचा तो आस-पास के विद्रोही लोगों ने उसके प्रति अधीनता प्रकट की।

***

प्रकरण 25

बादशाह हुमायूं का बंगाल के दमन के लिये प्रयाण और राजधानी को उसकी वापसी

इसी बीच में खबर आई कि शेरखां पूर्वी प्रान्तों में उत्पात कर रहा है। हुमायूं पहिले से ही बंगाल विजय की योजना बना रहा था, परन्तु बीच में उसको गुजरात पर अभियान

1. यह यूरोपियन था। इसी ने सुरत का दुर्ग बनाया था।

करना पड़ा इसलिये योजना स्थगित करनी पड़ी। अब निश्चय कर लिया गया कि शेरखां का दमन करके बंगाल प्रदेश को जीता जाये।

शेर खां का वृत्तान्त

शेर खां अफगानों की सूर जाति का था। उसका पुराना नाम फरीद था और वह इब्राहीम शेर खेल के पुत्र हसन का लड़का था। इब्राहीम एक साधारण-सा घोड़ों का व्यापारी था और नारनाल के प्रदेश में शमला गांव में रहता था। हसन घोड़ों के व्यापार का काम छोड़कर सैनिक बन गया और लम्बे अर्स तक राईसाल दरबारी के पितामह रायमल की उसने नौकरी की। रायमल बादशाह की सेवा कर रहा है। वहां से हसन सहसराम के ईलाके में चौन्ड पहुंचा और नासिर खां लोहानी की नौकरी करने लगा। लोहानी, सिकन्दर लोदी का एक अफसर था। जब नासिर खां की मृत्यु हो गई तो हसन ने उसके भाई दौलतखां की नौकरी करना शुरू कर दिया। तदनन्तर वह बबन का एक अनुचर बन गया। बबन सुल्तान सिकन्दर लोदी का एक बड़ा सरदार था। उसके यहां रहकर हसन ने प्रसिद्धि प्राप्त की। फरीद धृष्टता करके अपने पिता से अलग हो गया। कुछ समय तक उसने ताज खां लोदी की सेवा की और फिर अवध में कासिम हुसेन उजबेग की सेवा की। कुछ समय तक उसने सुल्तान जूनेद बरलास की सेवा की जिसने अवसर देखकर उसका बाबर से परिचय करवाया। उसे देखते ही दूरदर्शी बाबर ने कहा—''सुल्तान बरलास इस अफगान की आंखों में तूफान भरा हुआ है। इसको पकड़कर रखो। बाबर की दृष्टि को देखकर फरीद डर गया और सुल्तान जूनेद उसको पकड़ता उससे पहिले ही वह भाग गया। फिर शेर खां के पिता की मृत्यु हो गई तो पैतृक सम्पत्ति उसके हाथ में आ गई। सहसराम के परगनों में और चोन्ड के जंगलों में जो रोहतास का परगना है, शेरशाह चोरियां और डकैतियां करने लगा। गुजरात के सुल्तान बहादुर ने व्यापारियों के द्वारा रुपया भेजकर उसको अपने पास बुलाया। रुपया तो उसने ले लिया परन्तु गया नहीं। फिर वह गांवों और कस्बों को लूटता रहा, और थोड़े-से समय में उसने बहुत-से बदमाश अपने पास एकत्र कर लिये। इसी बीच में बिहार का सुबेदार जो एक लोहानी सरदार था, मर गया। उसके कोई सन्तान नहीं थी। शेर खां ने हमला करके बहुत-सी सम्पत्ति हथिया ली। फिर उसने उलूग मिर्जा को हराया। तत्पश्चात् बनारस पर आक्रमण किया और पटना को दबा लिया। बंगाल की सीमा पर स्थित सूरजगढ़ के पास उसने एक लड़ाई लड़ी। जिसमें शेर खां को विजय मिली। फिर एक वर्ष तक वह बंगाल के शासक नसरतशाह से युद्ध करता रहा और गौड़ को उसने लम्बे अर्से तक घेरे रखा।''

उड़ीसा के राजा के पास एक विद्वान् ज्योतिषी था। उसने शेर खां को लिखा कि एक वर्ष तक तो बंगाल पर विजय प्राप्त नहीं होगी परन्तु फिर अमुक दिन उसको सफलता मिलेगी। उस दिन गंगा को पैदल चलकर पार किया जा सकेगा। भाग्यवश ज्योतिषी का कहना सत्य निकला।

जब हुमायूं मालवा और गुजरात में व्यस्त था तो शेर खां ने अपनी शक्ति खूब बढ़ा ली। उसका शेष वृत्तान्त हुमायूं के इतिहास के साथ-साथ लिखा जायेगा।

हुमायूं का बंगाल की ओर प्रयाण

जब बंगाल की ओर प्रयाण करने का निश्चय हो गया तो मीर फक्र अली को दिल्ली का हाकिम नियुक्त किया गया और आगरा मीर मुहम्मद बख्सी के सुपुर्द किया। यादगार नासिर मिर्जा को अपनी जागीर काल्पी में भेज दिया गया। नूरुद्दीन मुहम्मद मिर्जा का विवाह हुमायूं की बहिन गुलरंग बेगम से हुआ था। उसकी पुत्री का नाम सलीमा सुल्तान बेगम था, उसको कन्नौज का हाकिम नियुक्त किया। इस प्रकार अपने राज्य की व्यवस्था करके अपनी महिलाओं के साथ हुमायूं ने नाव द्वारा पूर्व की ओर प्रयाण किया। मिर्जा असकरी और मिर्जा हिन्दाल उसके साथ थे। इनके अतिरिक्त इब्राहीम बेग, चाबूक, जहांगीर कुली बेग, आदि कई बड़े-बड़े अमीर भी साथ थे। सेना ने जल और स्थल मार्ग से कूच किया। बादशाह कभी नाव द्वारा चलता था और कभी घोड़े पर सवार होकर कूच करता था। उस समय शेर खां चुनार के दुर्ग में था। जब सेना चुनार के दुर्ग के निकट पहुंची तो मुहम्मद जमान ने गुजरात से आकर बादशाह को सलाम किया। बादशाह की बहिन मासूमा सुल्तान बेगम इस मिर्जा की पत्नी थी। उसने आगरा में बादशाह से निवेदन किया था कि मिर्जा का अपराध क्षमा कर दिया जाये। तब बादशाह ने उसको बुलाया था। जब वह आया तो बड़े-बड़े अफसर उसके स्वागत के लिये भेजे गये और जब वह एक मंजिल की दूरी पर आ पहुंचा तो मिर्जा असकरी और मिर्जा हिन्दाल उसके स्वागत के लिये गये और उसे आदरसहित शाही शिविर में ले आये। जब वह दरबार में आया तो बादशाह ने उसके साथ कृपापूर्ण व्यवहार किया। इसी प्रकार की उदारता शाहिन शाह अकबर ने भी कई बार की थी।

जब शेर खां को शाही सेना के आगमन की सूचना मिली तो चुनार के दुर्ग में वह अपने पुत्र कुतुब खां और कई अन्य लोगों को छोड़कर बंगाल की ओर रवाना हो गया और उसने बंगाल को जीत लिया जिसमें उसको बहुत लूट मिली। हुमायूं के साथ रूमी खां था जो बड़े-बड़े दुर्गों को जीतने में कुशल था और जो सुल्तान बहादुर की नौकरी छोड़कर अब शाही नौकर बन गया था। हुमायूं ने उसको मीर आतिश का पद प्रदान कर दिया था। उसने शाबात बनाया और दुर्ग प्राचीर तक सुरंग लगा दिये। जब उनमें बत्ती लगाई तो पृथ्वी कांप उठी। कुतुब खां भाग गया और सेठ लोगों ने प्राणों की भिक्षा मांगी। इस प्रकार दुर्ग बादशाह के हाथ में आ गया। प्राण भिक्षा मांगने वालों की संख्या 2000 थी। मूईद बेग दुलदाई ने चालाकी करके इन सब के हाथ कटवा दिये। बादशाह ने इसको बहुत बुरा माना। रूमी खां का सम्मान बढ़ गया और उसको चुनार का दुर्गाध्यक्ष बना दिया गया। लोग उससे द्वेष करने लगे और उसको विष देकर मार दिया गया।

अब हुमायूं का बंगाल अभियान पर ध्यान गया तो बंगाल का शासक नसीब शाह आहत होकर दरबार में आया और उसने शेर खां के विरुद्ध सहायता मांगी। बादशाह ने उसको सान्त्वना दी और शाही सेना ने जल और स्थल मार्ग से प्रयाण किया। जब शाही शिविर पटना में था तो बादशाह को सलाह दी गई कि वर्षा का आरम्भ हो गया है इसलिये अभियान स्थगित कर दिया जाये और वर्षा के अन्त में फिर शुरू किया जाये। परन्तु बंगाल के शासक ने कहा कि अभी शेर खां की स्थिति दृढ़ नहीं हुई है, इसलिये शीघ्रता से प्रयाण करके उसको निर्मूल

किया जा सकता है, इसलिये प्रयाण जारी रखा गया। जब शाही सेना मूंगेर पहुंची तो खबर आई कि शेर खां का पुत्र जलाल खां 15,000 सैनिकों सहित गढ़ी पर आ पहुंचा है जो बंगाल का फाटक है। जलाल खां ने अब अपना नाम सलीम खां रख लिया था और उसके साथ खवास खां बरमजीद, सरमस्त खां, हैबत खां नियाजी और बहार खां थे।

शेर खां की युद्ध युक्ति

जब शेर खां ने सुना कि शाही सेना आ रही है तो वह लड़ा नहीं और झारखण्ड के मार्ग से आगे चला गया। वह चाहता था कि जब शाही सेना बंगाल में पहुंचे तो वह बिहार जाकर उत्पात करे। उसने जलाल खां और बहुत-से आदमियों को गढ़ी के निकट नियुक्त किया और यह व्यवस्था की कि जब शाही सेना निकट आये और वह स्वयं शेरपुर पहुंच जाये तो वे लोग उससे आकर मिले और लड़ाई न करे। हुमायूं ने भागलपुर से इब्राहीम बेग चाबुक आदि कई सरदारों को पांच-छ: हजार सैनिक देकर आगे भेजा। जब शाही सेना निकट आई तो जलाल खां ने अपने पिता के आदेश का अनुसरण नहीं किया और उस पर आक्रमण कर दिया। शाही सेना अभी लड़ने के लिये तैयार भी नहीं थी। बैराम खां ने शत्रु को कई बार पीछे धकेला परन्तु शाही सेना के कई बड़े-बड़े अमीर मारे गये। यह खबर सुनकर हुमायूं ने उधर की ओर प्रयाण किया तो कोलगोंग के पास हुमायूं की खास नाव डूब गई। जब शाही सेना निकट आई तो अफगान भाग गये। मिर्जा हिन्दाल को तीरहुत और पूर्णिया भेज दिया गया जो उसकी जागीर थी। वह वहां से अच्छी तैयारी करके आना चाहता था। फिर हुमायूं कूच दर कूच बंगाल की ओर रवाना हुआ और 945 हिज्री (30 मई, 1538) से (18 मई, 1939) में उस प्रान्त पर विजय प्राप्त हो गई। बंगाल का उत्तम कोष लेकर शेर खां झाड़खण्ड के मार्ग से रोहतास पहुंच गया।

रोहतास दुर्ग शेर खां ने छीन लिया

रोहतास दुर्ग के पास पहुंच कर शेर खां ने राजा चिन्तामन के पास अपने आदमी भेजे। यह ब्राह्मण था और दुर्ग का मालिक था। शेर खां ने कहलाया कि मैं संकट में हूं। मानवता के नाते मेरे कुटुम्बियों और आश्रितों को दुर्ग में आने दिया जाये। मैं आपका हित करूंगा। शेर खां की चाटुता और कपट में सीधा-साधा राजा फंस गया। शेर खां मित्रता मानता ही नहीं था। उसने 600 पालकियां तैयार करवायीं। प्रत्येक पालकी में दो जवान बिठाये और पालकियों के दोनों ओर दासियां बिठा दीं। इस प्रकार उसने अपने सैनिक दुर्ग में घुसा दिये। इस प्रकार अपने कुटुम्ब को और सैनिकों को वहाँ रखकर उसने बंगाल का मार्ग बन्द कर दिया।

हिन्दाल का विद्रोह

हुमायूं को बंगाल का जलवायु सुखद प्रतीत हुआ। वह वहीं आमोद-प्रमोद करने लगा। सेना को भी सुस्ती करने के लिये विपुल सामग्री मिल गई। इसी समय दुष्ट लोगों की सलाह से भरी वर्षा ऋतु में अनुमति के बिना ही हिन्दाल आगरा की ओर चल दिया और राजधानी में पहुंचकर राजद्रोहात्मक योजनाएं बनाने लगा तथा बादशाह बनने की इच्छा करने लगा।

इस परिस्थिति को अनुकूल समझ कर शेरशाह ने अपने उत्पात और राजद्रोह का विस्तार किया। उसने बनारस का घेरा डालकर वहां के फौजदार मीर फजली को मार डाला और वहां से वह जौनपुर पहुंचा जो बाबा बेग जलेर के सुपुर्द था। उसने जौनपुर को दृढ़ किया। इब्राहीम बेग चाबुक का पुत्र यूसुफ बेग अवध से बंगाल जा रहा था। वह बाबा बेग के साथ हो गया। और लड़ाई की तलाश में रहने लगा। जलाल खां को इसकी खबर मिल गई तो 2-3 हजार आदमियों के साथ उसने शीघ्रता से कूच किया। यूसुफ बेग शत्रु से लड़ता हुआ जौनपुर के समीप मारा गया। फिर जलाल खां ने जौनपुर को घेर लिया। बाबा खां जलेर ने साहसपूर्वक जौनपुर की रक्षा की और दरबार में बार बार (सहायतार्थ) निवेदन किया। मीर फक्र अली ने दिल्ली से आगरा आकर मिर्जा हिन्दाल को अच्छी सलाह दी और उसे नदी के दूसरे तट पर ले आया। उसने मुहम्मद बख्शी को नियुक्त करके कहा कि—मिर्जा हिन्दाल को शीघ्रातिशीघ्र जौनपुर ले जाये मीर फक्र अली काल्पी गया। वह यादगार नासिर मिर्जा को लाना चाहता था और कर्रा के पास मिर्जाओं की एक समिति करके उनको वहां से आगे पहुंचाना चाहता था। इसी समय बंगाल से कई अमीर भागकर मिर्जा नूरुद्दीन मुहम्मद के पास कन्नौज आ गये। इस मिर्जा ने उनके आगमन की सूचना मिर्जा हिन्दाल को भेज दी और कहलाया कि हिन्दाल स्वयं उनका स्वागत करे। इन लोगों ने कूल (अलीगढ़) पहुंचकर स्पष्ट कह दिया कि "अब हम बादशाह की सेवा नहीं करेंगे। यदि आप अपने नाम खुत्वा पढ़वा लोगे तो हम आपकी सेवा करेंगे वरना हम मिर्जा कामरान के पास चले जायेंगे। हिन्दाल के सन्देश वाहक ने वापस आकर कहा या तो आप अपने नाम का खुत्वा पढ़ा कर इन अमीरों को अपनी ओर मिलाओ या किसी युक्ति से उन्हें पकड़कर बन्दी बना लो। मिर्जा हिन्दाल ने उनको बुलाया और उनसे मीठी-मीठी बातें कीं।"

जब बादशाह को मालूम हुआ कि—बनारस और जौनपुर हाथ से निकल गये हैं और मिर्जा हिन्दाल ने विद्रोह कर दिया है तो उसने शेख बहलूल को बंगाल से राजधानी भेजा और कहा कि—मिर्जा हिन्दाल को सलाह देकर कुविचारों से हटाया जाये और कहा जाये कि अफगानों का उच्छेद करने में वह सहयोग दे। यह शेख मिर्जा हिन्दाल के पास उस समय पहुंचा जब बंगाल से आये हुए अमीर दुष्ट योजना बनाने में और मिर्जा हिन्दाल को सन्मार्ग से हटाने में लगे हुए थे। मिर्जा हिन्दाल शेख को आदरपूर्वक अपने मकान पर ले आया। शेख के शब्दों का उस पर प्रभाव हुआ अगले दिन मुहम्मद बख्शी को बुलाया गया और सेना की तैयारी की जाने लगी। बख्शी ने कहा कि सैनिकों के लिये रुपया नहीं है परन्तु सामान की कोई कमी नहीं है और सब कुछ इच्छानुसार हो जायेगा। इस बात के चार-पाँच दिन बाद कन्नौज से मिर्जा नूरुद्दीन आया। उसके आने से षडयन्त्र और भी दृढ़ हो गया। मुहम्मद गाजी तुगबाई को उन अमीरों के पास दुबारा भेजा गया तो उन्होंने अपने पहिले की बात दोहरायी और कहा कि—यदि हमारा प्रस्ताव स्वीकार हो तो शेख बहलूम को सबके सामने मार डाला जाये; जिससे सब लोग जान जायें कि मिर्जा हिन्दाल बादशाह से अलग हो गया है। जब शेख सेना के प्रयाण की व्यवस्था में लगा हुआ था तब सन्देशवाहक उसके पास आया। मिर्जा नूरुद्दीन मुहम्मद का प्रस्ताव मान लिया गया और हिन्दाल के आदेश से उसने शेख को नदी पर ले जाकर रेत में मार डाला। तब सब अधिकारियों ने एकत्र होकर हिन्दाल

के नाम का खुतबा पढ़ा। मिर्जा हिन्दाल की माता दिलदार आगाचा बेगम ने और अन्य बेगमों ने उसको बहुत समझाया परन्तु उस पर कोई प्रभाव नहीं हुआ।

जब मिर्जा हिन्दाल खुद अपने नाम का खुतबा पढ़वाकर अपनी माता के सामने गया तो उसने शोक वेश धारण कर रक्खा था। मिर्जा ने इसका कारण पूछा तो उसने कहा मैंने शोक वेश इसलिये धारण कर रक्खा है कि तुम अभी लड़के हो (वह 19 वर्ष का था) और राजद्रोहियों के बहकाने से तुमने सन्मार्ग छोड़ दिया है और आत्म विनाश की तैयारी कर ली है। मुहम्मद बख्शी ने आकर कहा, आपने शेख को मार डाला है, मेरे विषय में क्यों देर कर रहे हो। हिन्दाल मिर्जा ने उसके साथ अच्छा व्यवहार किया। जब यादगार नासिर मिर्जा और मीर फक्र अली ने यह बुरी खबर सुनी तो वे शीघ्रता से कूच करके काल्पी से दिल्ली आये और नगर तथा दुर्ग को दृढ़ करने लगे। मिर्जा उस समय फिरोजाबाद के पास हमीदपुर पहुंच चुका था। वहां उसको उनके आने की खबर मिली। मिर्जा और अफसरों ने दिल्ली के घेरे के लिये प्रयाण किया। बहुत-से छोटे-छोटे जागीरदार चारों ओर से मिर्जा के पास आ गये और वह दिल्ली की ओर कूच करने लगा। यादगार नासिर मिर्जा और मीर फक्र अली दुर्ग की रक्षा करते रहे और सारा वृत्तान्त मिर्जा कामरान को भेजकर उससे प्रार्थना की कि वह आकर राजद्रोह को दबाये। वह लाहौर से सोनपत के निकट आ पहुंचा तो मिर्जा हिन्दाल वापस आगरा आ गया। जब मिर्जा कामरान दिल्ली आया तो फक्र अली ने उसको सलाह दी कि वह आगरा पहुंचे। मिर्जा हिन्दाल आगरा में नहीं टिक सका और अलवर चला गया। आगरा आकर मिर्जा कामरान ने दिलदार आगाचा बेगम से कहा कि—मिर्जा हिन्दाल को समझाकर आज्ञापालन के मार्ग पर लाये। बेगम मिर्जा हिन्दाल को अलवर से कामरान के पास लाई। मिर्जा कामरान ने उसके साथ उचित व्यवहार किया और फिर मिर्जाओं ने तथा अफसरों ने मिलकर शेर खां के विद्रोह का दमन करने के लिये नदी पार की। परन्तु उनको सफलता नहीं मिली।

बंगाल में आमोद-प्रमोद

जब बंगाल पर शाही अधिकार हो गया तो बड़े-बड़े अधिकारियों को अच्छी जागीरें मिलीं और वे आमोद-प्रमोद में पड़कर सुस्त हो गये और कर्तव्य की उपेक्षा करने लगे। तब पुनः राजद्रोह ने सिर उठा लिया। जब हिन्दुस्तान के विद्रोह की खबर धीरे-धीरे हितैषियों ने बादशाह को सुनाई तो उसने साम्राज्य के स्तम्भों को एकत्रित करके विशाल सेना सहित वापस लौटने का निश्चय किया। उस समय जोर की वर्षा हो रही थी, नदियों में बाढ़ आ रही थी तो भी आवश्यकतावश और साम्राज्य की रक्षा के लिये वापस लौटना अनिवार्य समझा गया। बंगाल का शासन जाहिद बेग को सौंपा गया परन्तु वह भाग कर मिर्जा हिन्दाल के पास पहुंच गया। तब उस प्रान्त का शासन जहांगीर कुली बेग के हवाले किया गया और हुमायूं ने आगरा की ओर प्रयाण किया।

शेर खां की गतिविधि

जब शेर खां ने सुना कि शाही सेना वापस लौट रही है और मिर्जा लोग आगरा से

रवाना हो गये हैं तो वह जौनपुर से हटकर रोहतास चला गया। उसकी युक्ति यह थी कि यदि शाही सेना उसके विरुद्ध प्रयाण करेगी तो वह लड़ाई नहीं करेगा और झाड़खण्ड के मार्ग से वापस जाकर बंगाल की राजधानी गौड़ पर आक्रमण करेगा। यदि ऐसा नहीं हुआ और शाही सेना आगरा की ओर कूच करती रही तो वह उसके पीछे-पीछे कूच करके रात में आक्रमण करेगा। जब शाही सेना तीरहुत पहुंची तो शेर खां को मालूम हुआ कि हुमायूं के साथ थोड़ी-सी सेना है और शाही शिविर में व्यवस्था नहीं है। इससे उसका साहस बढ़ गया और वह अपनी सुसज्जित सेना के साथ आगे बढ़ा। शाही सेना गंगा पार कर चुकी थी तथापि जब शेरशाह के आ पहुंचने की खबर मिली तो हुमायूं उसकी ओर मुड़ा। उसको सलाह दी गई कि सेना के पास सामान नहीं है और वह थकी हुई है इसलिये शत्रु से युद्ध करना अभी उचित नहीं है। कहीं ठहर कर सेना खड़ी की जाये और फिर युद्ध किया जाये। हुमायूं ने यह सलाह नहीं मानी ओर शत्रु के विरुद्ध प्रयाण किया।

बिहिंया के पास, जो भोजपुर के अधीन है शेर खां की सेना से मुकाबला हुआ। दोनों सेनाओं के बीच में करमनासा नदी थी। शाही सेना ने पुल बनाकर उसको पार किया। शाही सेना प्रत्येक मुठभेड़ में विजयी हुई और बहुत-से अफगान मारे गये, परन्तु लड़ाई लम्बी हो गई और हुमायूं के भाईयों ने मिल कर काम नहीं किया। उन लोगों को सचेत भी किया गया परन्तु उन पर कोई प्रभाव नहीं हुआ। शेर खां कभी सन्धि वार्ता करता था और कभी युद्ध करने का विचार करता था। फिर इस चालाक व्यक्ति ने शाही सेना के सामने कुछ प्यादे और तोपें छोड़कर दो मंजिल पीछे हट कर शिविर लगाया। शाही सेना इस चाल को नहीं समझ सकी। इसलिये वह आगे बढ़ी। एक दिन मुहम्मद जमान मिर्जा रात में पहरा दे रहा था, तो उसने बड़ी असावधानी की। शेर खां ने मौका देखकर रात्रि में आक्रमण किया। उसकी सेना तीन भागों में विभक्त थी, एक भाग उसी के पास था, एक जलाल खां के पास और तीसरे का नेतृत्व खवास खां के पास था। शाही सेना को तैयार होने के लिये समय नहीं मिला। हुमायूं भी परेशान हो गया। वह घोड़े पर सवार होने ही वाला था कि बाबा जलेर और कूच बेग आ गये तो हुमायूं ने आदेश दिया कि हाजी बेगम को तुरन्त ले आवे परन्तु दोनों ही मारे गये। हाजी बेगम के डेरे के आसपास मीर पहलवान बदखंशी और कितने ही अन्य लोग मारे गये परन्तु ईश्वर की दया से शत्रु हाजी बेगम के डेरे में नहीं घुस सके। फिर शेर खां ने हाजी बेगम को सम्मानपूर्वक हुमायूं के पास भेज दिया।

हुमायूं की विपत्ति

जब हुमायूं पुल पर पहुंचा तो उसने देखा कि वह टूट गई है। तब उसने अपना घोड़ा नदी में डाल दिया परन्तु वह घोड़े से अलग हो गया। तब एक भिश्ती की सहायता से हुमायूं नदी में से निकला। इसका नाम निजाम था। बादशाह ने उसको वचन दिया कि "जब मैं गद्दी पर बैठूंगा तो तुमको आधे दिन के लिये बादशाह बना दूंगा।" यह दुर्घटना 9 सफ़र 946 हिज्री (7 जून, 1539) को गंगा के तट पर चौसा के नाव घाट पर हुई थी। मिर्जा मुहम्मद जमान मौलाना मुहम्मद फरगली आदि अनेक अधिकारी और विद्वान लोग नदी में डूब कर मर गये। हुमायूं ने आगरा की ओर शीघ्रता से प्रयाण किया। उसके साथ मिर्जा असकरी और कुछ अन्य

लोग थे। मिर्जा कामरान ने बादशाह के प्रति आदर प्रकट किया। कुछ दिन पश्चात् कामरान के कहने से हिन्दाल की माता उसको अकबर बादशाह के पास ले आई। वह लज्जित होकर हुमायूं से मिला। बादशाह ने उसको क्षमा कर दिया। अब हुमायूं ने शस्त्र-संग्रह और सेना-संग्रह शुरू कर दिया। इस समय भिश्ती उसके पास उपस्थित हुआ तो हुमायूं ने अपनी प्रतिज्ञा निभा कर आधे दिन के लिये उसको शाही तख्त पर बिठा दिया। भिश्ती ने उस दिन जो भी आदेश दिया उसका पालन किया गया। इस उदारता को देखकर मिर्जा कामरान दंग रह गया।

शेर खां की बंगाल विजय

चौसा की घटना के बाद शेर खां ने बंगाल पर आक्रमण किया। बिहार की सीमा पर पहुंच कर उसने जलाल खां को सेनासहित बंगाल के विरुद्ध रवाना किया। जहांगीर कुली खां के साथ युद्ध हुआ। जिसमें जहांगीर वीरतापूर्वक लड़ा परन्तु फिर उसको पीछे हटकर जमीनदारों के पास शरण लेनी पड़ी। बाद में एक झूठी सन्धि करके उसको बुलाया गया और मार डाला गया। बंगाल के विषय में इस प्रकार निश्चिंत होकर शेर खां ने जौनपुर की ओर कूच किया और उसको जीत लिया। फिर अपने छोटे पुत्र कुतुब खां को काल्पी और ईटावा के विरुद्ध भेजा। इसकी खबर सुनकर बादशाह ने यादगार नासिर, मिर्जा कासिम हुसेन उजबेग और इस्कन्दर सुल्तान को कुतुब खां के विरुद्ध भेजा। कुतुबखां से लड़ाई हुई जिसमें वह मारा गया।

हुमायूं कुछ समय के लिये आगरा ठहरा। कामरान का हृदय शुद्ध नहीं था इसलिये वह उससे पूरा मेल नहीं कर सका। कामरान के पास 20,000 अच्छे सैनिक थे और काबुल से समाना तक का राज्य उसके अधीन था परन्तु उसने अपने बड़े भाई की मदद नहीं की और बीमारी का बहाना करके अलग बैठा रहा।

पहले तो कामरान ने एक बड़ी सेना सहित ख्वाजा कलां बेग को लाहौर भेजा और फिर वह स्वयं उसके पीछे रवाना हो गया। बादशाह ने अपने भाईयों से कहा कि ''यदि तुम लोग मेरी सहायता नहीं करते तो मुझे अपनी सेना तो दे दो। परन्तु कामरान कुछ शाही सेना को भी अपने साथ ले गया। जाते समय कामरान 3,000 सैनिक अब्दुल्ला मुगल के नेतृत्व में छोड़ गया।''

***

प्रकरण 26

हुमायूं का राजधानी से पूर्व की ओर शेर खां के दमन के लिये प्रयाण, युद्ध के बाद वापसी

जब शाही सेना भोजपुर पहुंची तो शेर खां ने बहुत बड़ी सेना के साथ गंगा के दूसरे तट पर शिविर लगाया। नदी पार करने का निश्चय करके हुमायूं ने भोजपुर के नाव घाट पर एक पुल बनवाई। लगभग 150 वीर प्राणों की चिन्ता न करके नदी में कूद पड़े और उस पार जाकर उन्होंने शत्रु के बहुत-से सैनिकों को वापस धकेल दिया। जब वे वापस लौटते हुए पुल के पास पहुंचे तो शेर खां ने एक हाथी के द्वारा पुल तुड़वा दिया। फिर हाथी के पैर में तोप का गोला लग गया जिससे वह भाग गया। वीर लोग ज्यों-त्यों सकुशल वापस आ गये। युद्ध युक्ति यह बनाई गई थी कि सेना नदी के किनारे-किनारे कन्नौज तक प्रयाण करे। फिर कन्नौज के निकट दोनों सेनायें एक मास तक आमने-सामने खड़ी रही। यहां मुहम्मद सुल्तान मिर्जा और उसके पुत्र उलूग मिर्जा और शाह मिर्जा बादशाह की सेवा में आ गये। ये लोग तीमूर के वंशज थे और हुमायूं के विरुद्ध विद्रोह कर रहे थे। जब वे आ गये तो बादशाह ने उन्हें क्षमा कर दिया परन्तु वे फिर भाग गये और कुछ लोगों को अपने साथ ले गये। फिर हुमायूं ने निश्चय कर लिया कि नदी पार करके लड़ाई की जाये। उसका खयाल था कि यदि नदी पार नहीं की जायेगी तो बहुत-से सैनिक भाग जायेंगे। अतः एक पुल बनवा कर नदी को पार किया जाये। सेना के सामने तोपें जमा दी गईं और मूरचल बनाये गये। शेर खां ने भी एक खाई बना ली और सेना जमा ली। इसी बीच में वर्षा शुरू हो गई और शिविर में पानी भर गया। तब सेना को एक ऊंचे स्थान पर जाना पड़ा। यह सोचा गया कि प्रातःकाल ऐसी युक्ति की जाये कि शत्रु लड़ने के लिये आगे बढ़े और यदि वह ऐसा न करें तो सेना ऊंचे स्थान पर पहुंच जाये। 10 मुहर्रम, 947 (17 मई, 1540) को सेना का व्यूह बनाया गया। मुहम्मद खां रूमी और उस्ताद कुली के पुत्र और हुसेन खलफात तोपखाने में थे। उन्होंने नियमानुसार तोपों को जंजीरों से बांध दिया। बादशाह मध्य भाग में था। मिर्जा हिन्दाल बादशाह के आगे था, मिर्जा असकरी दायीं और यादगार मिर्जा बांयी ओर था।

मिर्जा हैदर ने अपनी तारीख-ए-रसीदी में लिखा है कि ''उस दिन बादशाह ने मुझे बायीं ओर नियुक्त किया इसलिये मेरा दाहिना पार्श्व उसके बायें पार्श्व के निकट था और मुझसे मध्य भाग के बायें पक्ष के अन्त तक 27 अमीरों की टोलियों थीं। शेर खां ने अपनी सेना के पांच भाग किये थे। दो भाग सबसे बड़े थे। ये खाई के सामने जामाये गये थे। फिर शेर खां आगे बढ़ा। जलाल खां, समरथ खां और सारे नियाजी मिर्जा हिन्दाल सामने आये। मुबारक खां, बहादुर खां, राय हुसेन जलवानी और सारे करारानियों ने यादगार नासिर मिर्जा और कासिम हुसेन खां का सामना किया। खवास खां बरमजीद और कितने ही अन्य लोग मिर्जा असकरी के सामने आये। पहिला मुकाबला मिर्जा हिन्दाल और जलाल खां में हुआ।

आश्चर्यकारी हाथों हाथ संघर्ष हुआ जिसमें जलाल खां घोड़े से गिर पड़ा। शाही सेना के बायें पार्श्व ने शत्रु को खदेड़ कर उसके मध्य भाग की ओर धकेल दिया। यह देखकर शेर खां ने एक बड़ी सेना के साथ आक्रमण किया और खवास खां तथा उसके साथी मिर्जा असकरी पर टूट पड़े। जब अफगानों का आक्रमण हुआ तो बहुत-से अधिकारी खड़े नहीं रह सके और भागने लगे। बादशाह ने शत्रु पर दो बार आक्रमण किया। उसके हाथ के दो भाले टूट गये परन्तु उसके भाईयों ने भ्रातृत्व नहीं दिखाया और सेनानायकों में भी दृढ़ता नहीं रही। इससे उनके स्वामी पर विपत्ति आई। ऐसा जान पड़ता था मानों इस महापुरुष ने जो बाहर और भीतर महान् था, अपनी आंखों से सत्य देख लिया था और रहस्यों को समझ लिया था। वह जानबूझ कर थोड़ी-सी सेना सहित जिसमें मिथ्याचार था और सच्चाई नहीं थी, इस लड़ाई में कूद पड़ा। उसने समझा होगा कि वीरतापूर्वक मर मिटना अच्छा है, मिथ्याचारी लोगों को शिष्टता बतलाने से कोई लाभ नहीं है।''

जब पराजय होने लगी तो सेनानायक बिना लड़े ही गंगा के तट की ओर भागने लगे जो लगभग चार मील दूर था। बादशाह हाथी पर सवार होकर नदी पार करने लगा। तट पर पहुंच कर उसने देखा कि तट ऊंचा था। तब एक आदमी ने उसको खींच कर ऊपर लिया। उसका नाम शमसुद्दीन मुहम्मद था और गजनी में उसका जन्म हुआ था। तब वह मिर्जा कामरान का सेवक था। तब मुकद्दम बेग ने जो कामरान का एक अफसर था अपना घोड़ा बादशाह को दिया। बादशाह ने आगरा की ओर प्रयाण किया और मार्ग में वह मिर्जाओं से मिला। जब ये लोग भंगापुर के पास पहुंचे तो ग्रामीण लोगों ने बादशाह के आदमियों पर आक्रमण किया। बादशाह ने मिर्जा असकरी, यादगार नासिर मिर्जा और मिर्जा हिन्दाल को आदेश दिया कि ग्रामीणों को दण्ड दे। गांव वाले लगभग 3,000 सवार और प्यादे थे। मिर्जा असकरी ने आगे बढ़ने में विलम्ब किया, यादगार नासिर मिर्जा ने उसको बुरा-भला कह कर प्रेरित किया तो भी उस पर कोई असर नहीं हुआ। यादगार नासिर मिर्जा और हिन्दाल गांव वालों के विरुद्ध चले। फिर लड़ाई हुई जिसमें बहुत-से गांव वाले मारे गये। यह काम करके मिर्जा लोग वापस लौट आये। मिर्जा असकरी को बादशाह ने भला-बुरा कहा, फिर बादशाह शीघ्र आगरा पहुंच गया। सब ओर राजद्रोह फैला हुआ था। अगले दिन प्रातःकाल बादशाह मीर रफीह के निवास स्थान पर गया। यह सफवी सैयदों का वंशज था तथा बुद्धि और विद्या के लिये प्रसिद्ध था। उससे सलाह लेने पर बादशाह ने अन्तिम निश्चय किया कि पंजाब की ओर चल देना चाहिये। यदि मिर्जा कामरान् सहायता करेगा तो अब भी कलह समाप्त हो सकता है। इस विचार से हुमायूं लाहौर की ओर चला। मिर्जा असकरी सम्भल और मिर्जा हिन्दाल अलवर चले गये। मिर्जा हैदर और मिर्जा हिन्दाल रोहतक में बादशाह से मिले। वहां के दुर्गाध्यक्ष ने नगर के द्वार बन्द कर दिये। तब बादशाह ने आक्रमण किया और दुर्ग की सेना हार गई। 17 सफर को बादशाह सरहिन्द पहुंचा। मीर फकर अली की मार्ग में ही मृत्यु हो गई। जब हुमायूं लाहौर के निकट पहुंचा और दौलत खां की सराय पर ठहरा तो मिर्जा कामरान ने आगे आकर अधीनता प्रकट की। बादशाह ख्वाजा दोस्त मुंशी के रमणीय बाग में ठहरा और मिर्जा हिन्दाल ने मिर्जा कामरान के दीवान ख्वाजा गाजी के बाग में डेरे लगाये।

फिर मिर्जा असकरी भी सम्भल से आ गया और अमीर वली बेग के मकान में ठहरा। इस समय शमसुद्दीन मुहम्मद जिसने बादशाह को नदी तट पर चढ़ाया था, आया। हुमायूं ने उस पर कृपा प्रकट की। 1 रबी उल अव्वल 947 हिज्री को भाई और अमीर तथा अन्य सेवक एकत्रित हुए परन्तु इनमें कोई सच्चाई नहीं थी। उन्होंने बादशाह को कई बार एकता के वचन दिये और शपथें खाईं। एक दिन सब ने एकत्र होकर मेल और एकता का एक तजकिरा लिखा जिस पर सबने हस्ताक्षर किये।

जब यह लिखा-पढ़ी हो गई तो विचार-विमर्श शुरू हुआ। बादशाह ने कहा जो लोग सन्मार्ग से हट जाते हैं उनका इतिहास सबको मालूम है। खुरासान में सुल्तान हुसेन मिर्जा 18 पुत्र छोड़ कर मरा था, परन्तु भाइयों की अनबन के कारण खुरासान के राज्य पर विपत्तियां आ गईं और वादी उज्जमां के अतिरिक्त हुसेन के मिर्जा के किसी पुत्र का चिन्ह भी नहीं रहा और वह भी तुर्की चला गया। बादशाह बाबर ने हिन्दुस्तान जैसा विशाल देश कैसी कठिनता से जीता था। अब यदि आप लोगों की फूट के कारण यह हमारे हाथ से तुच्छ लोगों के हाथ में चला जाये तो बुद्धिमान लोग क्या कहेंगे?

जिन्होंने समझौता और मेल किया था वे अपनी बात को भूल गये। मिर्जा कामरान ने कहा, बादशाह और सारे मिर्जा अकेले कुछ समय पर्वतों में व्यतीत करें। मैं उनके कुटुम्बों को काबुल ले जाऊंगा और फिर आप लोगों के पास आ जाऊंगा। मिर्जा हिन्दाल और यादगार नासिर मिर्जा ने कहा ''अभी हम अफगानों से नहीं लड़ सकते, अभी भक्कर जाकर प्रदेश को दबा लेना चाहिये और उसके साधनों से गुजरात को जीतना चाहिये। जब दो राज्य हमारे हाथ में आ जायेंगे तो हम हिन्दुस्तान को भली-भांति मुक्त कर लेंगे।'' मिर्जा हैदर ने कहा उचित यह होगा कि ''सरहिन्द से सारंग (सिन्धु नदी से कश्मीर तक) के प्रदेश को अपने कब्जे में करके सब मिर्जा लोग स्थिर हो जायें। मैं वायदा करता हूँ कि छोटी-सी सेना के द्वारा दो पास में मैं कश्मीर पर कब्जा कर लूंगा। फिर आप अपनी सम्पत्ति कश्मीर भेज देना। शेर खां को आने में 4 मास लगेंगे और वह तोपों को पर्वतीय प्रदेश में नहीं ले जा सकेगा। अफगान सेना थोड़े समय में ही नष्ट हो जायेगी।''

इस समिति में कोई निश्चय नहीं हो सका। मिर्जा कामरान ने अपना विचार नहीं बदला। वह चाहता था कि प्रत्येक मिर्जा नष्ट हो जाये और वह काबुल जाकर आनन्द करे। प्रत्यक्ष में वह एकता की बातें करता था परन्तु गुप्त रूप से वह विरोध के आधार को दृढ़ करता था। यहां तक कि उसने दुष्टता करके अपने सदर काजी अब्दुल्ला को शेर खां के पास भेजा। वह चाहता था कि शेर खां से मित्रता और स्नेह का सम्बन्ध हो जाये। उसने शेर खां को पत्र लिखा कि पंजाब मेरे पास छोड़ दिया जाये तो मैं आपके सब कामों को सफल कर दूंगा।

इन घटनाओं के बाद शेर खां दिल्ली आया परन्तु आगे नहीं बढ़ा। उसने सुना था कि लाहौर में मेल की बातें हो रही हैं जिससे वह बहुत डर गया था इसी बीच में सदर शेर खां के पास पहुंचा। शेर खां ने उसका आलिंगन किया और फूट की खबर से बड़ा प्रसन्न

हुआ। सदर ने शेर खां को प्रेरित किया कि आगे प्रयाण किया जाये। बहुत-से लोग बादशाह को छोड़ आवेंगे। शेर खां ने एक चतुर व्यक्ति व्यक्ति को सदर के साथ यह देखने भेजा कि वास्तविक स्थिति कैसी है। कामरान शेर खां के दूत से लाहौर के बाग में मिला और उसे भोज दिया। कामरान ने नम्र निवेदन करके हुमायूं को भी भोज में बुलाया। कामरान ने पुनः सदर को ही शेर खां के पास भेजा। वह सुल्तानपुर की नदी के पास शेर खां से मिला और उसे प्रेरित किया कि नदी पार करे। तब मुजफ्फर तुर्कमान ने हुमायूं को खबर दी कि शेर खां ने व्यास नदी पार कर ली है।

मैं जुमादल आखिर के अन्त में हुमायूं और मिर्जाओं ने रावी नदी पार करके मंजिल दरमंजिल चिनाब नदी की ओर प्रयाण किया। हुमायूं कश्मीर विजय के लिये प्रयत्न करना चाहता था। इसलिये उसने मिर्जा हैदर के साथ कुछ सेना आगे भेज दी। कश्मीर के कई बड़े-बड़े अमीर वहां के सुल्तान के विरुद्ध थे। इसलिये वे लाहौर आये। वे चाहते थे कि मिर्जा हैदर के द्वारा मिर्जा कामरान से सेना मिल जाये और वे कश्मीर पर कब्जा कर लें। परन्तु उनको सेना नहीं मिली। जब हिन्दाल ने विद्रोह करके अपने नाम का खुतबा पढ़वाया था तो मिर्जा कामरान लाहौर से आगरा गया था और मिर्जा हैदर ने एक सेना खड़ी करके राजधानी से बाबा जूजक के नेतृत्व में रवाना की थी। उसकी योजना यह थी कि कश्मीरी अमीरों के निर्देशानुसार यह सेना वहां जाकर कश्मीर को दबा ले। बाबा जूजक ने रवाना होने में विलंब कर दिया और इसी बीच में चौसा घाट की विपत्ति की विपत्ति का प्रहार हो गया। जूजक ने अभिमान त्याग दिया और कश्मीरी अमीर नव शहर राजौरी आदि में ठहर गये। वहां से वह मिर्जा हैदर को पत्र लिखकर कश्मीर विजय के लिये प्रेरित किया करते थे और मिर्जा हैदर ये सब बातें बादशाह को सुनाया करता था। हुमायूं कश्मीर के मनोहर प्रदेश में जाने के लिये उत्सुक था। उसने मिर्जा को इजाजत दे दी कि कुछ सेना लेकर नौशहर जावे। जब वह घाटियों में पहुंच जावे तो अमीर ख्वाजा कलां आकर उसको सहायता दे। ख्वाजा कलां के आने की सूचना मिलने पर हुमायूं स्वयं उधर की ओर प्रयाण करता। उस समय बादशाह का डेरा चिनाब नदी के पश्चिमी तट पर था। वहां से मिर्जा कामरान और मिर्जा असकरी ख्वाजा अब्दुल हक आदि कई अमीरों के साथ काबुल चले गये और मुलतान के मुहम्मद सुल्तान मिर्जा, उलूग बेग मिर्जा और शाली मिर्जा भी सिन्धु नदी के तट पर मिर्जा असकरी से जा मिले। रजब 947 को मिर्जा हिन्दाल, यादगार नासिर मिर्जा और कासिम हुसेन मिर्जा के आग्रह से हुमायूं सिन्ध की ओर कूच करने लगा। ख्वाजा कलां बेग स्यालकोट से चलकर मिर्जा कामरान से जा मिला। सिकन्दर तूपची सारंग की पहाड़ियों में चला गया। मिर्जा लोग कुछ मंजिल हुमायूं के साथ चलकर बेग मिराक की प्रेरणा से उसका साथ छोड़ गये। इसी बीच में कुछ अफगानों के साथ काजी अब्दुल्ला आ पहुंचा। अफगान तो मारे गये परन्तु अब्दुल्ला मीर बाबा दोस्त के बीच-बचाव करने से अधमरा होकर चल दिया। मिर्जा लोग इधर उधर भटक रहे थे और हुमायूं भक्कर की ओर जा रहा था। जल और अन्न अत्यन्त दुर्लभ था। एक दिन उसको मालूम हुआ कि मिर्जा हिन्दाल और यादगार नासिर मिर्जा तीन कोस की दूरी पर हैं। हुमायूं ने मीर अबुल बका को मिर्जाओं के पास भेज कर कहलाया

कि वे आकर मिलें। मीर ने उन्हें तदनुकूल सलाह दी और वे भक्कर की ओर रवाना हो गये। खवास खां एक बड़ी अफगान सेना के साथ पीछे-पीछे आ रहा था परन्तु उसको लड़ाई करने का साहस नहीं हुआ। 1540 के अन्तिम दिनों में पुच्छ के पास सईद मुहम्मद बाकीर हुसेनी की मृत्यु हो गई तो हुमायूं को बड़ा दु:ख हुआ। जब शाही डेरा बख्शूनी लंगा के निवास के निकट लगा हुआ था तो बादशाह ने लंगू को खिल्लत भेजी और कहलाया कि उसको खानजहां की उपाधि का नक्कारा और निशान प्रदान किये जायेंगे, वह वफादारी के साथ सेवा करे और शिविर में अन्न भेजे। वह दरबार में तो नहीं आया परन्तु उसने व्यापारियों को डेरों में भेज दिया और नदी पार करके भक्कर जाने के लिये बहुत-सी नावें दे दीं। अग्रसेना के साथ यादगार नासिर मिर्जा गया तो 26 जनवरी, 1541 को सेना भक्कर के समीप पहुँच गई। इससे दो दिन पहले काजी गयासुद्दीन जाम [1] को भेंटे भेजकर सदर बनाया गया।

भक्कर पहुँचने पर नदी के पूर्वी तट पर भक्कर के सामने डेरे लगाये गये। बादशाह पास ही एक मनोहर बाग में ठहरा। अपने अनुचरों को भी उसने बाग में स्थान दे दिये। मिर्जा हिन्दाल ने अपना डेरा 4-5 कोस दूर लगाया। उधर की ओर ही यादगार नासिर मिर्जा ठहरा। सुल्तान महमूद भक्करी ने जो मिर्जा शाहहुसेन बेग अरउन का सेवक था, भक्कर प्रदेश को उजाड़ करके दुर्ग को दृढ़ किया। उसने नावें भी इस तट से दूसरी ओर दुर्ग के नीचे ठहरा दी। शाह हुसेन बेग मिर्जा शाह बेग अरगून का पुत्र था। जिससे बाबर ने कन्धार छीन दिया था। इसलिये वह वहां से ठठ्ठा आ गया था और उसने भक्कर को अपने अधीन कर लिया था।

हुमायूं ने लूहरी से सुल्तान महमूद को लिखा कि यह दुर्ग शाही सेवकों के सुपुर्द कर दो। उसने उत्तर दिया कि मैं मिर्जा शाह हुसेन का सेवक हूं। उसके आदेश के बिना मैं दुर्ग सुपुर्द नहीं कर सकता। तब हुमायूं ने शाह हुसेन के पास अपने दूत भेजे। इसके उत्तर में उसने शेख मिराक को बादशाह के पास भेजा। उसने बादशाह से कहा कि भक्कर से कोई आय नहीं होती, आजकल सम्पन्न और उपजाऊ प्रदेश है। बादशाह उस पर कब्जा करे। मैं भी बादशाह की सेवा करूंगा और फिर थोड़े-से परिश्रम से ही बादशाह गुजरात को अपने अधीन कर लेगा, फिर हिन्दुस्तान के अन्य प्रदेश भी उसके हाथ में आ जायेंगे। इस प्रकार शाह हुसेन ने झूठी और कपटपूर्ण बातें की। हुमायूं पांच-छ: मास तक लूहरी में ही ठहरे रहा। इस अर्से में वह मिर्जा हिन्दाल से भी मिलने गया।

हमीदा बेगम से विवाह

इस अभियान के समय 948 हि० में मरियम मकानी से हुमायूं का विवाह हुआ। [2] भक्कर में कुछ दिन शाही शिविर रहा। फिर वहां अन्न दुर्लभ हो गया। यहां यादगार नासिर

---

1. यह व्यक्ति फिर हुमायूं को छोड़ गया था।
2. गुलबदन ने लिखा है कि यह विवाह जुमादल अव्वल के आरम्भ में दोपहर को हुआ था और विवाह का समय हुमायूं ने ही गणित करके निकाला था।

मिर्जा ने जो गुप्त रूप से बादशाह का विरोधी था मिर्जा हिन्दाल को बहकाया। इसमें मिर्जा व कामरान के सेवक कराचा खां ने जो कन्धार का शासक था योग दिया तो हुमायूं कन्धार की ओर रवाना हो गया। हुमायूं को यादगार मिर्जा की चालाकी का पता लग गया तो उसने दूत भेजकर उसको बुलाया। दूत उसको समझा-बुझाकर वापस ले आया। परन्तु मिर्जा ने यह शर्त रक्खी कि जब हिन्दुस्तान पर विजय प्राप्त हो जाये तो उसको एक तिहाई भाग दिया जाये और काबुल पहुँचने पर गजनी, चर्ख और लोहगढ़ उसके सुपुर्द कर दिये जायें क्योंकि यह तीनों स्थान बाबर ने मिर्जा की माता को दिये थे। यह काम करके जब मीर वापस जा रहा था तो भक्कर के लोगों ने उसको मार डाला। जिससे हुमायूं को घोर सन्ताप हुआ परन्तु फिर उसने धैर्य धारण किया। पांच-छः दिन बाद नदी पार करके यादगार नासिर मिर्जा शाही शिविर में आया तो हुमायूं ने उसका कृपापूर्ण स्वागत किया।

ठट्ठा पर प्रयाण

ठट्टा का शासक शिविर में आने के लिये कहता रहा परन्तु आया नहीं तब भक्कर और उसके पास का प्रदेश यादगार नासिर मिर्जा के सुपुर्द करके बादशाह ने सितम्बर, 1541 में ठट्टा के विरुद्ध प्रयाण कर दिया। 17 रजब को बादशाह ने सेहवान पहुँचकर दुर्ग को घेर लिया। तब ठट्टा के शासक ने शाही शिविर में अन्न पहुँचाना बन्द कर दिया। तब मीर और बेगवान लोग शिविर छोड़कर भागने लगे। बादशाह को मालूम हुआ कि मुनीम खां फाजिल बेग और अनेक अन्य लोग भी भागने वाले हैं तब उसने मुनीम खां को बन्दी बना लिया। यही विद्रोहियों का मुखिया था।

यादगार नासिर मिर्जा का वृत्तान्त

जब हुमायूं उसको भक्कर छोड़ गया तो यादगार मिर्जा लूहरी में रहने लगा। दुर्ग सेना ने उस पर दो बार अचानक आक्रमण किया तो उसने कुछ साहस दिखाया। इस लड़ाई में मुहम्मद अली, काबूची और शेर दिल मारे गये। तीसरी लड़ाई में शत्रु के आदमी नावें छोड़कर रेत में आ गये तो मिर्जा के लोगों ने उनमें से लगभग 300 या 400 आदमियों को मार डाला। अब शत्रु ऐसे भयभीत हो गये कि उनका आगे आने का साहस नहीं हुआ। मिर्जा शाह हुसेन ने चतुरता करके मिर्जा नासिर को सीधे मार्ग से विचलित कर दिया। उसने अपने मुहर बरदार बाबर कुली को उसके पास भेजकर कहलाया कि ''मैं वृद्ध हो गया हूँ, मैं अपनी पुत्री और कोष आपको दे दूंगा और अपने दोनों गुजरात को जीत लेंगे। मिर्जा नासिर उसकी बातों में आ गया और उसने स्वामिद्रोह का अपने माथे पर कलंक लगा लिया।''

जब हुमायूं ने देखा के सेना की स्थिति बड़ी कठिन हो गई है तो उसने यादगार नासिर मिर्जा के पास सन्देशवाहक भेजकर कहलाया कि ठट्टा का शासक सेना का मार्ग रोक रहा है इसलिये उस पर हमला किया जाये जिससे शाही सेना कठिनाई को पार कर सके। मिर्जा ने दिखावे के लिये कुछ अग्रसेना भेज दी परन्तु स्वयं प्रयाण करने में देर करता रहा। तब हुमायूं ने शेख अब्दुल गफ्फार को भेजा कि मिर्जा से शीघ्र प्रयाण करवाये परन्तु वह फिर

भी टाल-टूल करता रहा। शेख ने ऐसी भाषा का प्रयोग किया कि मिर्जा ने अपनी अग्रसेना भी वापस बुला ली। जब बादशाह ने देखा कि सैहवान दुर्ग के निकट ठहरना व्यर्थ है तो 23 फरवरी 1542 को उसने भक्कर और लूहरी की ओर कूच किया। इस समय यादगार नासिर मिर्जा ने एक बड़ा निन्दनीय काम किया। ठट्टा के शासक की प्रेरणा पर उसने गन्दम और हाल नामक दो जमींदारों को जिन्होंने बादशाह को नावें जुटाने में सहायता की थी, पकड़ कर उसके (ठट्टा के शासक) पास भेज दिया। उसने उन दोनों को मरवा दिया। जब शाही सेना लूहरी की सीमा पर पहुंची तो कुछ सेना साथ लेकर यादगार नासिर मिर्जा शाही शिविर पर आक्रमण करने के लिये बाहर निकला। परन्तु उसके विचारवान विश्वस्त सेवक हाशिम बेग ने उसको बुरा-भला कहकर वापस मोड़ दिया। इसी बीच में कासिम हुसेन सुल्तान बादशाह को छोड़कर यादगार नासिर मिर्जा के पक्ष में चला गया।

मुख्य-वृत्तान्त

अब हुमायूं ने देखा कि सिन्ध में सफलता की कोई आशा नहीं थी। उसकी सेना में राजद्रोह था। उसके भाई सहायता नहीं कर रहे थे, भाग्य साथ नहीं देता था। इसलिये उसकी इच्छा हुई कि फकीर बनकर एक कुटिया में रहने लग जायें और संसार के कोलाहल से दूर चला जाये परन्तु उसके घनिष्ट साथियों ने उसको समझाया कि यह विचार छोड़ दिया जाये और मालदेव के देश में भाग्य की परीक्षा ली जाये, क्योंकि इस राजा ने बार-बार स्वामिभक्तिपूर्ण पत्र लिखे थे और कहा था कि उसके पास सेना और तोपखाना है। इसलिये बादशाह ने आदेश दिया कि इस राजा के देश की ओर प्रयाण किया जाये। साथ ही इब्राहीम बेग इश्हाक आका को यादगार नासिर मिर्जा के पास भेजकर उसको समझाने का प्रयत्न किया कि वह पश्चात्ताप करे और उचित मार्ग पर आ जाये परन्तु मिर्जा पर इसका कोई प्रभाव नहीं हुआ। वह स्वामिद्रोह करके लूहरी में ही टिका रहा। 21 मुहर्रम 949 को हुमायूं उछ की ओर रवाना हुआ और वहां से 18 रबी उल अव्वल को उसने मालदेव की ओर प्रयाण किया और फिर दिलावर ठहरा। 20 ता० को उसने हसलपुर में डेरे लगवाये और 17 रबी उल आदिर को बीकानेर से 12 कोस की दूरी पर शिविर खड़ा किया। उसके दूरदर्शी साथियों को मालदेव के कपट की आशंका हुई तो उन्होंने बादशाह से कहा कि सावधान रहा जाये। अन्त में मीर समन्दर को मालदेव के पास भेजा गया, उसने वापस आकर सूचना दी कि प्रत्यक्ष से मालदेव हार्दिकता की बातें करता है परन्तु यह सच नहीं है कि जब हुमायूं मालदेव के राज्य के निकट पहुंचा तो नागौर का निवासी संकाई जो मालदेव का विश्वस्त सेवक था व्यापार के बहाने से शाही दरबार में आया और कहा कि मैं मूल्यवान हीरा खरीदना चाहता हूं। बादशाह उसके कपट को समझ गया और उससे कहलाया कि ऐसे हीरे या तो तलवार के बल से मिलते हैं या बड़े बादशाह के अनुग्रह से प्राप्त होते हैं। हुमायूं ने पुनः राईमल सूनी को मालदेव के पास भेजा कि स्थिति देखकर सूचना दे। सूनी ने वापस आकर संकेत द्वारा प्रकट किया कि मालदेव मिथ्याचार कर रहा है। तब शाही शिविर फलौदी से जो जोधपुर से 30 कोस दूर है दो-तीन मंजिल चल कर कुल-ए-जोगी पर ठहरा। फिर बादशाह को मालदेव के

मिथ्याचार के विषय में निश्चय हो गया तो वह वापस मुड़ा। बहुत-से लोगों का कहना था कि पहले तो मालदेव के विचार अच्छे थे और वह बादशाह की सेवा करना चाहता था परन्तु फिर वह सच्चे मार्ग से हट गया या तो उसने यह देखा होगा कि बादशाह की सेना की दशा खराब है और वह थोड़ी-सी है या शेर खां ने उससे झूठे वायदे किये होंगे या शेरशाह के अभ्युदय पर उसने विचार किया होगा या शायद शेरशाह ने उसको धमकाया होगा तथापि अधिकांश लोगों की राय थी कि मालदेव में मिथ्याचार और शत्रुता थी।

जब मालदेव की सेना के कपट की जांच हो गई और मालदेव के कुत्सित विचार प्रकट हो गये तो बादशाह ने तार-दी-बेग खां, मुनीम खां और अपने अन्य सेवकों को आदेश दिया कि उन दुष्टों को शाही शिविर में नहीं घुसने दिया जाये। फिर बादशाह ने थोड़े-से स्वामिभक्त अनुचरों और अपनी महिलाओं के साथ प्रयाण शुरू किया। उसके साथ लगभग केवल 20 सैनिक थे। इनके अतिरिक्त कुछ घरेलू दास और छोटे दर्जे के स्वामिभक्त नौकर थे तथा मुल्ला ताजुदीन और मौलाना चांद दो विद्वान् थे। जब शिविर फलौदी से रवाना होकर सातलमेर पहुंचा तो मालदेव की सेना दृष्टिगत हुई। जिन अफसरों को इसे रोकने के लिये भेजा गया था वे मार्ग भूलकर दूसरी ओर चले गये इसलिये अब शत्रु के लिये शाही सेना की ओर आने का मार्ग खुला हुआ था। बादशाह ने उनका मुकाबला किया। बहुत-सी महिलायें घोड़ों से उतर गई। उनके घोड़े सैनिकों को दे दिये गये। सैनिकों के तीन भाग करके शत्रु के विरुद्ध भेजे गये। शेख अली बेग ने तीन-चार भरोसे के भाईयों के साथ शत्रु पर आक्रमण किया। वे लोग एक घाटी में एकत्रित थे। उनमें से बहुत-से मारे गये और शाही सैनिकों को विजय प्राप्त हुई। फिर ईश्वर को धन्यवाद देकर बादशाह जैसलमेर की ओर रवाना हुआ और जुमादल अव्वल को उसने उधर डेरे लगाये। यहां पर वे लोग भी आ पहुंचे जो मार्ग भूल गये थे। जैसलमेर के राई लूणकरण ने शत्रुता करके तालाब पर पहरे बिठा दिये। तब थकी हुई शाही सेना को जलाभाव के कारण बड़ा कष्ट हुआ। तब शाही सेवकों ने पहरेदारों को हरा दिया। वहां से वे लोग 10 जुमादल अव्वल (23 अगस्त, 1542) को अमरकोट की ओर चले। जो दृढ़ दुर्ग था। भूख और प्यास की कठिनाइयां उठाकर सब लोग अमर कोट पहुंचे। दुर्ग के शासक राणा प्रसाद ने अच्छी सेवा की।

मरियम मकानी इस समय गर्भवती थी। उसको अनार खाने की इच्छा हुई। उस रेतीले मैदान में अनार कहां से मिलता। अचानक ही एक आदमी ने ज्वार का एक थैला खाली किया तो उसमें से रसदार अनार निकला।

उस सुखद स्थान पर बादशाह ने कुछ दिन व्यतीत किये। तार-दी-बेग खां और कितने ही अन्य लोगों के पास सामान और सम्पत्ति थी परन्तु उन विपत्ति के दिनों में भी उन्होंने बादशाह को कुछ नहीं दिया। तब अमरकोट के राय की सहायता से बादशाह ने उनसे कुछ छीन लिया और अपने अनुचरों में उसे विभक्त किया। शेष जिनका था उनको लौटा दिया।

हुमायूं का विचार आगे प्रयाण करने का था। उसने यह भी हिसाब लगा दिया कि

प्रसव का समय निकट है इसलिये 1 रजब 949 (11 अक्टूबर, 1542) को मरियम मकानी को तथा कुछ स्वामिभक्त अनुचरों को ईश्वर के सुपुर्द करके वह अभियान पर रवाना हो गया।

***

प्रकरण 27

हुमायूं को अकबर के मुख जन्म का समाचार मिलना

रविवार 5 रजब 949 (15 अक्टूबर, 1542) की रात को अकबर का जन्म हुआ। जब हुमायूं को यह समाचार मिला तो उसने भूमि पर सिर टिका कर ईश्वर को धन्यवाद दिया और सबने उत्सव मनाया।

मालदेव ने बादशाह के साथ अशोभनीय व्यवहार किया था। तब अपने अनुचरों की सलाह से वह सिन्ध में आया था। वहां उसे मालूम हुआ कि अरगूनी लोग जून में एकत्रित होकर लड़ने के लिये तैयार हैं। तब बादशाह ने शेख अली बेग जलेर को कुछ वीर लोगों के साथ भेजा और वह स्वतः पीछे रवाना हुआ। शेख अली को शाही लोगों की हिम्मत थी इसलिये उसने शत्रु को छिन्न-भिन्न कर दिया। शाही शिविर जून के निकट था। इस कस्बे में अमरकोट से मरियम मकानी को पालकी और अकबर का पालना आया। शाही सेना वहां कुछ समय तक ठहरी और अरगूनियों से लड़ाई होती रही जो सदैव हारते रहे। इस लड़ाई में बादशाह का एक कृपा-पात्र शेख ताजुद्दीन लारी मारा गया। एक दिन पास के जिले पर आक्रमण करने के लिये शेख अली बेग जलेर तार-दी-बेग खां और कुछ लोगों को भेजा गया। सुल्तान महमूद मक्करी ने उन पर आक्रमण किया। तार-दी-बेग ने तो कुछ लड़ने में कमी की। परन्तु शेर अली बेग लड़ता हुआ मारा गया। जिससे बादशाह को बड़ा दुःख हुआ। तब बादशाह ने कन्धार की ओर प्रयाण करने का निश्चय कर लिया। उसी समय 7 मुहर्रम 950 हिज्री (13 अप्रैल, 1543) को गुजरात से बैराम खां आया जिससे बादशाह को प्रसन्नता हुई। वैराम खां ने शाही शिविर में पहुंचने से पहिले ही कुछ शत्रुओं को हरा दिया था, इसलिये उसका आगमन बड़े हर्ष का कारण हुआ और इसीलिये हुमायूं उसी स्थान पर कुछ दिन ठहरा।

बैराम खां का वृत्तान्त

कन्नौज की लड़ाई में बैराम खां ने अपनी जान को बड़े खतरे में डाल दिया था। फिर वह सम्बल चला गया था। वहां से उसने लखनूर के कस्बे में राजा मित्रसेन के पास शरण

ली और कुछ समय तक वहां सुरक्षित रहा। शेर खां को इसका पता लग गया तो उसने राजा के पास अपना सन्देशवाहक भेजा। तब राजा ने विवश होकर बैराम खां को भेज दिया और वह मालवा की ओर रवाना हो गया। भेंट के समय शेर खां उससे उठकर मिला और चालाकी से बोला ''जो स्वामिभक्ति पर दृढ़ रहता है उसके ठोकर नहीं लगती।'' बैराम खां ने उत्तर दिया—'हां, ऐसे आदमी के ठोकर नहीं लगती।' अनेक कठिनाईयों के बाद बुरहानपुर के निकट ग्वालियर के फौजदार अबूल कासिम के साथ बैराम खां शेर खां के शिविर में से गुजरात की ओर भाग गया। जब बैराम खां और अबूल कासिम जा रहे थे तो शेर खां के राजदूत को उनकी खबर मिली और उसके आदमियों ने अबूल कासिम को पकड़ लिया। अबूल कासिम बड़ा ही सुन्दर व्यक्ति था। बैराम खां ने कहा—''बैराम खां तो मैं हूँ। अबूल कासिम ने कहा—यह तो मेरा नौकर है और मेरी खातिर आत्म बलिदान करना चाहता है।''

इस प्रकार बैराम खां बचकर भाग गया और सुल्तान महमूद गुजराती के यहां चला गया। अबूल कासिम को शेर खां के सामने प्रस्तुत किया गया। उसने अबूल कासिम की उदारता और विशाल ह्रदयता को नहीं समझा और उसका वध करवा दिया। शेर खां प्रायः कहा करता था कि ''ज्यों ही बैराम खां ने कहा कि स्वामिभक्ति वाला व्यक्ति कभी ठोकर नहीं खाता तो मैं समझ गया था कि वह हमसे समझौता नहीं करेगा।'' सुल्तान महमूद गुजराती ने चाहा कि बैराम खां उसके पास ठहरे परन्तु महमूद को इसमें सफलता नहीं मिली। बैराम खां यात्रा करने की अनुमति प्राप्त करके सूरत आया और वहां से वह हरिद्वार की ओर चला गया और फिर बादशाह के चरणों में जून नामक गांव के पास उपस्थित हुआ।

***

प्रकरण 28

जब अकबर आठ मास का था तो करामात का प्रकाश हुआ जिससे उसके जीवन की अगली घटनाओं का संकेत मिला

एक दिन सायंकाल जीजी अनगा अकबर को दूध पिला रही थी। माहम अनगा उसके विरुद्ध थी इसलिये जीजी अनगा बड़ी दुःखी रहा करती थी। माहम अनगा के अतिरिक्त अन्य धायें जीजी अनगा का विरोध किया करती थी। जीजी अनगा को इस बात पर बड़ा दुःख था कि बादशाह हुमायूं से यह कहा गया था कि मीर गजनवी की पत्नी (बीबी अनगा) जादू किया करती है, जिससे अकबर उसके सिवाय अन्य किसी धाय का दूध ग्रहण नहीं करता।

अब जीजी अनगा के पास कोई नहीं था तो अकबर उससे बोलने लगा और उसको सान्तवना दी और कहा—''शान्ति रख, खिलाफत का प्रकाश तेरे ही सीने में निवास करेगा और तेरी शौक निशा हर्ष प्रकाश में बदल जावेगी, परन्तु यह भेद किसी से मत कहना।'' जीजी अनगा ने कहा इस जीवनप्रद समाचार से मुझे परम हर्ष हुआ और मेरे हृदय की दु:ख ग्रन्थि तत्काल खुल गई। परन्तु मैंने यह बात बादशाह के राज्याभिषेक तक गुप्त रखी। एक दिन वह दिल्ली से पालम जिले में शिकार करने गया हुआ था तो एक भयंकर और विशाल सर्प प्रकट हुआ। अकबर ने उस पर अपना हाथ रखा और उसकी पूंछ पकड़ ली। मिर्जा अजीज कोकलताश के भाई युसूफ मुहम्मद खां ने यह शक्ति प्रदर्शन देखा तो वह चकित हो गया। उस अवसर पर मैंने अपने प्रिय पुत्र को वह घटना सुनाई जो मैंने देखी थी और सुनी थी और कहा—बादशाह ने बचपन में ऐसी बात की थी। अब वह बड़ा हो गया है और ऐसी करामात करता है तो क्या है?

***

प्रकरण 29

बादशाह हुमायूं का कन्धार के लिये वहां से हज्जाज जाने के निमित्त प्रयाण और ईरान में प्रवेश करने का निश्चय

जब बादशाह हुमायूं संसार के दिखावे से ऊब गया तो उसने सिन्ध की ओर से अपना मन हटा कर ठट्टा के शासक से सन्धि करने का और कन्धार की ओर प्रयाण करने का जब वह इस प्रकार के विचारों में व्यस्त था तो ठट्टा के शासक को उसके मनोभाव का पता लग गया और उसने सन्धि का प्रस्ताव भेजा। हुमायूं ने प्रार्थना स्वीकार कर ली तो अरगूनियों को बड़ा हर्ष हुआ।

7 रबी उल आखिर 950 हि० (11 जुलाई, 1543) को बादशाह ने सीवी के मार्ग से कन्धार की ओर कूच किया। यह खबर सुनकर मिर्जा कामरान के आदेश से तथा अपनी दुष्टता की प्रेरणा से मिर्जा असकरी ने कन्धार दुर्ग को दृढ़ किया और एक बड़ी सेना के साथ शाही शिविर की ओर प्रयाण किया। वह बादशाह को बन्दी बना लेना चाहता था। उसी समय शेख अब्दुल बहाब और अमीर अल्ला दोस्त ने, जो शाह हुसेन बेग अरगून की पुत्री के विवाह का प्रस्ताव लेकर जा रहे थे सीवी के दुर्ग में शरण ली। हुमायूं ने मीर अल्ला दोस्त को बुलाया परन्तु वह नहीं आया।

जब शाही सेना कन्धार से एक सौ पचास मील के अन्तर पर शाल पहुँची तो मिर्जा

कामरान के एक अफसर जलालुद्दीन बेग ने अपने सूचकों के द्वारा दो शाही सेवकों को जो सर चश्मा तक आगे बढ़ गये थे पकड़ा कर बुलवा लिया। उनमें से एक भाग गया और उसने सारा वृत्तान्त सुनाया तब बादशाह ने कन्धार की ओर कूच करना छोड़ कर मस्तंग का मार्ग ग्रहण किया। पायन्दा मुहम्मद वैसी ने कन्धार जाने की इजाजत ले ली थी। उसके साथ बादशाह ने अपने हाथ से मिर्जा असकरी को पत्र लिखा और उसको समझाया तथा चेतावनी दी परन्तु उसने दुष्टता नहीं छोड़ी। कासिम हुसेन सुल्तान आदि ने असकरी मिर्जा को समझाया कि वह बादशाह के विरुद्ध प्रयाण नहीं करे अन्यथा वह कहीं ईरान चला जावे। अब्दुल खैर ने असकरी को उल्टी सलाह दी इसलिये मिर्जा असकरी ने मस्तंग की ओर कूच कर दिया। जय बहादुर नामक एक जागीरदार ने घोड़ा दौड़ा कर और बैराम खां के डेरे में पहुँच कर सब हाल सुनाया तो बैराम खां हुमायूं के डेरे में गया। हुमायूं ने तर्दी बेग और कुछ दूसरे लोगों से घोड़े मांगे परन्तु उन्होंने नहीं दिये। अब हुमायूं ने कन्धार औरं काबुल जाने का विचार छोड़ दिया और वह फारस की ओर मक्का जाने के विचार से रवाना हुआ। ख्वाजा मोअज्जम, नदीम कोकलताश, मीर गजनबी और ख्वाजा अम्बर नाजिर को आदेश दिया कि वे बालक अकबर को सम्भालें और उसको किसी प्रकार का कष्ट नहीं होने दे तथा यथाशक्ति प्रयास करके मिरियम मकानी को शाही डेरे में लावे। कुछ दूर जाने पर बैराम खां ने बादशाह से निवेदन किया कि ''असकरी को धन की बड़ी अभिलाषा है। इस समय वह दो-तीन लेखकों के साथ डेरे में बैठा हुआ शाही सामान की सूची तैयार करवा रहा होगा। इसलिये ईश्वर पर भरोसा करके अचानक उस डेरे पर हमला कर दिया जाये। मिर्जा के सब सेवक बादशाह का साथ देंगे। बादशाह ने कहा कि अब तो विदेश जाने का निश्चय हो गया है और यात्रा आरम्भ कर दी गई है। बादशाह ने एक बार फिर बालक अकबर को ईश्वर के भरोसे पर छोड़ा और अपना प्रयाण जारी रक्खा।''

जब मिर्जा असकरी मस्तंग पहुंचा तो उसने अपने सदर मीर अबुल हसन को इसलिये भेजा कि—यदि हुमायूं जाने का विचार कर रहा हो तो उसको किसी युक्ति से रोका जाये। हुमायूं ने मीर अबुल हसन की बात नहीं मानी। फिर मिर्जा असकरी ने साहवलद अबुल खैर और अन्य लोगों को डेरे की चौकसी के लिये भेजा। उसने अपने सदर मीर अबुल हुसेन से हुमायूं के प्रस्थान की कहानी सुनी। अब तर्दी बेग खां और अन्य स्वामिद्रोही लोग मिर्जा असकरी के पास आ गये। दूसरे दिन प्रातःकाल मिर्जा असकरी ढोल बजवा कर शाही डेरे में आया और छोटे-बड़े सब लोगों को पकड़ लिया गया। तर्दी बेग खां को शाह वलद के हवाले कर दिया। कितने ही स्वामिद्रोही सेवकों को अपने आदमियों के हवाले करके कन्धार भेज दिया। बहुतों को यातनाएं देकर समाप्त कर दिया। तर्दी बेग का सारा धन छीन लिया।

जब मिर्जा असकरी शाही डेरे में पहुंचा और अनुचित कार्य करने लगा तो मीर गजनवी और माहम आगा ने अकबर को उसके सामने प्रस्तुत किया। मिर्जा ने उसकी ओर देखा, बनावटी ढंग से मुस्कराया और कहा हम जानते हैं यह किसका बच्चा है। फिर मिर्जा असकरी अकबर को कन्धार ले गया।

असकरी अकबर को 18 रमजान 950 हि० (16 दिसम्बर, 1543) को कन्धार ले गया और दुर्ग में उसको अपने निकट ही ठहराया। माहम आगा जीजी अनगा और अतगा खां उसकी सेवा करते थे। मिर्जा ने अकबर को अपनी पत्नी सुल्तान बेगम के सुपुर्द कर दिया जिसने उसको बड़े प्रेम से पाला।

मैंने स्वयं अकबर के मुख से सुना है, उसने कहा था कि 'मुझे भली-भांति याद है कि जब मैं एक वर्ष का था तो क्या हुआ विशेष कर वह समय मुझे याद है जब स्वर्गीय बादशाह ईराक की ओर चला गया और मुझे कन्धार लाया गया। उस समय मैं एक वर्ष और तीन मास का था। एक दिन आदम खां की माता माहम अनगा ने मिर्जा असकरी से कहा, यह तुर्की प्रथा है कि जब बच्चा चलने लगता है तो पिता या प्रपिता या उनका प्रतिनिधि अपनी पगड़ी उतार कर उससे बच्चे को मारता है ताकि वह भूमि पर गिर पड़े। इस समय हुमायूं यहां नहीं है आप उनके स्थान पर हैं। यह उचित होगा कि आप यह जादू करें जिससे नजर न लगे। मिर्जा ने अपनी पगड़ी उतार कर तुरंत ही मेरी ओर फेंकी और मैं गिर गया। यह पगड़ी का फेंकना और मेरा गिरना अभी मेरी आखों के सामने है। मुझे यह भी याद है कि उसी समय मेरे सौभाग्य के लिये बाबा हसन अब्बुल की दरगाह पर ले जाकर मेरा मुण्डन करवाया गया। यह यात्रा व मुण्डन मानों मैं अब भी आईने में देख रहा हूं।

अब मैं शेर खां के जीवन की शेष घटनाएं, मिर्जा हैदर का कश्मीर गमन, मिर्जा कामरान की स्थिति और मिर्जा हिन्दाल के विषय में वर्णन करूंगा। यादगार नासिर मिर्जा भक्कर में ही ठहर गया था। उसका भी हाल लिखूंगा।

***

प्रकरण 30

शेर खां के जीवन का अधम अन्त

व्यास नदी को पार करने के बाद शेर खां सावधानतापूर्वक धीरे-धीरे आगे बढ़ा। उसको भय था कि कहीं शाही सेना से मुकाबला न हो जाये। उसने एक बड़ी अग्रसेना आगे भेज दी थी परन्तु वह नहीं चाहता था कि युद्ध हो। कुछ दिन बाद जब मिर्जा कामरान और दूसरे भाइयों के विरोध का समाचार सर्वत्र फैल गया तो वह लाहौर आया। वहां से वह खुशाब पहुंचा और फिर बीड़ा के पास कुछ दिन तक ठहरा। उसने सुल्तान सारंग गखड़ और सुल्तान आदम को, जो पास के इलाके में बड़े जमीनदार थे, बुलाया। दोनों बाबर के कृपा पात्र थे। इसलिये इन्होंने शेर खां की बात नहीं सुनी और उसके विरुद्ध एक बड़ी सेना भेजी जिसने अफगानों को हरा दिया और बहुतों को पकड़ कर बेच दिया। तब शेर खां स्वयं उनके विरुद्ध प्रयाण करना चाहता था परन्तु उसके साथियों ने सलाह दी कि इनका दमन धीरे-धीरे किया

जाना चाहिये और इस प्रदेश में एक दुर्ग का निर्माण करना चाहिये तथा वापस लौटकर अपने विशाल देश के प्रशासन की व्यवस्था करनी चाहिये। इसलिये शेर खां ने वहां पर रोहतास नामक दुर्ग बनवाया और वहां बड़ी सेना रखकर उसने आगरा की ओर प्रयाण किया। वहाँ से वह ग्वालियर आया। वहां मीर अबूल कासिम छिपा हुआ था। परन्तु उसको आत्मसमर्पण करना पड़ा। अब शेर खां ने सर्वोपरि बन कर सारे देश को 47 भागों में विभक्त कर दिया। इनमें बंगाल नहीं था। उसने घोड़ों के दाग लगाने की प्रथा जारी की और सुल्तान अलाउद्दीन के बहुत-से सुधारों का आरम्भ किया। इनका वर्णन तारीख-ए-फिरोज शाही में दिया हुआ है। फिर उसने राई सेन और चन्देरी के राजा पूर्णमल पर प्रयाण किया और उसके साथ एक कपट सन्धि करके उसको दुर्ग से बाहर बुलाया और फिर अपना वादा भंग करके उसको और लोगों को नष्ट कर दिया। वहां से शेर खां आगरा आया और बंगाल के सुबेदारों की भांति उसने एक-एक कोस पर सरायें बनवाईं।

आगरा में बड़ी खतरनाक बीमारी भोग कर उसने अजमेर नगर और अन्य नगरों के स्वामी मालदेव के विरुद्ध प्रयाण किया। जब छलपूर्वक उसका देश छीन लिया तो उसने चित्तौड़ और रणथम्भौर पर कूच किया और वहां भी उसने चालाकी की। जिससे दुर्गपतियों ने चाबियां उसके सुपुर्द कर दीं। फिर वह ढूढार गया और वहां से प्रयाण करके उसने कालिंजर के दुर्ग को घेर लिया। उसको जीतने के लिये उसने साबात बनवाये और सुरंग लगवाये। 10 मुहर्रम, 952 हिज्री (5 मार्च, 1545) को वे आग की ज्वालाओं से समाप्त हो गये। उसकी मृत्यु की तारीख 952 हिज्री "(अ) ज-आतिशमुर्द" से निकलती है। इस दुर्ग को जीतने में उसका जीवन समाप्त हो गया परन्तु दुर्ग जीत लिया गया। उसने छल और कपटपूर्वक 5 वर्ष 2 मास और 13 दिन भारत पर राज्य किया। 8 दिन पश्चात् उसका छोटा पुत्र जलाल खां, जो ईस्लाम खां कहलाता था, शाह की उपाधि धारण करके उसकी गद्दी पर बैठ गया। दुष्टता में वह अपने पिता से भी आगे निकल गया। फिर इन दुष्टों की यातनाओं से संसार मुक्त हो गया।

***

प्रकरण 31

मिर्जा हैदर का संक्षिप्त वृत्तान्त

पहिले लिखा जा चुका है कि बादशाह से सहायता लेकर मिर्जा हैदर ने कश्मीर की ओर कूच किया। जब वह नौशहर पहुंचा तो अफसरों ने आकर उसको कश्मीर में प्रवेश करने का और उस देश पर कब्जा करने का मार्ग बताया। इसी बीच में बादशाह की सेना में फूट हो गई। ख्वाजा कलां बेग या तो स्वतः ही या मिर्जा कामरान की प्रेरणा से कामरान से जा

मिला और मुजफ्फर तूफी सारंग की पहाड़ियों में चला गया। तब मिर्जा हैदर के साथ इने-गिने पुराने अनुचर या वे सैनिक रह गये जो हुमायूं ने उसके साथ दिये थे। परन्तु कश्मीर में फूट, कलह और अराजकता थी इसलिये कश्मीरियों ने उसको खूब समर्थन दिया। 22 रजब, 947 (22 नवम्बर, 1540) को उसने कूच की घाटी से प्रवेश करके बिना लड़े ही कश्मीर जीत लिया। उस समय वहां कोई शासक नहीं था और मंत्री लोग ही अत्याचारपूर्वक शासन कर रहे थे और नाज्युक शाह नाम का एक व्यक्ति वहां का सुल्तान बना हुआ था। जब काची चक ने देखा कि मिर्जा हैदर स्वतंत्र शासक बनना चाहता है तो वह कश्मीर से शेर खां के पास चला गया। उसने मिर्जा हैदर को कश्मीर में अपने स्वार्थसिद्धि के लिये बुलाया था। जब वह सफल नहीं हुआ तो फिर उसने दूसरी योजना रची। उसने मुहम्मद शाह के पुत्र इस्माईल की बहिन शेर खां को भेंट कर दी। इस प्रकार शेर खां का प्रिय बनकर वह अलावल खां, हसन खां शेरवानी और अन्य दो हजार आदमियों को लेकर कश्मीर में आया। इसी बीच में अब दाल माकरी, जो काची चक का समर्थक था, जलोदर रोग से मर गया और मिर्जा हैदर ने अपना कुटुम्ब अन्दर कोट में रखकर अपनी स्थिति दृढ़ कर ली। कश्मीर के सब लोग उसको छोड़ गये केवल थोड़े-से लोग उसके पास रह गये। फिर 20 रबी उस्मानी, 948 हिज्री (16 अगस्त, 1541) को एक लड़ाई हुई जिसमें उसको विजय प्राप्त हुई। अफगान और कश्मीरी मिलकर 5000 से अधिक सवार थे परन्तु वे हार गये और कश्मीर मिर्जा के हाथ में आ गया। इस विजय की तारीख मौलाना जमालुद्दीन मुहम्मद युसूफ ने फतह-ए-मुकर्रे द्वारा 948 हिज्री लिखी। मिर्जा हैदर एक बार पहिले 1 मार्च, 1533 को उस समय के कश्मीर के शासक सईद खां के विरुद्ध प्रयाण करके आया था। परन्तु उस वर्ष के अन्त में उसने कश्मीर के मंत्रियों से और मुहम्मद शाह से जो नाममात्र का शासक था, सन्धि कर ली। शाह की लड़की के साथ मिर्जा के पुत्र इस्कन्दर सुल्तान का विवाह हो गया और मिर्जा जिस मार्ग से आया था उसी मार्ग से वापस चला गया।

मिर्जा ने कश्मीर का उत्तम रीति से शासन किया और वहां नगर बसाकर सभ्यता स्थापित की। उसने सब ओर से कारीगर और कलाकर बुलाये। संगीत को प्रोत्साहन दिया और कई प्रकार के वाद्य जारी किये, परन्तु मिर्जा में कट्टरता थी इसलिये कश्मीर में एकता और स्वामिभक्ति स्थापित नहीं हो सकी और इस समय भी कश्मीर में वही हालत है।

मिर्जा की एक बड़ी भूल यह थी कि उसने नाज्युक शाह के नाम का खुतबा पढ़ाया। उसको चाहिये था कि हुमायूं बादशाह के नाम का खुतबा पढ़वाता, परन्तु वह समय निकाल रहा था।

अक्टूबर 1551 में कश्मीरियों ने रात मे उस पर आक्रमण किया जिससे उसका प्राणान्त हो गया। कश्मीरियों ने उसकी सेना को उसके विरुद्ध कर दिया था और योग्य सेवकों को इधर-उधर भगा दिया था। कुछ तिब्बत, कुछ पक्ति और कुछ राजौरी चले गये। ईदीरीना और हुसेन माकरी ने मिर्जा के प्रबन्धक ख्वाजा हाजी को अपनी ओर मिला लिया और फिर मिर्जा पर आक्रमण किया। यह घटना हीरापुर और श्रीनगर के बीच में हुई। वह वहां करा बहादुर

को मुक्त करने के लिये ख्वाजा हाजी के निवास पर आया था। अचानक ही उसको अपने प्राण त्यागने पड़े। कमाल दुबी ने उसको बाण मारा था।

***

प्रकरण 32

मिर्जा कामरान के जीवन-कार्य का संक्षिप्त वृत्तान्त

अब मैं मिर्जा कामरान के कार्यों का वर्णन करता हूँ। बादशाह से जुदा होकर जब वह खुशाब पहुंचा तो उसने अपने नाम का खुतबा पढ़वाया, परन्तु मिर्जा कामरान की सत्ता गुलाब के फूल की भांति शीघ्र ही समाप्त हो गई।

संक्षिप्त वृत्तान्त यह है कि घनकोट के मार्ग से वह सिन्धु नदी के तट पर पहुंचा। वहां मुहम्मद सुल्तान और उलूग मिर्जा जो मुलतान में नहीं टिक सके थे, उसके पास आये। वहां अन्न का अभाव हो गया इसलिये पुल बनाकर उसने नदी पार की। फिर काबुल पहुंच कर वहां भोग-विलास में अपना समय व्यतीत करने लगा। कामरान ने गजनी और उसका इलाका असकरी मिर्जा को दिया और ख्वाजा खावन्द मुहम्मद को दूत बनाकर सुलेमान मिर्जा के पास बदख्शां भेजा और कहलाया कि वह अधीन होकर बदख्शां में मिर्जा कामरान का सिक्का चलाये, परन्तु उसने नहीं माना। तब कामरान ने बदख्शां पर सेना चढ़ाई। बारी नामक गांव के पास मिर्जा सुलेमान ने अपने को निर्बल समझकर सन्धि करना चाहा। फिर उसने कामरान के नाम का खुतबा पढ़ाया। कामरान ने बदख्शां का कुछ प्रदेश छीन कर अपने आदमी को दे दिया। इसी बीच में खबर आई कि मिर्जा हिन्दाल ने कन्धार पर अधिकार कर लिया है। तब मिर्जा कामरान ने कूच करके कन्धार को घेर लिया और छः मास तक घेरा चलता रहा। जब दुर्ग में सामान की कमी हो गई तो हिन्दाल ने दुर्ग समर्पित कर दिया। कन्धार को मिर्जा असकरी के सुपुर्द करके कामरान मिर्जा हिन्दाल को अपने साथ लेकर काबुल लौट आया। कुछ दिन उसके साथ कठोरता की परन्तु फिर जुई शाही का उपजाऊ इलाका उसको दे दिया। यह अब जलालाबाद कहलाता है। सिन्ध के शासक ने भी अधीनता प्रकट की, परन्तु फिर मिर्जा सुलेमान ने सन्धि भंग करके कामरान से बदख्शां के वे इलाके वापस छीन लिये जो कामरान ने ले लिये थे। तब कामरान ने दुबारा आक्रमण किया और अन्दराब के पास लड़ाई हुई जिसमें हार कर सुलेमान जफर दुर्ग में छिप गया। मिर्जा कामरान ने इस दुर्ग को घेर लिया, परन्तु कामरान ने उसमें रसद पहुंचाना बन्द कर दिया। इससे सुलेमान को अधीनता प्रकट करनी पड़ी। फिर बदख्शां में अपने विश्वसनीय लोगों को नियुक्त करके कामरान वापस काबुल लौट आया। यह घटना 8 अक्टूबर, 1546 को घटी थी। मिर्जा सुलेमान और उसके पुत्र ईब्राहीम को कामरान ने कारागार में रखा और फिर एक मास तक काबुल में खूब आमोद-प्रमोद किया।

मिर्जा हिन्दाल

मिर्जा हिन्दाल हुमायूं को विपत्ति में छोड़कर कन्धार की ओर चला गया। उस समय मिर्जा कामरान की ओर से कराचा खां कन्धार का शासन कर रहा था। जब उसने हिन्दाल के आगमन की खबर सुनी तो उसने बाहर आकर हिन्दाल का आदरपूर्वक स्वागत किया और प्रदेश उसके सुपुर्द कर दिया। थोड़े दिन बाद कामरान ने आकर कन्धार पर कब्जा कर लिया और हिन्दाल को कैद करके उसके साथ कठोर व्यवहार किया।

यादगार नासिर मिर्जा

यादगार नासिर मिर्जा ठट्टा के शासक के धोखे में आकर लूहरी में ठहर गया था। हुमायूं के चले जाने के दो मास तक वह वहीं ठहरा रहा फिर वह ठट्टा के सुल्तान का कपट समझ गया और कन्धार की ओर चला गया। हासिम बेग ने उसको समझाया कि हुमायूं को छोड़कर कामरान की सेवा करना उचित नहीं है परन्तु यादगार ने नहीं माना। उस समय मिर्जा कामरान कन्धार में था। फिर उसके साथ यादगार काबुल चला गया। कामरान ने ठट्टा के शासक को लिखा कि यादगार के कुटुम्ब को भेज दिया जाये। उनको भेज तो दिया गया, परन्तु भूल से ऐसे मार्ग से रवाना किया जिस पर जल का अभाव था। इसलिये उनमें से बहुत से मर गये। जब वे लोग शाल पहुंचे तो उनमे ज्वर फ़ैल गया और बिककिश कमानी [1] की मृत्यु भी हो गई। दो-तीन हजार आदमी इस कारवां में थे। इनमें से केवल गिनती के लोग ही कन्धार पहुंचे।

***

प्रकरण 33

बादशाह हुमायूं का खुरासान और मीदियां (ईराक) को प्रयाण और मार्ग की घटनाओं का वृत्तान्त

ईश्वर की असीम दया से लुटेरों का मुखिया मलीक होती बलूच उस रेतीले मैदान में बादशाह के पास आया। उसे अपने मकान पर ले गया और उसकी सेवा की। उस भयानक घाटी में पथ-प्रदर्शक बन कर वह बादशाह को गर्म सीर में ले गया। वहां का कलान्तर (मजिस्ट्रेट) मीर अब्दुल हेय ने अत्यधिक सावधानी की और स्वयं सेवा में नहीं आया फिर भी उसने आतिथ्य करने में कोई कमी नहीं रक्खी। मिर्जा असकरी की ओर से ख्वाजा

---

1. यह बाबर की छोटी सौतेली-बहिन थी और यादगार के पिता की सगी बहिन थी। उसका विवाह जुनेद बिरलास से हुआ था और उससे संजर का जन्म हुआ था।

जलालुद्दीन महमूद भूमि-कर संग्रह के लिये वहां आया हुआ था। बादशाह ने बाबा दोस्त बख्शी को उसके पास भेजा कि उसे समझा बुझा कर सेवा में ले आवे। बादशाह ने वहां कई दिन बिताये और बाह्य परिस्थिति की अस्थिरता तथा संसार की बेवफाई के विषय में अपने साथियों से बातचीत की। उसके मन में आया कि संसार से हटकर और एक एकान्त कोने में जाकर ईश्वर का ध्यान किया जाये।

उसकी सज्जनता और मानवता के कारण उसके अनुचरों का साहस भंग नहीं हुआ। अन्त में बादशाह ने निश्चय किया कि ईराक के शाह को एक पत्र लिखा जाये और उसके देश की ओर जाया जाये। यदि ईराक का बादशाह उदारता प्रकट करे तो फिर सांसारिक विषयों की ओर ध्यान दिया जाये अन्यथा फकीर बनकर स्वतंत्र हो जाये। बृहस्पतिवार एक शव्वाल 959 (28 दिसम्बर, 1543) को उसने पुली बहादुर के साथ एक पत्र भेजा जिसमें अपना संक्षिप्त वृत्तान्त लिखा।

हुमायूं कुछ दिन गर्म सीर में व्यतीत करना चाहता था परन्तु वहां के मीर अब्दुल हेय ने कहा कि मिर्जा असकरी ने एक बड़ी सेना भेजी है। यदि वह यहां आई तो स्थिति काबू में नहीं रहेगी। यदि बादशाह सीस्ता चला जाये, जहां ईराक के शाह का राज्य है, तो वहां असकरी के लोग उसका कुछ नहीं कर सकेंगे। बादशाह ने पक्ष और विपक्ष पर विचार करके सीस्तां की ओर प्रयाण कर दिये। हिरभंग नदी को पार करके वह एक झील पर ठहरा जिसमें इस नदी का पानी जाता है। सीस्तां के फौजदार अहमद सुल्तान ने बादशाह की सेवा की और आतिथ्य किया। बादशाह ने वहां कुछ दिन ठहर कर जल कुक्कुटों का शिकार किया। वहां से वह सीस्तां गया। अहमद सुल्तान ने मरियम मकानी की सेवा करने के लिये अपनी माता और पत्नियों को भेज दिया और अपने जिले का भूमिकर बादशाह को अर्पण किया। बादशाह ने इसमें से कुछ रखकर शेष वापस कर दिया। यहां अहमद सुल्तान का भाई हुसैन कुली मिर्जा जो मशहद से वापस लौट आया था अपनी माता और भाई से मिलने के लिये आया। यात्रा पर रवाना होने के पहिले वह उनसे मिलना चाहता था। वह हुमायूं से भी मिला तो बादशाह ने उसके साथ धर्म-चर्चा की। उसने निवेदन किया—"मैंने शिया और सुन्नी दोनों सम्प्रदायों का अर्से तक अध्ययन किया है। शिया लोगों का कहना है कि—(पैगम्बर के) साथियों को गालियां देना और श्राप देना धार्मिक उन्नति का प्रशंसनीय साधन है। सुन्नी लोगों का मत है कि ऐसे साथियों की बुराई करना अधार्मिक कार्य है। विचार और मनन के बाद मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि यदि कोई किसी कार्य को अच्छा समझ कर करता है तो वह अधार्मिक नहीं बन सकता।" बादशाह ने इस कथन का अनुमोदन किया और उसको प्रतिष्ठा का पद दिया। वह यात्रा पर जाने वाला था और उसको तदनुकूल व्यवस्था भी करनी थी, परन्तु अब वह इस लाभ से वंचित रहा। इसी स्थान पर हाजी मुहम्मद और हसन कोका मिर्जा असकरी को छोड़ कर शाही सेना में आ गये। उन्होंने सलाह दी कि बादशाह को जमीन्दावर की ओर प्रयाण करना चाहिये क्योंकि वहां का फौजदार अमीर बेग सेवा करने के लिये आ रहा है ओर बस्त दुर्ग का फौजदार कल्मा बेग भी सेवा का सौभाग्य प्राप्त करना चाहता है। मिर्जा असकरी के बहुत-से आदमी शीघ्र ही उसको छोड़कर बादशाह की सेवा

में आ जायेंगे और कन्धार तथा उसके पास का इलाका शाही सेवकों के हाथ में आ जायेगा। जब अहमद सुल्तान ने सुना कि इस प्रकार की सलाह देकर बादशाह को रोका जा रहा है तो उन्होंने निवेदन किया कि—पर्शिया (ईराक) जाना ही मुनासिब है और जो लोग दूसरी सलाह दे रहे हैं वे कपट और धोखा कर रहे हैं। अहमद सुल्तान पर हुमायूं को भरोसा था इसलिये उसकी सलाह के अनुसार उसने ईराक (ईरान) जाने का निश्चय कर लिया। इसलिये थोड़े दिन हाजी मुहम्मद और कोका बादशाह के दरबार में उपस्थित होने से वंचित रहे। अहमद सुल्तान बादशाह के साथ-साथ चला। वह तबास किलाकी के मार्ग से बादशाह का पथ-प्रदर्शन करना चाहता था। परन्तु बादशाह हेरात जाना चाहता था। इसलिये उसने उक नामक दुर्ग का मार्ग लिया।

जब हुमायूं का पत्र शाह तहमास्प को मिला तो उसने हर्ष मनाया और शीघ्र ही आदरपूर्ण उत्तर भेजा, साथ ही विविध प्रकार की भेटें भी रवाना कीं। उसने हुमायूं के सन्देशवाहक को आदरपूर्वक वापस भेजा और नगरों तथा कस्बों के फौजदारों को आदेश दिया कि जहां बादशाह हुमायूं ठहरे वहां के लोग उस दिन उत्सव मनावें और बादशाह का स्वागत करें तथा खान-पीन फल आदि की उचित व्यवस्था करें। हेरात के फौजदार मुहम्मद खां को जो आदेश भेजा गया था उसकी प्रति यहां दी जाती है।

शाह तहमास्प का फरमान खुरासान के फौजदार के नाम

तुम्हारा पत्र कमालुद्दीन शाहपुरी बेग के और करा सुल्तान शामलु के भाई के द्वारा 12 जिल हिज्जा (8 मार्च, 1544) को प्राप्त हुआ। तुमने बादशाह हुमायूं के आगमन के विषय में लिखा जिससे इतना हर्ष हुआ कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। इस समाचार के उपलक्ष में सब्ज बार का प्रदेश मुहम्मद खां को प्रदान किया जाता है। इसकी वार्षिक आय से बादशाह की सेना और स्वयं उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति की जाये। इस निशान के आदेशों का अक्षरशः पालन किया जाये।

बादशाह का स्वागत करने के लिये 500 बुद्धिमान और अनुभवी पुरुष नियुक्त किये जायें। इनमें से प्रत्येक के पास एक कूतल घोड़ा, एक सवारी का खच्चर और उनके लिये आवश्यक साज होना चाहिये। बादशाह के उपयोग के लिये 100 शीघ्रगामी घोड़े इस दरबार में भेजे जा रहे हैं। इन पर सुनहरी जीन है। बादशाह 6 तेज घोड़े अपनी सवारी के लिये चुन ले, उन पर सुनहरी जीन कसी जाये। एक खंजर, एक सुनहरी शमसीर और एक जड़ाऊ कमरबन्द बादशाह के लिये भेज दिये गये हैं। मखमल के और रेशम के 400 थान जो योरोप से आये हैं भेजे जाते हैं। इनसे बादशाह के उपयोग के लिये 120 कोट बनेंगे। शेष कपड़ा बादशाह के सेवकों के काम आयेगा। इनके सिवाय खीन ख्वाब के कालीनों की दो गाठें और बड़े-बड़े कालीनों के तीन जोड़े, चार गोश कानी रेशमी और 12 लाल, हरे और सफेद डेरे भेज दिये गये हैं।

प्रतिदिन मधुर पेयों की व्यवस्था की जाये जिनमें दूध और मक्खन के साथ सफेद

चपातियां मिला दी जायें। उनमें पोस्ते के बीज डाले जायें। इस प्रकार के पदार्थ बादशाह और उसके अनुचरों के लिये भेजे जायें। जहां बादशाह ठहरे वहां एक दिन पहले सफेद डेरा जिस पर रेशम और मखमल का काम बना हो खड़ा किया जाये। साथ ही रसोई घर और भोजन घर और बाहर के दफ्तर बनाये जायें। जब वह ठहरने के लिये कहे तो उस स्थान पर गुलाबजल छिड़का जाये ओर बर्फ में नीबू आदि का रस मिलाकर छिड़का जाये। इसके बाद मसहद के सेव, खरबूजे, अंगूर आदि चपातियों में मिलाकर प्रस्तुत किये जायें। सारे पेय बादशाह के सामने पहिले देखने के लिये रख दिये जायें। प्रतिदिन नाना प्रकार के 5 खाद्य पदार्थ बनाये जायें और उनके साथ पेय भी रखे जायें। बादशाह के स्वागत के लिये पहिले 500 आदमी और फिर तुम्हारे वंशज तथा जाति के लोग जो 1000 हों, जायें। तुम्हारे अनुचरों के पास अरबी घोड़े होने चाहिये और 1000 आदमियों की वर्दी रंगीन होनी चाहिये जो अच्छी दिखे। जब अफसर बादशाह से मिले तो उनमें से एक-एक धरती चुम्बन करे और आदरपूर्ण शब्द कहे। साथ-साथ जाते समय तुम्हारे अनुचरों में और बादशाह के लोगों में कोई विवाद न हो। यह आदेश उन सब इलाकों के फौजदारों को दिखाया जाये जहाँ हुमायूं बादशाह आने वाला हो और आतिथ्य के समय देखा जाये कि खाना, मिठाई और पेय सब मिलकर 1500 से कम न हो। प्रतिदिन बादशाह को 9 घोड़े भेंट किये जायें जिनमें से 3 बादशाह के लिये, बैराम खां बहादुर के लिये और 5 ऐसे अफसरों के लिये जो उपयुक्त हों। ये घोड़े बादशाह को पहिले दिखा लिये जायें और पूछा जाये कि कौन से घोड़े किसके लिये उचित होंगे। इसी प्रकार का स्वागत उस वक्त तक होता रहे जब तक कि बादशाह हमारे पास आ पहुंचे। सेवा और आतिथ्य, करने के बाद फौजदार बादशाह के साथ हेरात तक जाये। जब बादशाह हेरात प्रान्त से 12 फरसक के अन्तर पर पहुंच जाये तो वहां का फौजदार एक अनुभवी अफसर को नगर के प्रबन्ध के लिये हमारे पुत्र के पास छोड़कर 30,000 आदमियों को साथ लेकर बादशाह के स्वागत के लिये जाये। ऊंटों और खच्चरों के द्वारा डेरों का सामान पहुंचा दिया जाये। बादशाह को हमारे डेरे बड़े व्यवस्थित दिखाई देने चाहिये। बादशाह से मिलकर फौजदार उसको हमारी सद्कामना पहुंचाये। बादशाह की ईजाजत लेकर फौजदार दिन 3 तक उसका आतिथ्य करे। पहिले दिन सब सैनिकों को सुन्दर रेशमी और कम ख्वाब की खिल्लतें दे, जो यज्द मसहद और खाफ की बनी हुई हो। दैनिक खर्च के हेतु प्रत्येक सैनिक को दो तबरीजी तूमान दिये जायें। सभाओं में बादशाह की प्रशंसा की जाये। 2500 तबरीजी तूमान हमारी निजी राशि में से लेकर खर्च किये जायें। बादशाह की सेवा में उत्साह दिखाया जाये। सारे फौजदार और अफसर बादशाह की सेवा करने मे तत्पर रहे। बादशाह के आने से पहले नगर में ईदगाह को डेरों से सजाया जाये। जिस बाग मे बादशाह ठहरे उसको भी अलंकृत किया जाये। बादशाह से निवेदन किया जाये कि यह सब कुछ उसके नजर है। फिर हमारा पुत्र नगर से बाहर जाकर उसका स्वागत करे। जब बादशाह थोड़ी दूर जाये तो उससे कहा जाये कि सवारी से नहीं उतरे। यदि वह नहीं माने तो पुत्र उसके सामने उतर कर आदर प्रकट करे और फिर उसके साथ-साथ सवार होकर चले। दोपहर के समय 1200 प्रकार के व्यंजन परोसे जायें। उसके बाद पुत्र के तबेलों से 7 सुन्दर घोड़े जो मखमल और रेशम की जीनों से कसे हुए हों तैयार किये जायें, फिर नगर के प्रसिद्ध गवैये तैयार रहें और बादशाह सुनना

चाहे उस समय गावें बजावें। बादशाह के अनुचरों को खिल्लतें दी जायें। हर एक सैनिक को खर्च के लिए 3 तबरीजी तूमान दिये जावें। नगर के सब गवैये बादशाह की सेवा में हाजिर हो। प्रस्थान के समय हमारा पुत्र बादशाह के साथ-साथ चले ओर तुम पीछे-पीछे चलो। बादशाह कोई प्रश्न पूछे तो तुम उसका उचित उत्तर दो। जब बादशाह नगर में पहुंचे तो उसको चहार बाग दिखाओ। इस बाग के गुसलखानों को सुगन्धित कर दो। पहले दिन हमारा पुत्र सब प्रकार का आतिथ्य करेगा। फिर उसी प्रकार फौजदार आतिथ्य करेगा। जिस दिन बादशाह नगर में प्रवेश करे उसी दिन तुम दरबार में वृत्तान्त लिखकर भेजो और एक अनुभवी आदमी को नियत किया जाये जो प्रतिदिन का वृत्तान्त लिखकर भेजे।

बादशाह का आतिथ्य निम्न प्रकार किया जाये—

3000 प्रकार का भोजन मिठाइयां, शीरा और फल तैयार किये जायें। 50 डेरे और बड़े-बड़े सामान के डेरे खड़े किये जायें। 12 जोड़ी कालीन 12 हाथ लम्बे और 7 जोड़ी कालीन 5 हाथ लम्बे बिछाये जायें। 250 चीनी की तश्तरियां और नाना प्रकार के बर्तन और उनके ढक्कन रक्खे जायें। घुरियान फूर्शज और करशू के फौजदार अपने-अपने ढंग से आतिथ्य करें। बखारज का गवर्नर जाम में और खाफ तरशीज जावाह और मुहबलात के गवर्नर सराई फरहाद में आतिथ्य करें।

जब हुमायूं बादशाह फराह [1] के निकट पहुँचा तो शाह का राजदूत आया और हुमायूं को सूचित किया कि ईरान शाह को उसके आगमन से बड़ा हर्ष, अनिवार्य अभिलाषा हुई और वह हेरात की ओर चला। प्रत्येक मंजिल पर खुरासान के बड़े-बड़े लोग उसके स्वागतार्थ आते थे। जाम तुर्कत, सरखास ईश्पहान के लोग उसके आगमन की आशा से हेरात आये। जब तातार सुल्तान के दरबारियों ने मुहम्मद खां को सूचना दी कि बादशाह जियारतगाह के निकट आ पहुँचा है तो मुहम्मद शाह बड़े-बड़े आदमियों के साथ उसके स्वागत के लिये बाहर आया और मालान के पुल के पास उससे मिला और शाह की ओर से उसको बधाई दी तथा शुभ कामनायें अर्पण की। यह पहिले ही आदेश हो चुका था कि मालान-पुल के मार्ग साफ करके छिड़काये जायें। जब शाही सवारी विशेष स्थान पर आ पहुँची तो सुल्तान मिर्जा ने स्वागत किया। शाहजादा और दूसरे बड़े लोग उससे सम्मानपूर्वक मिले। जियारतगाह से उल मालान और वहां से जहांनारा बाग तक जिसकी लम्बाई चार कोस है, दर्शकों की भारी भीड़ थी और लोगों में अपूर्व हर्ष था। जिलकदा 950 हिज्री (27 जनवरी, 1544) को बादशाह बाग जहांनारा में उतरा। मुहम्मद खां ने शाही भोज दिया। खुरासान और ईरान के प्रसिद्ध गायक साबिर-काक ने अमीर शाही की गजल सुनाई जिसको सुनकर लोग मुग्ध हो गये।

वह इस भांति शुरू होती थी—

मुबारिक है जगह वह जहां यह चांद आया है।
चमक दुनियां में आई है, जहां यह शाह आया है।।

---

1. हैरात की दक्षिण में 164 मील की दूरी पर।

अन्त में कहा कि—

रंजो खुशी दुनियां में आते जाते रहते हैं।
दुनियां की सूरत ईक न रहती लोग कहते हैं॥

इस गजल को सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ और गायक को पुष्कल पुरस्कार दिया।

हेरात को देखकर हुमायूं बड़ा प्रसन्न हुआ। अब नौरोज निकट था इसलिये वह वहां कई दिन ठहरा। जिधर जाता था उधर मुहम्मद खां उसके साथ रहता था और मार्ग के दोनों ओर सोने के सिक्के बिखेरता था। हुमायूं ने ख्वाजा अब्दुल्ला अनसारी की दरगाह देखी। उसने फकीरों, मुल्लाओं और विद्वानों का आदर किया।

जब नौरोज का उत्सव समाप्त हो गया तो हुमायूं पवित्र मशहद को जाम के मार्ग से गया। इस समय सीस्तां के फौजदर अहमद सुल्तान ने उससे विदा ली। 5 जिलहिज्जा को जाम पहुंच कर हुमायूं जिन्दा, पीर अहमद जाम के मजार पर गया। जब हुमायूं मशहद के निकट पहुंचा तो शाह कुली सुल्तान इस-तजलू जो वहां का सुबेदार था, बड़े सैयदों के साथ उसका स्वागत करने आया। 15 मुहर्रम 951 हिज्री को वह मशहद पहुंचा और (ईमाम) रिजवी के मजार पर गया। वहां कुछ दिन ठहर कर वह निशापुर गया। वहां का सुबेदार शमसुद्दीन अली सुल्तान उसका स्वागत करने के लिये आया। वहां पास ही नीलम की खानें थीं जो बादशाह ने देखी। वहां से बादशाह सब्जवार और वहां से दामगान गया। वहां की आश्चर्यकारी चीजों में एक प्राचीन फव्वारा है। इसमें कोई गन्दी वस्तु डालने पर तूफान उठता है। इसकी बादशाह ने परीक्षा की। ईश्वर की सृष्टि में ऐसी बहुत-सी चीजें हैं जो मनुष्य की कल्पना से बाहर है। दामगान से हुमायूं बिस्तांम गया। बहरतमी शेख व्याजिद बिस्तमी का मजार मार्ग से कुछ हट कर है तो भी हुमायूं वहां गया। वहां से वह समनान की ओर गया और फिर सुफियाबाद में ठहरा जहां शेख अलाउद्दौला समनानी का मजार है।

कूच करते समय हुमायूं फकीरों और दरवेशों के मजारों को देखा करता था और उनसे प्रेरणा प्राप्त करता था। वह जहां जाता था वहां के फौजदार और अमीर उसके स्वागत के लिये आते थे और कई बार उसको शाह के प्रेमपूर्ण सन्देश मिले और भेटें मिलीं।

जब हुमायूं की सवारी रे पहुँची तो शाह कजवीन से रवाना हो गया और सुल्तानियां अमर सुरलिक की ओर उसने कूच की। हुमायूं कजवीन में ठहरा, जो उस समय शाह की राजधानी थी। वहां के अमीर और निवासी उसका स्वागत करने के लिये आये। वहां हुमायूं ख्वाजा अब्दुल गनी के निवास पर ठहरा, जो वहां का कलान्तर था।वहां से हुमायूं ने बैराम खां को शाह के पास भेजा। शाह इससे पहले ही अपने उद्दिष्ट स्थान पर पहुंच गया था। बैराम खां ने बादशाह का सन्देश दिया और प्रसन्नतापूर्वक वह वापस आ गया। तब हुमायूं ने सुल्तानियां की ओर कूच किया। शाह के डेरे उस समय अवहर और सुल्तानियां के बीच में थे। जब हुमायूं निकट पहुँचा तो बड़े-बड़े अधिकारियों ने आकर उसका स्वागत किया। उसके बाद शाह के भाई बहराम मिर्जा और शाम मिर्जा उसके स्वागतार्थ आये। जुमादल अव्वल 951 हिज्री (जुलाई, 1544) में शाह ने स्वयं उसका स्वागत किया और आदरपूर्वक

उससे भेंट और वार्ता की। यह भेंट एक ऐसे राजमहल में हुई थी जो इस अवसर के लिये खूब ही सजाया गया था। हुमायूं के साथ बाबर की मृत्यु पर सहानुभूति प्रकट की गई और सौजन्यपूर्ण बात हुई। मिर्जा कासिम गुनाबादी ने इस भेंट के विषय में मसनवीं लिखी। इसमें कहा गया कि—संसार के दो नेत्र परस्पर मिल गये हैं और दो उज्जवल मोती एक तश्तरी में रखे हुए हैं। इस अवसर पर शाह ने कहा—"ईश्वर की कृपा से स्वर्गीय बाबर ने भारत पर विजय प्राप्त की थी। इन दिनों में जो विफलता और निर्बलता प्रशासन में प्रकट हुई है उसका कारण आपके भाईयों की फूट है। इस पर आपका कोई वश नहीं है। इस समय आप मुझे छोटा भाई समझें। मैं आपकी इच्छानुसार सेवा करूंगा। अगर मेरे जाने की आवश्यकता होगी तो मैं जाऊँगा।" इसके बाद शाह ने बादशाह का निरन्तर उत्तम आतिथ्य किया। दूर-दूर तक बहुमूल्य कालीन बिछाये गये। बढ़िया घोड़े जिन पर रेशमी और सुनहरी जीन थे खड़े किये गये। इस प्रकार सजे हुए ऊंट मंगवाये गये। बादशाह को अनेक और आश्चर्यकारी चीजें दिखाई गईं।

इस बड़े उत्सव के दिन हुमायूं ने एक बहुमूल्य हीरा[1] शाह को भेंट किया। शाह ने हुमायूं के आतिथ्य पर आरम्भ से अन्त तक जितना खर्च किया, उससे इस हीरे का मूल्य चार गुना था। वहां से हुमायूं सुल्तानियां गया और वहां उसका बड़ा आतिथ्य किया गया। इन दिनों में कलहकारी लोगों ने दोनों ओर कुछ वैमनस्य उत्पन्न कर दिया परन्तु वह शीघ्र ही घुल गया और अधिक समय तक नहीं टिका। शाह ने हुमायूं के लिये एक दिन शिकार का बहुत बड़ा आयोजन किया। पहिले दोनों बादशाहों ने और फिर उनके बड़े-बड़े अफसरों ने शिकार किया। उसके बाद सब लोगां को शिकार करने की इजाजत दे दी गई। इसके बाद हौज-ए-सुलेमान पर शिकार का दूसरा बड़ा आयोजन किया गया जिसमें 26 बड़े-बड़े अमीर और शाह के 300 अंगरक्षक बादशाह के साथ थे। इसी प्रकार आक-ए-जियारत में शिकार का तीसरा बहुत बड़ा आयोजन किया गया।

फिर हुमायूं वहां से अदबिल और तबरीज पहुंचा। यह काम तीमूर की चलाई हुई प्रथा के अनुसार किया गया था। बेगम मरियम मकानी की पालकी सीधे मार्ग से कन्धार की ओर रवाना की गई। हाजी मुहम्मद खां उसके साथ था। जब हुमायूं तबरीज के निकट पहुंचा तो वहां के फौजदार और बड़े-बड़े लोग उसका स्वागत करने के लिए आये। इस अवसर पर शाह के आदेशानुसार नगर को आतिथ्य के लिये खूब सजाया गया और बादशाह के मनोविनोद के लिये अनेक खेल खेले गये, जिनमें प्यादा चागान और गुर्द गवानी (भेडियों की दौड़) मुख्य थे। यहां पर बादशाह ने प्राचीन शाहों के स्मारक मनोहर बाग आदि देखे। तबरीज से हुमायूं अर्दबिल गया और वहां एक सप्ताह ठहरा। वहां से वह खलखाल और फिर वहां से तारम गया और तारम से खर्ज बील पहुंचा। वहां वह तीन दिन ठहरा। सब्जवार में वह अपने डेरे में गया। वहां बेगम मरियम मकानी ने एक पुत्री को जन्म दिया। जब काबुल और कन्धार की ओर हुमायूं ने प्रयाण किया तो मार्ग में प्रत्येक मंजिल पर शासकों और अमीरों ने उसको भेंट समर्पित की और उसका आतिथ्य किया। जब वह

---

1. शायद यह कोहेनूर हीरा था, जो शाह ने फिर दक्षिण के निजामशाह को भेंट दिया था।

मशहद पहुँचा तो उसका बड़ा स्वागत हुआ। यहां पर शाह की सेना एकत्रित होने वाली थी इसलिये वह कुछ समय के लिये ठहरा। मशहद में वह विद्वानों से वार्तालाप किया करता था। मौलाना जमशेद उससे बार-बार मिलता था—एक दिन मुल्ला हैराती ने निम्नलिखित शेर बादशाह को सुनाये—

जिगर ओ दिल चले जाते हैं खूबां की मोहब्बत में।
जख्म हर दम नये होते हैं खूबां की मोहब्बत में।
शमां परवाना जैसी देखिये हालत ज्बनी मेरी
जले जाते हैं बालों पर मेरे उसकी मोहब्बत में।

हुमायूं ने अन्तिम पंक्ति का संशोधन इस प्रकार किया—

जलता हूं मगर बढ़ता हूं मैं उसकी मोहब्बत में।

इस संशोधन ही उत्तमता पर मुग्ध होकर मौलाना ने बादशाह के सामने दण्डवत की। मशहद से फिर बादशाह तर्क की कारवां सराई पर गया और वहां से गाह दुर्ग के मार्ग द्वारा सीस्तां पहुंचा। यहां शाहजाद और शाह के सेवक साथ हो लिये। वहां से वे लोग गर्म सीर गये। लकी दुर्ग से गर्म सीर वाल मीर अब्दुल हय बादशाह को सलाम करने आया, उसने अपनी गर्दन से तरकश लटका रक्खा था। उसने अपने अपराधों के लिये क्षमा मांगी। जब बादशाह ईरान की ओर कूच कर रहा था तो मीर का व्यवहार लज्जाजनक था, क्योंकि उसने सेवा नहीं की। बादशाह ने अपनी उदराता के कारण उसको क्षमा कर दिया और उस पर कृपा की।

अब कुछ उन अफसरों का वृत्तान्त लिखा जाता है जिन्होंने विदेश में सेवा की।

वफादार सेवकों का अध्यक्ष बैराम खां था। उसने निरन्तर हुमायूं बादशाह की सेवा की। दूसरा सेवक ख्वाजा मौअज्जम था। वह और मरियम मकानी एक ही मां से उत्पन्न हुए थे। शुरू से ही उसके दिमाग में गर्मी थी जो बढ़ते-बढ़ते सीमा से बाहर हो गई। तीसरा व्यक्ति आदिल सुल्तान का पुत्र आकिल सुल्तान उजबेग था—जो मातृ पक्ष से सुलतान हुसेन मिर्जा का पौत्र था। चौथा हाजी मुहम्मद कोकी था। यह उस कोकी का भाई था जो बादशाह बाबर के बड़े अफसरों में गिना जाता था। हाजी मुहम्मद बड़ा ही साहसी पुरुष था। शाह उसकी प्रशंसा किया करता था। पांचवां रोशन कोका था। यह हुमायूं का सौतेला भाई था। आभूषण उसी के सुपुर्द थे। उसने धोखा किया इससे कुछ समय के लिये उसको कैद रक्खा गया परन्तु फिर उसको क्षमा कर दिया था। छठा महरम कोकी का भाई हसन बेग था। यद्यपि वह कामरान मिर्जा का सौतेला भाई था परन्तु उसने हुमायूं की दीर्घ काल तक सेवा की थी। उसका स्वभाव उदार, स्नेहशील और विश्वास के योग्य था। वह चौसा के नाव घाट पर डूबकर मर गया था। सातवां ख्वाजा मकसूद था। वह ईमानदार और शुद्ध स्वभाव वाला था। अपनी सच्चाई और विश्वसनीयता के कारण उसका नाम था। बेगम मरियम मकानी का वह परखा हुआ सेवक था। वह परिश्रमपूर्वक उसकी सेवा करता था। उसके दो भाई थे। एक का नाम सेफ खां था जो गुजरात की लड़ाई में मारा गया था। दूसरा जैन खां कोका था जो बुद्धि और स्वामिभक्ति के लिये प्रसिद्ध था, वह अबकर का कृपापात्र बन गया था। ये दोनों भाई अकबर

के सौतेले भाई थे। आठवां ख्वाजा गाजी तबरीजी था। वह बड़ा चतुर कारगून था और इतिहास जानता था। जब हुमायूं लाहौर से सिन्ध की ओर रवाना हुआ तो मिर्जा कामरान का पक्ष छोड़कर वह हुमायूं के पास आ गया था। तब उसको मुशरफ-ए-दीवान (अकाउन्टेन्ट) नियुक्त कर दिया गया था। वह अर्से तक दरबार से दूर रहा। परन्तु अन्त में जब उसकी बुद्धि निर्बल हो गई तो उसको दरबार में दाखिल कर लिया गया था। नवां व्यक्ति ख्वाजा अमीनुद्दीन महमूद हैराती था। वह हिसाब में बड़ा निपुण था और बहुत सुन्दर शिकस्त लिखता था। वह गणित में बाल की खाल निकाला करता था। कुछ समय के लिये हुमायूं ने उसको अकबर का बख्शी नियुक्त कर दिया था। अकबर के समय में उसने बड़ा ऊंचा पद प्राप्त किया और उसको ख्वाजा जहां की उपाधि प्राप्त हुई। दसवां बाबा दोस्त बख्शी था। वह हिसाब और दीवानी का काम अच्छा जानता था। ग्यारहवां परवेश मकसद बंगाली था, वह हैरात की जियारतगाह से आया था और ईमानदार व्यक्ति था। वह जहांगीर कुली बेग के साथ बंगाल में रह गया था और वहां से बचकर आने वालों में वह एक ही था। हुमायूं और अकबर दोनों की उस पर बड़ी कृपा थी। बारहवां हसन अली इसहाक आका था। वह अपने साहस के लिये प्रसिद्ध था। वह हुमायूं के साथ ईरान नहीं गया था। जब काबुल हुमायूं के हाथ में आ गया तो उसको दरबार में बुला लिया गया। तेरहवां अली दोस्त बार बेगी था। इसने आरम्भ से अन्त तक हैरात में स्वामिभक्तिपूर्वक सेवा की थी। चौदहवां इब्राहीम आका था। यह दरबार का स्वामिभक्त सेवक था। पन्द्रहवां शेख युसुफ कली था। यह विनीत स्वभाग वाला गुणवान था। सोलहवां शेख-बहलूर अच्छा सेवक था। सत्रहवां मौलाना नुरुद्दीन था। वह गणित और ज्योतिष का अच्छा ज्ञाता था और जन्म पत्रिका बनाना जानता था। इसने बाबर की सेवा की थी और यह हुमायूं का दरबारी था। अकबर ने इसको तरखान की उपाधि दी थी। 18 वां मुहम्मद कासिम मौजी था। इसने बदख्शां में हुमायूं की सेवा करना शुरू किया था। अकबर के समय में यह नावों का दरोगा बना दिया गया था। यह जमुना नदी के तट पर रहा करता था और वहीं उसकी मृत्यु हो गई थी। उन्नीसवां हैदर मुहम्मद अष्टबेगी था। यह भी पुराना सेवक था। बीसवां सईद मुहम्मद पकना था जो वीर पुरुष था। इक्कीसवां सईद मुहम्मद काली था। इसको शाही सभा में बैठने का अधिकार था। और कुछ समय के लिये मीर आदिल था। बाईसवां हाफिज सुल्तान मुहम्मद रखना था। यह फकीर के भेष में भक्कर आकर नौकर हो गया था। यह गजल मर्मस्पर्शी शैली से गाता था। धीरे-धीरे यह राजदूत बन गया था। अकबर के समय में इसकी अच्छी प्रतिष्ठा थी। सरहिन्द में इसने बहुत अच्छा बाग लगाया था। तेईसवां मिर्जा बेग बलूच था। इसका पिता खुरासन में हजार ऐ बलूच था। चौबीसवां उसका पुत्र मीर हसन भी अच्छा नौकर था। पच्चीसवां ख्वाजा अम्बर नाजिर था, जो बाबर का विश्वस्त ख्वाजा सरा था, अकबर ने इसको इतबार खां की उपाधि दी थी। यह बेगम मरियम मकानी की डोली (पालकी) के साथ रहा करता था। छब्बीसवां आरिफ तुशाकची था। यह क्रीतदास था परन्तु स्वयं को सईस बतलाता था। अकबर की कृपा से इसको ऊंचा पद और बहर खां की उपाधि प्राप्त हो गई थी। इनके अतिरिक्त कई स्वामिभक्त सेवक और दास थे। मेहतरखां खजानेदार था। मुल्ला बलाल पुस्तकाध्यक्ष था।

***

प्रकरण 34

बादशाह हुमायूं का ईरान से वापस लौटना और अकबर का कन्धार से काबुल आना

जब हुमायूं बादशाह की वापसी की खबर काबुल और कन्धार में फैली तो कामरान व्याकुल हो गया और बुरे विचार करने लगा। पहले तो उसने खिंजर खां हजारा के भाई और कुरबान करावल बेगी को इसलिये भेजा कि बालक अकबर को कन्धार से काबुल ले आये। जब वे आये तो अकबर को भेजने के विषय में मिर्जा असकरी ने अपने साथियों से सलाह की। बुद्धिमान लोगों ने कहा कि अकबर को भेजना ठीक नहीं है। जब हुमायूं आये तो इस बालक को आदरपूर्वक उसके पास भेजा जाये। इससे आपके अपराधों की क्षमा प्राप्त हो जायेगी। अन्य लोगों ने सलाह दी कि अकबर को कामरान के पास भेज दिया जाये जिससे उसकी कृपा बनी रहे। असकरी ने समझा कि अब हुमायूं से समझौता नहीं हो सकता इसलिये उसने अकबर को काबुल भेज दिया। उसकी बहन बख्शी बानू बेगम को उसके साथ भेजा। इसके अतिरिक्त अकबर के साथ शमसुद्दीन-गजनवी-अतका खां, माहम अनगा (आदम खां की माता), जीजी अनगा (मुहम्मद अजीज कोकलताश की माता) और कई अनुचर थे। मार्ग में अकबर का नाम मीरक और उसकी बहन का नाम बानू बेगम बतलाया जाता था, जिससे कोई उनको पहचान न ले। जब वे किलान पहुँचे तो हजारा के मकान मे ठहरे। अकबर के ललाट पर इतना तेज था कि देखते ही पहचान लिया गया। जब अकबर कन्धार से काबुल पहुंचा तो मिर्जा कामरान उसको खानजादा बेगम के मकान पर ले आया। यह बाबर की बेगम की बहन थी। अगले दिन एक बड़ी सभा की गई। जिसमें कामरान ने अकबर के प्रति अधीनता प्रकट की।

***

प्रकरण 35

इब्राहीम मिर्जा से अकबर की कुश्ती

मिर्जा कामरान अकबर के मुंह के तेज .... को देखकर परेशान हुआ करता था। एक दिन कामरान ने एक भोज दिया। जिसमें अकबर को भी बुलाया। शब-ए-बरात का उत्सव था। वहां पर एक सजा हुआ नगाड़ा लाया गया। वह कामरान के पुत्र इब्राहीम मिर्जा के लिये था। अकबर को यह बहुत ही पसन्द आया। कामरान नहीं चाहता था कि वह अकबर को मिले इसलिए उसने कहा कि इब्राहीम और अकबर दोनों लड़ ले और जो जीते वह नगाड़े

को ले ले। इब्राहीम अकबर से बड़ा था और अधिक बलवान मालूम होता था। कामरान समझता था कि इब्राहीम जीत ही जायेगा और उसको नगाड़ा मिल ही जायेगा। अकबर लड़ने के लिये तैयार हो गया। दोनों में नियमानुसार कुश्ती हुई तो अकबर ने इब्राहीम को पछाड़ दिया। कामरान ने समझा कि यह बहुत बुरा शकुन हुआ और वह दुखी रहने लगा। अकबर ने नगाड़ा खूब बजाया। मिर्जा कामरान के मन में अकबर के प्रति दुर्भावना उत्पन्न हो गई और वह दुर्योजनायें बनाने लगा। मिर्जा ने अकबर का धाय का दूध पीना बन्द करवा दिया।

***

प्रकरण 36

बादशाह हुमायूं की सेना का गर्म-सीर पहुंचना और बस्त दुर्ग लेना

जब हुमायूं और ईरान की सेना गर्मसीर पहुंची तो अली सुल्तान तकलु और स्वामिभक्त लोगों को बस्त भेजा गया। यह दुर्ग गर्मसीर के अधीन है और इसका कन्धार से सम्बन्ध है। मिर्जा कामरान के जागीरदारों ने इसको दृढ़ बना दिया था। अब शाही सेना ने इसको घेर लिया। घेरे के समय अली सुल्तान की एक गोला लगने से मृत्यु हो गई। उसके सैनिकों ने उसके 12 वर्ष के पुत्र को अपना अध्यक्ष बनाकर घेरा जारी रखा। तब घिरे हुए लोगों ने प्राणों की भिक्षा मांगी जो दे दी गई और दुर्ग बादशाह की सेना के सुपूर्द कर दिया गया। जब बादशाह की सेना दुर्ग के पास आई तो शाहम अली और मीर खल्ज अपनी गर्दनों से तरकह लटका कर अधीनता प्रकट करने के लिये आये। हुमायूं ने उनके अपराध क्षमा कर दिये। इसी समय यह सूचना मिली कि मिर्जा असकरी अपने कोष के साथ भाग कर काबुल जाने वाला है। कितने ही ईरानियों और शाही नौकरों ने उसका पीछा करने की ईजाजत चाही। हुमायूं ईजाजत देना नहीं चाहता था, परन्तु उन लोगों ने आग्रह करके इस प्रकार की ईजाजत ले ली। जब वे कन्धार पहुंचे तो उन्हें विदित हुआ कि मिर्जा के प्रस्थान की खबर झूठी थी। उनसे लड़ने के लिये दुर्ग में से बहुत-से लोग निकले और बन्दूकें और तोपें चलाई गईं तो कितने ही ईरानी और अन्य लोग मारे गये। कितने ही बड़े-बड़े चगताई और ईरानी लोगों ने अपने साहस का परिचय दिया और शत्रु को पीछे दुर्ग में धकेल दिया। इस लड़ाई में कामरान का एक प्रसिद्ध अफसर बाबा सीहरिन्दी मारा गया।

***

प्रकरण 37

हुमायूं की सेना का कन्धार पहुंचना कन्धार का घेरा और विजय

शनिवार, 7 मुहर्रम, 952 हिज्री (21 मार्च, 1545) को बादशाह हुमायूं कन्धार पहुंचा और मांसूर नामक दरवाजे के पास शमसुद्दीन अली काजी कन्धार के बाग में ठहरा। तोपें जमा दी गईं और सैनिक अफसरों में काम बांट दिया गया। प्रतिदिन दोनों ओर के वीर लोगों में लड़ाइयां होने लगीं। एक दिन शाही सेना ने आक्रमण किया। हैदर सुल्तान सब से आगे था। बाबा दोस्त यशावल मजारों में खड़ा हुआ तीर चला रहा था, हैदर सुल्तान उसको भाले से मारना चाहता था। ज्यों ही उसने हाथ उठाया तो एक तीर उसकी कांख में लगा जिससे उसकी मृत्यु हो गई। इस लड़ाई में कई अधिकारी आहत हो गये। सब से पहले ख्वाजा मुअज्जम। इसी समय खबर आई कि मिर्जा कामरान का धाय भाई रफीक कोका जमीनदावर की ओर एक पहाड़ी के पीछे अरगनदाब नदी के तट पर हजारा नकोदर लोगों की सेना के साथ खड़ा हुआ है। तब बैराम खां आदि 4-5 बड़े सरदारों को अन्य लोगों के साथ उसके विरुद्ध भेजा गया। रफीक कोका को बन्दी बना लिया गया और बहुत-सा सामान पशु और शस्त्र छीन लिये गये।

जब हुमायूं ने अपनी उदारता और भ्रातृप्रेम से प्रेरित होकर सोचा कि मिर्जा कामरान के पास ईरान के शाह का पत्र भेजा जाये और वह स्वयं भी उसको एक फरमान लिखे तो सम्भव है कि मिर्जा की प्रमाद-निद्रा खुल जाये और वह सन्मार्ग पर आ जाये। इससे बहुत-से लोग विनाश से बच जायेंगे और भ्रातृप्रेम पुनः स्थापित हो जायेगा। तब बैराम खां को राजदूत बनाकर काबुल भेजा गया। जब वह कन्धार और गजनी के बीच एक घाटी में पहुंचा तो हजारा लोगों ने उसका मार्ग रोका। सायंकाल लड़ाई हुई जिसमें हुमायूं के सेवकों को विजय मिली और बहुत-से हजारा लोग मारे गये। जब बैराम खां काबुल के निकट पहुंचा तो उसके स्वागत के लिये बहुत-से लोग आये और उसको अपने साथ ले गये। मिर्जा कामरान ने चहार बाग में स्वागत का आयोजन किया और बैराम खां को बुलाया। बैराम खां ने समझा कि ईरान के शाह का पत्र और हुमायूं का फरमान कामरान मिर्जा को बैठे हुए नहीं लेना चाहिये इसलिये उसने अपने हाथ में कुरान लेकर मिर्जा को दी तो मिर्जा खड़ा हुआ और उसी समय बैराम खां ने दोनों पत्र उसे दिये। भेंट के बाद बैराम खां ने अकबर से मिलना चाहा। उसने मिर्जा हिन्दाल, मिर्जा सुलेमान, यादगार नासिर मिर्जा और उलूग बेग मिर्जा से भी मिलने की ईजाजत ले ली। बैराम खां सर्वप्रथम अकबर से मिला और साथ ही बाबर की बहिन खानजादा बेगम से भी मिला। अकबर की धाय माहम बेगा उसको अन्दर से बाहर लाई। हुमायूं के लोगों ने सलाम किया। बैराम खां अकबर को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। फिर सब लोग मिर्जा हिन्दाल से मिलने गये जो अपनी माता दिलदार बेगम के मकान में रहता था। उस पर निगरानी रखी जाती थी। उसको हुमायूं की ओर से एक फरमान, एक खिल्लत और एक घोड़ा दिया

गया। इसी प्रकार फिर वे लोग मिर्जा सुलेमान और मिर्जा इब्राहीम से मिले जो दुर्ग में कासिम मुस्लिम के मकान में कैद था। उस दिन मिर्जा कामरान के आदेश से उनको जलालुद्दीन बेग के बाग में बुला लिया गया था। बैराम खां ने इन दोनों अमीरों का आलिंगन किया और बादशाह तथा शाह ईरान की ओर से भेंटें दी। इन लोगों से बिदा होकर वे यादगार नासिर के पास गये और उसको आशा दिलाई कि उसके अपराध क्षमा कर दिये जायेंगे। इसी प्रकार बैराम खां उलूग मिर्जा तथा अन्य अमीरों से मिला। मिर्जा कामरान ने बैराम खां को एक महीने से अधिक समय तक निगरानी में रखा। न तो वह अधीन होना चाहता था और न उसमें सामना करने की शक्ति थी, ऐसी परेशानी के बाद डेढ़ महीने पश्चात् उसने बैराम खां को बिदा कर दिया। उसने खान-जादा बेगम को भी कन्धार भेजा। प्रत्यक्ष में इसका उद्देश्य यह था कि वह मिर्जा असकरी को समझा कर कन्धार हुमायूं के सेवकों के सुपुर्द कर दे। मिर्जा कामरान कहता था कि असकरी पर उसका प्रभाव नहीं है। वास्तव में कामरान चाहता था कि यदि स्थिति काबू से बाहर हो जाये तो खानजादा बेगम मिर्जा असकरी को बीच में पड़कर छुटकारा दिला दे। मिर्जा असकरी ने सन्मार्ग का परित्याग कर दिया था और मिर्जा कामरान से मिलकर विद्रोह कर दिया था। उसने दुर्ग को दृढ़ बनाया और उस पर तोपें तथा बन्दूकें जमा दीं। दुर्ग मिट्टी का बना हुआ था इसलिये तोपों के द्वारा उसकी प्राचीर को तोड़ना बड़ा कठिन था। उसकी प्राचीर 60 गज चौड़ी थी। शाही सेना ऐसी वीरता से लड़ी कि ईरानी लोग दंग रह गये और उससे ईर्ष्या करने लगे।

एक दिन बादशाह हुमायूं ने एक छोटी-सी गोष्ठी की। इस अवसर पर उसको अकबर की याद आई कि वह शत्रुओं से घिरा हुआ है। उसकी क्या स्थिति होगी। वह आशा और भय के बीच में झूलने लगा और उसने सन्तप्त हृदय से अकबर के लिये ईश्वर से प्रार्थना की और अपनी आत्मा को शान्ति देने के लिये उसने अकबर की जन्मपत्री मंगाई और उसे देखा तो उसको मालूम हुआ कि वह सुरक्षित रहेगा, दीर्घजीवी होगा और उसके शत्रु नष्ट होंगे। ईश्वर को धन्यवाद देकर हुमायूं दुर्ग-विजय में व्यस्त हो गया। मिर्जा असकरी ने दुर्ग रक्षा के लिये परिश्रम किया और प्रतिदिन दुर्गरक्षकों में और तोपमंचों में परिवर्तन करता रहा।

घेरा लम्बा हो गया। बादशाह के सेवको में से कोई भी उसके पास नहीं आया, ईरानी अधिकारियों में भी शिथिलता आ गई और वे घर लौट जाने का विचार करने लगे, तब बादशाह ने अपना प्रयास दुगना कर दिया। एक दिन रात को वह चहारदरा के पास पहुंच गया और वहां उसने तोपें जमा दीं। यह देख कर ईरानियों का भी उत्साह बढ़ गया और वे आगे बढ़े। मिर्जा असकरी निराश होने लगा। उसने अनुनय-विनय किया कि खानजादा बेगम आ रही है। इसलिये उसके आने तक समय दिया जाये। बेगम के विश्वास दिलाने पर शायद बादशाह की सेवा करने का अवसर मिले। असकरी ने ख्वाजा दोस्त खानिन्द के भाई मीर ताहिर के द्वारा प्रार्थना-पत्र भेजा। बादशाह हुमायूं उदार था और दयालुता का सागर था। प्रार्थना मान कर उसने कुछ दिन के लिये घेरे का संचालन स्थगित कर दिया। मिर्जा असकरी ने दुष्टता करके प्रत्यक्ष में अधीनता की परन्तु गुप्त रूपेण वह दुर्ग को दृढ़ करता रहा और जब खानजादा

बेगम और बैराम खां आ पहुंचे तो उसने फिर विरोध करना शुरू कर दिया। यद्यपि इस महिला ने असकरी को अपने दुष्ट इरादों से रोकने का और उसको बादशाह की सेवा में भेजने का प्रयत्न किया। परन्तु उसका मस्तिष्क विकृत हो चुका था इसलिये उसने बेगम की सलाह नहीं मानी, बल्कि उसको बादशाह के शिविर में भी नहीं जाने दिया। इस प्रकार हुमायूं को मिर्जा के विद्रोह का पता लग गया। जब हुमायूं ने दुर्ग-विजय के लिये और भी अधिक परिश्रम किया। इसी बीच में उलूक मिर्जा, शेर अफगान बेग, फाजिल बेग, मीर बरकार, मिर्जा हसन खां और बहुत-से अन्य लोग काबुल से बादशाह की सेवा में आ गये, कारण यह था कि— मिर्जा कामरान ने उलूक बेग को कैद कर रक्खा था और प्रति सप्ताह उसको दूसरे व्यक्ति के सुपुर्द कर देता था। फिर उसको शेर अफगान के सुपुर्द करने की बारी आई। शेर अफगान स्वयं असकरी से डरता था। इसलिये वह अन्य लोगों से मिलकर उलूक मिर्जा को बादशाह की सेवा में ले आया। हुमायूं सब से सम्मानपूर्वक मिला, सबको खिल्लतें दीं। कासिम हुसेन सुल्तान भी इनके साथ काबुल से निकला था परन्तु वह रात में मार्ग भूल कर हजारों लोगों के हाथ में पड़ गया। कुछ दिन बाद थका-मांदा और लुटकर वह पैदल चल कर बादशाह के पास आया। फिर दवा बेग हजारा अपनी जाति के लोगों के साथ आया और काबुल के अधिकारियों के भी प्रार्थना-पत्र आये। इससे शाही शिविर में बड़ा हर्ष हुआ। किजिल बाशी लोग अपने मन में व्याकुल थे। अब उनका चित्त शान्त हुआ और वे अधिक तत्परता से लड़ने लगे। उधर दुर्गसेना डगमगाने लगी। वह लोग मिर्जा असकरी का दैनिक वृत्तान्त लिखकर दुर्ग प्राचीर से नीचे डाल दिया करते थे। उनका कहना था कि दुर्ग सेना की स्थिति कठिन है, घेरा जोर से चलाया जाये। अन्त में ऐसा हुआ कि मिर्जा असकरी के सैनिक एक-एक करके प्राचीर से कूद आये और बन्दूकचियों और तोपचियों ने भी ऐसा ही किया। सबसे पहले खिजर ख्वाजा खां दुर्ग से बादशाह की तोपों में कूदा और उसके चरणों में आ गिरा। फिर रस्सों के द्वारा मुवैयद बेग किले से कूदा। तत्पश्चात् इस्माईल बेग आया। उसके बाद अबुल हुसेन बेग और मनुव्वर बेग आये। एक रात को खिजर खां हजारा दुर्ग से कूद आया और दो-तीन हजारे उसको अपनी पीठ पर चढ़ाकर ले गये। अब दुर्गरक्षा का कार्य सम्हल नहीं सकता था। मिर्जा असकरी न तो दुर्ग में टिक सकता था और न उसको दरबार में आने का साहस होता था। इसलिये ऐसे में खिजर खां हजारा ने चाहा कि—खतरे से बाहर चला जाना चाहिये। एक दिन प्रातःकाल खबर मिली कि वह भाग गया। जब तलाश किया गया तो मालूम हुआ कि वह कहीं एक चट्टान के पीछे छिपा हुआ है। जब रात हुई तो वह वहां से निकल कर किसी सुरक्षित स्थान पर चला गया।

अब दुर्ग सेना ने समझ लिया कि दुर्ग की रक्षा नहीं हो सकती, मिर्जा असकरी की नींद खुल गई परन्तु वह न तो आगे बढ़ सकता था और न जहां का तहां ठहर सकता था। पहिले तो उसने निवेदन करवाया कि कन्धार को सुपुर्द करके उसे काबुल जाने की इजाजत दे दी जाये परन्तु हुमायूं ने यह नहीं माना। आवश्यकतावश उसने खानजादा बेगम को बादशाह के पास भेजा कि उसके अपराध क्षमा किये जायें। तब 25 जुमादल आखिर (31 सितम्बर, 1545) को वह पश्चाताप करता हुआ खानजादा बेगम के साथ दुर्ग से बाहर निकला। हुमायूं दीवानखाने में बैठा हुआ था। चगताई और ईरानी अफसर अपने-अपने पदानुसार खड़े हुए

थे। शाही आदेश के अनुसार बैराम खां मिर्जा असकरी को उसकी गर्दन से तलवार लटकवा कर बादशाह के पास लाया। बादशाह हुमायूं ने बेगम के कहने पर उसके साथ बड़ी दया का बर्ताव किया और उसके सब अपराध क्षमा कर दिये। फिर असकरी की गर्दन से तलवार हटवा दी गई और उसको बिठा दिया गया। फिर मुहम्मद खां जलेर आदि लगभग 30 व्यक्ति भी इसी भांति बादशाह से सलाम करने के लिये आये तो उनमें से मुकीम खां और शाह कुली सिस्तानी को पैरों में बेड़ियां डालकर और उनकी गर्दनों में तख्ते लटकाकर कैद में डाल दिया गया। फिर रात भर सुखमय गोष्ठी हुई। संगीत और कविताएं पढ़ी गईं। इस अवसर पर मिर्जा असकरी को उस पत्र की प्रतिलिपि दिखाई गई जो उसने अपने बलूची अनुयायियों को उस समय लिखा था जब बादशाह मरुस्थल के मार्ग से अपरिचित देश में जा रहा था। फिर आवश्यकतावश असकरी पर निगरानी रक्खी जाने लगी और आदेश हुआ कि समय-समय पर उसको दरबार में सलाम करने के लिये लाया जाये, जिससे उसको शिक्षा मिले। तीन दिन तक नगर में सब उत्सव मनाया गया। चौथे दिन नगर मुहम्मद मुराद मिर्जा के सुपुर्द किया गया और हुमायूं चारबाग में आ गया। वहां मिर्जा असकरी की सम्पत्ति की सूची उसके समक्ष प्रस्तुत की गई तो वह वीर सैनिकों में बांट दी गई।

जब मिर्जा कामरान ने कन्धार विजय का और काबुल के विरुद्ध हुमायूं के प्रयाण का समाचार सुना तो वह बड़ा व्यथित हुआ और उसने अकबर को खानजादा बेगम के निवास से अपने पास बुलाकर अपनी प्रधान पत्नी खामन बेगम के सुपुर्द कर दिया। उसने शमसुद्दीन मुहम्मद गजनवी अतगा खां को एक अनुपयुक्त स्थान में कैद कर दिया और अपने अफसरों से सलाह की कि मिर्ज़ा सुलेमान का क्या किया जाये। मुल्ला अब्दुल खलीक ने जो कामरान का अध्यापक था और बाबूस ने जो राजनैतिक मामलों का मंत्री था सलाह दी कि मिर्जा के साथ कोमल व्यवहार किया जाये और उसको बदख्शां जाने की इजाजत दे दी जाये जिससे वह आवश्यक समय में काम आ सके। मीर सुलेमान के सौभाग्य से ऐसा हुआ कि कुछ दिन पूर्व मीर नजर अली से तीन व्यक्तियों ने और अन्य लोगों ने मिलकर जफर दुर्ग छीन लिया था और कासिम वरलास और अन्य अधिकारियों को कैद कर लिया था। उन्होंने मिर्जा कामरान को संदेश भेजा कि ''यदि आप मिर्जा सुलेमान को भेज दें तो हम बदख्शां उसके सुपुर्द कर देंगे। अन्यथा हम बंदियों का वध करवा कर प्रदेश को उजबेगों को सौंप देंगे। इस प्रार्थना के अनुसार मिर्जा सुलेमान इब्राहीम और हरम बेगम को बदख्शां भेज दिया गया। परन्तु वे लोग कुछ ही दूर पहुँचे थे कि कामरान को पश्चात्ताप हुआ कि मिर्जा सुलेमान को क्यों जाने दिया। उसे वापस बुलाने के लिये आदमी भेजे गये और उससे कहलाया कि तुमसे कुछ कहना है। मिर्जा सुलेमान को इस संदेश पर आशंका हुई और उसने उत्तर लिखा कि मैं शुभ मुहूर्त में बिदा लेकर आया हूं इसलिये मेरा वापस लौटना उचित नहीं है। मुझे विश्वास है कि आप मुझे लिखकर भेज देंगे कि क्या सलाह करनी है। ऐसा प्रपत्र किसी विश्वस्त व्यक्ति के द्वारा मिल जाने पर मैं तदनुकूल काम करूंगा।'' इसी बीच में सुलेमान बदख्शां की ओर शीघ्रतापूर्वक चल दिया और वहां पहुंच कर उसने अपना समझौता भंग कर दिया। इसी समय यादगार नासिर मिर्जा काबुल से बदख्शां की ओर भाग गया। भाग्य का विधान था मिर्जा कामरान को अपने कर्मों का फल मिले। इसके साधन जुट रह थे। अब मिर्जाओं में से हिन्दाल

के सिवाय उसके पास कोई नहीं था। उसने हिन्दाल को यादगार नासिर की गिरफ्तारी के लिये नियुक्त किया और वचन दिया कि "जो कुछ मेरे पास है उसका और जो कुछ प्राप्त करूंगा उसका एक तिहाई भाग मैं तुमको दूंगा। शर्त यह है कि तुम स्वामिभक्ति और भ्रातृभावन के पथ से विचलित नहीं होओगे।" यह समझौता करके उसने मिर्जा को रवाना कर दिया। पहिले उस पर निगरानी रक्खी जाती थी मिर्जा हिन्दाल को कामरान के दुर्व्यवहार के कारण अनेक विपत्तियां उठानी पड़ी थीं। अब उसने बातें मान लीं। वह समझता था कि कामरान के पंजे से बचना बड़ी राहत है। परन्तु जब वह पाई मीनार पहुंचा तो वह बादशाह हुमायूं की ओर चल दिया। यह बात सुनकर कामरान अचम्भित हो गया। अब उसके पास ऐसा कोई सेवक व साथी नहीं था जो उसके हित की चिन्ता करता या उससे सच बात कहता। अधिकांश सेवकों की आंखें बंद थी और उनकी बुद्धि व्याकुल थी। उनको मुक्ति-मार्ग दिखाई नहीं देता था अगर जिनको दिखाई देता था उनमें अपने भाव व्यक्त करने की शक्ति नहीं थी। वे जानते थे कि मिर्जा उनकी बात नहीं सुनेगा। वास्तव में मिर्जा कामरान एक भूल के बाद दूसरी भूल करता रहा। कारण यह था कि उसमें चेताने वाली बुद्धि की कमी थी और उसके पास अच्छे सलाहकार नहीं थे।

***

प्रकरण 38

काबुल की विजय के लिये बादशाह हुमायूं की सेना का प्रयाण और उस प्रदेश पर विजय-प्राप्ति

जब बादशाह कंधार के विषय में निश्चित हो गया तो उसने काबुल विजय का कार्यभार संभाला और इस उद्देश्य से बाबर बादशाह के बाग से रवाना होकर वह गुम्बज सफेद में ठहरा, जो हसन अब्दाल के मजार के ऊपर स्थित है। इस अभियान के विषय में वह निरंतर सोचता था और स्वामिभक्त लोगों से तथा निष्ठावान मित्रों से परामर्श किया करता था। ईरानी लोग वापस जाने की आशा करते-करते थक गये थे। कुछ तो बिना इजाजत लिये ही चल दिये थे और कुछ ने आग्रह करके इजाजत ले ली थी। बुदाग खां और अन्य अफसर जो शाह के पुत्र की सेवा के लिये नियुक्त थे प्रजा पर अत्याचार करने लगे और इस प्रकार दुष्कर्मों द्वारा वे अपने महत्व को बढ़ाने लगे। नगर से छोटे-बड़े सब प्रकार के लोग न्याय की प्रार्थना करने के लिये आते थे। हुमायूं कठिनाई में पड़ गया था, वह अत्याचारियों को धमकाता तो शाह परेशान होता और यदि वह न्याय नहीं करता तो दैवी कोप सहना पड़ता।

जब काबुल के अभियान के विषय में निश्चय हो गया तो बुदाग खां से कहा गया

कि कुछ महिलाओं के लिये और उसके सामान के लिये बादशाह ने कहा कि अपने वायदे के अनुसार मैंने कन्धार ईरानी लोगों के सुपुर्द कर दिया है। लेकिन मैं अपने अन्तःपुर की व्यवस्था न कर दूं तब तक आगे परिश्रम नहीं करूंगा। बुदाग खां ने न तो शाह के आदेशों का पालन किया और न बादशाह हुमायूं की आज्ञा मानी। मुख्य अधिकारियों ने निवेदन किया कि कन्धार को छीने बिना काम नहीं चलेगा। बादशाह शाह के अनुचरों को परेशान नहीं करना चाहता था। वह सोच रहा था कि बदख्शां जाकर मिर्जा सुलेमान को अपनी ओर मिला लिया जाये और फिर काबुल पर आक्रमण किया जाये। काबुल जाकर अकबर को देखने की भी बड़ी इच्छा थी। उसी समय शाह के पुत्र की मृत्यु हो गई। विश्वस्त शाही सेवकों ने कहा कि शरद् ऋतु आरम्भ होने वाली है इसलिये स्त्री और बच्चों को पर्वतीय देशों में नहीं ले जाया जा सकता। इसके अतिरिक्त तुर्कमानों के हाथ में कन्धार को छोड़कर चल देना ठीक नहीं है। ये लोग बादशाह के आदेशों को नहीं मानते हैं और खुले तौर पर विद्रोह कर रहे हैं। इनके अत्याचारों को सीमित करना आवश्यक है। काबुल बहुत दूर है, हजारा और अफगान जातियां चींटियों के समान विपुल है इसलिये कोई शरणस्थान आवश्यक है तथा कन्धार से बढ़कर कोई शरण स्थान नहीं है। इसलिये बुदाग खां से कहा जाये कि वह इच्छा से या अनिच्छा से कन्धार समर्पित कर दिया जाये और न करे तो नगर को घेर लिया जाये। शाह को एक नम्रता का पत्र लिख दिया जाये और स्थिति समझा दी जाये। बादशाह ने उत्तर दिया कि "ऐसा करने से बुदाग खां के आदमी नष्ट हो जायेंगे और यह कार्य भले आदमियों को अच्छा नहीं लगेगा इसलिये बिना लड़े ही कन्धार पर कब्जा हो जाये तो अच्छा है।" फिर बुदाग खां से कहलाया गया कि बादशाह काबुल की ओर प्रयाण कर रहा है और मिर्जा असकरी को कन्धार के दुर्ग में कैद करके जाना चाहता है। ऐसी योजना बनाई कि कन्धार के पास वीर लोगों को छिपा दिया गया और उनसे कहा गया कि अवसर पाते ही दुर्ग में प्रवेश करें। दुर्ग के तीनों दरवाजों में से एक पर बैराम खां को, दूसरे पर उलूग मिर्जा को और तीसरे पर मिथ्थाद बेग को सेना के साथ नियत कर दिया गया। फिर देखा कि कुछ ऊंट दुर्ग में जा रहे हैं,, उन्हीं के साथ-साथ ये लोग अन्दर घुस गये। जब उनको रोका गया तो कहा गया कि बुदाग खां के हुक्म से मिर्जा असकरी को अन्दर ले जाया जा रहा है, तब कुछ झगड़ा हो गया और दरबान दरवाजा बन्द करने लगा परन्तु हाजी मुहम्मद ने जो एक दरवाजे पर नियत था अपनी तलवार से उसका हाथ काट डाला। फिर जो भी ईरानी लड़ने आये, मारे गये। बैराम खां गन्दीगान दरवाजे से दुर्ग में घुस गया। इस प्रकार कन्धार पर हुमायूं का कब्जा हो गया। दोपहर को बादशाह भी इसी दरवाजे से दुर्ग में गया। तब सब लोगों ने हर्ष मनाया। बुदाग खां ने क्षमा मांगी तो बादशाह ने उसे क्षमा कर दिया। नगर बैराम खां के सुपुर्द करके हुमायूं ने शाह को लिखा कि बुदाग खां ने शाह के आदेश के प्रतिकूल आचरण किया है इसलिये कन्धार उससे छीन कर बैराम खां के सुपुर्द कर दिया है।

इसी बीच में मिर्जा असकरी भाग गया और एक अफगान के पास जा छिपा। अफगान ने इसकी खबर दे दी तो बादशाह ने उसको अफगान के मकान से पकड़वा कर मंगवा लिया। परन्तु बाबर के आदेश के अनुसार उसके अपराध क्षमा करके उसको नदीम कोकलताश के सुपुर्द कर दिया।

फिर हुमायूं ने कन्धार का प्रदेश अपने अधिकारियों में विभक्त किया। तीरी, उलूग मिर्जा को, लाहू के परगने हाजी मुहम्मद को, जमीनदावर इस्माईल बेग को, किलात, शेर-अफकन को और शाल, हैदर सुल्तान को दिये गये। ख्वाजा जलालुद्दीन महमूद ने मिर्जा असकरी के लोगों पर अत्याचार किया था और उनका रुपया छीन लिया था। उसको मुहम्मद अली के सुपुर्द किया गया।

जब कन्धार के विषय में कोई चिन्ता नहीं रही तो बेगम मरियम मकानी को कन्धार में रख कर हुमायूं काबुल विजय की व्यवस्था करने लगा। उसी समय तुर्कमान लोगों से घोड़े खरीदे गये और उनसे कहा गया कि भारत पर विजय प्राप्त करने के बाद मूल्य चुकाया जायेगा। उन्होंने यह बात मान ली। तब उनको लिखित दस्तावेजें दी गईं। बादशाह ने बाबा हसन अब्दाद की पहाड़ी पर आकर उलूग मिर्जा बैराम खां, शेर अफकन और हैदर मुहम्मद आखता बेगी को आदेश दिया कि पहले शाही तबेले के लिये घोड़े छांटें जायें और फिर अन्य अधिकारियों को दिये जायें। इस प्रकार एक हजार घोड़े बांट दिये गये। रात में ही शाही सेना तीरी पहुंच गई, वहां के मुखिया ने घोड़े और भेड़ें भेंट कीं। बादशाह वहां कुछ दिन ठहरा। वहीं कुछ दिन बीमार रहने के पश्चात् खानजादा बेगम की मृत्यु हो गई। बादशाह ने शोक मनाया और पुण्यदान किया और फिर काबुल की ओर प्रयाण किया। कन्धार के निकट मिर्जा हिन्दाल सेवा में आया तो बादशाह उससे बड़ी कृपा के साथ मिला। फिर सेना में बीमारी फैल गई जिससे बहुत-से सैनिक मर गये। इनमें एक हैदर सुल्तान था। मिर्जा हिन्दाल ने निवेदन किया कि ऋतु प्रतिकूल है इसलिये वापस कन्धार लौट जाना चाहिये और बसन्त ऋतु के आरम्भ पर काबुल की ओरं प्रयाण करना चाहिये। हुमायूं ने मिर्जा हिन्दाल से कहलाया कि ''तुम कन्धार जाना चाहते हो तो जाओ मैं तो काबुल की ओर प्रयाण करना जारी रखूंगा।'' प्रयाण के समय जमील बेग जो मिर्जा कामरान के दामाद का संरक्षक था, बादशाह के पास आ गया और उसने क्षमा मांगी, जो दे दी गई।

जब शाही सेना पगमान के निकट पहुंची तो मिर्जा कामरान घबरा गया और कुछ सेना के साथ उसने कासिम बरलास को भेजा। उसने कासिम मुखलिस तरबती, तोपखाने के अफसर को आदेश दिया कि तोपें बाबूस बेग के मकान के पास जमाये। जो कुटुम्ब बाहर रहते थे उनको दुर्ग में भेज दिया गया। जब दुर्ग को दृढ़ कर दिया गया तो वह बड़े ठाट के साथ काबुल से निकला और उसने बाबूस बेग के निवासं स्थान के पास डेरे लगाये। जब कासिम करलास तकिया खिमार के पास सेना सहित पहुंचा तो शाही शिविर से ख्वाजा मुअज्जम और हाजी मुहम्मद और शेर अफकन ने आगे आकर अपनी वीरता दिखाई तो कासिम बरलाश भाग गया। जब दोनों सेनाओं के बीच में थोड़ा-सा स्थान रह गया तो मिर्जा हिन्दाल ने निवेदन किया कि ''मुझको अग्रसेना में नियुक्त किया जाये। जब शाही सेना हरकन्दी के पास ठहरी हुई थी तो बाबूस, जमील बेग और कई अन्य लोग शाह वर्दी खां के साथ आये और उन्होंने अधीनता प्रकट की। बादशाह ने उनका बड़ी कृपा के साथ स्वागत किया। इसके पश्चात् मुशाहिब बेग बहुत-से आदमियों को साथ लेकर बादशाह की सेना में आ मिला। इसी बीच में बाबूस ने निवेदन किया कि अब विलम्ब करने का समय नहीं है। इस अवसर

पर बादशाह ने अली कुली सफरची और बहादुर को बुलाया। ये दोनों हैदर सुल्तान के पुत्र थे और अपने पिता की मृत्यु पर शोक मना रहे थे। बादशाह ने उनके साथ बड़ी कृपा की। कुछ समय के बाद कराचां खां भी बादशाह के पास आ गया। मिर्जा कामरान ने अपना पतन प्रत्यक्ष देखकर अपने अपराधों की क्षमा मांगने के लिये ख्वाजा खावन्द महमूद और ख्वाजा अब्दुल खासलीक को भेजा। जब दोनों सेनायें एक दूसरी से एक मील से भी कम दूरी पर थी तो दोनों ख्वाजे हुमायूं की सेवा में आये। उनकी अधीनता स्वीकार की और उन्हें आदरपूर्वक विदा किया फिर कृपालुता और मानवता की दृष्टि से उसने प्रयाण स्थगित कर दिया। इन ख्वाजाओं को भेजने में मिर्जा का यह उद्देश्य था कि कुछ समय मिल जाये। बादशाह के प्रयाण में शिथिलता आ जाये और वह रात्रि में भाग निकले। फिर रात्रि के समय अपने पुत्र मिर्जा इब्राहीम को और अपनी पत्नियों को साथ लेकर बीनी हिसार के मार्ग से गजनी चला गया। इसकी खबर सुनकर बादशाह हुमायूं ने बाबूस को और कुछ विश्वस्त लोगों को इसलिये काबुल भेजा कि नगर निवासियों को कोई न सतावे। मिर्जा कामरान का पीछा करने के लिये उसने मिर्जा हिन्दाल और कुछ सैनिक रवाना किये और स्वयं विजयोल्लासपूर्वक काबुल की ओर आगे बढ़ा। 12 रमजान 952 हिज्री (18 नवम्बर, 1594) की रात्रि में काबुल विजय सम्पन्न हो गई और दोपहर-रात व्यतीत होने पर हुमायूं ने नगर में प्रवेश किया। नवीदी ने इस विजय की तारीख काबुलचा गिरिफ्त से निकाली।''

इस समय अकबर की आयु तीन वर्ष 2 मास और 8 दिन की थी। उसे देखकर हुमायूं बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने ईश्वर को धन्यवाद दिया। दूसरे दिन प्रात:काल हुमायूं गद्दी पर बैठा और राज्य के स्तम्भ रूप जागीरदार सैनिक और सेवक दरबार में उपस्थित हुए और दूसरी कौमों के प्रतिनिधि भी आये। इस समय के लगभग यूनूस अली और मुईद बेग की जो दरबार के बड़े अधिकारी थे, मृत्यु हो गई। साथ ही बादशाह को यह भी खबर मिली कि ख्वाजा मुअज्जम, मुकद्दम बेग के साथ भाग कर मिर्जा कामरान के पास जाने का षडयन्त्र कर रहा है। तब बादशाह ने परेशान होकर मुकद्दम को कश्मीर में निर्वासित कर दिया और ख्वाजा मुअज्जम को पदच्युत किया।

***

प्रकरण 39

अकबर की खतना का उत्सव

अब अकबर की खतना के लिये बहुत अच्छा अवसर समझा गया। हुमायूं ने आदेश दिया कि उत्ता बाग में बहुत अच्छा शिविर खड़ा किया जाये, बेगमें वहां पहुँचें और अमीर तथा बड़े-बड़े नागरिक चारबाग में जावें। शीघ्र ही ऐसी तैयारी हो गई जिसका वर्णन नहीं

किया जा सकता। प्रतिदिन भोज दिये जाते थे जिनमें बादशाह उपस्थित हुआ करता था। खतना के उत्सव से पहिले ही कराचां खां मुसाहिब बेग और अन्य अमीर जो बेगम मरियम मकानी को कन्धार से लिवा लाने के लिये भेजे गये थे उसको ले आये। बेगम के डेरे में एक शाही भोज का आयोजन किया गया। अकबर को एक शुभ दीवान पर बिठाया गया। दूसरी स्त्रियों के साथ मरियम मकानी आई। अकबर ने आसानी से अपनी माता को पहचान लिया और उसकी गोद में चला गया।

खतना के बहाने से बादशाह हुमायूं ने ईश्वर को धन्यवाद दिया। प्रतिदिन नये-नये भोज दिये जाते थे और ईश्वर को धन्यवाद दिया जाता था। सल्तनत के और धर्म के बड़े-बड़े लोग आकर शाही पुरस्कार प्राप्त करते थे। इनमें यादगार नासिर मिर्जा था। उसका संक्षिप्त वृत्तान्त यह है कि जब हुमायूं कन्धार की सीमा पर पहुंचा तो नासिर मिर्जा कामरान को छोड़कर बदख्शां चला गया। वहां उसको सफलता नहीं मिली तो वह हुमायूं की सेवा करने के लिये रवाना हो गया। जब शाही सेना कन्धार से काबुल को रवाना हो रही थी तो यादगार मिर्जा कन्धार पहुंच गया। बैराम खां ने उसका अच्छा आतिथ्य किया और फिर वह बादशाह हुमायूं की सेवा में खतना के उत्सव के समय हाजिर हुआ। वह अकबर के समक्ष भी उपस्थित हुआ।

अकबर के खतने के समय हजारों प्रकार से आनन्द मनाया गया। उस समय हुमायूं ख्वाजा बेग खान की ओर रवाना हुआ और वहां उत्सव करवाये और आदेश दिया कि अमीर लोग एक-दूसरे से कुश्ती लड़े। लड़ने वालों की जोड़ियां हुमायूं ने ही बनाईं। हुमायूं ने स्वयं इमाम कुली कुर्ची से और मिर्जा हिन्दाल ने यादगार नासिर मिर्जा से कुश्ती लड़ी। इसके बाद वह अर्गवान बाग को देखने के लिये ख्वाजा से यार गया और वापस लौटकर फिर उत्सव मनाए। गजनी और उसका अधीन इलाका मिर्जा हिन्दाल को और हमीन्दावर और तीरी उलूक मिर्जा को दिये गये। दरबार से सम्बन्धित सब लोगों को यथा योग्य बख्शीशें दी गईं।

इन उत्सवों के समय शाह तहमाश्प के राजदूतों ने आकर विजय पर बधाईयाँ दीं और उपयुक्त भेंटे प्रस्तुत कीं। राजदूतों का अध्यक्ष वलद बेग था। उससे बादशाह बड़ी कृपा के साथ मिला। शाह कासिम तगाई मिर्जा सुलेमान की ओर से भेंटे और प्रार्थनापत्र लेकर आया। उसने स्वयं आने का जो बहाना बताया बादशाह ने मंजूर नहीं किया और उसको आदेश दिया कि वह स्वयं आयेगा तब ही स्वामिभक्त माना जायेगा। मीर सैयद अली भी इस अवसर पर आया। वह अफगानिस्तान और बलूचिस्तान में अपनी सम्पत्ति और ईमानदारी के लिये प्रसिद्ध था। उस पर बड़ी कृपाएं की गईं। इसी प्रकार लवंक बलूच आया वह उसके लोगों का नेता था। उसके साथ उसके भाई भी आये थे। बादशाह ने कृपा करके शाल और मस्तंग उसको जागीर में दे दिये। इन सब लोगों को शीघ्र ही विदा कर दिया गया।

यादगार नासिर मिर्जा के मन में पुनः दुष्टता उत्पन्न होने लगी। वह मिर्जा असकरी के धाय भाई मुजफ्फर की सलाह सुना करता था। जब ये बातें बादशाह के कानों तक पहुंची और [illegible] जब अब्दुल जब्बार शेख ने जो बड़ा विश्वस्त व्यक्ति था इनकी पुष्टि की

तो हुमायूं को बड़ी घृणा हुई और उसने मुजफ्फर कोका को पकड़ कर मरवा डाला फिर यादगार नासिर मिर्जा को बुलाया गया और कराचां खां के द्वारा उसको फटकारा गया उससे कहा गया कि--हमने सोचा था कि जब हमने तुम्हारे भारी अपराधों की उपेक्षा की तो तुम चेतोगे और अपने किये पर पश्चाताप करोगे। हम समझते थे कि कृतघ्न लोगों की अज्ञान की भी कोई सीमा होती है। फिर मिर्जा को काबुल के दुर्ग में कैद कर दिया गया। उसके पास ही मिर्जा असकरी भी कैद था।

इन्हीं दिनों में एक घटना यह हुई कि चगताई सुल्तान की मृत्यु हो गई। यह एक युवा मुगल शाहजादा था और अपनी सुन्दरता और चरित्र के लिये प्रसिद्ध था। हुमायूं उसके साथ बड़ा प्रेम करता था। इस मृत्यु से उसको बड़ा दुःख हुआ परन्तु फिर सोचसमझ कर उसने धैर्य धारण किया।

***

प्रकरण 40

बदख्शां के बादशाह हुमायूं का प्रयाण, उस प्रदेश पर विजय-प्राप्ति और उस समय की घटनाएं

जब मिर्जा सुलेमान के राजद्रोह की खबर की पुष्टि हो गई और यह मालूम हो गया कि उसके मस्तिष्क में राजसत्ता का विचार घूम रहा है तो 953 हिज्री (मार्च, 1546) के आरम्भ में बादशाह हुमायूं ने बदख्शां की ओर प्रयाण किया। मिर्जा सुलेमान ने काबुल पर कब्जा करने के बाद खुस्त ओर अन्दराव जो मिर्जा कामरान के कब्जे में थे, छीन लिये थे। वास्तव में सारा बदख्शां भी मिर्जा सुलेमान का नहीं था इसलिये हुमायूं चाहता था कि कुन्दूज भी उससे छीन लिया जाये और उसे कहा जाये कि बाबर बादशाह ने जो कुछ उसके पिता को दिया था उसी से वह सन्तुष्ट रहे। परन्तु फिर मिर्जा की स्थिति पर विचार करके कुन्दूज उसी के पास रहने दिया। मिर्जा ने विद्रोह करके अपने नाम का खुतवा पढ़वा लिया था। हुमायूं इस राजद्रोह की ज्वाला को शान्त करना चाहता था। अतः अकबर को ईश्वर के सुपुर्द करके उसने प्रस्थान किया और मिर्जा असकरी को अपने साथ लिया। हुमायूं को यादगार नासिर मिर्जा के विषय में आशंकायें थीं इसलिये जब उसकी सेना कराबाग के निकट पहुंची तो उसने निश्चय किया कि यादगार को समाप्त करके राज्य को सुरक्षित किया जाये। अतः मुहम्मद अली तगाई को जिसके सुपुर्द काबुल किया गया था इस विषय का आदेश दिया। तगाई ने उत्तर भेजा कि 'मैंने तो कभी एक चिड़िया भी नहीं मारी है। मैं मिर्जा को कैसे

मार सकता हूं।' तब हुमायूं ने यह कार्य मुहम्मद कासिम मंजी को सौंपा तो उसने मिर्जा का वध कर दिया। जब हुमायूं को यादगार के विषय में कोई-कोई चिन्ता नहीं रही तो उसने बदख्शां की ओर कूच किया। जब हुमायूं अन्दराब पहुंचा तो मिर्जा सुलेमान ने तिरगीरान नामक गांव के पास अपनी सेना जमाई। बादशाह ने मिर्जा हिन्दाल आदि कई वीरों को आगे भेजा, फिर शाही सेना की मिर्जा के साथ लड़ाई हुई। मिर्जा हिन्दाल कराचां खां आदि लोगों ने बड़ी वीरता दिखाई और दो बड़े अमीर आहत हो गये। ईरान के शाह के कुछ अंगरक्षक हुमायूं के साथ थे। वे भी इस लड़ाई में लड़े। इनमें वलद कासिम बेग मुख्य था। दोनों पक्ष से सैनिकों ने बड़े वीर कार्य किये। फिर विजय का घोष सुनाई देने लगा। मिर्जा सुलेमान नारीन और ईश्कमिश्क के मार्ग से खोस्त की घाटियों में भाग गया। तुलाक मिर्जा बेग बरलास आदि अमीर सुलेमान को छोड़कर हुमायूं के पक्ष में आ गये। मिर्जा हिन्दाल को आदेश हुआ कि वह भागने वालों का पीछा करे। हुमायूं ने स्वयं भी पीछा किया। मिर्जा सुलेमान थोड़े-से अनुचरों के साथ भाग कर कुलाब पहुंच गया। बदख्शां के अमीर हुमायूं के पास आ गये तो उनके साथ कृपा की गई। हुमायूं ने खोस्त में ठहर कर कुछ दिन शिकार किया। वहां से वह कोलावगान और फिर वहां से किश्मे पहुंचा। मिर्जा सुलेमान वहां से भाग कर आम पार कर गया।

खुसरू नामक एक ईरानी शाह तहमाश्प को छोड़ कर हुमायूं की सेवा मं प्रविष्ट हो गया था। उसने शाह के लिये अनुचित शब्दों का प्रयोग किया तो शाह के अंगरक्षकों ने उसे मार दिया। हुमायूं को यह कार्य अच्छा नहीं लगा। उसने अंगरक्षकों को कैद कर लिया परन्तु फिर उन्हें क्षमा कर दिया।

जब बदख्शां की सब व्यवस्था हो गई तो कुन्दूज और उसके अधीन इलाके मिर्जा हिन्दाल को दे दिये गये और बदख्शां का बहुत-सा भाग जागीरों में बांट दिया गया। मुनीम खां को खोस्त का तहसीलदार नियुक्त किया और बाबूस को तालिकान के भूमि कर का संग्रह करने भेजा। फिर बदख्शां की व्यवस्था ठीक करने और जनता तथा सैनिकों को आराम देने के लिये हुमायूं ने शरद ऋतु में किला जफर में निवास किया परन्तु किश्म और किलां जफर के बीच में पहुंचने पर वह बीमार हो गया और उसे वहां दो मास तक ठहरना पड़ा। शुरू में चार दिन तक वह अचेत रहा। इसलिये अनेक प्रकार की बुरी अफवाहें फैल गईं। हिन्दाल दुर्भावना से अपना स्थान छोड़कर अन्य अधिकारियों के साथ कोपचा नदी के तट तक आ गया और मिर्जा सुलेमान के पक्ष के लोगों ने भी जहां-तहां सिर उठा लिया, परन्तु कराचां खां स्वामिभक्त लोगों के साथ आ पहुंचा और उसने मिर्जा असकरी को जिससे राजद्रोह की शंका थी, अपने डेरे में कैद कर लिया। कराचां ने बीमारी के दिनों में बादशाह की सेवा की। पांचवें दिन बादशाह को चेतना हुई तब मीर बरका ने जो बड़ा स्वामिभक्त था, गड़बड़ की और कराचां खां की स्वामिभक्ति की बात सुनाई। बादशाह ने कराचां खां की सेवा की प्रशंसा की और फिर अकबर को अपने स्वास्थ्य लाभ का समाचार भेजा। इसके बाद विद्रोह की ज्वाला बुझ गई। हिन्दाल वापस अपने स्थान पर लौट गया और सब लोग अपनी-अपनी जागीरों पर चले गये।

इस वर्ष की एक घटना थी कि ख्वाजा मुल्तान मुहम्मद रसीदी वजीर की हत्या हो गई। यह इस प्रकार हुई कि ख्वाजा मुअज्जम ने कुछ विकृत मस्तिष्क वाले लोगों से मिलकर एक सम्प्रदाय चलाया और शरमजान (16 नवम्बर, 1546) को वह वजीर के निवास में आया। वजीर ने रौजा खोला ही था कि मुअज्जम ने उस पर तलवार का वार किया और फिर वह भाग गया। यह खबर सुनकर बादशाह ने आदेश दिया कि मुअज्जम और उसके साथियों को पकड़ा जाये तो ख्वाजा मुअज्जम और उसके साथियों को पकड़कर काबुल में कैद कर दिया।

शाख दान में जब बादशाह को स्वास्थ्य लाभ होने लगा तो बादशाह पालकी में बैठकर किलां जफर की ओर रवाना हुआ। उसकी बीमारी के दिनों में मौलाना बामजीद ने बड़ी सेवा की थी। यह बड़ा प्रसिद्ध हकीम था और अकबर का अध्यापक था। किला जफर पहुंचने पर हुमायूं को शीघ्र ही स्वास्थ्य लाभ हो गया।

बादशाह बदख्शां में ठहरा इसलिये तुरान में भय का संचार हो गया था और उजबेग लोग बड़े त्रस्त थे।

***

प्रकरण 41

मिर्जा कामरान का विद्रोह और उसका काबुल पर शासन

अब खबर आई कि मिर्जा कामरान ने नये उपद्रव शुरू करके काबुल पर कब्जा कर लिया है और शेर अफकन मिर्जा कामरान से मिल गया है। बादशाह को सबसे पहले अकबर की चिन्ता हुई और फिर काबुल के नागरिकों के प्रति उसको सहानुभूति हुई। मिर्जा के विद्रोह से उसको दुःख हुआ। तब हुमायूं की सेना कन्धार से प्रयाण करके काबुल के निकट पहुँची और काबुल की सेना ने और लोगों ने बादशाह का स्वागत किया तो मिर्जा कामरान गजनी की ओर चला गया। मिर्जा हिन्दाल मुशाहिद बेग और कई अन्य लोगों को उसका पीछा करने के लिये भेजा गया। इसका वर्णन काबुल विजय के प्रकरण में किया जा चुका है। पीछा करने वालों को उसका कुछ पता नहीं लगा तो वे काबुल लौट आये। मिर्जा कामरान गजनी पहुँच गया परन्तु वहां के शासकों और निवासियों ने नगर द्वार नहीं खोले। तब वह वहां से खिजर खां हजारा के पास पहुंच गया। हजारा ने उसका आतिथ्य किया और उसको पहले तीरी और फिर जमीनदावर ले गया। मीर खलीफा का पुत्र हिसामुद्दीन अली जमीनदावर में ही था। उसने वीरतापूर्वक दुर्ग की रक्षा की। जब हुमायूं को इसकी खबर मिली तो उसने गजनी मिर्जा

हिन्दाल के और जमीनदावर तथा सम्बन्धित इलाके मिर्जा उलूग के हवाले कर दिये। बैराम खां को आदेश दिया गया कि वह यादगार नासिर मिर्जा से मिले और उसको मिर्जा उलूग से मिलाये और फिर दोनों को मिर्जा कामरान के विरुद्ध रवाना करे। तब मिर्जा लोग कन्धार से जमीनदावर पहुंचे। जब उनके आने की खबर मिर्जा कामरान के शिविर में पहुँची तो हजारा लोग तितर-बितर हो गये और मिर्जा कामरान पीछे हट गया और भक्कर जाकर उसने शाह हसन अरगून की शरण ली। मिर्जा उलूग बेग ने कामरान की जागीर पर कब्जा कर लिया और यादगार नासिर मिर्जा बादशाह की सेवा करने लगा। मिर्जा कामरान ने सिन्ध पहुंच कर ठट्टा के शासक की लड़की से विवाह कर लिया। उसके साथ सगाई पहले ही हो चुकी थी। जब मिर्जा कामरान सिन्ध में ठहरा हुआ था तो उसको खबर मिली कि हुमायूं बदख्शां में बीमार है। उसके बाद उसको बुरी खबर भी मिली तब कामरान ने ठट्टा के शासक से सहायता मांगी और काबुल पर प्रयाण करने का निश्चय किया। ठट्टा के शासक ने इसको अच्छा अवसर देखा और मिर्जा को सैनिक सहायता दी। जब मिर्जा किलांत के पास पहुंचा तो उसको कई अफगान घोड़े के व्यापारी मिले। उसने बलात् उनके घोड़े छीन लिये। वहां से कामरान एकाएक गजनी पहुंचा। उस समय गजनी का दुर्गाध्यक्ष जाहिद बेग मद्यपान करके सोया हुआ था। मिर्जा के आदमियों ने दुर्ग पर कब्जा कर लिया कामरान ने जाहिद बेग को मार डाला। फिर गजनी में अपने दामाद दौलत सुल्तान को रखकर कामरान काबुल की ओर रवाना हुआ और वहां वह एक दिन प्रातःकाल अचानक जा पहुंचा। मुहम्मद तगाई शराब पीकर गुसलखाने में बैठा हुआ था। मिर्जा का एक अदमी उसको निकाल लाया तो मिर्जा ने उसको मार कर दुर्ग में प्रवेश किया। इस प्रकार दुर्ग पर कब्जा कर लिया। कामरान किले में रहने लगा तो शमसुद्दीन मुहम्मद खां अतगा ने अकबर को मिर्जा कामरान के समक्ष प्रस्तुत किया। मिर्जा उसे देखकर कोमल हो गया और बड़ी कृपा दिखाई परन्तु उसको अपने ही लोगों के सुपुर्द कर दिया।

फिर कामरान ने लोगों पर बड़ी निर्दयता की। उसने मिहतर वासिल और मिहतर वकील की आंखें फुड़वा दीं। ये दोनों हुमायूं के विशेष दास थे। मीर खलीफा का पुत्र शमसुद्दीन अली इस समय काबुल आ गया था। इसने जमीनदावर में बड़ी दृढ़ता का काम किया था। कामरान ने बड़ी ही निर्दयता के साथ उसका वध करवाया। कुली बहादुर बादशाह का स्वामिभक्त सेवक था। उसको मरवा दिया गया। ख्वाजा मुअज्जम, बहादुर खां, अतका खां, नदीम कोका और कितने ही अन्य निजी सेवकों को कैद में डाल दिया। फिर वह कपट और छल के द्वारा लोगों को प्रलोभन देकर अपने साथ मिलाने लगा। इनमें शेर अफकन, हसन बेग कोका और सुल्तान बेग बख्सी थे। काबुल के छिन जाने का मुख्य यही कारण था कि वहां के लोगों में एकता नहीं थी। वे सतर्क नहीं थे। उस समय मुहम्मद अली तगाई बादशाह की ओर से नगर का दारोगा था परन्तु उसने कोई सतर्कता नहीं दिखाई। इसी प्रकार फाजिल बेग ने भी अपनी अलग ही दुकान जमा ली। मुहम्मद अली तगाई और फाजिल बेग एक दूसरे के पैर काटने लगे। अब मिर्जा कामरान ने सेना इकट्ठी कर ली। एक दिन मिर्जा कामरान दुर्ग में बैठा हुआ था तो शाह के अंगरक्षक छुट्टी लेकर स्वदेश लौट रहे थे। वे मिर्जा से सलाम करने आये। उस समय अकबर भी मिर्जा के भोज में सम्मिलित था। उस समय अंगरक्षक

बलद बेग से कहा गया कि यदि मिर्जा को समाप्त कर दिया जाये तो अकबर का मार्ग साफ ओ सकता है। वलद बेग ने उत्तर दिया कि हम लोग यात्री हैं, हम लोग ऐसी बातों में क्यों पड़ें।

***

प्रकरण 42

बादशाह हुमायूं का बदख्शां से काबुल को प्रयाण और उसका घेरा

जब कामरान के विद्रोह की खबर हुमायूं को मिली तो हिमपात जोर से हो रहा था। तथापि विद्रोह को दबाने के लिये वह आबदरा की घाटी के मार्ग से रवाना हुआ। पहले तो उसने मिर्जा सुलेमान से कहलाया कि उसके सब अपराध क्षमा कर दिये गये हैं और फिर उसको वे सब प्रदेश दे दिये गये जो बाबर ने उसको दिये थे। फिर मिर्जा हिन्दाल को कन्दूज, अन्दराब खोस्त कहमर्द और बोरी तथा उसके पास के इलाके दे दिये गये।

तत्पश्चात् हुमायूं ने काबुल की ओर प्रयाण किया। हिमपात के कारण वह कुछ दिन तालीकान में ठहरा। हुमायूं के चले जाने से उजबेगों को शान्ति हो गई। अब उन्हें उसकी सेना का भय नहीं रहा। हिमपात कम होने पर हुमायूं ने तालीकान से कन्दूज की ओर कूच किया। वहां मिर्जा हिन्दाल ने उसका आतिथ्य किया। ईद कुर्बान के पश्चात् हुमायूं वहां से चलकर ख्वाजा शेह यारान पर ठहरा। शेर अली ने जो मिर्जा का सच्चा साथी था। आबदरा की घाटी को दृढ़ कर लिया था परन्तु वह मिर्जा हिन्दाल और कराचां खां के सामने नहीं टिक सका। जब शाही सेना वहां से निकल गई तो उसने पीछे से डेरों और सामान पर हमला किया। जब हुमायूं का शिविर चारी कारान में था तो उसके कई लोग मिर्जा कामरान के पास चले गये। इनमें इसकन्दर सुल्तान, मिर्जा संजर बरलास आदि थे। हुमायूं जमजमा की सीमा पर ठहरा और जो लोग डगमगा रहे थे, उनको पक्का किया फिर उसने एक युद्ध समिति बुलाई। उसमें उसको सलाह दी गई कि मिर्जा कामरान ने नगर के फाटक बन्द कर दिये हैं और अपनी स्थिति दृढ़ कर ली है इसलिये अब काबुल पर आक्रमण करने की योजना छोड़कर बूरी और ख्वाजा पुस्ता में ठहरा जाये। सब लोग इससे सहमत हो गये और जमजमा से रवाना हुए। थोड़ी दूर जाने पर हुमायूं ने सोचा कि ख्वाजा पुश्ता जाना ठीक नहीं होगा क्योंकि बहुत-से सैनिक अधिकारियों के कुटुम्ब काबुल में हैं, वे हुमायूं को छोड़कर चले जायेंगे इसलिये काबुल पर ही प्रयाण करना चाहिये। हुमायूं ने गुप्तरूप से हाजी मुहम्मद खां को यह सन्देश भेज दिया। उसने सहमति प्रकट की। हाजी मुहम्मद ने मीनार की घाटी के मार्ग से प्रयाण किया। बादशाह हुमायूं पायान की घाटी से चला। मिर्जा हिन्दाल के नेतृत्व

में जब शाही सेना देह अफगानान के पास पहुंची, जहां से बाबा शस्पर का मजार समीप था तो शेर अफकन कामरान की एक बड़ी सेना लेकर बाहर आया और एक जोर की लड़ाई हुई। बहुत-से शाही सैनिकों के पैर नहीं टिक सके परन्तु मिर्जा हिन्दाल वीरतापूर्वक अचल खड़ा रहा। यह स्थिति देखकर हुमायूं ने कराचां खां, बीर बरका और कितने ही अन्य लोगों को आदेश दिया कि आगे बढ़कर विद्रोहियों को ठीक करे। तब वे लोग आगे बढ़े। मीर बरका सब से आगे था। इसी बीच में हाजी मुहम्मद खां आ गया और शत्रु हार गया। शेर अफकन को पकड़कर बादशाह के समक्ष प्रस्तुत किया गया। उसको कुछ दिन तो बन्दी रखा परन्तु फिर कराचां खां के कहने से उसका वध करवा दिया गया, फिर कियाबान के मार्ग से बादशाह काबुल की ओर चला और कराचां खां के बाग में ठहरा। जो विद्रोही बन्दी बना लिये गये थे उनका वध करवा दिया गया।

बादशाह हुमायूं ने अकाबी की पहाड़ी पर अपना डेरा लगवाया, वहां से दुर्ग दिखाई देता था। तोपें जमाई गईं और चलाई गईं। मिर्जा कामरान के लोग बाहर निकल कर रोज लड़ाई किया करते थे। मेहन्दी खां आदि कई लोग शाही सेना से भागकर मिर्जा कामरान से जा मिले। फिर घेरा आगे बढ़ाया गया और तोपों के विभाग बनाकर प्रत्येक विभाग पर एक अधिकारी नियुक्त किया गया। फिर 30-40 आदमियों ने बाहर निकल कर लड़ाई की तो हाजी मुहम्मद खां ने उन पर आक्रमण किया और वे भागकर दुर्ग में जा छिपे। जब शेर अली ने बाहर निकल कर हाजी मुहम्मद खां से लड़ाई लड़ी तो शाही लोगों ने शेर अली को वापस दुर्ग में धकेल दिया और हाजी मुहम्मद खां को वे उसके डेरों में ले आये। वह कुछ दिन तक बीमार रहा और यह खबर फैल गई कि वह मर गया। परन्तु वह घोड़े पर सवार होकर बादशाह के पास आया, शत्रु को बड़ी निराशा हुई। एक दिन सुल्तान जूनेद का पुत्र मिर्जा संजर जो बादशाह की सेवा छोड़कर कामरान से जा मिला था, लड़ने के लिये बाहर निकला परन्तु उसका घोड़ा बस में नहीं रहा, इसलिये उसे बन्दी बना कर बादशाह के समक्ष प्रस्तुत किया। उसको प्राणदान देकर कारागार में भेज दिया गया। मुहम्मद कासिम और मुहम्मद हुसेन दुर्ग प्राचीर से कूदकर हुमायूं के पास आ गये।

जब यह लड़ाई चल रही थी तो चारीकारान से एक बहुत बड़ा कारवां आया। इसमें बहुत-से अच्छे घोड़े थे और सामान था। इनको छीन लेने के लिये मिर्जा कामरान ने शेर अली को भेजा। मिर्जा का विश्वसनीय सेवक तरदी मुहम्मद जंगजंग ने कहा कि यदि बादशाह को इस बात का पता लग जायेगा तो शेर अली आदि का वापस लौटना कठिन हो जायेगा और उद्देश्य की पूर्ति नहीं होगी। मिर्जा कामरान ने यह सलाह नहीं मानी। ज्यों ही हुमायूं को इसकी सूचना मिली तो उसने हाजी मुहम्मद खां को इस अत्याचार को रोकने के लिये भेजा। हाजी मुहम्मद ने कामरान के लोगों का वापस लौटने का मार्ग रोक दिया। शेर अली और तर्दी मुहम्मद जंगजंग ने कारवां लूट लिया परन्तु वापस लौटने लगे तो उन्होंने देखा कि उनका मार्ग बन्द है। तब शेर अली और तर्दी मुहम्मद हक्के-बक्के रह गये और अनुकूल अवसर की प्रतीक्षा करने लगे।

एक दिन बाकी सालीह ने कहा कि मैं एक ही आक्रमण करके शेर अली को अन्दर

ले आऊंगा परन्तु बाकी सालीह मारा गया और एक दूसरा सरदार बुरी तरह घायल हो गया। इस प्रकार व्याकुल होकर उन्होंने दुर्ग द्वार बन्द कर लिया, शेर अली निराश होकर गजनी चला गया। उसका पीछा करने के लिये तीन बड़े-बड़े अमीरों और सैनिकों को भेजा गया, जिनसे शेर अली की सजावन्द की घाटी में लड़ाई हुई, जिसमें शाही सैनिक विजयी हुए। उन्होंने बहुत-से घोड़े छीन लिये और अनेक लोगों को बन्दी बना लिया। शेर अली ने भागकर हजारा जात में खिजर खां के मकान में शरण ली। शाही सैनिक विजयी होकर वापस आ गये। कारवां के व्यापारियों को घोड़े और सामान दिखाया गया ओर जो उन्होंने पहचान लिये, उन्हें दे दिया गया। विद्रोहियों को तोपों के आगे खड़ा करके मार दिया गया।

जब दुर्ग में आने-जाने का कोई मार्ग नहीं रहा और मिर्जा कामरान की विजय-योजनाएं असफल हो गईं तो उसने स्त्रियों ओर बच्चों के साथ क्रूरतायें करना शुरू किया। उसने बाबूस की स्त्री को बाजार के लोगों के सुपुर्द कर दिया और उसके बच्चों को जिनमें एक सात वर्ष का, दूसरा पांच और तीसरा तीन वर्ष का था, दुर्ग प्राचीर से तापों के निकट फिंकवा दिया। उसने करांचा बेग के पुत्र सरदार बेग को और मुसाहिब बेग के पुत्र खुदा दोस्त को प्राचीर के कंगूरों से लटका दिया। इनके पिताओं से कहलाया कि बादशाह से कहकर घेरा हटाओ वरना तुम्हारे पुत्रों को भी बाबूस के पुत्रों की भांति मार दिया जायेगा। क़राचां खां हुमायूं का प्रधानमंत्री था। उसने जोर से चिल्लाकर कहा, ''हमारे बच्चे एक दिन मरे होंगे तो स्वामी के कार्य में मरना अच्छा है। तुम हमको क्यों डराते हो। यदि हमारे बच्चे मारे जायेंगे तो उनका बदला दूर नहीं है।'' मिर्जा कामरान ने प्रतिप्ष्ठित लोगों की स्त्रियों और बच्चों के साथ अनुचित व्यवहार किया। उसने मुहम्मद कासिम खां मौजी की पत्नी को प्राचीर से लटका दिया परन्तु ऐसे अत्याचार ही उसके विनाश के कारण बन गये।

***

प्रकरण 43

अकबर के द्वारा चमत्कार-प्रदर्शन, काबुल-विजय

मिर्जा कामरान ने अकबर को तापों के सामने खड़ा कर दिया। उसको ऐसे स्थान पर खड़ा किया जहां शाही तोपों के गोलों के कारण एक चींटी का बचना भी कठिन था।

इस दृश्य को देखकर तुपकचियों के हाथ कांपने लगे। सुम्बुल खां प्रधान तुपकची था, वह भी ठंडा हो गया, उसने अकबर को पहचान लिया। तुपकची मुर्दों की भांति ठंडे हो गये। सुम्बुल खां ने तोपें चलाना बन्द कर दिया।

इसी बीच में जमीनदावर, किलात और कन्धार तथा बदख्शां से कितने ही अमीर हुमायूं के पास आ गये और उसकी सेवा करने लगे। जब मिर्जा कामरान की योजनायें विफल हो गईं तो वह पश्चात्ताप का नाटक करने लगा। उसने कराचां खां के द्वारा निवेदन करवाया कि 'मुझे अपने पिछले कामों पर बड़ा खेद है, अब मैं अपना सुधार करके सेवा करना चाहता हूं। अब मेरा जीवन और सम्पत्ति बादशाह के हाथ में है।' हुमायूं ने यह बात मान कर घेरा हल्का करवा दिया। मिर्जा हिन्दाल, कराचां खां, मुशाहिब बेग ओर कितने ही अन्य लोग चाहते थे कि मिर्जा अधीनता प्रकट न करें।

इन ही लोगों की सलाह से बृहस्पतिवार 7 रवी-उल-अव्वल 954 हिज्री (27 अप्रैल, 1547) को मिर्जा बदख्शां की ओर चल दिया। उसका ख्याल था कि मिर्जा सुलेमान की सहायता से वह कुछ कर सकेगा। यदि यह नहीं होगा तो उसे शायद उजबेग लोगों की सहायता मिल सकेगी। हुमायूं ने उसका पीछा करने के लिये हाजी मुहम्मद खां को भेजा और काबुल नगर में प्रवेश किया। तब अकबर उससे मिलने आया और राज महिलायें भी मिलीं। अपने पुत्र को सकुशल देखकर हुमायूं के हर्ष का पार नहीं रहा। उसने भगवान को धन्यवाद दिया और खैरात बांटी। फिर पिता-पुत्र दोनों एक ही मसनद पर बैठे। मिर्जा कामरान भाग गया। उसका पीछा करने वाले लौट आये परन्तु उनके बहुत-से आदमी पकड़ लिये गये और उनका वध करवाया गया। मिर्जा कामरान ने निश्चय किया था कि इस्तालिफ की पहाड़ियों में छिप कर लड़ाई की तैयारी की जाये। रात के समय वह गुप्त रूप से बदख्शां की ओर रवाना हुआ। मिर्जा बेग और शेर अली जूहाक के पास उससे जा मिले। जब वह गोरी के पास पहुंचे तो हुमायूं ने वहां के शासक मिर्जा बेग बरलास को बुलाया। वह मिलने नहीं आया तो हुमायूं ने उसको हरा कर गोरी पर कब्जा कर लिया और शेर अली को वहां रखकर वह बदख्शां की ओर चला। मिर्जा ने मिर्जा सुलेमान और मिर्जा इब्राहीम को भी सहायतार्थ बुलाया परन्तु उन्होंने अपनी स्वामिभक्ति नहीं छोड़ी।

मिर्जा कामरान बल्ख की ओर गया। वह पीर मुहम्मद खान की शरण लेकर उसकी सहायता से बदख्शां पर कब्जा करना चाहता था। बादशाह हुमायूं ने कराचां खां को बदख्शां में नियुक्त कर दिया। वह चाहता था कि मिर्जा सुलेमान और मिर्जा हिन्दाल के सहयोग से मिर्जा कामरान को वहां से भगा दिया जाये। कराचां खां बदख्शां आकर दोनों मिर्जाओं के साथ गोरी गया। वहां शेर अली से जोर की लड़ाई हुई जिनमें दोनों पक्ष के बड़े-बड़े लोग मारे गये। अन्त में गोरी दुर्ग बादशाह की सेना के हाथ में आ गया। इसी बीच में खबर आई कि मिर्जा कामरान और मीर मुहम्मद खां बल्ख से आ पहुंचे हैं परन्तु लड़ाई नहीं हुई। जब बादशाह को मालूम हुआ कि बदख्शां में गड़बड़ मची हुई है तो उसने उधर की ओर कूच किया। बादशाह घोर बन्द से आगे बढ़कर गुल बिहार नामक गांव में ठहर कर शिकार करने लग गया। फिर कराचां खां आ गया और बादशाह ने बदख्शां की ओर कूच किया। परन्तु हिन्दू कोह की घाटियों में हिमपात होने लग गया जिससे उनका पार करना अत्यन्त कठिन हो गया। अतः बादशाह वापस काबुल लौट गया।

***

प्रकरण 44

अकबर का विद्यारम्भ और उस समय की अन्य घटनाएं

7 शव्वाल (20 नवम्बर, 1547) को अकबर 4 वर्ष 4 मास और 4 दिन का था। तब उसकी विद्या का आरम्भ हुआ और अध्यापक के पद पर असामुद्दीन इब्राहीम को नियुक्त किया गया।[1] जिस दिन अकबर के विद्यारम्भ का मुहूर्त था उस दिन वह शिकार करने चला गया था और बहुत तलाश करने पर भी उसका पता नहीं लगा। अकबर को स्वभावतः हिन्दी और फारसी की कविताएं बनाने का शौक था और काव्यशैली के विषय में वह बाल की खाल निकाला करता था। असामुद्दीन पसन्द नहीं आया और उसके स्थान पर मौलाना वायजीद को नियुक्त किया गया।

हुमायूं बादशाह काबुल की व्यवस्था करने में और बदख्शां के अभियान की तैयारी में व्यस्त था। उस समय मिर्जा कामरान को मिर्जा सुलेमान और मिर्जा इब्राहीम से सहायता प्राप्त करने के विषय में निराशा हो चुकी थी। इसलिये वह बल्ख पहुंचा। उसका ख्याल था कि पीर मुहम्मद खां की सहायता से वह बदख्शां पर अधिकार कर सकेगा। जब वह ऐबक नामक गांव पर पहुंचा तो वहां के फौजदार ने उसके साथ शिष्टता का व्यवहार किया परन्तु उसको निगरानी में रख कर पीर मुहम्मद खां को सूचना दे दी। पीर मुहम्मद खां ने विश्वसनीय आदमी उसके सवगत के लिये भेजे। फिर कामरान को अपने निवास पर ले जाकर उसका अतिथ्य किया गया। पीर मुहम्मद उसके साथ बदख्शां तक गया। मिर्जा बदख्शां की पर्वतीय सीमा पर चले गये और बदख्शां का अधिकांश भाग मिर्जा कामरान के अधिकार में छोड़ कर पीर मुहम्मद स्वदेश लौट गया। मिर्जा सुलेमान और मिर्जा इब्राहीम ने कुलाब के लोगों को एकत्रित किया और वे रुस्ताक के विरुद्ध चले, जहां मिर्जा कामरान आ पहुंचा था। एक बड़ी जोर की लड़ाई हुई परन्तु शत्रु हार गये और पहाड़ियों में भाग गये। बादशाह हुमायूं स्वयं बदख्शां जाना चाहता था। परन्तु उसके सेवक साथ नहीं दे रहे थे। इसी बीच में कराचां खां जो पहले स्वामिभक्त सेवक था और फिर विरोधी बन गया था, बहुत-से आदमियों को साथ लेकर बदख्शां चला गया। वह अपने साथ बाबूस मुसाहिब वेरा आदि सात बड़े अमीरों को और 3000 सवारों को ले गया।

---

1. प्रथम अध्यापक असामुद्दीन को इसलिये पदच्युत कर दिया गया था कि उसको कबूतर उड़ाने का बड़ा व्यसन था। दूसरा अध्यापक मौलाना वायजीद था जो हकीम था परन्तु वह भी इस पद पर अधिक समय तक न टिक सका। फिर हुमायूं ने मौलाना अब्दुल कादिर को नियुक्त किया। वह तबरीज का निवासी धा, अब्दुल कादिर के बाद मीर अब्दुल लतीफ अध्यापक बनाया गया। उस समय अकबर की आयु 15 वर्ष की थी। निजामुद्दीन ने अकबर के अध्यापकों की सूची में मुल्ला अलाउद्दीन का भी नाम लिखा है।

हुमायूं स्वयं इन लोगों का पीछा करना चाहता था परन्तु फिर विचार करके अपने कुछ अनुयायियों को इस कार्य के लिये भेज दिया। फिर दोपहर को बादशाह स्वयं घोड़े पर सवार होकर चला। कितने ही वीर नवयुवक आगे बढ़े। तीसरे पहर के बाद कराचा खां के साथ नदी पर लड़ाई हुई। शत्रु भाग गया। भागते समय घोरबन्द की पुल टूट गई। बादशाह ने काबुल लौट जाने का निश्चय किया। वह वहां तैयारी करके बदख्शां के विरुद्ध प्रयाण करना चाहता था। दूसरे दिन हुमायूं काबुल पहुंच गया। उसने मिर्जा हिन्दाल, मिर्जा सुलेमान और मिर्जा इब्राहीम को आदेश भेजा कि बड़ी सेना के आगमन की प्रतीक्षा करे।

हुमायूं ने दूरदर्शी और वृद्ध लोगों से सलाह की तो उन्होंने कहा कि कंधार जाकर तैयारी करनी चाहिये और फिर मिर्जा कामरान के राजद्रोह का दमन करना चाहिये। दूसरे लोगों ने बदख्शां जाने की सलाह दी। एक दिन बादशाह ने मुहम्मद सुल्तान से कहा, 'तुम्हें क्या कहना है'। उसने उत्तर दिया 'मिर्जा कामरान का साहस इसलिये बढ़ गया है कि कुछ विद्रोही लोग उससे जा मिले हैं। ऐसा मालूम होता है कि वह हमसे पहले ही इन प्रदेशों में आ जावेगा। मुझे ऐसा जान पड़ता है कि यदि शाही सेना हिन्दू कोह को पहले पार कर लेगी तो उसे विजय प्राप्त हो जायेगी। अन्यथा पासा लौट जाएगा।' हुमायूं ने उत्तर दिया, 'अब विलम्ब नहीं करना चाहिये। इसी क्षण हम घाटी को पर कर लें।'

***

प्रकरण 45

बादशाह हुमायूं की सेना का बदख्शां को प्रयाण और उसकी विजय तथा काबुल को वापसी

जब अभियान के विषय में निश्चय हो गया तो 5 जुमादल अव्वल, 955 हिज्री (12 जून, 1548) को सेना ने अलग चालाक में मुकाम किया और दो दिन बाद वहां से कराबाग पहुंची। वहां वह दस बारह दिन ठहरी। हाजी मुहम्मद खां और कासिम हुसेन खां ने हितैषी के रूप में आकर अधीनता प्रकट की तो उनका कृपापूर्ण स्वागत हुआ। इस मंज़िल पर मिर्जा इब्राहीम ने आकर सलाम की तो हुमायूं ने उस पर कृपादृष्टि की।

विजय की पूर्व सूचना के रूप में एक घटना यह हुई कि जब मिर्जा इब्राहीम पंजसीर पहुंचा तो तमर सिघाली ने उसको मार्ग में रोका। उस समय मलिक अली पंजसीरी अपनी जाति के लोगों के साथ मिर्जा के साथ आया। मिर्जा इब्राहीम ने लड़ाई करके तमर अली सिघाली को भगा दिया। इब्राहीम मलिक अली पंजसीरी को अपने साथ ले आया और

बादशाह से उसका परिचय करवाया। मलिक अली को मिर्जा इब्राहीम के साथ यात्रा करने में कष्ट हुआ। उसको अपनी जमीनदारियों के विषय में चिन्ता थी। इसलिये इब्राहीम और मलिक अली में लड़ाई हो गई परन्तु इब्राहीम वीरतापूर्वक लड़ा। फिर वह बादशाह की सेवा में पहुंचा। दूसरे दिन मलिक अली ने अपने भाई को बादशाह के पास भेजा जिसने तमर अली का सिर प्रस्तुत किया। बादशाह ने सन्देशवाहक को खिल्लत और भेटें देकर उसके भाई के नाम सन्तोषजनक पत्र लिखा कि मिर्जा इब्राहीम उसकी कुल क्रमानुगत राजभक्ति को नहीं समझता था और जब हम उधर आयेंगे तो कृपा की जायेगी। बादशाह ने मिर्जा इब्राहीम के साथ भी कृपा का व्यवहार किया और फिर उसे बिदा करते हुए कहा कि मिर्जा सुलेमान को अपनी सेना और सैनिक सामान सहित तैयार रखे और बदख्शां के पास शाही सेना की प्रतीक्षा करें। जब शाही सेना तालिकान पहुंचे तो उसमें आ जाये। गुल बिहार नामक गांव से बेगम मरियम मकानी और अकबर को काबुल भेज दिया। मुहम्मद कासिम मोजिक को काबुल का फौजदार बनाकर बेगम के साथ रवाना किया। जब बादशाह हुमायूं बाजारक नामक गांव के पास ठहरा हुआ था तो हाजी मुहम्मद आदि कई बड़े-बड़े अमीर अग्रसेना के रूप में आगे भेजे गये। जब उन्होंने हिन्दू कोह को पार कर लिया तो मेहन्दी सुल्तान आदि जो अन्दराब के दुर्ग में थे, भाग गये। बादशाह के आदेश से तरदीबेग और मुहम्मद कुली बरलास भागे हुए लोगों के कुटुम्बों को पकड़ने के लिये खोस्त पहुंचे। उस समय मिर्जा कामरान अभिमान में चूर होकर जफर दुर्ग में था। कामरान को सलाह दी गई कि काबुल का मार्ग बन्द कर दिया जाये परन्तु उसने नहीं माना। खोस्त में तार दी बेग और मुहम्मद कुली अपने परिवारों को निकाल कर ले गये। हुमायूं के अधिकारियों ने उनको नहीं रोका।

जब शाही सेना अन्दराब पहुंची तो मिर्जा हिन्दाल कून्दूज से आया और शेर अली को बन्दी बनाकर लाया। बादशाह ने हिन्दाल को कई प्रकार की कृपाओं से पुरस्कृत किया। शेर अली का संक्षिप्त वृत्तान्त यह है कि शाही सेना बदख्शां पहुंची उससे पहिले जब मिर्जा कामरान के हाथ में शक्ति थी तो शेर अली दम्भवश मिर्जा हिन्दाल का अनादर किया करता था और कामरान को प्रेरित किया करता था कि कून्दूज छीन कर मिर्जा हिन्दाल को ले आये। अन्त में मिर्जा हिन्दाल ने शेर अली को बन्दी बना लिया। यह घटना इस प्रकार घटी—

एक दिन कून्दूज के कई प्यादों ने उसके मकान को घेर लिया तो वह भाग कर एक नदी में कूद गया, जिससे उसका हाथ टूट गया और वह अपने ही जाल में फंस गया। जब मिर्जा हिन्दाल उसको हुमायूं के समक्ष लाया तो हुमायूं ने शेर अली के सारे अपराध क्षमा कर दिये। उसको एक खिल्लत प्रदान की और उसको गोरी का फौजदार बना दिया। हुमायूं समझता था कि बदला लेने से पुरस्कृत करना अधिक अच्छा है।

बादशाह ने आदेश दिया कि हाजी मुहम्मद खां और अन्य कई लोग अग्रसेना के रूप में आगे चले और मिर्जा उनका नेतृत्व करें। जमादल आखिर 955 हिज्री (22 मई, 1548) को सेना शिबिर काजी अलग पर पहुंचा जो अन्दराब में एक गांव है। अन्दराब के काजी तुखबाई के लोग और साल कांची जाति के तथा बलूची जाति के लोगों ने आकर अधीनता

प्रकट की तो बादशाह ने उन पर कृपादृष्टि की। वहां से कूच दर कूच शाही सेना तालिकान पहुंची। वहां के दुर्ग में भागे हुए अधिकारी और मिर्जा कामरान के लोग थे। मिर्जा हिन्दाल को आदेश हुआ कि बंगी नदी पार करके लड़ाई लड़े। उसी समय किला जफर से अपने आदमियों के साथ मिर्जा कामरान उन लोगों के पास आ गया। शनिवार, 15 जुमादल आखिर को एक ऊंचे से स्थान पर लड़ाई हुई। शाही सेना के अग्रभाग को नदी पार करके वापस आना पड़ा। इसी बीच में बादशाह नदी तट पर जा पहुंचा। स्वामिभक्त सूचकों के कहने से अपने एक मील ऊपर की ओर नदी पार करने का निश्चय किया। वहां एक चक्की थी। उस स्थान पर ख्वाजा खिजरी को बन्दी बनाकर बादशाह के सामने प्रस्तुत किया गया। बादशाह के साथियों ने उसके इतने लात-घूसे मारे कि वह समाप्त हो गया। इसी प्रकार इस्माईल बेग दुलदाई को भी पकड़ कर उपस्थित किया गया परन्तु मुनीम खां के बीच-बचाव करने से बादशाह ने प्राणदान दे दिया। फिर बादशाह मिर्जा कामरान की ओर आगे बढ़ा। मिर्जा कामरान में साहस नहीं रहा और उसने सामना नहीं किया। वह भाग कर तालिकान चला गया और उस दुर्ग को दृढ़ करने में लग गया। इस लड़ाई में किसी का बाल बांका नहीं हुआ। कुछ लोग बन्दी बना लिये गये। मिर्जा हिन्दाल और हाजी मुहम्मद ने अपने बन्दी बादशाह के सामने उपस्थित किये तो उनके साथ न्यायपूर्वक बर्ताव करके बादशाह ने विजय-प्राप्ति के लिये ईश्वर को धन्यवाद दिया।

अगले दिन बादशाह ने दुर्ग का घेरा शुरू करके तोपें जमाईं। एक दिन एक गोला लगने से मुबारिज बेग की मृत्यु हो गई, जिससे बादशाह को बड़ा दुःख हुआ और उसने कामरान को पत्र लिखा कि ''तुम ऐसे मार्ग से जो दुःख और युद्ध तथा अगणित लोगों को विनाश करने वाला है पीछे हटो। नगर के लोगों पर और सेना पर दया करो। पत्रवाहक ने वापस आकर खबर दी कि मिर्जा दुराग्रह नहीं छोड़ता है। इसी समय मिर्जा सुलेमान और इब्राहीम अपनी सेना सहित आ गये और चाकर खां भी पहुंचा, जिससे शाही सेना में वृद्धि हो गई। अब कामरान की स्थिति बिगड़ती जाती थी। घेरे को चलते हुए एक मास हो गया था। एक दिन उसने तीर में एक पत्र बांध कर शाही शिविर में फेंका, जिसमें लिखा था 'अब मैंने सब कुछ देख लिया है, मैं अपने किये पर पश्चाताप करता हूं। मुझे सेवा में उपस्थित होने की अनुमति प्रदान की जाये। यह ईजाजत मुझे मक्का के मीर अरब के द्वारा प्रदान की जाये।' जब बादशाह को यह पत्र मिला तो उसने मीर को बुलाया। मीर ने उत्तर दिया कि मैं इसका उत्तर लिख कर दुर्ग में भेज दूंगा। उसने लिखा 'इस विपत्ति से छुटकारा सच्चाई और अधीनता के द्वारा हो सकता है। जो सन्मार्ग पर चलता है उसे शान्ति प्राप्त होती है।' इसको पढ़कर कामरान ने उत्तर लिखा कि ''मीर का जो भी आदेश होगा उसका पालन किया जायेगा, तब हुमायूं ने मीर को दुर्ग में भेजा। कामरान ने मीर से कहा—मैंने पाप किया है अब मैं आप जो कहेंगे करूंगा। मिर्जा कामरान मीर के साथ बादशाह के पास जाने के लिये तैयार हो गया तो मीर ने कहा—'जो अधिकारी भाग कर आपके पास आ गये हैं उनकी गर्दनों में फन्दा डालकर बादशाह के सामने प्रस्तुत किया जाये और आप बादशाह के नाम का खुत्बा पढ़ायें और चुपके से हज्जाज चले जायें।' तब मिर्जा ने उसकी बात मानकर कहा कि मैं मक्का जाने के लिये तैयार हूँ। परन्तु बाबुस को मेरे साथ जाने दिया जाये। जब

मीर ने बादशाह को यह बाद सुनाई तो उसने मीर की सब बातें मान लीं और कामरान को क्षमा कर दिया।''

शुक्रवार 12 रजब, 955 हिज्री (12 अगस्त, 1548) को मौलाना बाकी सदर ने हुमायूं बादशाह के नाम का खुतबा पढ़ा और बादशाह वहां से पास ही एक बाग में चला गया। तोपें हटा ली गईं और तोपमंच उठा लिये गये। हाजी मुहम्मद के नाम आदेश हुआ कि मिर्जा कामरान कुछ लोगों के साथ मक्का जा रहा है इसलिये उसके चले जाने तक राज्य की सीमाओं को सुरक्षित रखा जावे। फिर भागे हुए लोगों को उपस्थित करने का आदेश हुआ। मिर्जा कामरान दुर्ग से बाहर आया। जाते हुए मिर्जा का बादशाह ने किसी को अपमान नहीं करने दिया ओर उसके लिये एक फरमान खिल्लत और घोड़ा भेजा गया। जब रात्रि हुई तो कराचां खां को उसके गले में तलवार लटका पर प्रस्तुत किया गया, उसका अपराध क्षमा कर दिया गया। दूसरे दिन मुसाहिब बेग को भी इसी प्रकार उपस्थित किया गया। इसी प्रकार दूसरे अधिकारी भी लाये गये। सब को क्षमा कर दिया गया। 17 रजब को मिर्जा कामरान ने वापस आकर अधीनता प्रकट की। यह घटना इस प्रकार घटी—बादामदरा में मिर्जा कामरान ने अब्दुल्ला से शाही कृपाओं का वर्णन किया और कहा कि मैंने इतने अपराध किये हैं तो भी मुझे क्षमा कर दिया गया है। यह बड़े आश्चर्य की बात है। तब अब्दुल्ला ने सलाह दी कि 'आपको पश्चात्ताप करने का मौका है। आप वापस चलें अधीनता प्रकट करें, बादशाह को धन्यवाद दें और उसकी सेवा करें।' तब कामरान वापस आया और उसने बाबूस को बादशाह के पास भेजा। यह समाचार सुनकर बादशाह को प्रसन्नता हुई और उसने कई बड़े-बड़े अधिकारियों को मिर्जा कामरान का स्वागत करने के लिये भेजा। उसी दिन यह भी आदेश हुआ कि मिर्जा असकरी की बेड़ियां हटा दी जायें।

हुमायूं ने एक दरबार किया। मिर्जा कामरान ने आकर गलीचे का चुम्बन किया और दण्डवत् की। फिर बादशाह ने कहा, ''अब उपचार हो चुका, आओ हम भाईयों की भांति बगलगीर हों।'' तब उसने मिर्जा को अपने सीने से लगाया और ऐसा रुदन किया कि उपस्थित लोगों के हृदय द्रवित हो गये। फिर मिर्जा दायीं ओर बैठ गया तो बादशाह ने कहा ओर निकट बैठो। दायीं ओर का स्थान मिर्जा सुलेमान को बतलाया गया। इसी प्रकार शाहजादे और अधिकारी अपने-अपने पदानुसार दायीं और बाईं ओर बैठे और घनिष्ठ दरबारी एक-दूसरे के पास बैठे। बड़ा उत्सव मनाया गया, फिर सुखद संगीत हुआ। दरबार में नवयुवक भी थे। दरबार में फल और नाना प्रकार के व्यंजन शाही ढंग से परोसे गये। दरबार में साधारण बातचीत हुई। सभा सायंकाल तक चली। मिर्जा असकरी को मिर्जा कामरान के निवास पर जाने की ईजाजत दे दी गई। कामरान के लिये शाही निवास के पास ही डेरे लगाये गये। अगले दिन शाहजादों ओर अधिकारियों की एक सभा हुई, जिसमें बल्ख के विरुद्ध अभियान करने पर विचार हुआ। सबने अपनी-अपनी सम्मति प्रकट की। बादशाह ने कहा कि जब सेना नारी के निकट पहुंचे तो जो उचित हो वह किया जाए। नारी नामक गांव के पास से एक मार्ग बल्ख को और दूसरा काबुल को जाता है।

चौथे दिन वहां से रवाना होकर सब लोग बन्दगशा के चश्मे पर ठहरे। वहां भी दरबार

लगा। यहां पर पिछले दिनों में बाबर भी ठहरा था। यहीं खान मिर्जा और जहांगीर मिर्जा उसके पास आये थे। बाबर ने यहां ठहरने के विषय में और उसके भाईयों के आगमन के विषय में एक चट्टान पर शिलालेख खुदवाया था। अब हुमायूं ने भी अपने आने की और कामरान के मिलने की तारीख इसी प्रकार लिखवाई। वहां से बादशाह नारी गांव पहुँचा और उसने बदख्शां का प्रदेश अमीरों में विभक्त किया। खतलान प्रदेश जो कुलाब भी कहलाता है वह मूक नदी और करातगीन तक मिर्जा कामरान को दिया गया। चाकर खां मिर्जा कामरान का प्रधान मंत्री था उसको कामरान के साथ जाने की ईजाजत दे दी गई। मिर्जा असकरी को भी कामरान के साथ जाने की ईजाजत मिल गई और करातीगीन उसको दे दिया गया। मिर्जा कामरान को इस जागीर से संतोष नहीं था परन्तु उसको प्राणदान मिल गया था इसलिये उसने कोई आपत्ति नहीं की। किला जफर मिर्जा सुलेमान को और तालिकान मिर्जा इब्राहीम को दिये गये। मिर्जा हिन्दाल को कून्दूज, घूरी, कहमर्द बकलन इश्कमिश और नारी प्रदान किये गये और शेर अली को उसके साथ भेज दिया गया। जब शाहजादों पर इस प्रकार शाही कृपा कर दी गई तो बादशाह हुमायूं ने काबुल जाने का निश्चय किया और फिर उसने शर्बत पिया और कामरान को दिया और प्रत्येक शाहजादे को पिलाया। प्रत्येक शाहजादे को निशान और नक्कारा प्रदान किया गया। मिर्जा कामरान सुलेमान और हिन्दाल को तमनतोग [1] प्रदान किया गया और वह अपनी-अपनी जागीरों को चले गये तो बादशाह परियान होकर काबुल की ओर गया। परियान का दुर्ग कतूर के हिन्दुओं को दण्ड देकर तैमूर ने बनवाया था। हुमायूं ने इसकी मरम्मत करवा कर इसका नाम इस्लामाबाद रक्खा। फिर बेग मीराक को वहां नियुक्त करके बादशाह आगे चला और पंजशीर नदी के तट पर उशतर कराम की घाटी के निकट ठहरा। जब वह काबुल के निकट पहुंचा तो शरद ऋतु शुरू ही हुई थी और भूमि पर हिम छाया हुआ था। वहीं कुछ दिन उपयुक्त मुहूर्त की प्रतीक्षा में हुमायूं ठहरा और वहीं अकबर उसके स्वागत के लिये आया। अलगा खां और कितने ही दरबारी भी उपस्थित हुए फिर शुक्रवार, 2 रमजान को नगर में प्रवेश करके हुमायूं ने ईश्वर से प्रार्थना की। इसी समय कश्मीर से मिर्जा हैदर का पत्र और भेटें आईं। मिर्जा ने लिखा था कि कश्मीर का मौसम बड़ा सुहावना है। आप यहां आवें। बादशाह ने मिर्जा को बहुत अच्छा पत्र लिखा और भारत के विषय में अपनी गुप्त योजनाएं बतलाईं। हुमायूं ने ख्वाजा जलालुद्दीन महमूद को राजदूत के रूप में दुर्लभ भेंटों के साथ ईरान भेजा।

इस वर्ष एक घटना हुई कि मुहम्मद सुल्तान के पुत्र मिर्जा उलूग बेग की मृत्यु हो गई। यह मिर्जा अपनी जागीर जमीनदावर से बादशाह से सलाम करने के लिये बदख्शां जा रहा था। ख्वाजा मुअज्जम भी उसके साथ था। जब वे गजनी के निकट पहुंचे तो शाही सेना के आगमन की खबर मिली और ख्वाजा मुअज्जम ने उलूग को प्रेरित किया कि हजारा लोगों के विरुद्ध आक्रमण किया जाये। दोनों ही अमीर नवयुवक इसलिये आगा-पीछा न सोच कर और योजनाए बनाए बिना ही युद्ध में कूद पड़े। मिर्जा ने वीरगति प्राप्त की तो हुमायूं ने जमीनदावर की जागीर तर्दी मुहम्मद खां को दे दी। इसी वर्ष काशगर के शासक सुल्तान सईद

1. यह याक की पूंछ का बनाया जाता था और ऊंचे से ऊंचे पद का द्योतक था।

खां के पुत्र अब्दुर-रशीद खां के राजदूत बहुमूल्य भेंटें लेकर आये। उनका स्वागत करके उन्हें जल्दी ही वापस जाने की इजाजत दे दी गई। उसी समय एक उजबेग शाहजादा अब्बास सुल्तान आया। उसके साथ कृपा की गई और बादशाह ने अपनी छोटी बहन गुलचेहरा बेगम का विवाह उसके साथ करके उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाई।

इस वर्ष एक घटना यह हुई कि मिर्जा उलूग बेग के भाई मिर्जा शाह की मृत्यु हो गई। वह अपनी जागीर उश्तर कराम से बादशाह को सलाम करने आ रहा था। जब वह मीनार की घाटी में पहुंचा तो हाजी मुहम्मद के भाई शाह मुहम्मद ने कूकी का बदला लेने के लिये घात में बैठ कर उस पर तीर चलाया और उसे मार डाला। कूकी हाजी मुहम्मद का चाचा था।

***

प्रकरण 46

बादशाह हुमायूं का काबुल से बल्ख को प्रयाण मिर्जा कामरान के आज्ञोल्लंघन और अधिकारियों के मिथ्याचार के कारण वापसी

हुमायूं के मन में भारत विजय का और कश्मीर जाने का विचार था परन्तु बल्ख पर अभियान करने की वह पहिले ही तैयारी कर चुका था इसलिये उसने यह कार्य अपने हाथ में लिया। 956 (फरवरी, 1549) के आरम्भ में उसने अपने एक विश्वस्त सेवक के द्वारा कामरान को सूचना दी कि मैं बल्ख के विरुद्ध प्रयाण कर रहा हूं और तुम जब मैं बदख्शां की सीमा पर पहुंचूं तब मुझ से आकर मिलना। मिर्जा हिन्दाल, असकरी और सुलेमान और इब्राहीम को भी आदेश भेजा कि वे अपने आदमियों को तैयार रखे और शीघ्र आकर शामिल हों।

यह अभियान शुरू कर दिया गया और चालाक में एक मास तक हुमायूं और सेना ठहरी। वहां से मिर्जा कामरान को बुलाने के लिये ख्वाजा दोस्त खावन्द को कुलाब भेजा। इस समय मिर्जा इब्राहीम आया और हुमायूं ने उसका कृपापूर्वक स्वागत किया।

जब सब व्यवस्था बन गई तो हुमायूं ने ईस्तालिफ की ओर प्रयाण किया बादशाह धीरे-धीरे कूच करना चाहता था क्योंक वह मिर्जा लोगों की प्रतीक्षा कर रहा था। जब उसने सुना कि मिर्जा कामरान तैयार हो रहा है तो वह पंजसीर के मार्ग से जाकर अन्दाब में ठहरा। वहां

से वह नारी गया। यहां दो मार्ग मिलते हैं। नारी घाटी को पार करके उसने नीलबर नामक मैदान को पार किया। यह बड़ा सुहावना स्थान है। मिर्जा हिन्दाल और सुलेमान यहीं आकर मिले। बादशाह ने उनका कृपापूर्वक स्वागत किया। सुलेमान के कहने से मिर्जा इब्राहीम को बदख्शां जाने की अनुमति दे दी गई।

बकलान के समीप से मिर्जा हिन्दाल सुलेमान और हाजी मुहम्मद खां तथा कितने ही अनुभवी और सक्रिय लोगों को आगे भेजा। उद्देश्य यह था कि ऐबक नामक कस्बे को जो बल्ख के अधीन था उजबेग लोगों से छीन लिया जाये। यह स्थान कृषि और फलों तथा सुन्दर जलवायु के लिये प्रसिद्ध था।

अगले दिन यह अग्रसेना ऐबक पहुंची। बल्ख के शासक मीर मुहम्मद खां ने ऐबंक की रक्षार्थ ख्वाजा बाग और कई अन्य अनुभवी आदमियों को भेज दिया था। वे ऐबक पहुंचे ही थे कि शाही सेना भी आ गई। उन्होंने दुर्ग में घुसकर द्वार बन्द कर दिये। बादशाह ने दुर्ग को घेर कर तोपें जमा दीं। तीन दिन बाद ऐबक दुर्ग शाही सेना को समर्पित कर दिया गया।

तब हुमायूं ने भोज दिया ओर ट्रान्स ओविजयाना की विजय के विषय में सलाह की तो उसके अतालिक (संरक्षक) ने सलाह दी कि पीर मुहम्मद खां के सेवा योग्य आदमी बादशाह के हाथ में आ गय हैं इसलिये उनका वध करवा कर ट्रान्स ओविजयाना की विजय के लिये प्रयाण किया जाये। बादशाह ने उत्तर दिया कि इन लोगों को प्राणदान का वचन दिया जा चुका है उसको भंग करना किसी भी बादशाह के लिये उचित नहीं है। बादशाह इस स्थान पर कई दिन तक ठहरा। वह मिर्जा कामरान के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। यदि वह आ जाता तो पीर मुहम्मद खां को सामना करने का साहस नहीं होता और उसको बादशाह से सन्धि करनी पड़ती परन्तु विलम्ब होता गया इसलिये मीर मुहम्मद की सहायता के लिये उजबेग लोग आ गये। फिर बादशाह ने खुल्म मार्ग से प्रयाण किया। दो-तीन दिन बाद वह बाबा शाहू पर ठहरा। यहां खबर मिली कि बक्कास सुलतान और शाह मुहम्मद हिसारी के नेतृत्व में बहुत-से उजबेग आ पहुंचे हैं। बादशाह ने अपनी सेना जमाई और सेनाग्र भागों में कुछ हलकी-सी झपटें हुईं, जिसमें शत्रु भाग गये।

विजय के चिन्ह दिखाई दे रहे थे तो भी स्वामिद्रोही लोगों में लड़ने का साहस नहीं था और मिर्जा कामरान के विषय में वे झूठी अफवाहें फैला रहे थे।

अन्त में दूसरे दिन उजबेग लोगों ने लड़ाई लड़ी। बादशाह ने भी अपनी सेना का व्यूह बनाया। दोपहर के बाद युद्ध आरम्भ हुआ जो सायंकाल तक चलता रहा। वीर लोगों ने साहस करके शत्रु को नहर के पार भगा दिया। बादशाह भी भागते हुए शत्रु का नहरों के पार पीछा करना चाहता था परन्तु मिथ्याचारी अनुचरों ने इसके विपरीत सलाह दी। उन्होंने कहा कि शाही सेना थोड़ी है और शत्रु शेना बड़ी है। मिर्जा कामरान काबुल के विरुद्ध प्रयाण कर रहा है। इसलिये वापस हट जाना चाहिये। अन्त में यह निश्चय हुआ कि दरगज जाकर सेना और सैनिक सामान जुटाने के लिये कुछ दिन ठहरना चाहिये। यदि मिर्जा कामरान ने काबुल पर

हमला कर दिया है तो शाही सेना को इधर नही ठहरना चाहिये। बल्ख और ट्रान्स ओविजयाना की विजय के लिये प्रयास करना चाहिये अभी नहीं। बादशाह ने अनिच्छा से आदेश दिया कि दरागज की ओर प्रयाण किया जाये नहरों के पार गई हुई सेना वापस बुला ली गई। मिर्जा सुलेमान और कई अन्य वीरों को शाही सेना के पृष्ठभाग की रक्षा का काम सौंपा गया। अब लोगों में साहस नहीं रहा और वे विभिन्न दिशाओं में चले गये। मिर्जा कामरान के प्रयाण की बात प्रत्येक व्यक्ति की जबान पर थी। साहसहीन लोगों को वापस बुलाने का प्रयत्न किया गया परन्तु सफल नहीं हुआ। वास्तव में बात यह थी कि सर्वशक्तिमान ईश्वर हुमायूं को भारत पर विजय दिलाना चाहता था।

जब शत्रु को मालूम हुआ कि शाही सेना वापस लौट रही है तो उसने पीछा करना शुरू किया। एक जंगल में बादशाह का घोड़ा तीर लगने से मर गया तो हैदर मुहम्मद अख्ता ने उसको अपना घोड़ा दे दिया और ईश्वर की दया से वह सुरक्षित स्थान पर पहुंच गया। पराजय के चिन्ह देखकर कायर लोग इधर-उधर भाग गये।

तीन दिन बाद बादशाह हुमायूं चहार चश्मा की घाटी के ऊपर ठहरा और वहां से उसने अकबर और महिलाओं के नाम काबुल पत्र भेजा। कश्मीर के शासक रसीद खां को भी मिर्जा कामरान की दुष्टता का वृत्तान्त लिख कर भेजा।

वहां से चलकर बादशाह अगली रात्रि को घूरबन्द और वहां से दूसरी रात को ख्वाजा सियारान पहुंचा। वहां से करा बाग गया और करा बाग से मामूरा पहुंचा। इस स्थान पर अकबर उससे मिलने आया और फिर वहां से बादशाह काबुल पहुंचा। काबुल पहुंच कर बादशाह ने उजबेग बन्दियों को छोड़ दिया और वे स्वदेश चले गये। इस उदारता को देखकर पीर मुहम्मद ने भी अपने बन्दी काबुल भेज दिये।

वापस लौट कर हुमायूं ने अपने राज्य की व्यवस्था करना शुरू किया। अफजल खां को उसने वजीर बनाया और ख्वाजा मुहम्मद बेग को दीवान नियुक्त किया। ख्वाजा अब्दुस सम्मद और मीर सईद अली जो बड़े चित्रकार थे, हुमायूं के दरबार में आये।

मिर्जा कामरान का वृत्तान्त निम्नलिखित है—

बादशाह ने कामरान के सब अपराध क्षमा करके उसको कुलाब प्रदान कर दिया था और चाकर बेग कुलाबी को उसका सहायक नियुक्त किया था। मिर्जा कामरान ने कुलाबी के साथ दुर्व्यवहार किया और उसको निकाल दिया। बादशाह की भलाइयों को भूलकर अब मिर्जा कामरान अवसर की प्रतीक्षा करने लगा। जब बादशाह काबुल में था तो कामरान उपस्थित होने के झूठे वायदे किया करता था। बादशाह ने उस पर विश्वास करके ही बल्ख की ओर प्रयाण किया था। कामरान ने यह मौका देखकर काबुल पर प्रयाण किया। परन्तु बादशाह यथा समय काबुल पहुंच गया इसलिये मिर्जा कामरान असकरी को कुलाब में छोड़कर मिर्जा सुलेमान से लड़ने के लिये चला गया। मिर्जा सुलेमान बिना लड़े ही तालिकान से किलांजफर चला गया।

तब मिर्जा कामरान ने किलांजफर की ओर प्रयाण किया। मिर्जा सुलेमान और इब्राहीम

लड़ाई लड़ना उचित न समझ कर बदख्शां की घाटियों में चले गये। मिर्जा कामरान ने मिर्जा हिन्दाल से मेल करना चाहा परन्तु हिन्दाल राजी नहीं हुआ तब कामरान ने कुन्दूज को घेर लिया परन्तु उसको सफलता नहीं हुई। तब उसने उजबेगों को सहायतार्थ बुलाया। यह स्थिति देखकर हिन्दाल ने कामरान की ओर से अपने नाम एक पत्र लिखा जिसमें लिखा था कि हम शान्ति करके उजबेगों को धोखा दे। यह पत्र तरकीब से उजबेगों के हाथ में पहुंचा दिया गया तब उजबेग लोग घेरा छोड़कर स्वदेश लौट गये। इसी बीच में खबर आई कि चाकर बेग ने कुलाब को घेर रखा है और मिर्जा असकरी हार कर उसमें छिपा हुआ है तथा मिर्जा सुलेमान ने किलांजफर पर कब्जा कर लिया है। तब मिर्जा कामरान ने व्याकुल होकर मिर्जा सुलेमान के विरुद्ध एक सेना भेजी और स्वयं कुलाब की ओर प्रयाण किया और वहां से चाकर बेग को हटा दिया। मिर्जा असकरी बाहर निकला तो मिर्जा कामरान उसको साथ लेकर मिर्जा सुलेमान का दमन करने के लिये रवाना हुआ। जब वह रुस्ताक में ठहरा हुआ था तो उजबेग लोगों ने उस पर आक्रमण किया। मिर्जा कामरान और असकरी कुछ आदमियों के साथ भाग कर तालिकान चले गये। मिर्जा हिन्दाल और सुलेमान ने अच्छा अवसर देखकर मिर्जा कामरान पर आक्रमण कर दिया। मिर्जा कामरान बदख्शां छोड़कर खोस्त चला गया। वह वहां से हजारा प्रदेश में जाना चाहता था। वहां से उसने अपने राजदूत हुमायूं के दरबार में भेजे। इन लोगों ने निवेदन किया कि मिर्जा कामरान दरबार में प्रस्तुत होकर क्षमा मांगना और बादशाह की सेवा करना चाहता है। उसकी आशा है कि बादशाह क्षमा करेगा। बादशाह ने कामरान की बात को सच मानकर उसे क्षमा कर दिया।

***

प्रकरण 47

बादशाह हुमायूं का काबुल से प्रयाण, मिर्जा कामरान से युद्ध, अन्य घटनाएं

जब मिर्जा कामरान काबुल की सीमा की ओर आ रहा था तो बादशाह को सलाह दी गई कि सरलता की भी सीमा होनी चाहिये। विद्रोही को दबाने के लिये सेना को आदेश दिया जाये कि वह कूच करे। यह सलाह सुन कर बादशाह ने निश्चय किया कि घूरबन्द की ओर प्रयाण किया जाये। 1957 हिज्री के मध्य में (जून-जुलाई, 1550) हुमायूं ने प्रयाण किया। अकबर को काबुल में छोड़ा और कारोबार को देखने का काम कासिम खां बरलास को सौंपा। करचा खां, मुसाहिब बेग और अन्य लोगों ने मिर्जा कामरान को पत्र लिखा कि वह शीघ्र काबुल पहुँचे, हम और अन्य लोग उसका स्वागत करेंगे और काबुल आसानी से उसके हाथ में आ जायेगा।

अन्त में बादशाह काबुल से प्रयाण करके कराबाद में ठहरा। वहां से फिर चारीकारान और वहां से बारान नदी पहुंचा। यहां पर एक नदी थी जिसको बादशाह ने घोड़े पर सवार होकर पार किया। उसके अनुचर सुरक्षित मार्ग की खोज में इधर-उधर गये। बादशाह को यह तरीका पसन्द नहीं आया फिर कराचा करावख्त और मुसाहिब मुनाफिक ने जो राजद्रोही थे, निवेदन किया कि पर्वतों और घाटियों को पार करना था और स्वामिभक्त लोगों को विभिन्न मार्गों पर नियुक्त रहना चाहिए जिससे मिर्जा इधर न आ सके। वास्तव में यह लोग चाहते थे कि शाही सेना तितर-बितर हो जाये और कामरान का प्रयोजन सिद्ध हो जाये। बादशाह ने लोगों पर भरोसा किया और अपने कई अमीरों को जुहाक और बामियान भेज दिया। जो लोग बादशाह के पास रहे वह बादशाह की स्थिति का दैनिक वृत्तान्त लिख कर कामरान के पास भेज दिया करते थे और बादशाह से कहते थे कि अब तो कामरान का एक मात्र उद्देश्य बादशाह की सेवा करना है।

इन मिथ्याचारी लोगों के प्रपंचों से स्थिति को जानकर मिर्जा कामरान ने जुहाक और बाभियान का मार्ग छोड़कर दरा किबचाक की ओर कूच किया। दोपहर के समय बादशाह को एक किसान से खबर मिली कि मिर्जा कामरान बुरे इरादे से आ रहा है। उसके आने की और उसके इरादों की खबर निरन्तर आती रही। बादशाह को खुद भी प्रपंचियों के कपट का पता नहीं लगा। जब मिर्जा कामरान के आने का और उसके विचारों का समाचार आ गया तो बादशाह शीघ्र ही लड़ाई के लिये तैयार हो गया। तब एक जोर की लड़ाई हुई। बादशाह ने एक ऊंचे स्थान पर जाकर शत्रु और मित्र की शक्ति का हिसाब लगाया। फिर हुमायूं ने स्वयं शत्रु पर आक्रमण किया परन्तु उसका घोड़ा एक तीर से आहत हो गया और पीछे से बेग बाबाई कुलानी ने आकर उस पर तलवार का वार किया। बादशाह ने उसकी तरफ देखा तो वह सहम गया। फिर अब्दुल बाहाब नामक एक यसावल ने बादशाह के घोड़े की लगाम पकड़ ली और उसको रोका। बादशाह ने जुहाक और बाभियान की ओर कूच किया। बादशाह घाव के कारण दुखी था। दूसरे दिन बहुत-से स्वामिभक्त सेवक आ गये। फिर बादशाह ने शाह बुदगा खां आदि 10 बड़े अमीरों को काबुल की ओर भेजा। उन्होंने आदेश दिया कि वह शत्रु की चौकसी रक्खे। हाजी मुहम्मद खां ने सलाह दी कि कन्धार की ओर प्रयाण किया जाये। बादशाह ने यह बात नहीं मानी। विचारशील लोगों ने कहा कि पहले बदख्शां फिर मिर्जा सुलेमान हिन्दाल और इब्राहीम के साथ काबुल जाना चाहिये। कुछ स्वामिभक्त वीरों ने सुझाया कि मिर्जा कामरान प्रपंच में मस्त है और उसको अपनी खबर नहीं है इसलिये काबुल पर कूच करना चाहिये। इस प्रकार बदख्शां गये बिना ही मिर्जा कामरान पर विजय प्राप्त हो जावेगी। बादशाह को मालूम हो गया था कि दरबार के कितने ही लोग कपटी और मिथ्याचारी हैं इसलिये इस बात पर विश्वास नहीं करना चाहिये। अतः उसने बदख्शां जाना ही उचित समझा और आदेश दिया कि ईक्का औलंक के मार्ग से प्रयाण किया जाये। ऐसे समय पर हाजी मुहम्मद ने अपने भाई शाह मुहम्मद के लिये छुट्टी लेकर उसको गजनी भेज दिया। बादशाह ने अपने हाथ से अकबर के नाम पत्र लिखकर शाह मुहम्मद को दिया और कहा कि येनकेन प्रकारेण इसको अकबर के पास पहुंचाया जावे। और गजनी पहुँच कर उस नगर को सुरक्षित रखा जावे। स्वामिभक्त लोगों ने कहा कि [illegible]

मिथ्याचारी है। ऐसे समय पर उसको नहीं जाने दिया जाये। यह भी कहा गया कि हाजी मुहम्मद अपने भाई को मिर्जा कामरान के पास भेज रहा है और भेदिये का काम कर रहा है परन्तु बादशाह ने इन बातों पर ध्यान नहीं दिया और शाह मुहम्मद को छुट्टी दे दी। अगले दिन बादशाह ने कहमर्द की ओर प्रयाण किया। स्वामिद्रोही लोग उसे छोड़ गये परन्तु स्वामिभक्त लोग उसके साथ रहे।

तीन दिन प्रयाण करने के पश्चात् जब बादशाह ऐमांक लोगों के मुखिया तुलकजी और साकाजी नामक स्वामिभक्त के पास ठहरा हुआ था तो प्रातःकाल खबर आई कि ईराक और खुरासान के व्यापारियों का एक कारवां आया हुआ है और हिन्दुस्तान की ओर जा रहा है। उनके पास बहुत-से घोड़े और अन्य सामान है। सायंकाल कारवां के मुखियाओं को दरबार में बुलाया गया तो उन्होंने अपने घोड़े और सामान बादशाह को भेंट कर दिये। बादशाह ने घोड़े अपने साथियों और मित्रों में बांट दिये और कुछ बदख्शां के शाहजादों के लिये भेज दिये। अगले दिन बादशाह कहमर्द पहुंचा। वहां मीर खुर्द का पुत्र ताहिर मुहम्मद उपस्थित था। वह बादशाह की सेवा में आया परन्तु उसने कोई आतिथ्य नहीं किया। फिर दो दिन बाद हुमायूं बंगी नदी पर पहुंचा तो उसके दूसरे तट से एक आदमी ने चिल्लाकर कहा 'ऐ कारवां वालो तुमको बादशाह का पता है।' उसको कोई खबर नहीं दी गई। बादशाह ने उससे पूछा 'तुम कौन हो' तुमको किसने भेजा है और बादशाह के विषय में तुम लोगों को क्या खबर है। उस पुरुष ने उत्तर दिया मुझे साल औलंग के नजरी ने बादशाह की खबर लाने के लिये भेजा है। हम लोगों में यह खबर है कि बादशाह लड़ाई में आहत हो गया था। उसके पश्चात् उसे किसी ने नहीं देखा। मिर्जा कामरान के लोगों को उसका जिब्बा मिला है जो उसने लड़ाई के दिन पहन रखा था। इसको देखकर मिर्जा कामरान को बड़ा हर्ष हुआ और उसने बड़ी दावतें दीं। फिर बादशाह ने उस आदमी को अपने पास बुलाकर कहा कि हमारे विषय में नजरी को अच्छी खबर सुनाओ और उससे कहा कि वह सेवा करने को तैयार रहे। अगले दिन थाह आकर के बादशाह और सेना औलियां खंजान नामक गांव पर पहुँचे। जहां मिर्जा हिन्दाल आकर बादशाह से मिला। फिर बादशाह का डेरा अन्दराब में लगा। वहां मिर्जा सुलेमान और इब्राहीम बादशाह के पास आ गये।

कामरान का वृत्तान्त

लड़ाई में पराजय के बाद जो वास्तव में विजय थी, हुमायूं जौहाक और बाभियान की ओर कूच करने लगा। जो कुछ हुआ उसको देखकर कामरान को अचम्भा हुआ। मिथ्याचारी लोग उसके साथ हो गये ओर वह लोगों पर अत्याचार करने लगा। बाबा सईद कराचां करबख्त को जो आहत हो गया था, मिर्जा के सामने लाया। कामरान ने उस पर कृपा की फिर हुसैन कुली जो बादशाह का वफादार था मिर्जा के सामने उपस्थित किया गया तो मिर्जा ने अपनी तलवार से टुकड़े-टुकड़े कर दिये। ताखजी बेग जो बादशाह का स्वामिभक्त चगताई अधिकारी था मिर्जा के सामने प्रस्तुत किया गया तो उसके भी टुकड़े-टुकड़े कर दिये गये। फिर बेग बाबाई कुलावी ने आकर बादशाह के आहत होने की खबर सुनाई तो मिर्जा ने प्रसन्न होकर कई आदिमियों को उसका पीछा करने के लिये रवाना किया। मिर्जा रणभूमि से चलकर

चारीकारान गया। यहां एक आदमी ने उसको बादशाह का जिव्बा बतलाया तो मिर्जा को इतना हर्ष हुआ कि वह अपने जामे में नहीं समा सका। वहां से चलकर उसने काबुल को घेर लिया। कासिम खां बरलास अकबर की सेवा में था और दुर्ग की रक्षा कर रहा था। मिर्जा ने झूठे वायदे करके उसको अपनी ओर मिलाना चाहा परन्तु उसने नहीं माना। जब उसको जिव्बा बतलाया गया तो वह मान गया। फिर झूठी कहानियां घड़कर दुर्ग ले लिया गया और अकबर को बंदी बना लिया गया।

काबुल पर कब्जा कर लेने के बाद कामरान ने जूईशाही जो अब जलालाबाद कहलाता है मिर्जा असकरी को, गजनी कराचां खां को और घोरबन्द यासतीन दौलत को दे दिये। इसी प्रकार अन्य अनुचरों को भी जागीरें दी गईं। स्वामिभक्त सेवकों को गिरफ्तार किया और ख्वाजा अली दीवान को बन्दी बना लिया गया। फिर भी मिर्जा कामरान को निरन्तर भय रहता था कि कहीं शाही सेना आ पहुंचे, सारा काम कराचां खां के सुपुर्द था। ख्वाजा कासिम उसके साथ काम करता था।

इस प्रकार तीन मास व्यतीत हो गये फिर खबर सुनाई देने लगी कि बादशाह बदख्शां से काबुल की ओर कूच कर रहा है। तब मिर्जा ने सैनिक और हजारा जमीनदार और अन्य लोग एकत्रित किये और तैयारी करके कूच किया। वह अकबर को अपने साथ ले गया।

***

प्रकरण 48

बदख्शां से हुमायूं की वापसी, मिर्जा कामरान से युद्ध, विजय के पश्चात् काबुल वापसी

बादशाह हुमायूं ने अन्दराब ठहरकर थोड़े-से समय में ही सेना खड़ी कर ली और हिन्दूकोह की घाटियों से प्रयाण करने की तैयारी की। उसके साथ बहुत-से कपटी और झूठे लोग थे इसलिये उसने एक दिन सबको शपथ दिलाना चाहा कि वे दिल से उसका साथ देंगे। तब हाजी मुहम्मद खान कोकी ने कहा कि हम सब शपथ ले लेंगे परन्तु आपको भी शपथ लेनी पड़ेगी कि स्वामिभक्त लोग जो निवेदन करें उसके अनुकूल आप काम करेंगे। मिर्जा हिन्दाल ने इसका विरोध किया परन्तु बादशाह ने कहा कि हम हाजी मुहम्मद की इच्छानुसार काम करेंगे। फिर शपथ के उपरान्त बादशाह ने वहां से कूच किया। जब शाही सेना उसतर ग्राम के निकट पहुंची, तो कामरान के सैनिकों ने तैयारी करके उसके विरुद्ध कूच किया। जब दोनों सेनाओं में थोड़ा-सा अन्तर रह गया तो हुमायूं ने मिर्जा के पास एक सन्देशवाहन को भेजकर कहलाया कि विरोध करना और एकता के पथ को छोड़ना बुद्धिमत्ता

का कार्य नहीं है। शान्ति और ईमानदारी का मार्ग ग्रहण करो और एक दिल होकर भारत पर विजय प्राप्त करने में सहयोग दो। कामरान ने यह प्रस्ताव स्वीकार किया परन्तु इस शर्त पर कि कन्धार हुमायूं के कब्जे में और काबुल कामरान के कब्जे में रहे। बादशाह ने दूसरी बार अपना आदमी भेज कर कहलाया कि कामरान अपनी पुत्री का विवाह अकबर से कर दे तो काबुल नवदम्पति को दे दिया जायेगा ओर हुमायूं और कामरान मिलकर भारत पर विजय करेंगे। कामरान इस सुझाव को स्वीकार करना चहता था परन्तु कराचा, कराबल सहमत नहीं हुआ और उसने कहा काबुल पर हमारे सिर लगे हुए हैं।

अगले दिन अच्छा मुहूर्त नहीं था इसलिए कामरान ने युद्ध स्थगित रखा। शाही सेना लड़ने के लिये उतावली हो रही थी परन्तु हाजी मुहम्मद जल्दी करना नहीं चाहता था, फिर बादशाह को खबर मिली कि शत्रु की सेना मे गड़बड़ है और आगा-पीछा किया जा रहा है। जब दोपहर हो गयी तो हुमायूं ने व्यूह बनाकर अपनी सेना को आगे बढ़ने का आदेश दिया। उधर मिर्जा कामरान ने भी व्यूह बना लिया। जब लड़ाई होने वाली थी तो कितने ही सैनिक अधिकारी कामरान को छोड़कर बादशाह के पक्ष में आ गये। फिर दोनों पक्ष के सैनिक बड़ी वीरतापूर्वक लड़े। उस समय कराचां खां का सिर बादशाह के समक्ष प्रस्तुत किया गया तो आदेश किया गया कि उसको काबुल के लोह दरवाजे पर टांग दिया जावे।

मिर्जा कामरान युद्ध में नहीं टिक सका और भाग निकला। वह बादयज की घाटी से अफगानिस्तान चला गया। शाही सेना ने बड़ी लूट की। शत्रुओं को पकड़ कर तलवार के घाट उतार दिया। कितने ही लोग रो-धोकर और पश्चात्ताप करके बादशाह की सेवा में आ गये। मिर्जा असकरी शाही सेना के हाथ में आ गया। यह विजय तो बहुत बड़ी थी परन्तु हुमायूं को अकबर के विषय में महाचिन्ता थी, क्योंकि मिर्जा कामरान उसको अपने साथ लेकर आया था फिर हसन अख्ता ने उसको बादशाह के सामने लाया तो उसे बड़ा हर्ष हुआ और उसने ईश्वर को धन्यवाद दिया ओर गरीबों को पुण्यदान दिया। इसी समय दो ऊंट रणभूमि में देखे गये। उन पर सन्दूकें लदी हुई थीं। जब उन्हें बिठाया गया और सन्दूकें खोली गईं तो मालूम हुआ कि उनमें वे पुस्तकें थीं जो किबचाक की लड़ाई में शत्रु के हाथ में पड़ गई थी। बादशाह को इन पुस्तकों की प्राप्ति पर बड़ा हर्ष हुआ। इसी दिन पारीकारान में एक प्रमोद गोष्ठी की गई।

अगले दिन हुमायूं ने दुर्ग में प्रवेश करके महिलाओं से भेंट की और फिर उरता बाग में जाकर आनन्द मनाया तथा अपनी प्रजा के लिये व्यवस्था की, सेवकों को पुरस्कार दिया और दुष्टों को दण्ड दिया। दीनदार बेग, हैदर दोस्त, मुगल कानजी और मस्तअली कुरची को प्राणदण्ड दिया गया। मिर्जा सुलेमान को पुष्कल पुरस्कार देकर बदख्शां भेज दिया गया। मिर्जा ईब्राहीम को भी कुछ दिन बाद वही रवाना कर दिया गया और यह निश्चय हुआ कि शुभ मुहूर्त देखकर इब्राहीम का विवाह बादशाह की पुत्री बख्सी बानू से कर दिया जाये।

***

प्रकरण 49

अकबर को चर्ख नामक गाँव जागीर में देना

जब काबुल पर अधिकार हो गया तो चर्ख नामक गाँव अकबर को जागीर में दे दिया गया। हाजी मुहम्मद को वकील-ए-दरखाना नियुक्त किया। यह बड़ा अभिमानी था और कृतघ्न था फिर भी बादशाह ने सहन किया। इससे हाजी का पागलपन और भी बढ़ गया तो भी बादशाह उस पर अनुग्रह करता ही रहा।

पराजय के बाद मिर्जा कामरान कुस्तरग्राम से बड़ी बुरी हालत में केवल आठ पुरुषों के साथ देह-ए-सब्ज के मार्ग से अफगानों के पास चला गया। मिर्जा हिन्दाल आदि जो उसका पीछा करने के लिये भेजे गये थे, विफल होकर वापस आ गये। अफगानों ने मिर्जा को लूट लिया। तब मिर्जा ने अपनी दाढ़ी मूँछ मुड़वा ली और कलंदर का भेष बनाकर वह मन्दरौर वाले मलिक मुहम्मद के पास चला गया, जो लमगानात का एक मुखिया था। वहां मिर्जा कामरान ने कुछ सैनिक एकत्र कर लिये।

जब बादशाह को इसकी खबर मिली तो उसको दुःख हुआ। इसी समय बिना छुट्टी लिये हाजी मुहम्मद गजनी चला गया। बादशाह को यह कार्य पसन्द नहीं आया। फिर उसने बहादुर खां आदि को मिर्जा कामरान के दमन के लिये रवाना किया। जब शाही सेना मिर्जा के निकट पहुंची तो वह हट कर अलीगार और आली संग की घाटियों में चला गया। उसका वहां भी पीछा किया गया। उसने खलील और महमन्द नामक अफगान जातियों की शरण ली। अब हुमायूं का चित्त शान्त हो गया तो उसने मिर्जा सुलेमान की प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिये उसके समक्ष विवाह का प्रस्ताव करवाया। मिर्जा सुलेमान को आदेश दिया गया कि वह मिर्जा असकरी को बल्ख के मार्ग से हज्जा भेज दे। सुलेमान ने इस आदेश का पालन किया। सुलेमान ने यह बात भी मान ली कि बादशाह के साथ अपनी लड़की का विवाह कर दिया जाये, परन्तु जब वह बड़ी हो जाये तब किया जाये। उसने दूतों को आदरपूर्वक वापस बिदा किया और बादशाह से क्षमा मांगी।

***

प्रकरण 50

मिर्जा कामरान के राजद्रोह की ज्वालाओं को शान्त करने के लिये बादशाह का अभियान

मिर्जा कामरान ने खलील और महमन्द जाति के अफगानों को और बदमाश सैनिकों को एकत्रित करके लूट मार करना शुरू किया। बादशाह ने ख्वाजा इख्तियार और मीर अब्दुल

है के द्वारा हाजी मुहम्मद को पत्र लिखकर अपना कर्तव्य-पालन करने के लिये बुलाया। जब बादशाह इस प्रकार की तैयारी कर रहा था तो उसको खबर मिली कि मिर्जा कामरान ने जलालाबाद के निकट चारबाग दुर्ग को घेर रक्खा है। इसलिये उसने हाजी मुहम्मद खां की प्रतीक्षा न करके जल्दी से जलालाबाद की ओर प्रयाण कर दिया। यह खबर सुनकर मिर्जा कामरान भयभीत हो गया और भाग गया। उसका ख्याल था कि हाजी मुहम्मद इससे आ मिलेगा; क्योंकि यह व्यक्ति मिर्जा कामरान से मिला हुआ था।

हाजी मुहम्मद की कहानी इस प्रकार है। जब शाही दूत उसके पास आये तो उनसे दरबार में जाने का झूठा वायदा करके उसने उन्हें वापस लौटा दिया। साथ ही उसने मिर्जा कामरान के पास आदमी भेजकर उसको तुरन्त अपने पास बुलाया जिससे मिलकर काम किया जा सके। संयोगवश बैराम खां जो बादशाह की सेवा के निमित्त कन्धार जा रहा था गजनी आया। हाजी मुहम्मद ने बाहर जाकर उसकी चाटुता की और भोज के बहाने से उसको दुर्ग के अन्दर लाना चाहा। वास्तव में उसने बैराम खां को दुर्ग में बन्द कर दिया। खान दुर्ग की ओर चला तो मीर हबाब ने संकेत करके उसको सचेत कर दिया तब खान ने दुर्ग में प्रवेश करने का विचार छोड़कर नगर के बाहर अपना डेरा लगाया तथा हाजी मुहम्मद को समझा-बुझा कर काबुल जाने के लिये तैयार कर लिया। खान ने यह खबर बादशाह को भेज दी तो बादशाह शीघ्रता से काबुल की ओर रवाना हो गया। कामरान काबुल से एक मंजिल दूरी तक पहुंच गया परन्तु जब उसने सुना कि खाने-खाना हाजी मुहम्मद को साथ लेकर आ रहा है तो वह फिर परेशान होकर लमगान की ओर हट गया। एक दिन हाजी मुहम्मद लोह दरवाजे से काबुल में प्रवेश करना चाहता था। परन्तु नगररक्षक जलालुद्दीन महमूद ने उसको नहीं जाने दिया तब हाजी मुहम्मद को संदेह हो गया और वह शिकार के बहाने से काराबाग चला गया। वहां से गजनी पहुंच गया। तब बादशाह भी सियासंग आ पहुंचा। बैराम खां दरबार में हाजिर हुआ। बादशाह ने आदेश दिया कि कोई भी व्यक्ति नगर में प्रवेश न करे।

बादशाह को हाजी मुहम्मद के विषय में चिन्ता थी। इसलिये वह मिर्जा के पीछे रवाना हो गया। बादशाह नगर में पहुंचा और बैराम खां को उसने आदेश दिया कि हाजी मुहम्मद की चौकसी रक्खे। सब प्रकार की युक्तियां करके उसको रास्ते पर लाये। बैराम खां हाजी मुहम्मद को समझा-बुझाकर बादशाह के पास ले गया और उसके अपराध क्षमा करने के लिये प्रार्थना की। परन्तु हाजी मुहम्मद का बर्ताव फिर भी अच्छा नहीं रहा। जब बादशाह जलालाबाद पहुंचा तो मिर्जा कामरान पीछे हटकर कानूर और नूरगल की घाटियों में चला गया। तब उसका पीछा करने के लिये खान-खाना को नियुक्त किया गया। मिर्जा कामरान कानूर और नूरगल में नहीं टिक सका और सिन्धु नदी की ओर भाग गया। खानखाना वापस आकर ढाका में (खैबर की घाटी के छोर पर) बादशाह से मिला। इस समय बादशाह ने आदेश किया कि हाजी मुहम्मद और शाह मुहम्मद दोनों भाइयों को गिरफ्तार कर लिया जाये और उनकी सेवाओं तथा अपराधों की तुलना की जाये तो मालूम हुआ कि उन्होंने 102 अपराध किये हैं। उनकी सेवाओं की कोई सूची नहीं थी। तब उनकी दुष्ट प्रकृति से संसार

को मुक्ति मिल गई। गजनी बहादुर खां को दे दी गई और हाजी मुहम्मद की अन्य जागीरें शाही नौकरों में बांट दी गईं।

अब बैराम खां को कन्धार का शासन दिलाने के लिये भेज दिया गया और ख्वाजा गाजी को राजदूत बनाकर ईरान भेजा। गजनी, गार्दिश, बंगश और तूमान मिर्जा हिन्दाल को और कून्दूज मीर बरका और हसन को दे दिये। मिर्जा हिन्दाल को गजनी जाने की इजाजत मिल गई और मीर बरका को कून्दूज जाने की अनुमति प्राप्त हो गई। जूई शाही और उसका इलाका खिजर ख्वाजा खां को दिया गया।

***

प्रकरण 51

कामरान के विद्रोह का दमन करने के लिये बादशाह हुमायूं का दूसरा अभियान और मिर्जा हिन्दाल की वीरगति

बादशाह को खबर मिली कि मिर्जा हिन्दाल ने सिन्धु नदी से वापस आकर जूही-शाही के जिले में राजद्रोह खड़ा कर दिया है। बादशाह ने गजनी से मिर्जा हिन्दाल और जागीरदारों को बुलाकर कूच करने का आदेश दिया। इसकी खबर सुनकर मिर्जा कामरान विफल होकर पीछे हट गया। जब शाही सेना सुरखाब के समीप पहुंची तो हैदर मुहम्मद अख्ताबेगी अग्रसेना से भी आगे बढ़कर सियाह आब के तट पर सुरखाब और गन्दमत के मध्य में पहुंच गया। मिर्जा कामरान ने उस पर रात्रि में आक्रमण किया। हैदर मुहम्मद ने वीरोचित साहस दिखाया परन्तु उसके कई घाव लग गये। मिर्जा कामरान को हारकर वापस हटना पड़ा। कुछ दिन पश्चात् जब शाही शिविर नेक नहार के तूमान के जपरियार गांव पर लगा हुआ था तो तोपें जमा दी गईं और रक्षार्थ खाई खोदकर दीवार बना ली गई। सायंकाल दो अफगान खबर लाये कि कामरान का रात्रि में आक्रमण करने का विचार है और उसके साथ बहुत-से अफगान हैं। रविवार, 21 जिलकदा, 958 हिज्री (20 नवम्बर, 1521) को एक पहर रात व्यतीत होने पर मिर्जा कामरान अफगानों के एक बड़े दल के साथ शाही शिविर पर टूट पड़ा। बादशाह डेरे के पीछे एक ऊँचे स्थान पर अकबर के साथ खड़ा हो गया। युद्ध की ज्वालायें लपलपाने लगीं। जब चन्द्रोदय हुआ तो शत्रु भाग गया। विजय-प्राप्ति से शाही सेना को बड़ा हर्ष हुआ परन्तु उसी समय दुःखद समाचार मिला कि मिर्जा हिन्दाल की मृत्यु हो गई।

ये दुर्घटना इस प्रकार हुई। रात्रि में आक्रमण का समाचार सुनकर उसका सामना करने

की तैयारी करके मिर्जा हिन्दाल कुछ आराम करने के लिए गया ही था कि अफगानों का कोलाहल सुना। मिर्जा शत्रुओं को पीछे धकेलने में लग गया। शत्रु इतना निकट आ गये थे कि तीर भी नहीं चलाया जा सकता था। महमन्द जाति के एक पुरुष ने मिर्जा पर विषाक्त भाले का प्रहार किया। उसको मिर्जा हिन्दाल का तरकस मिल गया जो उसने मिर्जा कामरान के समक्ष प्रस्तुत किया। जब मिर्जा कामरान ने तरकस देखा तो उसको बड़ा शोक हुआ और उसने अपनी पगड़ी भूमि पर फेंक दी। ख्वाजा इब्राहीम बदख्शां ने मिर्जा हिन्दाल के शव को पहचान लिया और उठाकर मिर्जा के डेरे पर ले गया और उसकी मृत्यु का समाचार प्रकट नहीं किया बल्कि बादशाह से जाकर कहा कि इस विजय पर हिन्दाल ने आपको बधाई दी है। अन्त में मिर्जा का ताबूत जूही-शाही में रखा गया और फिर काबुल भेज दिया गया और उसको बाकर के पैरों की ओर दफनाया गया।

अगले दिन हुमायूं वहां से बीहसूद गया। वह चाहता था कि विद्रोहियों का झगड़ा पूर्व रूप से समाप्त हो जाये और फिर वह शान्तिपूर्वक काबुल में राज्य करे।

***

प्रकरण 52

गजनी का प्रदेश अकबर को जागीर में देना और कुछ व्यक्तियों की पदोन्नति करना

इस समय अकबर दस वर्ष का था। हिन्दाल की जागीर गजनी और उसके सेवक अकबर को दे दिये गये। इससे पहिले एक बार जब अकबर एक समूह में होकर घोड़े पर जा रहा था तो उसकी पगड़ी गिर पड़ी। तब हिन्दाल ने अपनी पगड़ी उसके सिर पर रख दी थी। इसको अकबर के लिए सबसे अच्छा सगुन माना गया था।

मिर्जा हिन्दाल के पास 14 बड़े अच्छे स्वामिभक्त सेवक थे। इनको अकबर की सेवा में ले लिया गया। बाबा दोस्त भी मिर्जा का सेवक था परन्तु उसकी संगति और चरित्र-अच्छे नहीं थे इसलिए उसको नहीं रखा गया। मुहम्मद ताहिर खाँ भी मिर्जा का वृद्ध सेवक था परन्तु वह कुन्दूज की रक्षा नहीं कर सका था इसलिये उसको भी नहीं रखा गया था।

जब शाही शिविर बीहसूद में था तो आदेश दिया गया कि वहां एक दृढ़ दुर्ग बनाया जाये। अकबर को राजकाज का अनुभव प्राप्त करने के लिए काबुल भेज दिया गया। हुमायूं बीहसूद में ठहर कर मिर्जा कामरान पर दृष्टि रखने लगा। शाही सेना वहाँ चार पाँच मास तक ठहरी। मिर्जा कामरान प्रतिदिन किसी जमीन्दार की शरण में रहा करता था। अपने कुस्वभाव के कारण वह बादशाह की शरण में नहीं आया और राजद्रोह करता रहा।

अकबर को शिक्षा देने के लिए मुल्लाजादा असामुद्दीन को नियुक्त किया गया। इस मुल्ला को कबूतर उड़ाने का व्यसन था इसलिये उसको हटा कर मौलाना बायाजीन को अध्यापक बनाया गया। परन्तु अकबर ने विद्या-प्राप्ति पर कोई ध्यान नहीं दिया। फिर बादशाह ने कई ईनाम की पर्चियाँ डालीं तो मौलाना अब्दुल कादिर का नाम आया। तब मौलाना बायजीद को हराकर मौलाना अब्दुल कादिर को अध्यापक बनाया गया। अकबर को ऊँट की सवारी का बड़ा शौक था और वह अरबी घोड़े की सवारी भी किया करता था, वह बड़ा विचारशील था परन्तु कबूतर भी उड़ाया करता था। उसकी बुद्धि अन्दर ही अन्दर कुशाग्र होती जाती थी। वह कुत्तों द्वारा हिरणों का शिकार भी किया करता था।

एक दिन बादशाह ने शाहम खाँ जलाईर को यह देखने के लिए भेजा कि अकबर क्या करता है। जब वह पहुंचा तो अकबर लेटा हुआ था। उसके चेहरे पर गम्भीर प्रकाश था और ऐसा जान पड़ता था कि वह सोया हुआ है, परन्तु वास्तव में वह फरिश्तों से बात कर रहा था और कभी-कभी कहता था ईश्वर ने चाहा तो मैं संसार के उत्तम भाग को जीत लूंगा और दुःखी लोगों की अभिलाषायें पूरी कर दूंगा। यह बात शाहम खां जलाईर कहा करता था। अकबर को चाटुता पसन्द नहीं थी।

***

प्रकरण 53

हुमायूं का बीहसूद से अफगानों पर अभियान, मिर्जा कामरान की घात और उसका भारत की ओर पलायन

कुछ अधिकारियों का कहना था कि अब मिर्जा कामरान में विरोध करने की कोई शक्ति शेष नहीं है इसलिये बादशाह को काबुल की ओर कूच करना चाहिये परन्तु दूरदर्शी लोगों की राय थी कि आक्रमण करके अफगानों को लूटना चाहिये। इस प्रकार मिर्जा कामरान और अफगानों दोनों का ही दमन हो जायेगा।

बादशाह ने यह बात मान ली और कितने ही वीरों को, जो शस्त्र-प्रयोग में निपुण थे, आगे जाने क लिए नियुक्त किया।

अफगान जातियाँ इधर-उधर फैली हुईं थीं। इसलिए यह ज्ञात नहीं था कि कामरान किनके पास है। जब इस प्रकार की परेशानी हो रही थी तो कामरान के पास से मलिक मुहम्मद मन्दरोरी के पास माहम अली कुली खां और बाबा खिजरी जा रहे थे। इनको शाही लोगों ने पकड़ लिया। जब इनसे पूछा गया कि कामरान कौन-से दल के साथ हैं तो माहम

अली ने दूसरे दल का नाम बतलाया। उसका उद्देश्य था कि शाही लोग भुलावे में पड़ जायें। बाबा ने कहा कामरान घबराया हुआ है। मैं मार्ग बतला सकता हूं, अग्रणी लोग प्रातःकाल वहां पहुंच गये और आक्रमण करके उन्होंने कितने ही लोगों को मार दिया और स्त्रियों, बच्चों को पकड़ लिया। कुछ वीर लोग कामरान के डेरे में घुस गये। वह उस समय सोया हुआ था। उसके पास केवल दो आदमी थे, जिनमें एक शाहकुली नारंजी था। उनमें से एक पकड़ लिया गया और दूसरा भाग गया। वास्तव में जो भाग गया वह मिर्जा ही था। मिर्जा भाग कर भारत की ओर चला गया।

इस विजय के उपरान्त हुमायूं उस जिले को छोड़कर बीहसूद वापस आ गया जब यह पता लग गया कि मिर्जा भारत की ओर भाग गया है तो बादशाह ने बाग-ए-सफा में बड़ा उत्सव मनाया और अली कुली अन्दराबी के साथ कई लोग अकबर को लिवा लाने के लिए काबुल भेजे। अकबर और बेगमें शीघ्र ही आ पहुंचीं और फिर ईश्वर को धन्यवाद दिया गया। कुछ आमोद-प्रमोद के पश्चात् बादशाह ने शुभ मुहूर्त देखकर काबुल की ओर कूच किया।

***

प्रकरण 54

अकबर का गजनी जाना

बादशाह हुमायूं ने देखा कि अकबर का तेज प्रतिदिन बढ़ रहा है इसलिये उसने चाहा कि थोड़े दिन के लिये उसको अलग भेज कर उसकी महानता की और योग्यता की जाँच की जाये इससे उसको शासन कला का अभ्यास भी होगा। 959 हिज्री के आरम्भ में (दिसम्बर, 1551 के अन्त) अकबर को गजनी भेज दिया गया। अतगा खां, ख्वाजा जलालुद्दीन मुहम्मद और मिर्जा हिन्दाल के सारे सेवक उसके साथ कर दिये। व्यवस्था का कार्य ख्वाजा के सुपुर्द किया गया। अकबर ने वहां सतर्कता के साथ छः मास व्यतीत किये जिससे प्रकट हो गया कि उसमें धार्मिक और सांसारिक उच्चता है। उसके कार्य ठीक थे। उसकी शिष्टता प्रशंसनीय थी। उसने लोगों के हृदय जीत लिये थे।

उस समय गजनी में बाबा विलास नाम सन्त रहता था। अकबर प्रातः उससे मिलने जाया करता था। अकबर के मस्तक पर पवित्रता और सांसारिक उच्चता देखकर उसने उसको बधाई दी और कहा कि तुम दीर्घजीवी बनोगे और महानता प्राप्त करोगे फिर बादशाह हुमायूं के आदेश से अकबर ने काबुल के लिये प्रयाण किया। एक दिन बादशाह हुमायूं काबुल के पास के गाँव में घोड़े पर बैठकर जा रहा था तो वह गिर गया और आहत हो गया। तब आगा-पीछा सोचकर उसने अकबर को बुलाया फिर हुमायूं पूर्णरूप से स्वस्थ हो गया।

***

प्रकरण 55

बादशाह हुमायूं का बंगस पर अभियान, विद्रोहियों को दण्ड, भारत पर आक्रमण करने का विचार, कामरान की गिरफ्तारी, काबुल की वापसी

959 हिज्री के अन्त में (नवम्बर, 1552) हुमायूं ने बंगस की ओर कूच करने का निश्चय किया। इस अभियान के दो उद्देश्य थे—वहां के विद्रोहियों को दण्ड देना सेना खड़ी करना। अकबर को अपने साथ लेकर वह मरदीज और बंगस की ओर रवाना हुआ। अफगानों को उचित दण्ड मिला, उनका सामान सैनिकों ने छीन लिया। सर्वप्रथम अब्दुर रहमानी पर और अन्त में बरमजीद नाम जाति पर आक्रमण किया गया। शाही सेना के प्रहार को फतह शाह अफगान सहन नहीं कर सका और भाग गया। मार्ग में मुनीम खां ने जो शाही सेना में आ रहा था उस पर आक्रमण किया तो वह आहत होकर भाग गया। इसी समय सुल्तान आदम गक्खड़ के वकील पत्र लेकर आये। उसमें लिखा था कि विपत्ति का मारा कामरान इस प्रदेश में आ गया है। मैं स्वामिभक्त हूँ मैं नहीं चाहता कि मिर्जा इस प्रकार भटकता फिरे। यदि बादशाह आयें तो मिर्जा को प्रस्तुत कर दूंगा और मैं भी अधीनता प्रकट करूंगा। मिर्जा अपने अपराधों पर पश्चात्ताप प्रकट करेगा।

पाठकों को विदित हो कि गक्खड़ जाति बहुत बड़ी है। ये लोग झेलम और सिन्धु के बीच में रहते हैं। सुल्तान जैनुल आबिदीन कश्मीरी के समय में एक गजनी अधिकारी मलिक किद ने जो काबुल के शासक का रिश्तेदार था, बलपूर्वक इस प्रदेश को कश्मीरियों से छीन लिया था। उसके बाद उसका पुत्र मलिक कलां और फिर मलिक कलां का पुत्र पीर यहां का मालिक बना। इसके पश्चात् तातार खां गद्दी पर बैठा, जिसने शेर खां और उसके पुत्र सलीम खां से बड़ा संघर्ष किया। वह समझता था कि बादशाह के कुटुम्ब से उसका सम्बन्ध है। जब बाबर ने भारत पर हमला किया था तो उसने अच्छी सेवा की थी। राणा सांगा से युद्ध हुआ तब भी वह बाबर के साथ था। उसके दो पुत्र थे, एक का नाम सुल्तान सारंग और दूसरे का नाम सुल्तान आदम था। सारंग के बाद सुल्तान आदम गक्खड़ों का मुखिया बना। सारंग कमाम खां और सईद खां के पुत्रों ने अधीनता प्रकट की। परन्तु गुप्त-रूप से वे राजद्रोही थे। मिर्जा कामरान का विश्वस्त सेवक जोगी खां सुल्तान आदम के राजदूत के साथ आया और मिर्जा का प्रार्थना-पत्र लाया। इस पुस्तक के लेखक अबुल फजल का मुख्य उद्देश्य अकबर का इतिहास लिखना है परन्तु उत्सुक पाठकों के लिये उसने आदम से अब तक का वृत्तान्त लिख दिया है। अब मिर्जा कामरान के दुष्कार्यों का वर्णन और उनके

बदले का वर्णन लिखना आवश्यक है। जब मिर्जा कामरान हार कर भाग गया तो वह किसी भी स्थान पर नहीं टिक सका और शेर खां के पुत्र सलीम खां से मिलने के लिये भारत की ओर चला गया। खैबर घाटी के पास से उसने शाह बुदाग खां को सलीम खां के पास भेजा, जो उस समय पंजाब के बान नामक गांव में ठहरा हुआ था। सलीम ने उसके दूत को कुछ रुपया देकर वापस लौटा दिया और कुछ सहायता देने का वचन दिया और कहा कि मिर्जा कामरान वहां ठहरा हुआ है, वहीं ठहरा रहे। शाह बुदाग खां वापस आया उससे पहले ही मिर्जा कामरान ने अली मुहम्मद अश्य नामक दूसरा दूत सलीम खां के पास रवाना कर दिया था। जब मिर्जा बान से चार कोस की दूरी के अन्दर पहुंचा तो सलीम ने तीन बड़े अधिकारियों को उसके स्वागत के लिये भेजा, परन्तु सुल्तान सलीम मिर्जा से यथोचित आदर के साथ नहीं मिला। मिर्जा कामरान के साथ बाबा जुजक आदि बारह बड़े-बड़े अधिकारी और अन्य लोग थे। जिनके नाम लिखने की आवश्यकता नहीं है। मिर्जा को सुल्तान की अशिष्टता से बड़ा दुःख हुआ। वह शाह बुदाग को चुपके-चुपके निरन्तर फटकारा करता था क्योंकि उसकी प्रेरणा से मिर्जा सलीम के पास आया था।

जब सलीम खां दिल्ली के लिये रवान हुआ तो झूठे वायदे करके वह मिर्जा को अपने साथ ले गया। सलीम मिर्जा को भारत के किसी दुर्ग में कैद करना चाहता था, तब मिर्जा ने भाग जाने का निश्चय किया। उसने अपने विश्वस्त सेवक जोगी खां को राजा बक्कू के पास सहायतार्थ भेजा। यह राजा माचिवाड़ा से बारह कोस के अन्दर रहता था। राजा ने रक्षा करने का वचन दिया। एक दिन जब सलीम खां ने माचीवाड़ा की नदी पार की तो मिर्जा ने युसूफ आफ ताबंची को अपने कपड़े पहनाकर सुला दिया और बाबा सईद से कहा कि बैठे-बैठे कुछ गुनगुनाते रहो जिससे मालूम हो कि मिर्जा सो रहा है। भेष बदलकर मिर्जा राजा बक्कू के पास चला गया। जब मालूम हुआ कि एक सेना उसका पीछा कर रही है तो मिर्जा को कहलूर के राजा के पास भेज दिया। कहलूर के राजा ने भी शत्रुओं के डर से मिर्जा को जम्मू भेज दिया परन्तु जम्मू के राजा ने उसको अपने राज्य में नहीं घुसने दिया। तब मिर्जा मानकोट चला गया। वहां पर वह पकड़ा ही जाने वाला था परन्तु स्त्री का वेष बनाकर वह एक अफगान घुड़ सौदागर के साथ काबुल की ओर रवाना हो गया और सुल्तान आदम गक्खड़ के पास सहायतार्थ पहुंचा। सुल्तान आदम ने स्वामिभक्ति अच्छी समझी। मिर्जा को अपने पास निगरानी में रखकर उसने शाही दरबार में उसकी खबर दी। गक्खड़ों की कपट-लीला देखकर मिर्जा ने बादशाह के पास प्रार्थना-पत्र भेजना उचित समझा। मिर्जा भागा नहीं क्योंकि वह भाग नहीं सकता था। उस पर निगरानी भी थी।

जब सुल्तान आदम के दूत ने सारी स्थिति निवेदन की तो बादशाह हुमायूं ने भारत पर अभियान करने के उद्देश्य से गक्खड़ देश तक अभियान करने का निश्चय किया। उसने काबुल का शासन ख्वाजा जलालुद्दीन महमूद के सुपुर्द किया और अकबर को साथ लेकर अपने भाग्योदय के लिये कूच किया। सिन्धु नदी पर पहुंच कर उसने सुल्तान आदम को बुलाया और मिर्जा कामरान से कहलाया कि वह विद्रोह करना छोड़ दे। जब बादशाह ने सिन्धु नदी पार की तो सुल्तान आदम पीछे रह गया। तब उसको समझाने के लिये मुनीम खां को

भेजा जो सुल्तान आदम को समझा-बुझाकर ले आया और मिर्जा कामरान भी परहाला के समीप हुमायूं से मिलने आया। तब बादशाह ने रात भर आनन्द मनाया। दरबारियों ने हुमायूं को समझाया कि मिर्जा कामरान प्रत्यक्ष में ही सन्तुष्ट मालूम होता है। इस प्रकार के निकम्मे व्यक्ति को समाप्त कर देना न्याय के अनुसार होगा और ईश्वर भी इसको पसन्द करेगा।

बादशाह ने यह सलाह नहीं मानी। उसने बाबर का आदेश याद रखा परन्तु अधिकारी लोगों ने अपना मत नहीं बदला। उन्होंने कानूनी सलाह ली और उस पर मुल्लाओं के हस्ताक्षर करवाये और कागज बादशाह के सामने रखा। बादशाह ने वह कामरान के पास भेज दिया। कामरान ने उत्तर दिया कि जिन लोगों ने मेरा वध करने की सलाह दी है उन्हीं के कारण यह दशा हुई है। अन्त में बादशाह ने आदेश दिया कि मिर्जा कामरान को नेत्रज्योति से वंचित कर दिया जाये। इस कार्य के लिए अली दोस्त बारवेगी, सईद मुहम्मद पकना और गुलाम अली शश अगुश्त का नियुक्त किया गया।

जब वे मिर्जा के डेरे में घुसे तो वह उनकी ओर मुक्का मारने दौड़ा। अली दोस्त ने कहा—"आप इने क्षुब्ध क्यों हो गये। आपने सईद अली और अन्य अनेक निर्दोष व्यक्तियों की आंखें फुड़वाई हैं।" फिर मिर्जा की दोनों आंखें फोड़ दी गईं। उसकी आंखों में कई बार नस्तर चलाया गया। बादशाह को बड़ा दु:ख हुआ और फिर उसने कूच किया। यह घटना 960 हिज्री (नवम्बर, दिसम्बर, 1553) में हुई।

उसी दिन मिर्जा ने मुनीम खां को भेजकर बादशाह से निवेदन करवाया कि बेग मुलुक को मेरी सेवा करने की इजाजत दे दी जाये, जो दे दी गई।

इस घटना के पश्चात् बादशाह ने जानूहा लोगों को दण्ड दिया। इनके साथ लड़ाई करते हुए ख्वाजा महन्दी और अन्य लोगों ने वीरगति प्राप्त की।

अब बादशाह ने कश्मीर जाने का निश्चय किया परन्तु उसके सलाहकारों ने कहा कि कश्मीर एक कुंए के समान है। शाही सेना के प्रयाण से भारत में हलचल मच गई है और सलीम खां बड़ी तैयारी करके पंजाब की ओर आ रहा है। हमारे पास विशेष तैयारी नहीं है। यदि अफगान सेना हमारी ओर आई तो हम कश्मीर कैसे जा सकते हैं।

इसलिये इस विचार को त्यागकर काबुल लौट जाना चाहिये और फिर तैयारी करके हम अफगानों को नष्ट करेंगे। परन्तु हुमायूं ने यह सलाह नहीं मानी। काबुल की रक्षार्थ उसने अकबर और कुछ अधिकारियों को भेज दिया और कश्मीर की ओर प्रयाण किया। तब बहुत-से सेवक काबुल चले गये। बादशाह के पास केवल अधिकारी ही रह गये। फिर बादशाह ने कुरान खोलकर शगुन देखे तो कश्मीर के अभियान को छोड़ना पड़ा। वह काबुल की ओर रवाना हो गया। जब उसका डेरा सिन्धु नदी पर था तो मिर्जा कामरान का प्रार्थना-पत्र आया कि उसे हजाज जाने की इजाजत दे दी जाये। जब मिर्जा अपनी यात्रा पर रवाना होने वाला था तो हुमायूं कुछ चुने हुए अनुचरों के साथ उसके डेरे पर गया और उसके प्रति बड़ी दया प्रकट की और कहा, गुप्त बातों को जानने वाला ईश्वर जानता है कि इस कार्य से मैं कितना लज्जित हूं, यह मेरी इच्छा से नहीं हुआ है। अच्छा होता कि तुम ऐसा ही खण्ड मुझे देते।

मिर्जा को बड़ी लज्जा आई और उसने हाजी युसूफ से पूछा कि वहां कौन-कौन विद्यमान हैं। जब उसको नाम बतला दिये तो उसने कहा—मित्रगण, मैं वध के योग्य था, बादशाह ने मुझे प्राणदान देकर हज्जाज जाने की इजाजत दे दी है। मैं उसको हजार धन्यवाद देता हूँ। फिर उसने अपने बच्चों की सिफारिश की तो बादशाह ने उनका पालन करने का वायदा किया और फिर प्रस्थान किया। भेंट से पहले मिर्जा से यह वायदा करवा लिया गया था कि वह रोयेगा नहीं। इससे उसने संयम रखा परन्तु उसके जाते ही वह खूब रोया।

अगले दिन आदेश दिया गया कि मिर्जा के अनुचरों में से जो भी उसके साथ जाना चाहते हो जाये। परन्तु कोई भी आगे नहीं आया। बादशाह का सेवक जो उसे खाना परोसा करता था, मिर्जा के साथ जाने को तैयार हो गया। बादशाह ने उसको जाने की ईजाजत दे दी और यात्रा का खर्च उसी के सुपुर्द कर दिया। बेग मुलूम मिर्जा का घनिष्ठ अनुचर था परन्तु उसके साथ दो-चार मंजिल जाकर वह वापस आ गया।

मिर्जा पहले सिन्धु नदी द्वारा ठट्टा गया और वहां से मक्का गया। उसने तीन बार मक्का की यात्रा की और 11 जिलहिज्जा, 964 हिज्री (5 अक्टूबर, 1557) को मक्का में उसकी मृत्यु हो गई।

अफगानों ने विक्राम दुर्ग को नष्ट कर दिया था। यह पेशावर कहलाता है। बादशाह ने आदेश दिया कि इसका पुनर्निर्माण किया जाये। फिर उसने काबुल की ओर प्रयाण किया। उसके अधिकारी लोग भी काबुल लौटने के लिये बड़े आतुर थे। दुर्ग शीघ्र ही तैयार हो गया और सिकन्दर खां उजबेग को वहां नियुक्त करके हुमायूं ने काबुल की ओर प्रयाण किया।

फिर अफगानों ने इस दुर्ग पर बड़ा आक्रमण किया परन्तु सिकन्दर खां ने वीरता-पूर्वक लड़कर उन्हें वापस धकेल दिया। दिसम्बर, 1553 में बादशाह काबुल पहुंच गया तो महिलाओं ने उसे बधाई दी परन्तु उसने कहा कि मिर्जा कामरान के कारण यह बधाई का अवसर नहीं है। फिर हुमायूं ने ताशगर के शासक अब्दुर रसीद को सारा वृत्तान्त लिखकर भेजा। इसी समय माह जूजक बेगम के गर्भ से 15 जुमादल अव्वल (19 अप्रैल, 1554) को पुत्र जन्म हुआ। बादशाह ने उसका नाम मुहम्मद हकीम रखा। लगभग इसी समय खानिश बेगम से एक पुत्र हुआ जिसका नाम ईब्राहीम सुल्तान रखा गया परन्तु उसकी तुरन्त ही मृत्यु हो गई।

***

प्रकरण 56

बादशाह की कन्धार को यात्रा और वहां से वापसी

कलहप्रिय लोगों ने बैराम खां के विषय में शिकायतें की थीं इसलिये काबुल अली कुली खां अन्दराबी के सुपुर्द करके और अकबर को साथ लेकर बादशाह हुमायूं ने भारत

पर अभियान नहीं किया किन्तु कन्धार की ओर प्रयाण किया। गजनी स्थित वकीलों ने बादशाह का आतिथ्य किया। अकबर गजनी से वापस काबुल आ गया। बादशाह के आगमन का समाचार सुनकर वैराम खां ने कन्धार से दस कोस की दूरी पर सोरान दान नामक गांव पर आकर बादशाह का स्वागत किया और जब बादशाह कन्धार पहुंचा तो बड़े शानदार भोज दिये गये। बादशाह के साथ शाह अबूल मआली ओर मुनीम खां आदि उच्च अधिकारी थे और ख्वाजा हुसैन आदि विद्वान् थे। बादशाह ने सारी शरद ऋतु कन्धार में बिताई, सारा खर्च बैराम खां ने उठाया। बादशाह ने सब प्रकार का आमोद-प्रमोद किया और दरवेषों और धार्मिक पुरुषों से भेंट की, जिनमें मौलाना अनुद्दीन महमूद के पास वह कई बार गया।

ख्वाजा गाजी को राजदूत के रूप में ईरान भेजा गया था। वह कन्धार आया। उसको बादशाह ने दीवान बनाया। इसी समय जमीनदार से मुअज्जम सुल्तान आया। हैरात के मुहम्मद का विश्वस्त अनुचर मिहतर करा भी बहुमूल्य भेटें लेकर आया। शोरानदार के पास पशुओं को चारों ओर से घेरकर शिकार किया गया। बादशाह ने इसको अपनी इच्छापूर्ति के लिये अच्छा शकुन समझा।

इसी समय शेर अली बेग की शाह अबुल मआली ने हत्या कर डाली। शेर अली बेग ईरान के बादशाह शाह तहमास्प से छुट्टी लिये बिना ही आकर बादशाह का सेवक बन गया था। शाह अबुल मआली बादशाह का कृपापात्र था और धार्मिक विषय में बड़ा कट्टर था। उसको अबुल मआली ने रात में हमला करके मार डाला। बादशाह को इससे बड़ी खिन्नता हुई परन्तु अपराधी को दण्ड नहीं दिया।

बैराम खां की शिकायतें सुनकर बादशाह ने निश्चय किया था कि उसके स्थान पर मुनीम खां को नियुक्त किया जाये परन्तु अब सन्तुष्ट होकर उसने बैराम खां की अपने पद पर पुष्टि कर दी। ख्वाजा मुअज्जम से जमीनदावर लेकर अली कुली खां के भाई बहादुर खां को दे दिया। इस प्रकार व्यवस्था करके बादशाह हिन्दुस्तान पर विजय प्राप्त करने के इरादे से काबुल लौटा। बैराम खां को तैयारी करने के लिये छुट्टी दे दी गई। गजनी पहुंचने पर बादशाह से अकबर मिला। मुहम्मद कुली खां बरलास और अतका खां तथा अन्य कई लोगों ने बादशाह के प्रति स्वामिभक्ति प्रकट की। अक्टूबर, 1554 में बादशाह काबूल पहुंचा।

इसी समय मुनीम खां को अकबर का संरक्षक नियुक्त किया गया। मुनीम खां ने इस कृपा के लिये ईश्वर को धन्यवाद दिया। इसी समय ईरान के शाह का दूत उलूग बेग भेटें लेकर आया। अब बादशाह हिन्दुस्तान की विजय के लिये तैयारी करने लगा। इसी समय एक फकीर ने बादशाह को जूतों का एक जोड़ा भेंट किया, जिसको भारत की विजय के लिये शुभ शकुन माना गया। एक दूसरे फकीर ने नाश्ते के समय भेड़ के सीने की हड्डी परोसी। इसको भी हुमायूं ने अच्छा शकुन माना।

बैराम खां रमजान के भोज (61 अगस्त) के दूसरे दिन आया। तब फिर भोज दिया गया। उस दिन घुड़सवारों की और तीरन्दाजों की कलाओं का प्रदर्शन किया गया। अकबर

कबक के निशाना लगाने में शामिल हुआ और पहली ही बार उसका निशाना ठीक लग गया। सब ही लोगों ने बड़ा हर्षनाद किया और बैराम खां ने एक कविता बनाई।

इसी समय हिन्दुस्तान के स्वामिभक्त लोगों कें पत्र आने लगे कि बादशाह भारत पर हमला करें। उनमे यह भी लिखा था कि सलीम शाह की मृत्यु हो चुकी है और देश में बड़ी गड़बड़ है।

***

प्रकरण 57

गड़बड़ के दिनों में हिन्दुस्तान में हुई दुर्घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन

रबी-उल-अव्वल, 952 हिज्री (23 मई, 1545) को शेर खां की मृत्यु हो गई। उसने अत्याचार और दुष्टता से राज्य जमाया था और 5 वर्ष 2 मास 13 दिन शासन किया। इसके 8 दिन बाद अधिकारियों की सहायता से उसका पुत्र सलीम खां गद्दी पर बैठा। जिसने 8 वर्ष 2 मास और 8 दिन शासन किया। कुछ समय तक वह अपने बड़े भाई आदिल खां और खवास खां से लड़ाई करता रहा। ख्वास खां शेर खां का दास था। उसने कपट और चालाकी से शक्ति प्राप्त कर ली थी। सलीम खां को नियाज जाति के मुखिया हैवत खां से भी कुछ समय तक लड़ाई लड़नी पड़ी। हैवत खां पंजाब में शासन करता था। नियाजी लोग हार गये। फिर सलीम खां गक्खड़ों से लड़ा परन्तु उसको विजय नहीं मिली क्योंकि गक्खड़ लोग बादशाह के स्वामिभक्त थे। सलीम खां ने रोहतास दुर्ग का निर्माण पूरा करवाया। इसका आरम्भ शेर खां ने किया था लम्बे अर्से तक सलीम खां अफगानों से डर कर ग्वालियर के दुर्ग में रहा। किसानों के साथ उसका बर्ताव अच्छा था, परन्तु सैनिकों से वह कठोर व्यवहार करता था। 22 जिलकदा, 960 हिज्री (30 अक्टूबर, 1553) को उसकी एक बुरी बीमारी से मृत्यु हो गई। उसकी इच्छानुसार बालक फिरोज खां उत्तराधिकारी बना, परन्तु कुछ दिन बाद ही मुबारिज खां ने उसको मार डाला। मुबारिज फिरोज का मामा था। वह मुहम्मद आदिल के नाम से मुल्तान बन गया। आदिल शेरखां के छोटे भाई निजाम खां का पुत्र था। निजाम के एक पुत्र, तीन पुत्रियां थीं। तीनों लड़कियों के पति ऊंचे पदों पर पहुंच गये। इनमें एक का नाम सलीम खां, दूसरे का नमा सिकन्दर सूर और तीसरे का नाम ईब्राहीम सूर था।

हेमू का वृतान्त

हेमू का न तो कुल ऊंचा था और न उसकी जाति अच्छी थी, वह देखने में सुन्दर नहीं था। उसमें अच्छे गुण भी नहीं थे। वह रेवाडी का एक मामूली बनिया था। रेवाडी मेवात

का एक कस्बा है। वह दूसर जाति का था, जो भारत के बनियों में सबसे छोटी मानी जाती है। वह नमक बेचा करता था। अपनी चतुरता से उसने सलीम खां तक अपनी गति कर ली। वह प्रत्यक्ष में उसका स्वामिभक्त था परन्तु गुप्त रूप से उसका विनाश करना चाहता था।

सारांश यह है कि शीघ्र ही वह सलीम खां का कृपापात्र बन गया। जब सलीख खां की मृत्यु हो गई और मुबारिज खां गद्दी पर बैठ गया तो हेमू ने सारे प्रशासन पर काबू कर लिया। मुबारिज खां नाम मात्र का शासक रह गया। सारा राजकाज हेमू के हाथ में आ गया। उसने शेर खां और सलीम खां का कोष, घोड़े और हाथी हथिया लिये। थोड़े दिन वह राय कहलाया और फिर उसने राजा विक्रमादित्य की उपाधि धारण कर ली, परन्तु वह आदिल के नाम पर लड़ाईयां करता रहा और अपनी योग्यता और साहस के लिए प्रसिद्ध हो गया। अन्त में उसने अकबर की सेना का सामना करने का भी साहस किया, इसका पूरा वृत्तान्त फिर लिखा जायेगा।

हिन्दुस्तान की परिस्थिति

जब राजसत्ता मुबारिज खां के हाथ में आई तो भारत की दशा पहले से भी बुरी हो गई। शेर खां और सलीम खां ने काम तो अच्छा किया परन्तु यदि वे अकबर के प्रति वफादार होते तो वे कृपा के पात्र बन जाते।

जब सलीम खां की मृत्यु हो गई तो मुबारिज खां ने बहुत ही बुरे कर्म किये। सलीम खां की बहन का पति अहमद सूर पंजाब का शासक था। उसने अपना नाम सिकन्दर खां रखकर सुल्तान बनने का साहस किया और ऐसा ही साहस मुहम्मद खां ने किया। यह भी शेर खां से सम्बन्धित था। इब्राहीम सूर भी भारत का शासक बनना चाहता था। इसी प्रकार मालवे में सजात खां ने सिर ऊंचा उठा लिया। बदमाश अफगानों ने एकत्रित होकर बड़ी गड़बड़ मचा दी। सिकन्दर ने पंजाब में सेना खड़ी करके आगरे पर आक्रमण करने का विचार किया। मुबारिज खां और इब्राहीम भी इसी विचार से आगे बढ़े। फिर हेमू की इच्छानुसार मुबारिज खां ने आगरे के पास सिकन्दर और इब्राहीम से लड़ाई लड़ी, जिसमें इब्राहीम हार गया। उसका पिता गाजी खां सूर बयाने के दुर्ग में छिप गया। तब सिकन्दर ने सिन्धु से गंगा नदी तक का देश दबा लिया और सेना खड़ी करके उसने पूर्व की ओर प्रयाण किया। इसी समय बादशाह हुमायूं ने भारत-विजय के लिये प्रयाण किया। बंगाल के शासक मुहम्मद खां ने मुबारिज खां और अन्य प्रतिस्पर्धियों को समाप्त करने का निश्चय किया। चपर घगटा में उसकी मुबारिज खां और हेमू से लड़ाई हुई। इसमें मुहम्मद खां मारा गया। तब सारा राजकोष हेमू के हाथ में आ गया। फिर हेमू ने इब्राहीम और दूसरे प्रतिस्पर्धियों से लड़ाइयां लड़ीं तो सब में उसको विजय मिली। हेमू घुड़सवारी नहीं कर सकता था इसलिये पालकी मं बैठकर चलता था। मुहम्मद खां के पुत्र खिजर खां ने सुल्तान जलालुद्दीन की उपाधि धारण करके बंगाल पर अपना राज जमाना चाहा तो मुबारिज खां और हेमू ने बंगाल की ओर प्रयाण करने का विचार किया।

***

प्रकरण 58

बादशाह हुमायूं का भारत-विजय के लिये अभियान

भारत में गड़बड़ का समाचार सुनकर बादशाह हुमायूं ने भारत पर अभियान की तैयारी की। शाहवली बकावल बेगी को मिर्जा मुहम्मद हकीम का संरक्षक नियुक्त किया। महिलाओं की सेवा और काबुल प्रान्त का शासन मुनीम खां के सुपूर्द किया। जिले हिज्जा, 961 (लगभग 12 नवम्बर, 1554) के शुभ मुहूर्त में बादशाह ने प्रस्थान किया। उस समय अकबर 12 वर्ष और 8 मास का था। वह सेना में सबसे आगे रहा। प्रस्थान के दिन हाफिज के दीवान से शकुन लिया गया तो अच्छा निकला। हुमायूं के साथ 3000 से अधिक सैनिक नहीं थे परन्तु ईश्वर उसकी सहायता कर रहा था। बैराम खां कुछ सरकारी मामलों की व्यवस्था करने के लिये इजाजत लेकर काबुल में ठहर गया। हुमायूं जलालाबाद से एक बेड़े पर सवार होकर नदी द्वारा रवाना हुआ और मोहर्रम, 962 के अन्त में (दिसम्बर, 1554 के अन्त में) उसने विक्राम में (पेशावार) मुकाम किया। वहां सिकन्दर खां उजबेक के पद की वृद्धि की गई। पांच सफर, 31 दिसम्बर 1554 को सिन्ध (नीलाब) के तट पर शिविर खड़ा किया गया और वहां तीन दिन व्यतीत हुए। यहां बैराम खां काबुल से आ गया। बादशाह ने कृपापूर्ण पत्र लिखकर सुल्तान आदम गक्खड़ को बुलाया। परन्तु उसने बहाना किया कि सिकन्दर के साथ उसकी सन्धि है और उसका पुत्र लश्करी सिकन्दर के साथ है। यदि मैं बादशाह की सेवा में आऊंगा तो मेरे पुत्र के मारे जाने का खतरा है। बादशाह को सुझाया गया कि ऐसे राजद्रोही को दण्ड देना चाहिये परन्तु हुमायूं ने उसकी सेवाओं का स्मरण करके उसे दण्ड नहीं दिया।

जब शाही सेना सिन्धु पार करके आगे बढ़ी तो रोहतास के आसपास एकत्रित हुए अफगान लोग पीछे हट गये और सेना गांवों ओर कस्बों को जीतती हुई आगे बढ़ती रही। बादशाह के साथ 57 बड़े-बड़े अधिकारी थे। बैराम खां, शाह अबुल माली, खिजर ख्वाजा खां, तर्दी बेग खां आदि की इन्हीं 57 अधिकारियों में गणना थी। जब सेना कालानूर पहुंची तो हुमायूं के नाम का खुतबा पढ़वाने के लिये शिहाबुद्दीन अहमद खां, अशरहम खां और फरहद खां को आगे लाहौर भेजा गया। उन्हें यह भी आदेश दिया गया कि हुमायूं के नाम के सिक्के चलाये जायें उस समय हरियाणा में नसीब खां पंज मैया नियुक्त था। उसके विरुद्ध बैराम खां तर्दी बेग खां आदि को एक बड़ी सेना के साथ भेजा गया और बादशाह ने लाहौर की ओर कूच किया। लाहौर के अमीरों ने और छोटे तथा बड़े लोगों ने बादशाह को भेंटें दीं दो रबी उस्सानी (24 फरवरी, 1555) को बादशाह ने लाहौर में प्रवेश किया।

इस मास के अन्त में खबर आई कि-शाहबाज खां अफगान बहुत-से अफगानों को एकत्रित करके दीपालपुर में गड़बड़ मचाने का विचार कर रहा है। बादशाह ने उधर की ओर

शाह अबुल मआली, अली कुली खां, शेबानी आदि को बहुत-से वीरों के साथ भेजा। तब तक जोर की लड़ाई हुई, जिसमें शत्रु हार गया और शाही सैनिक विजयी होकर वापस आ गये।

बैराम खां हरियाणा में

जब बैराम खां हरियाणा में पहुंचा तो नसीब खां अफगान कुछ सामना करके भाग गया। उसका बहुत-सा माल शाही सेवकों ने लूट लिया और उनके कुटुम्ब को भी पकड़ लिया परन्तु बैराम खां ने विश्वसनीय लोगों के साथ सबको नसीब खां के पास भेज दिया और लूट का माल बादशाह के पास रवाना कर दिया। इस विजय के लिये धन्यवाद देकर बादशाह आगे बढ़ा। बैराम खां जालन्धर में ठहरा। उसने आसपास के परगने विभिन्न अफसरों को दे दिये। सिकन्दर खां ने आगे बढ़कर सरहिन्द पर कब्जा कर लिया। परन्तु जब दिल्ली से तातार खां आदि बड़े-बड़े अफसर आ पहुंचे तो सिकन्दर खां वहां नहीं टिक सका। बैराम खां को सिकन्दर का पीछे हटना पसन्द नहीं आया। फिर बादशाह जालन्धर से आगे बढ़ा। माचीवाड़ा की सीमा पर पहुंचने पर उसको सलाह दी गई कि सतलज नदी को पार करना ठीक नहीं है क्योंकि वर्षात्रृतु निकट है, अभी तो नावों पर कब्जा कर लेना चाहिये परन्तु बैराम खां ने उसी समय नदी पार करना ठीक समझा। फिर बड़े-बड़े सैनिक अधिकारियों के प्रयास से बैराम खां ने नदी पार कर ली। तब अन्य अफसर भी पार हो गये। फिर शाही सेना का व्यूह बनाया गया। जब अफगानों ने सुना कि शाही सेना थोड़ी-सी है तो उनकी एक बड़ी सेना आगे आई। सायंकाल बड़ी लड़ाई हुई। सबने वीर कार्य किये परन्तु तब रात हो गई। फिर संयोगवश गांव के फूस के घरों में आग लग गई इससे उजाला हो गया और विजयी वीरों को शत्रु की स्थिति का ठीक पता लग गया और वे जोर से तीर चलाने लगे। जब तीन पहर रात व्यतीत हो गई तो शाही सेना को बड़ी विजय प्राप्त हो गई। अगले दिन आगे बढ़कर सेना सरहिन्द ठहरी।

एक आश्चर्यजनक बात यह हुई कि जब बादशाह ने सुना कि तातार खां एक बड़ी और सुसज्जित सेना लेकर माचीवाड़ा आ पहुंचा है परन्तु कुछ दिन बाद ही बादशाह को विजय की खबर व लूट का माल मिला।

जब सिकन्दर ने यह खबर सुनी तो 40,000 घुड़सवारों के साथ उसने शाही सेना पर कूच की। बैराम खां सरहिन्द में ही ठहरा और दुर्गरक्षा का उसने प्रबन्ध किया। वह बादशाह के पास सन्देश भेजता रहा कि शीघ्रता से प्रयाण करे। उस समय बादशाह उदरशूल से पीड़ित था। इसलिए उसने अकबर को भेज दिया। फिर लाहौर में शिकदार और पंजाब में फौजदार नियुक्त करके बादशाह आगे बढ़ा। 29 मई, 1555 को वह सरहिन्द पहुंचा जहाँ अफसरों ने उसका स्वागत किया। 15 दिन से वहां लड़ाई चल रही थी और शाही सेना डटी हुई थी। अब सेना के 4 भाग बनाए गये। जब लड़ाई हुई तो दोनों पक्षों के लोगों ने बड़े वीर कार्य किये, परन्तु शत्रु पराजय हो गया।

***

प्रकरण 59

चमत्कारों का प्रकट होना

इसी समय काबुल से ख्वाजा अम्बर नाजिर आया। उसको अकबर के पास नियुक्त किया गया। वह अकबर को भारत के रीति-रिवाज समझाया करता था जो अकबर को पसन्द आते थे। यहीं सर्वप्रथम अकबर ने चीते के द्वारा शिकार किया था।

हुमायूं ने 40 दिन तक लड़ाई लड़ी। अन्त में 22 जून, 1555 को अकबर ख्वाजा मोअज्जम और अतगा खां ने आगे बढ़कर बड़े वीर कार्य किये, दूसरी ओर काला पहाड़ ने लड़ाई की। शाही सैनिकों ने चारों ओर से आगे बढ़कर लड़ाई की। अकबर के सौभांग्य से बड़ी विजय प्राप्त हुई और बड़ा माल हाथ लगा। सिकन्दर भागकर पंजाब के दायने कोह में चला गया। हुमायूं बड़े शान्त भाव से लड़ा और विजय प्राप्ति पर उसने ईश्वर को धन्यवाद दिया। यद्यपि बाबर ने भी भारत पर बड़ी विजय प्राप्त की थी परन्तु वह विजय इस विजय के बराबर चमत्कारी नहीं थी। यह विजय थोड़े-से आदमियों ने विशाल सेना पर प्राप्त की थी। लड़ाई के समय भारी आंधी और वर्षा होने लगी थी। वास्तव में पिछले समय में ऐसी विजय कभी नहीं हुई थी। वर्षा और आंधी के कारण शत्रु का पीछा नहीं किया जा सका था।

जब ऐसी विजय प्राप्त हो गई तो बादशाह ने सोचा कि इस विजय की घोषणा किस नाम से की जाये। शाह अबुल मआली ने चाहा कि इस विजय का श्रेय उसको दिया जाये। बैराम खां का कहना था कि इसी के कारण बादशाह भारत में आया है और उसी ने कई देश जीते हैं इसलिये वह चाहता था कि घोषणा में उसका नाम लिखा जाये। अन्त में बादशाह ने निश्चय किया कि विजय का श्रेय अकबर को दिया जाये। इनसे सबको हर्ष हुआ।

उसी समय ख्वाजा मुअज्जम के हाथ का एक पत्र बादशाह के हाथ में आया। उसने सिकन्दर को लिखा था कि मैं आपका हितैषी हूँ। बादशाह ने इसका कारण पूछा तो ख्वाजा ने कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं दिया। तब बादशाह ने उसको कैद करके मीर काली के हवाले कर दिया। सरहिन्द की व्यवस्था करके बादशाह ने सामाना के मार्ग से दिल्ली की ओर कूच किया। सामाना पहुंच कर बादशाह ने अबुल मआली और मुहम्मद कुली खां, बिरलास इस्माइल बेग दुलदाई आदि और अन्य लोगों को लाहौर भेजा और उन्हें आदेश दिया कि यदि सिकन्दर पहाड़ियों से निकलकर मैदान में आये तो उसको रोका जाये। पंजाब का शासन शाह अबुल मआली के सुपुर्द किया गया। अभी वर्षा हो रही थी इसलिये बादशाह उस दिन सामाना में ठहरा। फिर खबर आई कि शत्रु भाग गया है तो बादशाह ने सामाना से प्रस्थान किया और 20 जुलाई, 1555 को वह दिल्ली के उत्तर में जमुना के तट पर सलीमगढ़ पहुंच गया। इसी मास (रमजान) के चौथे दिन उसने नगर में प्रवेश किया और (खिलाफत के) तख्त पर बैठ गया।

फिर खिलाफत के छोटे और बड़े अधिकारियों को पद प्राप्त हुए। सरकार हिसार और उसके पास का परगना अकबर के सेवकों को (अर्थात् उसी को) जागीर में दिया गया। बैराम खां को सरहिन्द और अन्य परगने दिये गये। तार्दी बेग खां को मेवात, सिकन्दर खां को आगरा, अली कुली खां को सम्बल और हैदर मुहम्मद खां अखता बेगी को बयाना दिये गये। बादशाह दिल्ली दुर्ग में रहने लगा। वह सदा ईश्वर की आज्ञा मानता था और खिलाफत के तख्त को अलंकृत करता था।

शाह वली अतका काबुल से आया। उसने महिलाओं का कुशल समाचार सुनाया और प्रशासन का विवरण बतलाया। उसने यह भी सुखद खबर सुनाई कि ईश्वर की दया से माह जूजक ने एक पुत्र को जन्म दिया है। बादशाह ने इस बालक का नाम फर्रुख फाल रखा और शाह वली को सुल्तान की उपाधि दी। तथा ईश्वर को धन्यवाद दिया और बहुत बड़ा भोज दिया।

रुस्तम खां से युद्ध

रुस्तम खां अफगानों का एक मुखिया था। अतका खां और कितने ही शाही सेवक जब हिसार की ओर गये तो खुर्दाद शहरीयूर अर्थात् 25 रमजान को हिसार से दो कोस की दूरी पर ठहर गये। तब हिसार से रुस्तम खां, तातार खां आदि अफगान निकले और लड़ने को तैयार हो गये। अफगानों की संख्या दो हजार और शाही सेवकों की संख्या चार सौ थी परन्तु जब लड़ाई हुई तो शाही सेना की विजय हुई। शत्रु के सत्तर आदमी मारे गये। रुस्तम खां भागकर हिसार के दुर्ग में चला गया। तब शाही सेवकों ने दुर्ग घेर लिया। 23 दिन बाद रुस्तम खां की स्थिति कठिन हो गई और उसने आत्मसमर्पण कर दिया। तब 700 अफगानों को और उसको मील लतीफ और ख्वाजा कासिम मखलश के सुपुर्द करके उन्हें बादशाह के पास भेज दिया गया। बादशाह ने आदेश दिया कि रुस्तम खां को जागीर दे दी जाये। परन्तु उसके पुत्रों पर विक्राम में चौकसी रखी जावे। रुस्तम खां ने यह शर्त नहीं मानी और भाग जाना चाहा। तब उसको कैद कर लिया गया।

कम्बर दीवाना का उत्पात

कम्बर दीवाना एक साधारण-सा व्यक्ति था। सरहिन्द की विजय प्राप्त करके जब बादशाह ने दिल्ली की ओर प्रस्थान किया तो कम्बर कुछ आदमियों को एकत्रित करके लूटमार करने लगा। साथ ही बादशाह को भी पत्र लिखता रहा कि मैं आज्ञा पालक हूं। सरहिन्द से आगे बढ़कर उसने सम्बल पर अधिकार कर लिया। वहां से अपने दत्तक पुत्र को बदायूं भेजा, जिसने वहां के अफगान अधिकारी को मार डाला। फिर कम्बर अली कान्त गोला पहुंचा और उस देश को नष्ट किया। वहाँ रुकन खां अफगान से लड़ाई हुई तो कम्बर दीवाना हार गया। फिर वह बदायूं आ गया। वह लोगों को खान और सुल्तान की उपाधियां देने लगा। इसके बाद वह पागल की-सी चेष्टायें करने लगा। तब बादशह ने अली कुली खां शेवानी को आदेश दिया कि कम्बर को पकड़कर दरबार में भेजा जाये और यदि वह सामना करे तो उसे दण्ड दिया जाये। अली कुली बदायूं गया और उसने कम्बर को बुलाया परन्तु वह नहीं आया और

कहा कि जैसे आप बादशाह के सेवक हैं उसी प्रकार मैं भी उसका सेवक हूं। मैंने यह प्रान्त तलवार के बल से लिया। अन्त में अली कुली ने युद्ध किया तो कम्बर दीवाना हार कर बदायूं चला गया। यह समाचार सुनकर बादशाह ने कासिम मखलश को रवाना किया कि कम्बर के प्रति कृपा प्रकट करके उसे तख्त का चुम्बन करने के लिये लाया जाये। परन्तु कासिम मखलश के बदायूं पहुंचने से पहिले ही अली कुली खां ने कम्बर को मार डाला था। अली कुली ने उसका सिर दरबार में भेज दिया। बादशाह को इससे बड़ा दुःख हुआ और अली कुली खां के नाम एक फरमान भेजा जिसमें उसको लताड़ा गया कि बिना आदेश के उसकों क्यों मारा गया?

मिर्जा सुलेमान की कृतघ्नता

जब बादशाह ने भारत-विजय के लिए प्रयाण किया तो तर्दी बेग खां को जो अन्दराब और ईश्कमिश का जागीरदार था, आदेश हुआ कि वह भी शामिल होवे। तब मुकीम खां को अपनी जागीर की देखरेख करने के लिए छोड़ कर तर्दी बेग खां बादशाह की सेना में आ गया। यह अवसर देखकर मिर्जा सुलेमान ने पहले तो मुकीम खां को अपनी ओर मिलाना चाहा। जब यह न हो सका तो अन्दराब को घेर लिया। मुकीम खां लड़ता हुआ बाहर निकल कर दिल्ली आ गया।

गाजी खां का वध

गाजी खां इब्राहीम का पिता था। इब्राहीम को राजसिंहासन की बड़ी अभिलाषा थी। जब हैदर मुहम्मद खां को बयाना भेजा गया तो गाजी खां ने जो वहां का फौजदार था, सामना नहीं किया और दुर्ग में शरण ली। हैदर मुहम्मद ने अनेक प्रकार के वायदे किये तो वह बाहर आया परन्तु हैदर मुहम्मद ने लोभवश वचनभंग करके उसका सामान छीन लिया और उसको मरवा डाला। बादशाह को यह कार्य पसन्द नहीं आया। उसने शिहाबुद्दीन अहमद खां को गाजी खां की सम्पत्ति का व्यौरा लिखने के लिए भेजा।

***

प्रकरण 60

बादशाह हुमायूं के आदेश से अकबर का पंजाब को प्रयाण

बादशाह को खबरें मिला करती थीं कि शाह अबुल मआली लोगों को दुःख देता है और बादशाह के आदेश के प्रतिकूल कार्य करता है। फिर खबर आई कि सिकन्दर पहाड़ियों

से निकल आया है। तब बादशाह ने निश्चय किया कि पंजाब अकबर के सुपुर्द कर दिया जावे और अबुल मआली की हिसार और उसके पास के परगने दे दिये जायें। इसके अतिरिक्त इन दिनों काबुल से शाही महिलायें बुलाई जा रही थीं इसलिये यह आवश्यक था कि पंजाब अकबर के सेवकों के हाथ में होना चाहिये। नवम्बर, 1555 में अकबर को पंजाब का शासन सौंपा गया और बैरम खां को उसका संरक्षक नियुक्त किया गया।

जब ये लोग सरहिन्द पहुंचे तो उस्ताद अजीज सीस्तानी जिसको रूमी खां को उपाधि थी, अकबर की सेवा में आया। रूमी खां तोपें चलाने में बड़ा निपुण था। अकबर के पास आने के बाद उसकी कुशलता और बढ़ गई।

***

प्रकरण 61

बादशाह हुमायूं का संक्षिप्त वृत्तांत, उसके कुछ आविष्कारों और विनियमों का वर्णन

हुमायूं का विचार था कि दिल्ली, आगरा, जौनपुर, मांडू, लाहौर, कन्नौज और अन्य उपयुक्त स्थानों को राजधानियां बनाकर वहाँ सेनायें रखी जायें और बादशाह के पास बारह हजार सवार रहे। वह चाहता था कि शाहजादों के लिये और उच्च पदाधिकारियों के लिये सोने की कुर्सियां बनाई जायें क्योंकि सम्मान वृद्धि से ही लोग उच्च पदों की ओर आकर्षित होते हैं।

शकुन

एक दिन हुमायूं मौलाना रुह उल्ला के साथ मैदान में जा रहा था तो उसने कहा— ''मैं तीन आदमियों के नाम से शकुन लेना चाहता हूं। तब अपने राज्य की नींव डालूंगा।'' कुछ दूर जाने पर एक प्रौढ़ पुरुष मिला, जिसने पूछने पर अपना नाम मुरांद ख्वाजा बतलाया। दूसरे आदमी ने भी पूछने पर अपना नाम दौलत ख्वाजा बतलाया तब हुमायूं ने कहा—यदि तीसरे आदमी का नाम शादत ख्वाजा हो तो बड़ा शुभ शकुन होगा। तीसरा आदमी पशु चराता हुआ मिला। उसने अपना नाम शादत्त ख्वाजा बतलाया। तब साथ के लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ और उनको विश्वास हो गया कि हुमायूं को उच्च पद और राज्य प्राप्त होगा।

सल्तनत के लोगों के तीन वर्ग

बादशाह ने अपने राज्य के लोगों को तीन भागों में विभक्त किया। उसके भाई बन्धु-बान्धव, उच्चाधिकारी, मंत्री और सैनिक, अहल-ए-दौलत कहलाते थे। दार्शनिक, उलमा,

सदूर, सैयद, शेख, काजी, कवि, विद्वान्, न्यायाधीश और कुशल लोगों को अलह-ए-सआदत कहा जाता था। गृह स्वरूपकार, चित्रकार, गायक और कलाविद् अहल-ए-मुराद कहलाते थे। इसी प्रकार हुमायूं ने सप्ताह के दिन भी इन तीनों श्रेणियों में विभक्त कर दिये थे। शनि और बृहस्पति अहल-ए-सआदत के लिये था। इन दो दिनों में वह ज्ञान और भक्ति की ओर विशेष ध्यान देता था। वह शनि को शेखों का और प्राचीन परिवारों का समपोषक मानता था। बृहस्पति को वह विद्वानों और दूसरे सज्जनों का तारा मानता था। रविवार और मंगलवार अहल-ए-दौलत के लिये रखे गये थे। इन दिनों में सरकारी राजकाज देखा जाता था। वह सूर्य को राजसत्ता का नियामक और मंगल को सैनिकों का संरक्षक मानता था। सोमवार और बुद्धवार आनन्द के दिन माने गये थे। इन दिनों पर आनन्द प्रमोद हुआ करता था। शुक्रवार का सब विषयों से सम्बन्ध था। इसमें सब वर्ग के लोग सम्मिलित हुआ करते थे।

बादशाह ने सोने के तीन तीर बनवाये थे। उपरोक्त तीनों वर्गों के मुखियाओं को एक-एक तीर दिया गया था। यह तीरधारी व्यक्ति अपने-अपने वर्ग के लोगों के कार्यों का निरीक्षण किया करता था। उसका काम ठीक होता था, तब ही तक उसके हाथ में सत्ता रहती थी और जब वह अपने कर्त्तव्य-पथ से डिगता था तो उसको पद से हटा दिया जाता था। मीर ख्वान्द ने लिखा है कि उसके समय में सआदत का तीर सर्वोत्तम विद्वान् मौलाना फरगली को दिया गया था। दौलत का तीर अमीर हिन्दू बेग को प्रदान किया गया था और मुराद का तीर अमीर वैसी को मिला था।

हुमायूं ने बारह प्रकार के तीर बनवाये थे। प्रत्येक वर्ग को एक तीर दिया गया था। बारहवां तीर शुद्ध सोने का था यह हुमायूं और अकबर के लिये था। ग्यारहवां तीर बादशाह के भाईयों, रिश्तेदारों आदि के लिये था। दसवां तीर सैयदों, शेखों और उलमाओं का था। नवा तीर बड़े-बड़े अफसरों का था। आठवां तीर घनिष्ठ मित्रों और मनसबदारों का था। सातवां तीर अंकचियान या बड़े-बड़े लेखकों के लिये था। छठा तीर जातियों के मुखियों के लिये था। पांचवां तीर युवक स्वयं सेवकों के लिये था। चौथा खजांचियों का, तीसरा सैनिकों का, दूसरा दास-दासियों का और पहिला दरबान चौकीदारों के लिये था।

बादशाह ने साम्राज्य के विभाग चार तत्वों के अनुसार विभक्त किये थे। ये चार तत्व अग्नि, वायु, जल और पृथ्वी माने गये थे। प्रत्येक वर्ग के लिये एक वजीर नियुक्त किया गया था। तापखाना कवच, शस्त्र आदि अग्नि विभाग में सम्मिलित थे। इसका वजीर अब्दुल मुल्क था। वस्त्रागार, भोजनागार, तबेले वायु विभाग में माने गये थे। इनका वजीर ख्वाजा लतीफ उल्ला नियुक्त किया गया था। मद्य और नहरों का विभाग जल विभाग कहलाता था इसका वजीर ख्वाजा हसन था। कृषि, गृह-निर्माण, राजकोष आदि पृथ्वी विभाग में थे। इनका वजीर ख्वाजा जलालुद्दीनं मिर्जा बेग था। प्रत्येक विभाग में एक अमीर नियुक्त किया गया था।

जमुना नदी पर चार बड़ी-बड़ी नावें बनाई गई थीं। इनके निर्माण के लिये बड़े कुशल बढ़ई नियुक्त किये गये थे। प्रत्येक नाव में दो मंजिला और सुन्दर आकार वाला एक

समचतुष्कोण कमरा बनाया गया था। फिर नावों को इस प्रकार जोड़ा गया था कि ये कमरे-एक-दूसरे के सामने थे। प्रति दो कमरों के बीच एक चबुतरा बनाया गया था एवं दो नावों के बीच में एक अष्टकोण तालाब दिखाई देता था।

939 हिज्री, 1532-33 ई० में जब बादशाह दिल्ली से आगरा नदी के मार्ग से गया तो उसके साथ अधिकांश अमीर और राज्य के स्तम्भभूत अधिकारी थे। तब नावों पर एक बाजार बनाया गया जो जमुना नदी में साथ-साथ चला जो कोई भी कोई वस्तु खरीदना चाहता था वहाँ खरीद सकता था। इसी प्रकार बादशाह के आदेश से शाही बागवानों ने नदी पर एक बाग और एक चलती हुई पुल बनवाई। इसी प्रकार के एक महल का भी निर्माण करवाया जिसमें तीन खण्ड थे। यह ऐसी कारीगरी से बनाया गया था कि सारा एक ही खण्ड मालूम होता था। इसको तोड़कर दूसरे देश में भी ले जाया जा सकता था।

हुमायूं ने एक ताज भी बड़ा सुन्दर बनाया था। इसका आविष्कार उसने बदख्शां में किया था। इसको पहन कर जब वह बाबर के सामने आगरे में उपस्थित हुआ तो बाबर बड़ा प्रसन्न हुआ था।

हुमायूं ने एक ऐसा डेरा बनवाया था जिसमें सूर्य की 12 राशियों के अनुसार 12 भाग थे। इसी प्रकार एक बसात ए-निशात अर्थात् आनन्दकालीन बनाया गया था। इसकी प्रथम परिधि सफेद, दूसरी नीली, तीसरी काली, चौथी सन्दली, पांचवीं लाल, छठी सुनहरी, सातवीं हरी, आठवीं सोसनी थी। नवीं सफेद इन पर अधिकारियों को नक्षत्रों के अनुसार बिठाया जाता था। इसी प्रकार कपड़ों का रंग भी निश्चित किया गया था। रविवार के दिन पीले, सोमवार के दिन हरे और इसी प्रकार दूसरे दिनों पर उस दिन के नक्षत्र के रंग के कपड़े पहने जाते थे। हुमायूं ने एक न्याय का ढोल भी बनवाया था। विवाद के समय इस ढोल को एक बार दु:ख के समय का वेतन न मिलने पर दो बार, बलात् सामान छिन जाने पर तीन बार और रक्तपात के समय इसको चार बार बजाया जाता था।

***

प्रकरण 62

बादशाह हुमायूं को मृत्यु का आभास होना और उसकी मृत्यु

अकबर को पंजाब के लिये विदा किया तभी से हुमायूं परलोक यात्रा की चर्चा बार-बार किया करता था। वह ऐसी चर्चा को अनुचित मानता था परन्तु अब मृत्यु की बातें खूब करता था। दिल्ली के मजारों को देखकर वह कहा करता था कि ये कितने मधुर हैं।

जब उसकी मृत्यु निकट थी तो उसने अपने कई परिचित लोगों से कहा था कि मेरी जबान पर बार-बार ये शब्द आते हैं कि हे प्रभु, मुझे अपना लो और अपने गुणों का ज्ञान करवाओ, तर्क ने मेरी आत्मा को अपंग कर दिया है। मुझे अपना मतवाला मानकर मुक्त कर दो।

जब मृत्यु सन्निकट आने लगी तो हुमायूं ने अफीम खाना भी कम कर दिया। एक बार जब उसका अन्त निकट था तो उसने अपने घनिष्ट मित्रों से कहा—''जरा देखिये, दो-तीन दिन के लिये अफीम की कितनी गोलियां चाहिये। उसने सात दिन की गोलियां गिनकर अपने निजी सेवकों को दीं और कहा बस इतनी ही गोलियों की आवश्यकता है।''

शुक्रबार रबी-उल-अव्वल 963 हिज्री शाह बुदाग आलम शाह बेग मुल्क और अन्य लोग जो हज करके वापस लौटे थे तथा चगताई खां और गुजरात से आये हुए कुछ लोग बादशाह के पास आये पहलवान दोस्त मीर बर, मौलाना असर काबुल से मुनीम खां का प्रार्थना-पत्र लेकर आये। सांयकाल बादशाह नवनिर्मित पुस्तकालय की छत पर चढ़ा और वहाँ से उन लोगों को आशीर्वाद दिया जो प्रधान मस्जिद में एकत्रित हुए थे। बड़ी देर तक वह मक्का, गुजरात और काबुल के विषय में प्रश्न पूछता रहा। इसके पश्चात् उसने गणितज्ञों को बुलाया। उसका ख्याल था कि शुक्र का उदय होने वाला है। वह उसको देखना चाहता था। उसका विचार था कि जब शुक्र का उदय होगा तो वह एक बहुत बड़ा दरबार करके अधिकारियों की वेतन-वृद्धि करेगा। जब सांयकाल होने लगा तो उसने नीचे उतरना चाहा। जब वह दूसरी सीढ़ी पर आया तो उसने मिस्कीन नामक एक मुकरी की अजान सुनी। अभी इसका समय नहीं था फिर भी अजान को आदर के निमित्त बादशाह ने जहाँ का तहाँ ही बैठना चाहा। जीने की सीढ़ियां तेज थी और पत्थर चिकने थे इसलिये उसका एक पैर बैठते-बैठते जामे में फंस गया और उसकी छड़ी फिसल गई। वह अपने पैर नहीं जमा सका और सिर के बल गिर पड़ा। उसकी दायीं कनपटी में बड़ी चोट आयी और उसके दायें कान में से खून की कुछ बूंदे गिरीं। उसने तत्काल ही अकबर के नाम पत्र लिखा और नजरे शेख कुली के हाथ भेजा।

उस स्थान पर उपस्थित राजभक्त लोगों ने इस भयंकर दुर्घटना को छिपाने के लिये और खिलाफत की मसनद के उत्तराधिकारी को इसके समाचार भेजने के तथा साम्राज्य के विभिन्न भागों के अधिकारियों को एकत्रित करने के उपाय किये। उन्होंने 17 दिन तक इस घटना को जनता से छिपये रखा। जो लोग दरबार में उपस्थित थे और जो खिलाफत के सलाहकार थे अर्थात् खिजर ख्वाजा खां, अली कुली आदि ने एकत्रित होकर 11 फरवरी, 1556 को अकबर के नाम का खुतबा पढ़ा। जिन दिनों में मृत्यु की घटना गुप्त रखी गई थी तब मुल्ला बेकसी को हुमायूं के कपड़े पहिना कर महल की उस छत पर बिठा दिया गया, जहाँ बादशाह बैठा करता था। लोगों ने उसको सलाम किया और उन्हें कुछ शान्ति प्राप्त हुई।

सान्त्वना और बधाई देने के पश्चात जो शाही सेवक दिल्ली में एकत्रित थे, अपने-अपने स्थान पर चले गये। तर्दी बेग खां दिल्ली में था। उसको नगर की व्यवस्था करनी थी,

गुलाम अली अगुस्त उसके साथ था। मिर्जा कामरान के पुत्र मिर्जा अबुल कासिम को भी अकबर के पास स्वामिभक्ति प्रकट करने के लिए भेजा गया था।

***

प्रकरण 63

पंजाब के प्रस्थान से राज्यारोहण तक की अकबर सम्बन्धी घटनायें

जब अकबर पंजाब के लिये रवाना हुआ तो हिसार फिरोजा से अतका खां और अन्य सेवक उसकी सेवा में उपस्थित हुए। उनको इस प्रस्थान की सूचना भेज दी गई थी। जब अकबर का सामान सरहिन्द पहुंचा तो वे सारे शाही सेवक जो शाह अबुल मआली के साथ थे उससे छुट्टी लिये बिना ही अकबर की सेवा में उपस्थित हो गये; क्योंकि उस नवयुवक के कारण उनको बड़ा कष्ट था। इन लोगों में मुहम्मद कुली खां बरलास मुसाहिब बेग आदि कई बड़े-बड़े अमीर थे। उनका अनुकूल स्वागत किया गया। जब शाही सेना ने पहाड़ियों के पास अपना शिविर लगाया तो उसको देखकर सिकन्दर, जो बाहर निकल आया था, पीछे पहाड़ियों में जा छिपा। जब यह सूचना निश्चित रूप से मिल गई कि बादशाह ने पंजाब अकबर के सुपुर्द कर दिया है और वह पंजाब आ रहा है तो अबुल मआली को विवश होकर कुछ सेना के साथ सुल्तानपुर की नदी के तट पर स्वागत करने के लिये आना पड़ा। अकबर ने अबुल मआली से कहलाया कि दरबार में वह अपने स्थान पर बैठे परन्तु उसमें बड़ा दम्भ था। इसलिये वह छुट्टी लेकर अपने निवास पर चला गया और वहाँ से अकबर के नाम यह सन्देश भेजा—संसार जानता है कि बादशाह हुमायूं के पास मेरा क्या स्थान है। आपको भी याद होगा कि कमरगाह (आखेट वृत्त) में जो जूई शाही में किया गया था, मैंने बादशाह के साथ एक ही स्थान पर बैठकर एक ही थाल में खाना खाया था। आप भी वहाँ उपस्थित थे। आपका भोजन आपको भेज दिया गया था। मेरे इस पद पर विचार करके न जाने क्यों जब मैं आपसे मिलने आया तो आपने मुझे अलग कालीन पर बैठाया और मेरे लिए जुदा दस्तरखान लगवाया। अकबर इस अज्ञान पर मुसकुराया और सन्देश लाने वाले हाजी शीशतानी से कहा ''उससे कहना कि सल्तनत के नियम एक बात है और स्नेह के नियम दूसरी बात है। मेरे पास तुम्हारा वह स्थान नहीं है जो बादशाह के पास है। यह आश्चर्य की बात है कि तुम इन दोनों स्थितियों को जुदी-जुदी नहीं मानते हो।'' तब मीर बड़ा लज्जित हुआ।

फिर सिकन्दर को निर्मूल करने के लिए जो उस समय मानकोट के पास बतलाया जाता था, अकबर ने पहाड़ियों की ओर कूच किया।

जब शाही सेना हरियाना के निकट थी तो एक शीघ्रगामी सवार ने आकर बादशाह के गिर पड़ने की बैराम खां को खबर दी। बैराम खां ने उचित नहीं समझा कि आगे बढ़ा जाये और कालानूर तक सेना को ले जाकर कुछ दिन के लिये वहाँ ठहर गया। कालानूर के पास नाजिर शेख कुली ने आकर बादशाह का फरमान प्रस्तुत किया। उसी समय बादशाह की मृत्यु की खबर भी आ गई तो अकबर बड़ा रोया। बैराम खां, अतका खां और माहम अनगा ने उसको सान्त्वना दी।

हुमायूं को विविध विद्याओं का बड़ा ज्ञान था और विविध विज्ञानों में उसकी गति थी, विशेष कर गणित शास्त्र में। उसको दार्शनिक लोगों की संगति में आनन्द मिलता था, वह वेधशालायें बनवाना चाहता था। इसके निमित्त उसने स्थान चुन लिये थे और सामग्री जुटा ली थी। उसको काव्य और कवियों से भी प्रेम था। समय मिलने पर वह काव्य-रचना किया करता था। उसका दीवान शाही पुस्तकालय में है।

***

भाग 2

(राज्याभिषेक से शाहजादा
दनियाल के जन्म तक)
1556 से 1562 तक

प्रकरण 1

अकबर का राज्याभिषेक

तारीख 2 रबी-उल-सानी 963 हिज्री को (14 या 15 फरवरी, 1556) कालानूर [1] में अकबर को तख्त पर बिठाया गया। सब लोगों ने उसको बधाइयां दीं। फरमान में उसकी उपाधि शाहिनशाह लिखी गई। वहीं एक टकसाल स्थापित की गई, जिसमें कई प्रकार के सिक्के बनने लगे। सरदारों ने और सेनापतियों तथा साम्राज्य के अन्य स्तम्भों ने शाहिनशाह के प्रति स्वामिभक्ति प्रकट की। बैराम खां खानखाना अकबर की कृपा से वकील-अस-सल्तनत नियुक्त हुआ। सल्तनत का सारा प्रबन्ध, सेना का संगठन और संचालन उसके सुपुर्द कर दिया गया। साम्राज्य के अन्य अफसरों को भी जो विभिन्न प्रान्तों में नियुक्त थे, अपने-अपने पदों के अनुसार सम्मान प्राप्त हुआ।

***

प्रकरण 2, 3, 4

शासन संवत्

अकबर ने अपने राज्याभिषेक से एक नया संवत् चलाया जिसका नाम तारीख-ए-ईलाही (ईश्वरीय सम्वत्) रखा गया। ईरानी मास ही इस सम्वत् के मास माने गये और दिनों के नाम भी ईरानी ही रखे गये। अकबर ने अधिक मास के दिन निकलवा दिये और मास चन्द्र नहीं सौर माने जाने लगे। ईलाही संवत् का प्रारम्भ 992 हिज्री (1584) में किया गया था परन्तु अकबर के राज्यकाल में उसके राज्याभिषेक के दिन से जो भी घटनायें हुईं उनको फिर इलाही संवत् में लिखा गया।

***

1. यह कस्बा गुरदासपुर से 15 मील पश्चिम में स्थित है। लाहौर के प्राचीन राजाओं का राज्याभिषेक यहीं हुआ करता था।

प्रकरण 5

उस समय की राजनैतिक स्थिति

उस समय बदख्शां सुलेमान के सुपुर्द था, जो खान मिर्जा का पुत्र था। काबुल, गजनी और हिन्दूकुश से सिन्धु नदी तक का प्रदेश मुनीम खां के सुपुर्द था। यह सरदार न्यायशीलता के लिये प्रसिद्ध था। यह ऐसी अच्छी सेवा करता था कि मुहम्मद हकीम और महिलायें वहाँ शान्ति और सुख से रहती थी। कन्धार और उसके अधीन इलाके बैराम खां की जागीर में थे परन्तु वहाँ का काम किलात का शाह मुहम्मद करता था। उसके साहस और शौर्य के कारण इस प्रदेश में कोई गड़बड़ नहीं हो सकती थी। राजधानी दिल्ली के प्रशासन का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है। आगरा भी राजधानी था। यह नगर और पास के इलाके इसकन्दर खां उजबेक के अधीन थे और वहाँ शान्ति थी। सम्भल का शासक अली कुली सेवानी था। सरकार काल्पी अब्दुल्ला खां उलबेग के सुपुर्द था। तार्दी बेग खां के सेवक मेवात में शान्ति की रक्षा करत थे। किया खां कोलजलाली (अलीगढ़) का हाकिम था। बयाना का हाकिम हैदर मुहम्मद खां था। दरबार के सब सेवकों के नाम नये फरमान जारी हुए जिनमें लिखा था कि हमने सब सेवकों की जायदादें पूर्ववत् रहने दी हैं, जिससे उनकी स्वामिभक्ति प्रकट हो सके। भविष्य में उनकी पदोन्नति की जायेगी। अभी अकबर बाहर नहीं निकलता था। वह चुपके-चुपके सब लोगों के कार्यों को देखना चाहता था। राजकाज सारा बैराम खां करता था।

***

प्रकरण 6

अबुल मआली को कारागार में रखा

शाह अबुल-मआली ने बादशाह हुमायूं की सुदीर्घ सेवा की थी। अब अकबर अपने पिता की गद्दी पर बैठा तो अबुल-मआली के दिमाग में विचित्र विचार आने लगे। अभी अकबर राजकाज नहीं देखता था और शासन का सूत्र बैराम खां खानखाना के हाथ में था। अबुल मआली में राजद्रोह के विचार उत्पन्न होने लगे। राज्याभिषेक के तीन दिन बाद उसी (कालानूर) स्थान पर बहुत बड़ा समारोह होने वाला था। अबुल मआली के पास सन्देश भेजा गया कि इस अवसर पर प्रशासनिक और वित्तीय विषयों पर विचार किया जायेगा इसलिए उसकी उपस्थिति आवश्यक है। परन्तु दम्भी मआली नहीं आया और यह बहाना किया कि "मैं अभी हुमायूं बादशाह की मृत्यु पर शोक मना रहा हूं, और मान लिया जाये कि मैं आऊं तो बादशाह अकबर मेरे साथ कैसा बर्ताव करेगा और इस समारोह

में मुझे किस स्थान पर बैठाया जायेगा और मेरे स्वागत के लिए कौन-कौन अधिकारी आयेंगे।'' जब उससे कहलाया गया कि उसका आना आवश्यक है तो उसने उत्तर दिया कि स्वर्गीय बादशाह मेरा बड़ा लिहाज करता था। फिर कुछ शर्तें करके वह उपस्थित हुआ और शाहिनशाह की दायीं ओर बैठा। जब भोजन परोसा जा रहा था तो उसने अपने दोनों हाथ धोने के लिये आगे बढ़ाये तो पीछे से तोलक खां कूचीन ने उसको पकड़कर बन्दी बना लिया। दूसरे लोगों ने भी कूचीन की सहायता की। शाह अबुल मआंली ने विवश होकर आत्म-समर्पण कर दिया। उसके साथियों ने शाही सेवा स्वीकार कर ली। मआली का वध नहीं करवाया गया; क्योंकि ऐसा किया जाता तो लोग समझते कि शाहिनशाह क्रूरता करता है। उसको बेड़ियां पहना कर लाहौर भेज दिया और वहाँ उसको कोतवाल के सुपुर्द कर दिया गया। इस कोतवाल का नाम पहलवान गुलगज था। इसने या तो कर्त्तव्य की उपेक्षा की या उसके विचार दुष्ट होंगे। अत: इसने मआली पर पर्याप्त निगरानी नहीं रखी। अत: वह कारागार से भाग गया। अबुल मआली को कारावास में रखने की खबर सुनकर मनीष खां जिसके सुपुर्द काबुलिस्तान का शासन था, प्रसन्न हुआ और तरकीब करके उसने अबुल मआली के भाई मीर हाशिम को बुलाया जो कहमर्द, घोर बन्द, जुबहाक आदि का जागीरदार था। मुनीम खां ने मीर हाशिम को कारागार में रख दिया।

***

प्रकरण 7

इलाही संवत् का आरम्भ

राज्याभिषेक के 25 दिन पश्चात् अर्थात् बुधवार 28, रबी-उस-सानी, 963 हिज्री को नौ-रोजा था। पिछले और वर्तमान बुद्धिमान लोग इस पर सहमत हैं कि यदि कोई शुभ घटना से नया संवत् शुरू किया जाये तो उसका आरम्भ लगभग नौरोजा से होना चाहिये। यह घटना कुछ आगे या पीछे हुई हो उसका विचार नहीं किया जाये। अकबर का राज्याभिषेक नौरोजा से 25 दिन पहले हुआ था। तथापि नये संवत् का आरम्भ नौरोजा से ही मान लिया गया। इसलिये इलाही संवत् का आरम्भ बसन्त ऋतु से होता है।

शाहिनशाह ने प्रथम इलाही संवत् में ही कई कर उठा दिये। इनसे बहुत बड़ी आय होती थी। अभी शाहिनशाह बाहर नहीं आता था इसलिये लोभी अधिकारियों ने इस आदेश को कार्यान्वित नहीं होने दिया। यद्यपि इस आदेश का तत्काल पालन नहीं हुआ तथापि शाहिनशाह का दृढ़ विचार था कि इसको कार्यान्वित किया जाये। अब शाहिनशाह ने राजकाज अपने हाथ में ले लिया है इसलिये इस आदेश का पालन सम्पूर्ण साम्राज्य में किया जाता है। सम्राट् के चतुर सेवकों ने बतलाया कि करों के द्वारा बड़ी आमदनी होती है परन्तु शाहिनशाह ने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया।

अब्दुल लतीफ का आगमन

इसी वर्ष ईरान से अब्दुल लतीफ आया। वह ईरान के विद्वानों में गिना जाता था और उसका स्वभाव प्रशंसनीय था। उसके साथ उसका पुत्र नकीब खां भी था। इन दोनों को शाहिनशाह का बड़ा अनुग्रह प्राप्त हुआ। मीर अब्दुल लतीफ की विज्ञान में अच्छी गति थी। वह बात करने में चतुर था और विश्वसनीय पुरुष था। उसके धार्मिक कट्टर विचार नहीं थे, उदार थे। इसलिये भारत में उसको शिया और ईरान में उसको सुन्नी माना जाता था। वास्तव में वह उदारता की ओर बढ़ता जाता था। इसलिये कट्टर लोग उसकी बुराई किया करते थे।

हाजी खां का दमन

इसी वर्ष हाजी खां ने नारनौल को घेर लिया। ज्योंही बादशाह हुमायूं की मृत्यु की खबर फैली त्योंही एक बड़ी सेनासहित उसने इस दुर्ग को घेर लिया था। वह शेर खां का प्रसिद्ध सेवक था। उस समय राजा बिहारी मल कछावा हाजी खां के साथ था। बादशाह हुमायूं की कृपा से यह सल्तनत का सेवक बना लिया गया था। फिर भारत के राजाओं और रईसों में यह सबसे ऊंचा हो गया और इसके पुत्रों और पौत्रों को ऊंचे-ऊंचे स्थान मिले। इसकी जाति के लोगों ने भी उन्नति की और ऊंचे पद प्राप्त किये। जागीरदार मजनू खां काकशाल नारनौल दुर्ग में बन्द था और दुर्ग सेना की स्थिति बहुत बुरी हो चुकी थी। राजा ने दूरदर्शिता से बीच-बचाव किया। उसने दुर्ग पर कब्जा करके मजनू खां को दरबार में भेज दिया। जब शाहिनशाह का दिल्ली में राज्याभिषेक हुआ तो वहाँ का फौजदार तर्दी बेग खां था, जिसने हाजी खां के विरुद्ध प्रयाण किया और उसको नारनौल से हटा कर मेवात की ओर भगा दिया और उधर भी उसका पीछा किया। उधर बहुत-से दुष्ट और दुराग्रही लोगों को दण्ड देकर तर्दी बेग वापस आ गया और पुनः साहस और समझ से काम करने लगा।

शेख गदाई

इसी समय दिल्ली वाला शेख गदाई कम्बू गुजरात से आकर शाहिनशाह की सेवा करने लगा। जब बैराम खां गुजरात में था तो उसने बैराम खां के प्रति बहुत अच्छा और कृपापूर्ण बर्ताव किया था। अब बैराम खां के हाथ में शासन का सूत्र था इसलिये उसने गदाई को पुरस्कृत किया और प्रतिष्ठित पद पर नियुक्त किया। उसको सदर बना दिया, जिससे उसके दिन सम्मान के साथ व्यतीत हुए और अपने साथियों में उसका अच्छा आदर रहा।

अब्दुल रशीद खां के राजदूत आये

अब्दुल रशीद खां काशगर का शासक था। वह शाहिनशाह के साथ सम्बन्ध रखना चाहता था जिससे उसकी रक्षा होती रहे। बादशाह हुमायूं की भी उस पर कृपा थी। हुमायूं ने भारतवर्ष पर आक्रमण करते समय अपना एक राजदूत काशगर भेजा था। उसका नाम

ख्वाजा अब्दुल बारी था। अब वह वापस आया और उसके साथ अब्दुल रशीद खां ने हुमायूं की मृत्यु पर शोक प्रकट करने के लिये और राज्याभिषेक पर बधाई देने के लिये मिर्जा शरफुद्दीन हुसेन को अपने राजदूत की हैसियत से भेजा। मिर्जा शरफुद्दीन उच्च कुलीन था इसीलिये वह अब्दुल बारी के साथ भेजा गया। वह शाहिनशाह की सेवा करने लग गया और शीघ्र ही ऊंचे पद पर पहुंच गया और अमीरूल उमरा बन गया।

कमाल खां गक्खड़

कालानूर से वापस लौटते समय जब शाहिनशाह का शिविर जालन्धर में था तो कमाल खां गक्खड़ शिविर में आया। यह सुल्तान आदम के छोटे भाई सुल्तान सारंग का पुत्र था। इसने पुरानी राजभक्ति का अनुसरण किया और उसको शाहिनशाही की चरण चौकी का चुम्बन करने का सम्मान प्राप्त हुआ। उसको शाही अनुग्रह मिला और उसको शाही सेवकों में ले लिया गया। जब हेमू के साथ मानकोट आदि स्थानों पर युद्ध हुए तो उसने शाहिनशाह की अच्छी सेवा की। इसलिये बादशाह उस पर विशेष कृपा करने लगा।

***

प्रकरण 8

मिर्जा सुलेमान का विद्रोह

जब शाही सेना जालन्धर में ठहरी हुई थी तो खबर आई कि मिर्जा सुलेमान ने विद्रोह कर दिया है। इसका विवरण इस प्रकार है—जब बादशाह हुमायूं की मृत्यु की खबर काबुल और बदख्शां में पहुंची तो मिर्जा सुलेमान और उसके पुत्र मिर्जा इब्राहीम ने अज्ञान और अनुभवहीनता के कारण या दुर्जनों के बहकाने से विद्रोह कर दिया। इसमें सुलेमान मिर्जा की पत्नी हरम बेगम की भी प्रेरणा थी। उस समय की गड़बड़ को देखकर मिर्जा सुलेमान कहने लगा कि ''बादशाह बनने का मेरा अधिकार है।'' उसके प्रति बादशाह हुमायूं ने बड़े उपकार किये थे परन्तु मिर्जा ने राजभक्ति के बजाय विद्रोह कर दिया। उसने बदख्शां से सेना खड़ी करके काबुल पर आक्रमण किया। उस समय मुनीम खां काबुल का शासक था। उसने दुर्ग की मरम्मत करवाई और मिर्जा सुलेमान की गतिविधि से शाहिनशाह को सूचित किया। मिर्जा ने प्रयाण करके काबुल को घेर लिया तो बड़ी जोर की लड़ाई हुई। मिर्जा सुलेमान के लोगों ने वीरतापूर्वक आक्रमण किये। काबुल के राजभक्त लोगों ने भी दुर्ग की बड़ी रक्षा की। मुनीम खां के पत्र से शाहिनशाह को काबुल की स्थिति का पता लगा तो उसकी सहायतार्थ सेना भेजने का विचार किया जाने लगा। काबुल से शाही घराने की महिलाओं को लिवा लाने के लिये कुछ सैनिक भेजे गये थे। जब ये लोग सिन्धु नदी पर पहुंचे तो काबुल के लोगों ने समझा कि सहायक सेना आ रही है। इसलिये उनका साहस

और बढ़ गया। तब मिर्जा सुलेमान ने काजी खां बदख्शी को अपना राजदूत बनाया और समझौते के लिये भेजा परन्तु मुनीम खां ने उसको अपने पास रोक लिया और उसके साथ अच्छा बर्ताव किया। उससे यह भी कहा कि दुर्ग में अन्न का बड़ा बाहुल्य है, इससे काजी खां बड़ा प्रभावित हुआ। कुछ दिन बाद मुनीम खां ने उसको वापस चला जाने दिया। मिर्जा सुलेमान का पक्ष निर्बल होता गया तो उसने काजी खां को पुन:दुर्ग में भेजा। मुनीम खां सन्धि करने के लिये तैयार हो गया। काजी खां ने अपनी चतुराई से यह शर्त रखी कि खुतवा मिर्जा सुलेमान के नाम का पढ़ा जाये। यह शर्त मान कर मुनीम खां ने लज्जाजनक काम किया। दूसरी शर्त यह थी कि बारान के दूसरी ओर का इलाका बदख्शां में रहेगा और उस पर मिर्जा का अधिकार होगा। मुनीम खां ने यह शर्त भी प्रत्यक्ष में मान ली। तब काबुल कृतघ्न लोगों के पंजे से मुक्त हो गया और मुनीम खां का शासन पुनः चलने लगा। सुलेमान मिर्जा बदख्शां चला गया। शाही अधिकारियों ने उसे दण्ड नहीं दिया परन्तु मिर्जा पर अनेक विपत्तियां आईं और ईश्वर ने ही उससे बदला ले लिया।

जब काबुल इस प्रकार मुक्त हो गया तब यह निश्चय हुआ कि मरियम मकानी, गुलबदन बेगम और अन्य शाही महिलायें, शाहिनशाह के आदेशानुसार भारत के लिये प्रयाण करे। वे अकबर के पास पहुंच गईं और उन्होंने ईश्वर को धन्यवाद दिया।

***

प्रकरण 9

हेमू की दिल्ली पर चढ़ाई

18 अक्टूबर, 1556 को जालन्धर में खबर पहुंची कि हेमू शासक बनने का स्वप्न देख रहा है और दिल्ली पर अपना अधिकार करना चाहता है। हेमू का वृत्तान्त इस प्रकार है कि हेमू और इब्राहीम में कई युद्ध हुए। इब्राहीम सुल्तान बनना चाहता था परन्तु हेमू की सदैव विजय हुई। बंगाल में सुल्तान मुहम्मद शासक बन गया था परन्तु उसका अन्त हो चुका था। मुबारिज खां के विरोधियों से हेमू ने 22 (बाईस) लड़ाईयां लड़ीं और सब में विजयी हुआ। इससे उसका उत्साह बढ़ गया। जब बादशाह हुमायूं ने भारत को दुबारा जीता तो हेमू अन्य कामों में लगा हुआ था। अब शाहिनशाह अकबर राजसिंहासन को अलंकृत कर रहा था। उस समय हेमू ने अपने प्रतिद्वन्द्वियों को छोड़कर दिल्ली की ओर प्रयाण किया। मुबारिज खां को चुनार में छोड़ा। उस समय दिल्ली का हाकिम तर्दी बेग था, उसने युद्ध की तैयारी की। उसने सब जिलों से शाही अफसरों को बुला लिया था। ये सब लोग आ गये थे परन्तु अली-कुली-शेबानी नहीं आया था। वह सम्भल में अफगानों का दमन करने में लगा हुआ था। इसका वृत्तान्त इस प्रकार है कि शादी खां मुबारिज खां

का एक मुख्य अफसर था और सरकार सम्भल के कई परगने उसके सुपुर्द थे। अलीकुली खां उसके दमन के लिये रवाना हुआ। शादी खां ने अलीकुली शेबानी के अफसरों पर आक्रमण किया। लड़ाई रुहाब नदी के तट पर हुई। लतीफ खां, जो शादी खां का एक सरदार था और कुछ अन्य बड़े अफसर डूब कर मर गये थे। अली-कुली खां कुछ सरदारों के साथ शादी खां पर आक्रमण करने के लिए रवाना हुआ। जब अली-कुली खां नदी पार करने वाला था तो उसको तर्दी बेग खां का पत्र मिला कि हेमू बड़ी तैयारी करके आ रहा है। तब अली-कुली खां ने अपना काम छोड़ कर दिल्ली की ओर प्रयाण किया परन्तु उसके आने से पहले ही दिल्ली हेमू के हाथ में आ गया था। तर्दी बेग खां की हार का एक कारण मौलाना पीर मुहम्मद शेखानी भी था।

जब बादशाह हुमायूं की मृत्यु की खबर प्रान्त में फैल गई तो हेमू ने अकबर से युद्ध करने का साहस किया। उसने समझा कि अकबर अभी लड़का ही है, वह क्या करेगा। हेमू के पास विपुल धन था, युद्ध सामग्री थी और बड़ी सेना थी और इससे उसमें दुस्साहस आ गया। वह 40,000 सवार, 1000 हाथी, 51 बड़ी तोपें और 500 छोटी तोपें लेकर रवाना हुआ।

तर्दी बेग ने सामना करने की तैयारी की। 6 अक्टूबर, 1556 को हेमू दिल्ली के निकट आ पहुंचा। उसने तुगलकाबाद में अपने डेरे लगाये। कितने ही वीर लोगों ने सलाह दी कि हेमू पर रात में हमला किया जाये और जब तक बादशाह की सेना न आ जाये तब तक दुर्ग को दृढ़ किया जाये परन्तु साहसी वीरों ने कहा कि तुरन्त लड़ाई की जाये। 7 अक्टूबर, 1556 को दोनों सेनायें व्यूहबद्ध हो गयीं। दोनों पक्ष के वीर प्राणपण से लड़े। शत्रु के 3000 से अधिक सैनिक मारे गये। तब हेमू ने 300 अच्छे हाथी और एक सेना एकत्र की और घोर युद्ध करने के लिए तैयार हो गया। इस युद्ध में तर्दी बेग खां के साथियों ने साहसपूर्वक लड़ाई नहीं लड़ी। मौलाना पीर मुहम्मद शेखानी समरभूमि से भाग गया। वह तर्दी बेग खां को नष्ट करना चाहता था। तर्दी बेग खां के भी पैर नहीं टिके। हेमू ने तर्दी बेग खां का पीछा नहीं किया। उसने दिल्ली में प्रवेश किया। अब उसका दम्भ बहुत बढ़ चुका था।

***

प्रकरण 10

अकबर की हेमू पर चढ़ाई

यह खबर सुनते ही अकबर ने आदेश दिया कि हेमू को दण्ड देने के लिए सेना शीघ्र प्रस्थान करे। अभी सिकन्दर का भी दमन पूरा नहीं हुआ था इसलिये खिजर ख्वाजा खां को इस काम के लिए रवाना करके अकबर ने हेमू के विरुद्ध प्रयाण किया। तर्दी बेग खां

और अन्य अफसरों को फरमान भेजा गया कि वे हतोत्साह न होवें और थानेश्वर में सब एकत्र होकर शाही सेना के आगमन की प्रतीक्षा करे। दूसरे दिन शाही सेना ने सरहिन्द के पास अपने डेरे लगाये। हारे हुए अफसर और अलीकुली खां शेबानी भी सरहिन्द के पास आ पहुंचे थे। वे शाही फरमान की प्राप्ति से पहले ही वहाँ आ गये थे। जब उन्होंने अकबर को सलाम किया तो उसने उन पर कृपा प्रकट की।

बैराम खां तर्दी बेग खां को अपना विरोधी मानता था और उससे सदैव डरता था। तार्दी बेग भी बैराम खां को पछाड़ने का अवसर देखा करता था। इन दोनों में धार्मिक कट्टरता थी। इसीलिये भी वे एक-दूसरे को समाप्त करना चाहते थे। बैराम खां ने समझा कि तर्दी बेग खां पराजित हो चुका है। इसलिये यह उसका वध करने के लिए उपयुक्त अवसर है। बैराम खां ने पीर मुहम्मद के द्वारा तर्दी बेग को अपने मकान पर बुलवाया और कुछ बहाना करके वह बाहर निकल गया। तब उसके नौकरों ने तर्दी बेग का वध कर डाला। उस समय अकबर पक्षियों का शिकार करने गया हुआ था। जब वह सायंकाल वापस लौटा तो खानखाना ने पीर मुहम्मद के द्वारा कहलाया कि ''मैंने राजभक्ति के कारण तर्दी बेग खां को मरवाया है। उसने बहुत बड़ा अपराध किया था. ऐसे अपराधों की ओर से आंखें बन्द नहीं करनी चाहिये। यदि मैं आपसे यह अनुमति लेता तो आप अपनी दयालुता के कारण मुझे रोकते और फिर सेना में राज्यद्रोह फैल जाता और गड़बड़ मच जाती। मुझे आशा है कि आप मुझे क्षमा करेंगे और मेरे कार्य का अनुमोदन करेंगे। अकबर ने खानखाना की बात मान ली।''

दुर्भिक्ष

इस समय नगरों और गांवों में बड़ा दुर्भिक्ष था और दिल्ली प्रान्त में तो यह भयंकर था। सोना मिल सकता था परन्तु अन्न नहीं। मनुष्य, मनुष्य को खा जाता था। वह दुर्भिक्ष दो साल तक चला, परन्तु एक वर्ष तो यह अत्यन्त दारुण था।

***

प्रकरण 11

दोनों पक्ष की अग्रसेनायें

अकबर की ओर से कई बड़े-बड़े वीर सरदारों के साथ अग्रसेना भेजी गई। इसका नेतृत्व अलीकुली खां शेबानी के हाथ में था। बैराम खां के निजी आदमी भी इनमें सम्मिलित थे। जब हेमू को इसका पता लगा तो उसने भी अपना तोपखाना आगे भेजा। इसका नेतृत्व मुबारक खां और बहादुर खां के हाथ में था। तोपखाने ने पानीपत की ओर प्रयाण किया

जो दिल्ली से तीस कोस की दूरी पर है। इसकी खबर पहुंचने पर अकबर की सेना ने आक्रमण करने के लिए शीघ्रता से प्रयाण किया। इधर हेमू ने भी अपनी सेना का व्यूह बनाया। दायें, बायें और मध्य भाग बनाकर प्रत्येक भाग का नेतृत्व बड़े-बड़े अफसरों को दिया। स्वयं हेमू ने 500 बड़े-बड़े हाथी अपने साथ लिये जो ऊँची-ऊँची इमारतों को विध्वंस कर सकते थे और दृढ़ वृक्षों को उखाड़ सकते थे। हेमू स्वयं एक हाथी पर सवार था। उसके महावत का नाम कायम था। 5 नवम्बर, 1556 को खबर आई कि शत्रु आ पहुंचा है और उसके साथ इतनी बड़ी सेना है। बैराम खां ने सेना के सामने जाकर सब स्थिति देखी। शाहिनशाह की ओर से उसने सैनिकों को वचन दिया और धमकाया भी। फिर वीर लोगों ने खबर दी कि विजय हो गई। शाह कुली महरम हेमू को बन्दी बनाकर अकबर के सामने लाया था।

हेमू ने अपने अनुभवी सैनिकों और शक्तिशाली हाथियों पर भरोसा करके शाही सेना पर आक्रमण किया था। वह हवाई नामक एक हाथी पर सवार था। उसने बड़ी वीरतापूर्वक युद्ध किया। जब घमासान युद्ध हो रहा था तो हेमू की आंख में तीर लगा जो पार हो गया। तब उसके साथी हतोत्साह हो गये और उसकी सेना हार गई। तब शाहकुली खां हेमू के हाथी के पास पहुंचा। वह नहीं जानता था कि वह हेमू का हाथी है। वह तो महावत को मार कर हाथी पर कब्जा करना चाहता था। महावत ने हेमू की ओर संकेत किया तो महावत को तो बचा दिया गया और उस हाथी को लेकर शाहकुली खां अकबर के पास पहुंचा। हेमू को बांध रखा था। वह किसी प्रश्न का उत्तर नहीं देता था। तब बैराम खां खानखाना ने अकबर से प्रार्थना की कि हेमू को तलवार से मार दे और गाजी बन जावे। अकबर ने कहा कि मेरी आत्मा बन्दी को मारने के लिए प्रेरणा नहीं देती है। अन्त में बैराम खां ने हेमू पर तलवार चलाकर उसका वध किया। यदि हेमू को कारागार में रखा जाता और उससे शाही सेवा करने को कहा जाता तो वह अच्छा सेवक सिद्ध होता। अकबर जैसे दूरदर्शी महापुरुष के अधीन वह क्या काम नहीं कर सकता था। हेमू का सिर काबुल और उसका धड़ दिल्ली भेजा गया। वहाँ उनको सूलियों पर टांगा गया।

इससे पहले भारतवर्ष का कोई शासक ऐसा नहीं था जिससे हेमू का-सा साहस और शौर्य हो। यह वीरपुरुष था। इसके पास अनुभवी सैनिक थे, योग्य अधिकारी थे, बड़ा तोपखाना था और कितने ही शक्तिशाली हाथी थे।

सिकन्दर सूर

जिस दिन यह महान् विजय प्राप्त हुई, उसी दिन सिकन्दर खां उजबेग को भागने वालों का पीछा करने के लिए और दिल्ली की रक्षा करने के लिए भेजा गया। उसको बहुत-सा लूट का माल मिला। दूसरे दिन विजयी सेना भी दिल्ली आ पहुंची तो सब प्रकार के नागरिकों ने बाहर आकर उसका स्वागत किया।

राजा बिहारीमल

मजनू खां काकशाल ने अकबर से निवेदन किया कि राजा बिहारीमल बड़ा

स्वामिभक्त है। नारनौल के घेरे के समय इसने अपनी स्वामिभक्ति का परिचय दिया है। तब आदेश हुआ कि राजा को प्रस्तुत किया जाये। राजा ने आज्ञा का पालन किया तो, उसको आज्ञापालन का पुरस्कार प्रदान किया गया। फिर राजा और उसके पुत्रों को तथा अन्य रिश्तेदारों को खिल्लतें दी गई और बिदा लेने के लिए उनको दरबार में हाजिर किया गया। उस समय अकबर एक उन्मत्त हाथी पर सवार था जो नशे के कारण इधर-उधर दौड़ रहा था। लोग डर कर एक ओर हट रहे थे। एक बार वह इन राजपूतों की ओर भी दौड़ा परन्तु वे लोग अपने स्थान पर अचल खड़े रहे। जब अकबर ने उनकी दृढ़ता देखी तो वह प्रसन्न हुआ और राजा के विषय में पूछताछ की और कहा कि ''तुमको निहाल किया जायेगा।''

पुरस्कार और पदोन्नति

विजय के उपरान्त हर्ष मनाया गया, दावतें दी गईं, पुरस्कार प्रदान किये गए। जिन लोगों ने स्वामिभक्ति और वीरता का काम किया था, उनकी पदोन्नति की गई। अली-कुली खां शेबानी को खानजमा की उपाधि देकर सम्भल और दोआब के अन्य परगनों का जागीरदार बनाया गया। अब्दुल्ला खां उजबेग को, सुजाअत खां की उपाधि प्राप्त हुई और उसको सरकार काल्पी का फौजदार नियुक्त किया गया। इस्कन्दर खां को खान आलम और मौलाना पीर मुहम्मद शेखानी को नासिर उल-मुल्क की उपाधि दी और उनको बादशाह की निजी सेवा में रखा गया। कियां खां को आगरा प्रदेश का हाकिम नियुक्त किया गया। दरबारी अधिकारियों को अकबर ने सब स्थानों पर भेज दिया जिससे भारत में शान्ति स्थापित हो गई।

हाजी खां और हेमू का पिता

इसी समय अकबर के कान में यह बात पड़ी कि शेरखां अफगान का दास हाजी खां जो बड़ा साहसी और दूरदर्शी है सेना खड़ी कर रहा है और अलवर में स्वतन्त्र रूप से काम कर रहा है। यह भी सुना गया कि दुर्भागी हेमू का पिता और पत्नी तथा उसकी सम्पत्ति उसी सरकार में है। इस विषय में सेवा करने के लिए नासीरूलमुल्क को नियुक्त किया गया और उसको बहुत-से विश्वस्त और स्वामिभक्त अनुचर दिये गये। विजयी सेना की शक्ति से डर कर हाजी खां भाग गया। अलवर और मेवात का सारा इलाका शाही नौकरों के हाथ में आ गया। तब शाही सेना देवती मचारी की ओर चली जहाँ हेमू का कुटुम्ब रहता था। यह दृढ़ स्थान था। वहाँ बड़ी लड़ाई हुई। हेमू के पिता को जीवित पकड़ कर नासिरूलमुल्क के समक्ष प्रस्तुत किया गया तो उससे अपना धर्म बदलने के लिए कहा। उस वृद्ध पुरुष ने उत्तर दिया, ''मैं ८० वर्ष से अपने इष्टदेव की पूजा कर रहा हूं और अपने धर्म पर आरूढ़ हूं। अब इस अवस्था में मैं धर्म क्यों बदलूं और जीवन के भय से तथा तुम्हारे धर्म को समझे बिना ही मैं तुम्हारे धर्म को क्यों स्वीकार करूं।'' पीर मुहम्मद ने इन शब्दों को सुना भी नहीं, तलवार से उस वृद्ध को समाप्त कर दिया।

हाजी खां अलवर से अजमेर की ओर चला गया था। वह अपने कुटुम्ब को सुरक्षित स्थान पर रखकर लड़ाई की तैयारी करना चाहता था। राणा ने हाजी खां से कई चीजें मांगी

और उसको बड़ा दु:ख दिया। तब दोनों में अजमेर के निकट युद्ध हुआ, जिसमें राणा की हार हुई। हाजी खां ने अजमेर, नागौर और आसपास के प्रदेश पर अपना अधिकार कर लिया। जब इस विजय की खबर अकबर को मिली तो हाजी खां का दमन करने के लिये कई सरदारों को रवाना किया गया। अब अकबर का विचार भारत के पूर्वी प्रदेशों को जीतने का था परन्तु इसी समय खबर आई कि खिजर ख्वाजा खां ने लाहौर के पास सिकन्दर सूर से लड़ाई की थी, जिसमें खिजर खां हार कर वापस लाहौर लौट आया।

***

प्रकरण 12

सिकन्दर सूर

जब अकबर ने जालन्धर से दिल्ली की ओर हेमू के विरुद्ध प्रयाण किया था तो खिजर ख्वाजा खां को सिकन्दर का दमन करने के लिए भेजा गया था और उसके साथ अच्छी बड़ी सेना रवाना की गई थी। सिकन्दर कुछ सैनिकों के साथ पहाड़ियों से निकला और पंजाब से भूमि कर संग्रह करने लगा। उसका सामना करने के लिये ख्वाजा खां लाहौर से बाहर आया। खिजर खां ने 2000 आदमी आगे भेज दिये, जिनकी सिकन्दर से लड़ाई हुई तो वे सब हार गये। खिजर ख्वाजा खां ने रणभूमि में डटे रहना उचित नहीं समझा और लाहौर की ओर हटने लगा। सिकन्दर ने कुछ दूरी तक उसका पीछा किया। यह खबर सुनकर अकबर ने खान-ए-आजम को स्यालकोट की जागीर और खिजर ख्वाजा खां की सहायता करने के लिये उसे रवाना किया।

इसकी खबर सुनकर अकबर ने पूर्वी प्रान्तों पर आक्रमण करना स्थगित करके पंजाब की ओर प्रयाण करने का निश्चय किया। 7 दिसम्बर, 1556 को दिल्ली नगर महंदी कासिम खां के सुपुर्द करके अकबर ने पंजाब की ओर प्रयाण किया। यह कूच आराम और विनोद के साथ की गई थी, मार्ग में अकबर शिकार भी करता जाता था। काबुल-कन्धार और बदख्शां के लोग उससे मार्ग में ही मिलने आये, उनसे भी वह मिलता था। इसी प्रयाण के समय बैराम खां खानखाना की पत्नी के 17 दिसम्बर, 1556 को पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम अब्दुल रहीम खानखाना रखा गया। इस महिला की बड़ी बहन से अकबर का विवाह हुआ था।

शाही सेना के आगमन की खबर सुनकर सिकन्दर सूर सिवालिक पहाड़ियों की ओर नीचे हट गया। शाही सेना उसको निर्मूल करने पर तुली हुई थी। उसका वहां भी पीछा किया। फिर सेना ने देशहा नामक कस्बे के पास अपना शिविर लगाया और वहाँ से दहमिरी की ओर सेना ने प्रयाण किया। तब सिकन्दर भागकर मानकोट दुर्ग में चला गया। पहाड़ी

इलाके के कई राजाओं और जमीदारों को नासिरुल मुल्क ने दण्ड दिये और उनका बहुत-सा माल लूट लिया। मानकोट का दुर्ग चार दुर्गों से बना हुआ है इसको सलीम खां ने बनवाया था। यह स्थान बड़ा दुर्गम है। सेना के बख्शियों को आदेश दिया गया कि दुर्ग को घेर कर दबाया जाये। इस घेरे में आदम खां ने बड़ी वीरता दिखाई। दुर्ग में से वीर अफगान निकलते थे और बड़ी वीरता के साथ लड़ते थे तथापि सिकन्दर में उत्साह नहीं रहा। उसको यह भी ख्याल था कि मुबारिज खां अदली उसकी सहायता के लिए आयेगा परन्तु बंगाल के सुल्तान मुहम्मद खां के पुत्र ने जलालुद्दीन की उपाधि धारण करके मुबारिज खां पर आक्रमण कर दिया। दोनों में युद्ध हुआ जिसमें मुबारिज खां अदली मारा गया। यह खबर सुनकर दुर्ग सेना का साहस भंग हो गया। तब सिकन्दर ने अपने विश्वस्त सेवकों को भेजकर अकबर से कहलाया कि यदि अपने विश्वसनीय अनुचरों को भेजकर मुझे बुलाया जायेगा तो मैं सेवा में उपस्थित होऊंगा। तब अतका खां को उसके पास भेजा गया जो बुद्धिमत्ता के लिए प्रसिद्ध था। अतका खां से सिकन्दर ने कहा कि मैं अति लज्जित हूं। इसलिए अभी सेवा में उपस्थित नहीं हो सकता, क्षमा करके मुझे कुछ समय दिया जाये। मैं जब तक जीवित रहूँगा तब तक कृतज्ञ बना रहूँगा। उसने राजदूत को प्रभावित कर लिया और नासिरुलमुल्क को भेंट भेजी। बादशाह ने सिकन्दर का निवेदन स्वीकार कर लिया। उसको बिहार जागीर में दे दिया गया और उसने 24 मई, 1557 को मानकोट दुर्ग की चाबियां शाही नौकरों को अर्पित कर दीं और वह बिहार में चला गया। जहाँ 2 वर्ष बाद उसकी मृत्यु हो गई। मानकोट दुर्ग का अबुल कासीम को दुर्गपति नियुक्त किया गया, फिर 31 जुलाई, 1557 को शाही सेना 6 मास बाद सिवालिक की पहाड़ियों से लाहौर की ओर रवाना हुई।

***

प्रकरण 13

कन्धार

जब हुमायूं ने ईरान से भारत पर आक्रमण किया तो कन्धार बैराम खां को जागीर में था और वहाँ का व्यवस्थापक और दुर्गपति शाह मुहम्मद कन्धारी था। जमीन्दावर में बहादुर खां दीवान था। बहादुर खां ने विद्रोह करके कन्धार पर अपना अधिकार कर लिया। उसने शाह मुहम्मद को बन्दी बनाना चाहा परन्तु इसमें वह सफल नहीं हुआ। शाह मुहम्मद ने उनका पीछा किया और कई को मार डाला। असफल होकर बहादुरशाह जमीन्दावर वापिस आया और सेना तैया करने लगा। भारत से शाह मुहम्मद को सैनिक सहायता मिलना अत्यन्त कठिन था। इसलिये उसने ईरान के शाह को लिखा कि स्वर्गीय बादशाह हुमायूं भारत की विजय के पश्चात् कन्धार ईरान को देना चाहता था इसलिये अब सेना भेजी जाये

तो बहादुर खां को परास्त करके कन्धार आपके सुपुर्द कर दिया जायेगा। तब शाह ने 3,000 तुर्कमानों की सेना भेजी। बहादुर खां वीरतापूर्वक लड़ा परन्तु अन्त में उसको भागना पड़ा। वह जमीन्दावर में भी नहीं टिक सका। शाह मुहम्मद ने ईरान की सेना के साथ अच्छी बर्ताव किया परन्तु बहाने बनाकर कन्धार उसके सुपुर्द नहीं किया। बहादुर खां अन्त में अकबर की शरण में आया तो उसको मुलतान जागीर में दे दिया गया और मुलतान के पुराने जागीरदार को नागौर और उसका ईलाका दे दिया गया। कन्धार का घेरा चलता रहा।

***

प्रकरण 14

शाही परिवार की महिलाओं का आगमन

अकबर ने आदेश दिया था कि मरियम मकानी और अन्य पर्देदार महिलायें भारत आयें। उसी समय मिर्जा सुलेमान का विद्रोह हो गया। इसलिये उनका प्रस्थान स्थगित रहा। जब मिर्जा का दमन हो गया तब महिलायें भारत की ओर रवाना हुईं। अन्य महिलायें भी जो सैनिकों की पत्नियां थीं, उनके साथ हो लीं। फिर हेमू के अभियान की खबर सुनकर वे रुक गईं परन्तु जब उसका सिर काबुल पहुंच गया तो बड़े आनन्द के साथ उन्होंने प्रस्थान किया। उस समय मुनीम खां काबुल का दुर्गपति था। वह भी महिलाओं के साथ था। अकबर ने आदेश भेजा था कि मुहम्मद हकीम और उसकी माता काबुल में ही ठहरे। जब महिलाओं की सवारी जलालाबाद पहुंची तो वे वहाँ कुछ दिन ठहरीं। वहीं से मुनीम खां वापस चला गया। जब ये महिलायें यात्रा कर रही थीं तो अकबर की दो सगी बहनों की मृत्यु हो गई। शोक मनाने के लिये मरियम मकानी और दूसरी महिलायें कुछ दिन तक वहाँ रुकीं और फिर उन्होंने प्रस्थान किया। उनके आगमन की सूचना सुनकर अकबर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने आदम खां की माता माहम अनगा को जिसका अकबर बड़ा आदर करता था उनका स्वागत करने के लिये भेजा। लाहौर पहुंच कर अनगा ने उनका स्वागत किया। मानकोट के घेरे का काम खानखाना के सुपुर्द करके अकबर एक मंजिल मरियम मकानी से मिलने के लिये गया।

हसन खां

हसन खां भारत का एक प्रसिद्ध जमीनदार था। उसके कितने ही भाई-बन्धु और अनुचर थे। जिस समय अकबर मानकोट के घेरे में व्यस्त था तो इसने एक बड़ी सेना खड़ी करके सरकार सम्भल को लूटना-खसोटना शुरू कर दिया। जब इसकी दुर्भावनाओं का पता खानजमां को लगा तो वह शाही उच्च कर्मचारी के साथ प्रयाण करके लखनऊ की ओर चला। हसन खां के पास 2000 सवार थे। शाही सेना में 4000 ही सवार थे परन्तु

विजय खानजमा को मिली और लूट का अपार माल और बहुत-से हाथी उसके हाथ में आ गये।

किया खां की विजय

ग्वालियर का प्रसिद्ध और दुर्गम दुर्ग मुबारिज खां अदली के अधिकार में था। उसकी ओर से वहाँ भील खां दुर्गाध्यक्ष था, जो सलीम खां का एक दास था और सलीम खां शेर खां का पुत्र था। राजा राम शाह के पूर्वज इस दुर्ग के स्वामी थे इसलिये राम शाह ने इसको घेर कर दुर्ग सेना को बड़ा परेशान किया। तब किया खां आगरे से ग्वालियर की ओर रवाना हुआ। उसकी राम शाह के साथ लड़ाई हुई जिसमें राम शाह हार गया। उसके बाद उसने ग्वालियर को घेर लिया।[1]

अब्दुल्ला खां की पुत्री से विवाह

इसी वर्ष मिर्जा अब्दुल्ला खां मुगल की पुत्री से अकबर का विवाह हुआ। अब्दुल्ला खां उच्च कुलीन था। उसकी बहन का विवाह मिर्जा कामरान से हुआ था। अत: खानखाना समझता था कि अब्दुल्ला कामरान के पक्ष का होगा। इसलिये उसने इस सम्बन्ध का विरोध किया। जब नासिरूलमुल्क ने कहा कि इस प्रकार का विरोध शाहिनशाह को पसन्द नहीं है तब बैराम खां खानखाना ने विरोध करना छोड़ा। नासिरुलमुल्क ने विवाह का आयोजन किया। विवाह धूमधाम से हुआ।

***

प्रकरण 15

खानखाना को अकबर पर सन्देह

जब मानकोट का घेरा समाप्त होने को था तो खानखाना बीमार हो गया। उसके ऐसे फोड़े हो गये कि वह घोड़े पर सवार नहीं हो सकता था। उन दिनों अकबर के हाथियों में लड़ाई हुई। एक का नाम फतुहा और दूसरे का नाम लगना था। संयोगवश दोनों हाथी लड़ते-लड़ते खानखाना के डेरे के पास पहुंच गये। जन-समूह के कोलाहल और भय से खानखाना को बड़ी परेशानी हुई और उसको यह सन्देह हुआ कि अकबर के सुझाव पर ही ऐसा किया गया होगा। कुछ ऐसे लोगों ने जिनका काम कलह उत्पन्न करना ही होता है खानखाना के सन्देह की पुष्टि की। तब बैराम खां ने अपने विश्वस्त सेवकों को माहम अनगा के पास भेजकर कहलाया कि मैंने शाहिनशाह के प्रति कोई अपराध नहीं किया है।

---

1. बदायून ने लिखा है कि उस समय इस दुर्ग पर अधिकार नहीं हुआ। ९६६ ईसवी में हुआ।

में सदैव उसके प्रति आदर प्रकट किया करता हूं। दुष्ट लोगों ने मुझ पर किसी अपराध का आरोप न जाने क्यों लगाया है जिसके कारण बादशाह ने क्रुद्ध हाथियों को मेरे डेरे की ओर धकेल देने के लिये आदेश दिया है। माहम अनगा ने सान्त्वनापूर्ण शब्दों के द्वारा खानखाना के चित्त को शान्त किया।

एक अद्भुत घटना

एक दिन शाहिनशाह संकुचित दृष्टि वाले लोगों से तंग आ गया। उसे अपने अनुचरों से ग्लानि हो गई तो उसने आदेश दिया कि उसके पास कोई न रहे। वह अपने शिविर से अकेला ही रवाना हो गया। अपने साथ किसी सईस को भी नहीं ले गया। वास्तव में उसकी ईश्वर से लगन लग गई थी। प्रत्यक्ष में वह लोगों से क्रुद्ध मालूम होता था। वह एक ईराकी घोड़े पर सवार था जिसका नाम हेरन था और जो खिजर ख्वाजा ने भेंट किया था। तेजी और चुस्ती में उस जैसा दूसरा घोड़ा नहीं था। जब उसको छोड़ दिया जाता था तो कोई व्यक्ति उसके पास नहीं जा सकता था और बड़ी ही कठिनता से उसको पकड़ा जाता था। इस घोड़े पर सवार होकर अकबर साथियों को पीछे छोड़ गया और शीघ्रता से आगे निकल गया। कुछ दूरी पर जाकर वह उतरा और ईश्वर से प्रार्थना करने लगा। घोड़ा अपनी आदत के अनुसार भाग गया और दिखाई नहीं देने लगा। जब अकबर को पुनः सवार होने की इच्छा हुई तो उसने देखा कि वहाँ कोई नहीं था और घोड़ा भी नहीं था। कुछ समय के लिये वह किंकर्तव्य-विमूढ़ हो गया। फिर उसने एकाएक देखा कि घोड़ा दूर से दौड़ता हुआ उसकी ओर आ रहा है। वह आकर शाहिनशाह के पास खड़ा हो गया। शाहिनशाह को आश्चर्य हुआ और वह घोड़े पर सवार हो गया। वह विचित्र बात थी कि जो घोड़ा एक बार खुल जाने पर किसी को पास नहीं आने देता था वह स्वतः ही शान्तिपूर्वक वापस आ गया और उसने बादशाह को अपनी पीठ पर चढ़ा लिया। अकबर पुनः अपने शिविर में आ पहुंचा।

खानखाना का सन्देह बढ़ा

अपनी कल्पना के प्रभाव से खानखाना फिर शमसुद्दीन मुहम्मद खां अतका पर सन्देह करने लगा और उससे कहा ''यद्यपि मेरे मुख पर कोई राजद्रोह का कलंक नहीं है और इस उच्च कुल के प्रति मेरी पूर्ण स्वामिभक्ति है और शाहिनशाह की कृपा में मुझे कोई अन्तर दिखाई नहीं देता है और मुझे उसकी ओर से किसी प्रकार का भय नहीं है तथापि कभी-कभी मेरे साथ ऐसा व्यवहार हो जाता है जिससे प्रकट होता है कि शाहिनशाह की मुझ पर कृपा नहीं है। मेरा विश्वास है कि यह जो कुछ होता है वह तुम्हारी युक्तियों और सुझावों से होता होगा। मैंने ऐसा क्या काम किया है कि तुम मेरे प्रति शत्रुता करो और मेरे रक्त के प्यासे बन कर शाहिनशाह के पवित्र मस्तिष्क को मेरे विरुद्ध बना दो। यहाँ तक कि मेरे जीवन पर भी वार करो।'' शमसुद्दीन को इस भर्त्सना से दुःख हुआ। उसने खानखाना के सामने अपने रिश्तेदारों और आश्रितों को बुलाया और खानखाना की शंकाओं का विरोध किया। उसने शपथपूर्वक कहा ''मैंने खानखाना की बुराई के लिये कभी मुख नहीं खोला

है और न कभी खोलूंगा।'' अन्त में खानखाना का चित्त शान्त हुआ और उसकी चिन्ता कुछ कम हो गई।

बहादुर खां को मुलतान भेजा

बहादुर खां को अपनी जागीर मुलतान पर भेज दिया गया। ये अभी कुछ समय पूर्व ही प्रदान की गई थी। उसको आदेश दिया गया कि वह आसपास के बलुचियों का दमन करें। ये लोग उस समय विद्रोह करने लग गये थे। मुलतान पहुंचकर बहादुर खां ने वीरतापूर्वक काम किया। उसका सामना करने के लिए प्यादों और सवारों की एक बड़ी सेना आई और बड़ी दृढ़ता से लड़ी। यह लड़ाई एक मास तक चलती रही परन्तु बहादुर खां पर शाहिनशाह की कृपा थी। इसलिए ईश्वर ने उसको विजय प्रदान की।

बैराम खां की धृष्टता

अब अकबर राजकाज को स्वयं संभालने वाला था। इससे बैराम खां की राजभक्ति में कुछ कमी आने लगी। वह शाही हाथियों को अपने विश्वस्त अफसरों को देने लगा। उसने कुछ शाही हाथी भी इस बहाने में मंगवा लिए कि वे उपयुक्त महापुरुषों को सुपुर्द किये जायेंगे। अकबर इस कार्य को सहन नहीं करना चाहता था, परन्तु अभी उपयुक्त अवसर नहीं आया था। इसलिए उसने इस पर ध्यान नहीं दिया।

आदम गक्खड़

जब अकबर लाहौर में ठहरा हुआ था तो आदम गक्खड़ ने आकर स्वामिभक्ति प्रकट की। अकबर उससे कृपापूर्वक मिला। जब बादशाह हुमायूं भारत को वापस लौटा था तब आदम उससे मिलने नहीं आया था परन्तु उसने मिर्जा कामरान को पकड़कर हुमायूं के सुपुर्द कर दिया था। इसलिए उसको कृपा की आशा थी और दरबार में उसके विनय-पत्र लगातार आया करते थे। आदम ने यह निवेदन कराया कि बादशाह उसको अपने साथ हिन्दुस्तान में नहीं ले जाये और शाही कृपा के कारण उसको अपने देश से एक प्रकार से निर्वासित नहीं कर दिया जाये। शाहिनशाह ने आदेश दिया कि आदम की अच्छी सेवाओं के बदले में उसकी प्रार्थना स्वीकार की जाती है। फिर तैमूर खां जलाईन खां सान्त्वना देने के लिए और उसे दरबार में लाने के लिए भेजा। जब वह दरबार में आया तो उसको आशातीत कृपा प्राप्त हुई।

तख्तमल का वध

जब शाहिनशाह लाहौर में टिका हुआ था तो कलह उत्पन्न करने वाले लोगों को सचेत करने के लिए मऊ[1] के जमीनदावर तख्तमल को प्राणदण्ड दिया गया। तख्तमल मऊ का जमीनदार था। इसने सुल्तान सिकन्दर की सहायता करके भूल की थी। जब

1. मऊ या पठानकोट पंजाब के गुरुदास जिले में है। ये कांगड़ा से दूर नहीं।

सिकन्दर सूर ने लड़ाई करने की तैयारी की तो तख्तमल उससे मिल गया था। जब शाही सेना ने मानकोट दुर्ग को घेरा और दुर्ग सेना की स्थिति कठिन हो गई तो तख्तमल सिकन्दर की सेना में सम्मिलित हो गया था। जब बैराम खां को उसके प्रपंच का पता लगा तो उसने उसका वध करवा दिया और उसके स्थान पर उसके भाई तख्तमल को नियुक्त कर दिया जो दूरदर्शिता और स्वामिभक्ति के लिए प्रसिद्ध था। अकबर को तख्तमल का वध पसन्द नहीं आया। परन्तु अभी उसने राजकाज अपने हाथ में नहीं लिया था इसलिए प्रत्यक्ष में उसने अप्रसन्नता प्रकट नहीं की। परन्तु अब उसकी रुचि राजकार्य की ओर बढ़ती जा रही थी। 7 दिसम्बर, 1557 को लाहौर का शासन हुसैन खां के सुपुर्द करके अकबर ने अपनी राजधानी दिल्ली की ओर कूच किया।

बैराम खां का सलीमा बेगम से विवाह

जब शाही सेना का डेरा जालन्धर में लगा हुआ था तो खानखाना बैराम खां का विवाह सलीमा सुल्तान बेगम से हुआ। बादशाह हुमायूं ने इस लड़की की सगाई बैराम खां से करवा दी थी। बैराम खां हुमायूं की बहन का लड़का था और यह लड़की मिर्जा नुरुद्दीन मुहम्मद की पुत्री थी। योजना यह थी कि भारत की विजय के बाद विवाह होगा परन्तु उपयुक्त अवसर नहीं आया इसलिए यह विवाह अब तक नहीं हुआ था। जब अकबर जालन्धर में ठहरा हुआ था तो खानखाना ने निवेदन किया कि अब विवाह हो जाना चाहिये। अकबर का ऐसी बातों की ओर ध्यान नहीं था इसलिए उसने अनुमति दे दी। इस विवाह के करवाने में बीका माहम अनगा सबसे आगे थी। शाही घराने की अन्य महिलायें भी इसके लिए उत्सुक थीं। सलीमा अपने गुणों और सत्स्वभाव के लिये प्रसिद्ध थी।

***

प्रकरण 16

तीसरे इलाही वर्ष की घटनायें

तीसरा इलाही वर्ष अर्थात् शासन सम्वत् 10 मार्च, 1558 को शुरू हुआ। जब नये वर्ष का उत्सव समाप्त हो गया तो शाहिनशाह का ध्वज जालन्धर से दिल्ली की ओर चला। मार्ग में अकबर शिकार किया करता था।

हाजी खां के विरुद्ध सेना भेजी

जब शाही सेना सतलज नदी को पार कर चुकी तो शीघ्रगामी धावन यह खबर लाये कि हाजी खां शाही सेना का जोरदार सामना कर रहा है और मुकाबला बराबरी का है। तब यह निश्चय हूआ कि शाही सेना हिसार तक प्रयाण करके स्थिति का ठीक-ठीक पता

लगाये और यदि आवश्यक हो तो यह सेना युद्ध क्षेत्र तक पहुंचे। अतः शानदार शिविर हिसार की ओर रवाना किया गया। इसके साथ नासिरुलमुल्क था। यह सेना तो हिसार की ओर गई और शाहिनशाह सरहिन्द की ओर चला। वह हुमायूं की कब्र की यात्रा करके उस सेना में जाना चाहता था। जब शाही अफसर हार गये थे और हेमू के हाथ में शक्ति आ गई थी तो खजर बेग और कई दरबारी लोग उस बादशाह के शव को सरहिन्द ले आए थे और कफन पर्दे में रखा हुआ था। अकबर ने तुरन्त ही उसके प्रति आदर प्रकट करके हिसार की ओर प्रयाण किया। बैराम खां खानखाना सरहिन्द जाना चाहता था, इसलिए उसको अनुमति दे दी गई और वह भी अकबर के साथ वहाँ गया। जब शही सेना हिसार में ठहरी हुई थी तो नासिरुलमुल्क और शेख गदाई में झगड़ा हो गया। बैराम खां शेख की ओर झुका हुआ था इसलिए उसने शेख का पक्ष लिया। इससे नासिरुलमुल्क को बड़ा दुख हुआ और वह कई दिन तक दरबार में नहीं आया परन्तु फिर कुछ सज्जनों ने बीच-बचाव करके दोनों में मेल करवा दिया।

जब विजयी शाही सेना का घोष हाजी खां ने सुना तो वह और उसके आदमी लड़े नहीं और वह अपने स्थान पर वापस चला गया। हाजी खां गुजरात की ओर चला गया और मिर्जा कासिम खां निशापुरी ने अजमेर पहुँच कर अपना काम सम्भाल लिया।

जैतारण विजय

शाह कुआली खां माहराज को जेतारण पर कब्जा करने के लिए रवाना किया। विजयी वीरों ने अपनी तलवारों के बल से और अपने साहस और शौर्य से राजपूतों को समाप्त कर दिया और दुर्ग पर अधिकार कर लिया।

***

प्रकरण 17

दिल्ली में राजसभा

फिर उच्च शाही सेना ने समाना के मार्ग से दिल्ली की ओर प्रयाण किया। प्रत्येक मंजिल पर लोगों के प्रति न्याय किया जाता था जिससे उनको प्रसन्नता होती थी। फिर शाही ध्वज राजधानी के मैदानों में पहुंचे तो नगर के बड़े-बड़े लोगों ने बाहर आकर स्वागत किया और अकबर ने सबको कृपादृष्टि से देखा। सैनिक और माली मामलों की फिर से नई व्यवस्था की गई। इस समय खानखाना और अन्य उच्चाधिकारी तथा जो राज्य के स्तम्भ थे वे सप्ताह में दो बार बादशाह के दीवानखाने में राजसभा किया करते थे जिसमें कितने ही लोग उपस्थित होते थे। इस सभा में राजनीतिक और वित्तीय मामलों पर विचार करके

जो निश्चय किये जाते थे वे शाहिनशाह की सेवा में निवेदन कर दिये जाते थे और वह चाहता था, उन पर अपने हस्ताक्षर कर दिया करता था।

अलीकुली खां जमान और एक रेबारी लड़के का प्रेम

बादशाह हुमायूं के समय में एक रेबारी का लड़का शाहम नामक बड़ा ही सुन्दर था और शाही संरक्षकों में सम्मिलित था। खानजमा इस लड़के को कुत्सित काम-दृष्टि से देखा करता था। जब बादशाह हुमायूं का देहान्त हो गया तो अंगरक्षक शाहम बेग और खुशहाल बेग जालन्धर से शाहिनशाह के समक्ष उपस्थित किए गये और वे अंगरक्षक नियुक्त हो गए। तब खानजमान ने उनको फुसलाकर ले आने को अपने आदमी भेजे। शाहम बेग इसको अपनी उन्नति का अवसर समझकर शाही शिविर में से भाग गया और खानजमा के पास उपस्थित हो गया। खानजमा में हीन आदत थी और साथ ही उसमें बड़ा साहस था। जब उच्च और प्रतिष्ठित पुरुष को अभिमान हो जाता है और वह चाटुकारों से घिर जाता है तो उसकी दशा बिगड़ने लगती है। अलीकुली खां खानजमा का जीवन इसका उदाहरण है। उसके नाम शाही फरमान जारी हुआ है कि ''हमारा दरबार क्षमा का सागर है। अब सत्य स्वामिभक्ति आदि गुणों के उल्लेख की आवश्यकता नहीं है। तुम दूरदर्शित ग्रहण करो और अपने कर्मों पर पश्चात्ताप करके अच्छी सेवा द्वारा अपना उद्धार करो और रेबारी के उस लड़के को दरबार में भेज दो ताकि हम जो तुमने किया उसको न किया समझकर तुम्हारे ऊपर अनुग्रह करें।'' यदि मूर्खता और निर्लज्जता के कारण तुम शाही आदेशों का पालन नहीं करोगे तो तुमको ऐसा दण्ड दिया जायेगा जिससे अदूरदर्शी उन्मत्त लोगों को शिक्षा प्राप्त होगी। इसी बीच में मालूम हुआ कि अलीकुली खां का हीन व्यसन और भी अधिक प्रकट हो रहा है तो शाहिनशाह ने अवध प्रान्त का संदीला कस्बा सुल्तान हुसेन खां को जागीर में दिया। यह कस्बा खानजमान ने इब्राहीम खां उजबेग के पुत्र इस्माइल खां को पहले ही जागीर में दिया था। इस्माईल खां ने यह जागीर सुल्तान हुसेन खां जलेर के सुपुर्द नहीं की, बल्कि उसका सामना किया। हुसेन खां को शाही सहायता मिली हुई थी। इस्माईल खां ने अलीकुली खां की शरण ली और एक बड़ी सेना के साथ वह हुसेन खां के विरुद्ध रवाना हुआ। हुसेन खां भी उसका दमन करने के लिए चला तो कितने ही स्वामिद्रोही मारे गए। इसी लड़ाई में अलीकुली खां रिश्तेदार शाह बुदाग बुलाकी भी मारा गया। अलीकुली खां स्वयं सुल्तान हुसेन खां का सामना करना चाहता था परन्तु समझदार लोगों ने उसको ऐसे दुष्कर्म स रोका परन्तु रेबारी के लड़के को उसने अपने ही पास रखा। प्रत्यक्ष में तो वह अपना सुधार कर रहा था परन्तु गुप्तरूप से वह हीन प्रपंच में लगा हुआ था। नासिरुलमुल्क चाहता था कि उसके विरुद्ध सेना भेजी जाये परन्तु बैराम खां अलीकुली खां का पक्ष लेता था और अपनी विशाल हृदयता के कारण उसके कुकर्मों की ओर नहीं देखता था। दरबार में खानजमा का बड़ा विरोध था इसलिये उसने बुर्ज अली नामक अपने एक विश्वस्त सेवक को भेजा कि वह दरबारी आन्दोलन को शान्त करे। उस समय नासिरुलमुल्क बड़ा शक्तिशाली था। वही राजनैतिक और वित्तीय विषयों का निर्णय करता था। वह हृदय से स्वामिभक्त था और बैराम खां के पक्षपात की चिन्ता नहीं करता था। एक दिन वुर्ज अली

खां नासिरुलमुल्क के पास गया और उसने ऐसे शब्द बोले जो मर्यादा से बाहर थे तब नासिरुमुल्क को क्रोध आया और उसने आदेश दिया कि उसको बुर्ज से फेंक दिया जाये। इससे बैराम खां को बड़ा दु:ख हुआ और वह अपने हृदय में बदले की भावना रखने लगा।

मुस्सबिब बेग को प्राणदण्ड

मुस्सबिब बेग ख्वाजा किलां बेग का पुत्र था। वह बड़ा मिथ्याचारी और दुष्ट था। बादशाह हुमायूं के समय में और शाहिनशाह अकबर के समय में उसके कुकृत्य प्रकाश में आ चुके थे। स्वर्गीय बादशाह हुमायूं उसको मुसाहिब-ए-मुनाफिक (मिथ्याचारी) साथी कहा करता था।

इस समय वह अपना समय अबुल मआली की संगति में बिताया करता था और प्रपंच किया करता था। अपना कुछ समय वह अली कुली खां की कुसंगति में पूर्वी इलाकों में व्यतीत करता था। उसने अली कुली के पुत्र को अपना मुहरदार नियुक्त किया था। अब उसका जीवन लगभग समाप्त होने वाला था तो वह बुरे इरादों के साथ दिल्ली आया। बैराम खां ने उसको बन्दी बनाकर विश्वस्त लोगों के साथ मक्का भेज दिया। जब वह जा रहा था तो उसकी मृत्यु हो गई। इसका कारण नासिरुलमुल्क था। उसने बड़ी चतुरता से बैराम खां के सामने कागज के दो टुकड़े रखे, एक टुकड़े पर मृत्यु और दूसरे पर रिहाई या छुटकारा लिखा हुआ था। इन दोनों टुकड़ों को खानखाना के सामने गोलियां बनाकर रखा गया और उनमें से एक को खोला गया तो भाग्य से जो टुकड़ा खोला गया उस पर मृत्यु लिखा था।

ख्वाजा जलालुद्दीन बुजुक का वध

ख्वाजा जलालुद्दीन बुजुक बादशाह कुली अर्थात् वह बादशाह का दास था और अन्य लोगों के प्रति कभी अधीनता प्रकट नहीं करता था। इसलिये साम्राज्य के बहुत-से अमीर उसको पसन्द नहीं करते थे। इसके अतिरिक्त उसमें छिछोरापन था और वह मजाक किया करता था जो बड़े आदमियों को अच्छा नहीं लगता था। वह अपने समय के लोगों का हास्य करता था और अनुचित बातें कहता था जो सब को चुभा करती थीं। गजनी में मुनीम खां भी उससे बदला लेना चाहता था। भारत में बैराम खां को उसके विरुद्ध उकसाया गया था कि उसको मार दें। हुमायूं के समय में ख्वाजा जलालुद्दीन ने बैराम खां के विषय में अनुचित बातें कही थीं तो मौका देखकर बैराम खां ने उसके साथ बड़ा बुरा व्यवहार किया था। अब बैराम खां ऊंचे पद पर था और अकबर ने राजकाज अपने हाथ में नहीं लिया था। ख्वाजा जलालुद्दीन के सामने यह प्रश्न था कि वह मुनीम खां के पास जाये जो अब काबुल का हाकीम था या बैराम खां के पास पहुंचे। मुनीम खां ने अपने विश्वस्त लोगों को उसके पास भेजा और उसको फुसला कर बुला लिया और कारावास में डाल दिया। फिर उसकी आंखों में कई बार नस्तर लगाया परन्तु उसकी दृष्टि नष्ट नहीं हुई। फिर यह समझकर कि वह अन्धा है वह बंगरा चला गया वहाँ ऐसे आदमी के साथ जो भारत जा रहा था, वह शाहिनशाह के दरबार में जा रहा था। फिर मुनीम खां को मालूम हुआ कि ख्वाजा हिन्दुस्तान की ओर जा रहा है तो उसने ख्वाजा को और उसके भाई जलालुद्दीन को पकड़वाकर वापस

मंगवा लिया और दोनों को मरवा दिया। बैराम खां ने भी उनको मरवाने का आदेश दे दिया था। जब अकबर ने यह कार्यवाही सुनी तो उसको क्रोध आया परन्तु उसने सोचा कि इसका बदला ईश्वर लेगा और कुछ नहीं कहा।

***

प्रकरण 18

अकबर को हाथियों का शौक

जब शाहिनशाह की दृष्टि इस आश्चर्यकारी पशु पर पड़ी तो उसने उस पर विशेष ध्यान दिया और अपने साहस से उसको वश में कर लिया। अकबर ऐसे मस्त हाथी पर चढ़ जाता था जो आदमियों को मार देता था, महावतों को गिरा देता था और जिसे देखकर लोगों के हृदय बैठ जाते थे। एक बार एक मस्त हाथी ने अपने महावत को और अन्य कई लोगों को मार डाला। इससे नगर में त्रास फैल गया। अकबर ने उसके दांत पर पैर रखा और मुसकारते हुए उस पर चढ़कर उसको दूसरे हाथियों से लड़ाया। एक दूसरा हाथी अपने महावत के वश में नहीं था तो अकबर कूद कर उस पर जा बैठा और उसको गर्दन में रस्सा डाला और उसमें अपना पैर फंसा दिया। एक दिन लखना हाथी बड़ा मस्त हो रहा था तो अकबर ने उस पर चढ़कर उसे बस में करना चाहा। एकाएक हाथी का पैर एक खाई में धंस गया। हाथी ने खाई में से पैर निकालने का बड़ा यत्न किया परन्तु नहीं निकाल सका। चारों ओर लोगों में हाहाकार मच गया, अकबर का पैर रस्से में फंसा हुआ था। तब कितने ही वीर सचेत और स्वामिभक्त लोगों ने बादशाह का पैर रस्से में से निकाला। इसकी खबर सुनकर बैराम खां खानखाना बड़ा क्षुब्ध हुआ और राजसिंहासन के सामने आकर उसने दण्डवत प्रणाम किया और ईश्वर को धन्यवाद दिया। जिस हाथी पर अकबर पहले सवार हुआ था, उसका नाम दिल संकार था। एक दूसरे हाथी का नाम फौज बिदार था। सबसे पहले अकबर इस हाथी पर चढ़ा था और उसने किसी की सहायता नहीं ली थी। एक हाथी का नाम दामूदर था। अकबर पहले एक हाथी पर चढ़ गया और उसको पास ले जाकर फिर दामूदर पर चढ़ गया था। जिस मस्त हाथी को अकबर ने दूसरे मस्त हाथी से लड़ाया था उसका नाम झलपा था। उस समय अकबर की आयु चौदह वर्ष की थी।

राजा कपूरचन्द पर अभियान

राजा कपूरचन्द पर अभियान करने के लिये ख्वाजा अब्दुल्ला को अन्य ख्वाजाओं के साथ भेजा गया। तलुण्डी नामक कस्बा इन ख्वाजाओं की जागीर में था। राजा कपूरचन्द जम्मू के दुर्ग में बन्द हो गया। इन शाही सेवकों ने आवेश और देशभक्ति के साथ प्रयाण

किया तो एक बड़ी लड़ाई हुई जिसमें इनको विजय प्राप्त हुई और बहुत-सा लूट का माल मिला।

***

प्रकरण 19

अकबर का आगरा को प्रयाण

जब शाहिनशाह छः मास तक दिल्ली के सुखद प्रदेश में रह चुका तो उसको विचार आया कि अब आगरा जाना चाहिये। आगरा जमुना नदी के तट पर स्थित है। इसलिये विचार हुआ कि यात्रा नाव द्वारा की जावे। तब कई नावें तैयार की गईं और रेशमी कपड़ों से अलंकृत की गईं। 9 अक्टूबर को शाहिनशाह ने प्रस्थान किया। उसके साथ बड़े-बड़े उच्च कर्मचारी और दरबारी तथा अन्य लोग थे। जब अकबर ने आगरे की ओर प्रस्थान किया तो नदी की शोभा बढ़ गई। रास्ते में उसने और उसके साथियों ने मछलियों का और जल पक्षियों का शिकार किया। 30 अक्टूबर, 1558 को शाहिनशाह आगरा पहुंचा और उसने उस नगर को राज्य और सौभाग्य का केन्द्र बना दिया। उस समय आगरा का दुर्ग बादलगढ़ कहलाता था। अकबर ने उसकी शोभा और बढ़ा दी। अमीर-उमराओं को वहाँ रहने के लिये मकान दे दिये और अकबर भी वहीं निवास करने लगा। थोड़े समय में ही उस नगर की शोभा बढ़ गई। इस नगर का जलवायु समशीतोष्ण है। इसमें होकर जमुना नदी बहती है, जिसका पानी हलका और पाचक है। नदी के दोनों ओर राज्यकर्मचारियों ने सुन्दर और सुखद मकान बना लिये और बाग लगा लिये।

ग्वालियर विजय

आगरा पहुंचने के बाद शुभ घटना यह हुई कि ग्वालियर के दुर्ग को छीन लिया गया। यह पहले लिखा जा चुका है कि किया खां को एक वीर सेना के साथ उस दुर्ग को घेरने के लिये रवाना किया गया था। परन्तु यह दृढ़ दुर्ग प्राचीन काल के बुद्धिमान लोगों की कला का नमूना है। इसकी दृढ़ता उनकी कला का स्मारक है इसलिये इसको बलपूर्वक छीनना असम्भव है। इसलिये इसको अब तक नहीं जीता जा सका था। जब अकबर आगरे में निवास करने लगा तो किया खां की सहायतार्थ हबीब अली खां, मकसूद अली सुल्तान और कितने ही लोगों को भेजा गया। दुर्गाध्यक्ष बहबल खां ने दुर्ग की रक्षा में कोई कमी नहीं रखी थी। उसके हितैषियों ने उसको सलाह दी कि यद्यपि दुर्ग दृढ़ है और युद्ध-सामग्री से सम्पन्न है तथापि अब अकबर के समय में उसकी रक्षा नहीं की जा सकती; क्योंकि अकबर को ईश्वर सहायता दे रहा है। दुर्गाध्यक्ष ने यह सलाह मान ली। रवीअल्-आखिर मास में हाजी मुहम्मद खां सीसतानी दुर्ग में गया और उसने बहबल के चित्त को शान्त किया

और उसको शाहिनशाह की सेवा करने के लिये ले आया। दुर्गाध्यक्ष ने समझ लिया था कि दुर्गद्वार की चाबियां शाही अधिकारियों को समर्पित करने से उसकी इच्छाओं के द्वार खुल जायेंगे। जब दुर्ग पर शाही वीरों का अधिकार हो गया तो अकबर ने उसके साथ कृपापूर्ण व्यवहार किया और उसको खिल्लत और बखसीसें दी तथा जागीर प्रदान की। वास्तव में कृपा के वायदों से बड़े-बड़े काम हुए थे।

मालवे में भियाना जाति का विद्रोह

जब आगरा राजधानी बन गया तो शाही कानों तक यह खबर पहुँची कि भियाना नामक अफगान जाति के लोग सरनज में उपद्रव कर रहे हैं। सरनज मालवा प्रान्त में स्थित है। शाहिनशाह ने कमाल खां गक्खड़ को इन लोगों के विरुद्ध भेजा। यह साहसी पुरुष था और इस कार्य के लिये उपयुक्त था। वह सेना सहित वहाँ पहुंचा। जब लड़ाई हुई तो उसको विजय प्राप्त हुई और वह वापस दरबार में आया। उसको एक खिल्लत और करा, फतेहपुर, हंसवा और अन्य स्थान जागीर में प्रदान किये गये।

भदौरियां राजपूतों का दमन

आगरा के निकट हतकान्त नामक एक स्थान है जो बड़ा दृढ़ है। वहाँ के जमीनदार भदौरियां कहलाते हैं जो अपनी बुद्धि और साहस के लिये प्रसिद्ध हैं। ये लोग दिल्ली के सुल्तानों के विरुद्ध सदैव विद्रोह किया करते थे। इसलिये आदम खां को एक अच्छी सेना देकर उनके दमन के लिये भेजा गया। बैराम खां को आदम खां पर सदैव सन्दहे रहा करता था इसलिये उसने सोचा कि हतकान्त आदम को जागीर में दे दिया जाये जिससे वह दरबार से दूर चला जावे और वहाँ के विद्रोहियों को भी दण्ड मिल जाये। इस प्रकार दो उद्देश्यों की पूर्ति हो जाये। इस विचार के अनुसार उसको यह जागीर देकर रवाना किया गया। उसके साथ बहादुर खां, खानजहाँ, सईद महमूद बरहा, शाहकुली खां महरम, सादिक, इस्माईल कुली खां, खुर्रम खां, अमीर खां और कितने ही वीर तथा सेना भेजी गई, ईश्वर की सहायता से उन्होंने उस प्रदेश का दमन कर दिया और राजद्रोही लोगों को उपयुक्त दण्ड मिल गया।

कन्धार ईरान के शाह को वापस दिया

पहले लिखा जा चुका है कि शाह मुहम्मद किलाती ने खानजमा के भाई को हरा दिया था। किलाती ने ईरान के शाह को यह वचन देकर सेना मंगवाई थी कि विजय के पश्चात् दुर्ग शाह को दे दिया जायेगा। परन्तु जब विजय प्राप्त हो गई तो उसने अपना वचन नहीं निभाया इसलिये कन्धार को छीन लेने के लिये ईरान के शाह ने अपने भाई के पुत्र सुल्तान हुसेन मिर्जा को हुसेन बेग उगली, इसतजलु को और वली खलीफा शामलू को नियुक्त किया। अकबर के अधिकारियों ने वीरतापूर्वक दुर्ग की रक्षा की और घेरा लम्बे अर्से तक चला। एक दिन रुस्तम जैसे वीर रात्रि में नये दरवाजे से बाहर निकले। उन्होंने वली खलीफा शामलू की तोपों पर आक्रमण किया। उसको आहत किया और बहुतों को मार डाला। फिर परस्पर सलाह करके सुल्तान हुसेन मिर्जा दुर्ग के नीचे से वापस हट गया।

यह अपना उद्देश्य पूरा नहीं कर सका। तब ईरान के शाह को बड़ा क्रोध आया और उसने सिराज के गवर्नर अली कुली मुल्तान और वली खलीफा शामलू को एक बड़ी सेना देकर रवाना किया और उन्हें आदेश दिया कि जैसे भी हो दुर्ग को जीता जाये। अली कुली सुल्तान ने प्रस्थान करते समय बड़ी शेखी मारी थी। उसने दुर्ग की विजय के लिये बड़ा प्रयास किया था परन्तु उसको एक गोली लगी और उसका जीवन समाप्त हो गया। अकबर ने कोई सहायता, सेना नहीं भेजी थी तो भी ईरान की इतनी बड़ी सेना परेशान हो रही थी। सुल्तान हुसेन मिर्जा को न तो वापस लौटने का साहस होता था और न वहाँ ठहरे रहना उचित जान पड़ता था। उसके डेरे दुर्ग के आसपास लगे हुए थे और वह बड़ा व्याकुल था। इसी बीच में 'शाह मुहम्मद किलाती ने दरबार में निवेदन पत्र भेजा और सारी स्थिति समझाई तो उसके नाम फरमान जारी हुआ कि ''बादशाह हुमायूं कहा करता था कि भारत पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् वह कन्धार शाह को वापस दे देगा। अब इन लोगों से लड़ते रहना उचित नहीं है और मामले को इतना नहीं बढ़ाना चाहिए। दुर्ग शाह के कर्मचारियों के सुपुर्द कर देना चाहिए और तुमको क्षमा मांगकर दरबार में उपस्थित हो जाना चाहिये।'' इस अवसर पर बड़ी नम्रता और मानवता प्रकट की गई और दिए हुए वचन को निभाया गया। शाही आदेश के अनुसार शाह मुहम्मद ने कन्धार सुल्तान हुसेन मिर्जा को समर्पित कर दिया और वह स्वयं दरबार के लिए रवाना हुआ। उसको शाही कृपायें प्राप्त हुईं।

शाह कुली खां जोगी बन गया। शाह कुली खां महर्रम के पास कबूल खां नामक एक लड़का था जो नृत्य करना जानता था। शाह कुली खां इससे प्रेम करता था। शाहिनशाह को अपने सेवकों क: ऐसा आचरण पसन्द नहीं था; क्योंकि ऐसा स्नेह शुद्ध हो तो भी इसमें अनौचित्य मिला रहता है जो बुद्धिमान लोगों के अनुसार निषिद्ध है। शाह कुली ने अपनी आदत नहीं छोड़ी इसलिए आदेश दिया गया कि उस लड़के को उससे छीनकर अंगरक्षकों के सुपुर्द कर दिया जाये। शाह कुली खां को बड़ी वेदना हुई और उसने अपने नाम और कीर्ति को भस्म कर दिया। उसने जोगी के-से कपड़े पहन लिए और एकान्त में रहने लगा। बैराम खां ने उसको सान्त्वना देने के लिए एक कविता लिखी और उसके सुधार के लिए प्रयत्न किये। तब शाहकुली खां आकर शाहिनशाह की सेवा करने लगा और अपने कर्मों पर लज्जित हुआ। अकबर ने उसके प्रति अन्ततः कृपा की।

मन्धाकर के पास शिकार

मन्धाकर आगरे से छः कोस दूर है। जब अकबर वहाँ शिकार में व्यस्त था तो एक चीते ने हिरण के बच्चे का पीछा किया और उसको मुंह में दबाकर ले जाने लगा। तब बच्चे की मां ने प्रेमाकुल होकर चीते पर भयंकर प्रहार किया। चीते को शिकार मिल जाने बड़ा हर्ष था परन्तु वह बुरी तरह गिर पड़ा। प्रत्यक्ष में ऐसा मालू होता था कि वह माता की चोट से गिरा है, परन्तु वास्तव में अकबर के अनुग्रह से गिरा था। हिरण का बच्चा मृत्यु के मुख से बच निकला और अपनी माता के साथ मैदान में भाग गया। आगरा में रहते समय अकबर राजकाज की उपेक्षा करता था। वास्तव में वह अपने लोगों की परीक्षा ले रहा था। वह चीतों से हिरणों की शिकार करवाया करता था और हाथियों की लड़ाई से मनोविनोद

किया करता था परन्तु उसकी प्रतिभा दिन प्रतिदिन प्रकट होती चली जाती थी। मैं अबुल फजल उसके समय का संक्षिप्त इतिहास लिख रहा हूं। जो लोग घटनाओं से परिचित हैं उनसे पूछ-पूछ कर लिखता हूं। मुझे आश्चर्य है कि इस साम्राज्य के योग्य आदमियों ने इतिहास क्यों नहीं लिखा? स्वयं शाहिनशाह ने तो आश्चर्यजनक घटनाओं का वृत्तान्त तो नहीं लिखाया परन्तु इन योग्य लोगों ने उपेक्षा क्यों की और घटनाओं को संग्रह क्यों नहीं किया। यदि ईश्वर ने मुझे पर्याप्त जीवन प्रदान किया तो मैं शाहिनशाह की सेवा में रहकर इसके समय का वृत्तान्त लिखूंगा। सारांश यह है कि यद्यपि शाहिनशाह उपेक्षा में दिन व्यतीत कर रहा था परन्तु संसार के सब देशों से बड़े-बड़े बुद्धिमान और सूरवीर तथा फकीर व कलाविद् अपनी इच्छायें पूर्ण करने के लिए उसके पास आया करते थे। उसके दरबार में हर्ष और उल्लास बढ़ता जाता था।

***

प्रकरण 20

चतुर्थ इलाही वर्ष

चतुर्थ इलाही वर्ष का आरम्भ 12 मार्च, 1559 को हुआ। इस वर्ष आदेश दिया गया कि एक उपयुक्त सेना पूर्व की ओर भेजकर लखनऊ और उससे लगे हुए इलाके अली-कुली खां से छीन लिए जाये जिससे उसकी प्रमाद-निद्रा भंग हो। यह आदेश दिया गया कि ''यदि वह सीधे मार्ग पर आ जाये और राजभक्ति ग्रहण कर ले और उस रेबारी के लड़के को जिसके कारण वह दरबार की उपेक्षा करता है, छोड़ दे और दरबार में आकर अधीनता प्रकट करे तो उस पर कृपा की जायेगी। फिर वह शाही सेना के साथ जौनपुर जाये और वहाँ अफगानों को दण्ड दे, जो अब भी राजद्रोह कर रहे हैं। वहाँ वह अपने लिए स्थान बना ले। तब उसकी मूर्खतायें क्षमा कर दी जायेंगी और उसको सहायता दी जायेगी।'' सैनिक सरदारों को आदेश दिया गया कि वे अपनी-अपनी जागीरों पर जाकर अली कुली खां को सहायता देने के लिये तैयारी करें। यदि वह शाही कृपा से प्रभावित न हो तो उसका दमन किया जाये। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया खां, गूंग, सुल्तान हुसेन खां जलेर, मुहम्मद खां जलेर, शाहम खां जलेर, हाजी मुहम्मद खां, सीसतानी चलमा खां, कमाल खां गक्खड़ और कई अन्य शाही वीरों को भेजा गया। अली कुली खां के नाम आदेश हुआ कि वह लखनऊ को शाही अधिकारियों के सुपुर्द करके दरबार में उपस्थित होवे। काल्पी के शासक अब्दुल्ला खां उजबेग को भी आदेश हुआ कि वह भी इस अभियान में सम्मिलित हो और स्वामिभक्तिपूर्वक काम करे। इस आदेश को सुनकर अलीकुली खां लखनऊ को जलेर के सरदारों के सुपुर्द करके जौनपुर की विजय के लिये रवाना हो गया। इस समय जौनपुर इब्राहीम के हाथ में था। इसका उल्लेख पहले किया जा चुका है। जब

मुबारित खां मारा गया और हेमू समाप्त हो गया तो यह ज्यों-त्यों जौनपुर आ गया था। लड़ाई किये बिना ही अली कुली ने जौनपुर ले लिया और एक बड़ा प्रदेश उसके हाथ में आ गया। उसने वीरता के काम किये और सबसे अच्छा यह काम किया कि उसने शाहम को अपने पास से हटा दिया और दरबार में भेंट भेजी। इसी वर्ष रेबारी का लड़का भी मारा गया। यह शुरू में अब्दुल रहमान का प्रेम मात्र था। इनका परस्पर प्रेम था। इस कारण शाहम अब्दुल रहमान के मकान पर जाया करता था। और आरामजान को याद किया करता था और कहा करता था कि उसे मुझे दे दो।

आरामजान एक वेश्या थी। अलीकुली खां उसके प्रेम में डूबा हुआ था और उसकी बात मानता था। इस वेश्या का हजारों से सम्बन्ध रह चुका था परन्तु अली कुली खां ने उससे विवाह कर लिया। वह शाहम बेग के साथ मद्यपान किया करता था और उस समय आरामजान नाचा करती थी। शाहम बेग भी आरामजान से प्रेम करने लगा तो अली कुली खां ने वह उसको दे दी। शाहम बेग ने वह कुछ दिन अपने पास रखी और फिर अब्दुल रहमान को दे दी। अब्दुल रहमान उसको पर्दे में रखने लगा। एक दिन शाहम बेग, अब्दुल रहमान के यहाँ खाना खाने गया तो उसको आरामजान का स्मरण आया और वह व्याकुल हो गया। वह समझता था कि अली कुली खां की भांति अब्दुल रहमान भी आरामजान को उसे दे देगा परन्तु अब्दुल रहमान को उसकी बात सुनकर बड़ा क्रोध आया। अन्त में शाहम बेग आरामजान को वहाँ से ले गया और एक पास के बाग में उसके साथ मद्यपान करने लगा। तब अब्दुल रहमान बेग का भाई वहाँ आया शाहम बेग की उससे लड़ाई हुई जिसमें एक तीर शाहम बेग के लगा और उसके प्राणों का अन्त हो गया। अब्दुल रहमान शाही दरबार में आ गया।

जब अली कुली खां ने यह वृत्तान्त सुना तो उसको अपार शोक हुआ। वह अब्दुल रहमान बेग का पीछा करता हुआ गंगा नदी तक आ पहुंचा और रेबारी के लड़के के शव को जौनपुर ले गया और एक तालाब के किनारे उसको दफनाया और उस पर एक बड़ा स्मारक बनवाया।

इसी वर्ष सहम अनगा के छोटे पुत्र आदम खां का बकलान निवासी बाकी खां की पुत्री के साथ विवाह हुआ। बाकी खां बहुत अर्से तक मिर्जा हिन्दाल का सचिव था।

***

प्रकरण 21

मुल्ला पीर मुहम्मद खां को कारावास में डाला

बैराम खां अब अपने अभ्युदय के शिखर पर पहुंच चुका था। अतः उसके स्वभाव में कर्कशता आने लगी। अदूरदर्शी और कलहोत्पादक लोगों के प्रभाव से जो दूसरे के उदय

से दुखी हुआ करते हैं। बैराम खां कादिल नासिरुल मुल्क मुल्ला पीर मुहम्मद की ओर से फिर गया। पीर मुहम्मद की राजभक्ति पूर्ववत् बनी हुई थी और वह राजनैतिक और वित्तीय कार्यों को भक्ति और लगन के साथ किया करता था। ऐसे व्यक्ति से बड़े और छोटे सब लोग ईर्ष्या किया करते हैं और उसको बदनाम करने का यत्न करते हैं। ऐसे लोगों की भिनभिनाहट से भले आदमियों का दिमाग परेशान हो जाता है। इसलिये ये लोग पीर मुहम्मद खां के विषय में कई प्रकार की कहानियां घड़ने लगे। बैराम खां के अभ्युदय का अन्त अब निकट था। उस पर ईर्ष्यालु लोगों का प्रभाव बढ़ने लगा जिससे वह पीर मुहम्मद पर शंका करने लगा। पीर मुहम्मद ने कोई ऐसा कार्य नहीं किया था जिसके कारण उसको अपने पद से अलग किया जाये परन्तु द्वेषपूर्ण लोगों की बातों में आकर बैराम खां ने इस ईमानदार व्यक्ति पर विश्वास करना छोड़ दिया।

एक बार नासिरुलमुल्क कुछ दिन तक बीमार रहा तो खानखाना उससे मिलने के लिये गया। एक तुर्की दास पहरेदार था। उसने खानखाना से कहा ''मैं अभी आपके आगमन की सूचना देता हूं।'' इससे खानखाना चिढ़ गया। जब पीर मुहम्मद को इसका पता लगा तो उसने बाहर आकर बहुत क्षमा मांगी। खानखाना के साथ केवल गिनती के लोगों को ही अन्दर जाने दिया। इससे खानखाना क्रुद्ध हुआ और वह नासिरुलमुल्क के विरुद्ध विचार करने लगा। ईर्ष्यालु लोगों ने इस अवसर पर उपयोग किया। ऐसे लोगों में शेख गदाई सबसे आगे था। इन लोगों ने पीर मुहम्मद के विषय में कई बातें कहीं। दो-तीन दिन बाद ख्वाजा अमीनुद्दीन महमूद, मीर अब्दुल्ला बख्शी, ख्वाजा मुहम्मद हुसैन बख्शी और कुछ सेवकों को भेजकर नासिरुलमुल्क से कहलाया ''जब तुम कन्धार से आये तो एक निर्धन विद्वान् के वेष में थे। तुम सरल और ईमानदार मालूम होते थे और तुमने अच्छी सेवा की इसलिए मैंने तुमको ऊंचे पद पर पहुंचाया। तुम मुल्ला थे परन्तु सेनानायक बन गये। तुम इस योग्य नहीं थे इसलिये अभ्युदय का एक प्याला पीते ही बहक गये। हम को भय है कि शायद तुम कोई बहुत बड़ी बुराई कर बैठो जिसका सुधारना कठिन हो जावे। इसलिये यह अच्छा होगा कि कुछ समय के लिये तुम अपने हाथ-पांव सिकोड़ लो और एक कोने में बैठ जाओ। अपना निशान नक्कारा और उच्च पद के अन्य चिन्ह वापस करके तुम अपने ढंग को सुधारने में लग जाओ। इसमें तुम्हारी भलाई है। फिर जो भी हम तुम्हारे विषय में उचित होगा करेंगे।''

''यह सन्देह सुनते ही पीर मुहम्मद खां ने प्रसन्नचित से सेवा-निवृत्ति स्वीकार कर ली। फिर कुछ दुष्ट प्रकृति के लोगों के बहकाने से बैराम खां ने उसको किसी दुर्ग में बन्द करने का निश्चय किया। इस विचार के अनुसार कुछ लोगों के साथ मुल्ला को बयाना के दुर्ग में भेज दिया। वहाँ पहुँच कर पीर मुहम्मद ने कुछ लोगों के द्वारा हज जाने की अनुमति प्राप्त कर ली और वह गुजरात की ओर रवाना हो गया। जब वह राधनपुर (गुजरात) पहुंचा तो फतहखां बलूच ने उसकी देखरेख की और उसका सम्मान किया। उसी समय मिर्जा सरफूद्दीन हुसैन और आदम खां के पत्र आये जिनमें लिखा था कि तुम जहाँ हो वहीं ठहरो और आगे की घटनाओं की प्रतीक्षा करो।'' पीर मुहम्मद वहाँ से वापस आकर झेन में रहने

लगा जो रणथम्भौर के निकट है। उसने उस घाटी की किला बन्दी कर ली। जब बैराम खां को इस बात का पता लगा तो उसको गिरफ्तार करने के लिये शाह कुली महरम, खरम खां और कुछ सैनिकों को भेजा गया। जब ये लोग पहुंचे तो लड़ाई हुई। जब रात हुई तो पीर मुहम्मद खां उस स्थान को छोड़कर कुछ अनुचरों के साथ चला गया। उसका सामान उन लोगों के हाथ में आ गया जो उसको गिरफ्तार करने के लिये भेजे गये थे।

सारांश यह है कि बैराम खां ने लागों के बहकाने से इस ईमानदार और योग्य सेवक को पृथक् कर दिया। इस प्रकार उसने अपने अभ्युदय के पैर में कुल्हाड़ी मारी। शाहीन शाह, सारा राजकाज बैराम खां के सुपुर्द करके पर्दे के पीछे रहा करता था और लोगों के चरित्रों को परखा करता था इसलिये उसने कुछ नहीं किया और समझा कि इस दुष्कर्म का बदला ईश्वर लेगा। पीर मुहम्मद खां के स्थान पर बैराम खां ने हाजी मुहम्मद खां सीसतानी को वकील नियुक्त किया। यह बैराम खां का पुराना सेवक था। यद्यपि हाजी मुहम्मद को वकील नियुक्त किया था परन्तु इस पद का काम शेख गदाई किया करता था जो सदर था। गदाई से पूछे बिना बैराम खां कोई राजनीतिज्ञ या वित्तीय काम नहीं करता था। शेख गदाई का मस्तिष्क पद के मद से भिन्ना गया था। वह गरीब और निर्बल लोगों पर ध्यान नहीं देता था। इस व्यक्ति का पतन इसी कारण हुआ, इसी से बैराम खां का भी पतन हुआ।

***

प्रकरण 22

रणथम्भौर का घेरा

रणथम्भौर की विजय के लिए हबीब वली खान को भेजा गया। यह दुर्ग अपनी ऊंचाई और दृढ़ता के लिए प्रसिद्ध था। सलीम खां ने इसको अपने दास जझर खां के सुपुर्द कर दिया था। जब अकबर बादशाह बना तो जफर खां ने चाहा कि यह दुर्ग शाही अफसरों के हाथ में नहीं आ जाने चाहिए, इसलिए उसने यह राय सुरजन को बेच दिया। राय सुरजन राणा उदयसिंह का सेवक था और उस प्रदेश में बड़ा शक्तिशाली था। उसने दुर्ग में मकान बनाए और वहाँ रहने लगा। उसने आसपास के गाँव भी दबा लिए। तब अकबर ने विचार किया कि इस दुर्ग को छीन लिया जाये। अतः हबीब अली खां और अन्य सैनिक अफसरों को भेजा गया। इस सेना ने दुर्ग को घेर लिया और ज़ोर की लड़ाई हुई। शत्रु हिल उठा परन्तु ईश्वर की इच्छा थी कि इस दुर्ग की विजय शाहिनशाह के हाथ से ही हो। इसलिए इसी समय बैराम खां का उत्पात शुरू हो गया और दूरदर्शी लोगों ने समझा कि इसकी अपेक्षा दूसरे काम अधिक आवश्यक है, इसलिए उन्होंने घेरा जारी नहीं रखा।

शेख मुहम्मद की धृष्टता

उस समय अकबर को चीतों के शिकार का बड़ा शौक था। इसलिए वह ग्वालियर की ओर गया। उस समय कुछ शिकारियों ने निवेदन किया कि शेख मुहम्मद के साथ पशुओं के व्यापारी गुजरात से ऐसे बैल लाये हैं जो अनुपम हैं और शाही शिकार के सामान के लिये उपयुक्त हैं। तब आदेश दिया गया कि व्यापारियों को मुनासिब मूल्य देकर बैल लाये जाये। इसके बाद यह मालूम हुआ कि शेख मुहम्मद और उसके रिश्तेदारों के पास और भी अच्छे बैल हैं और वह अपने सम्मान के लिए उनको बादशाह को भेंट कर देगा। तब अकबर शेख के निवास पर गया। शेख ने समझा कि उसका भाग्य खुल गया; क्योंकि उसको बादशाह की शरण मिल गई और वह बैराम खां के अत्याचार से बच जायेगा। इस तरह से शेख ने अपने सारे पशु बादशाह को भेंट कर दिये। मुलाकात के अन्त में शेख ने बादशाह से पूछा ''क्या आप किसी के शिष्य बन चुके हैं।'' अकबर ने उत्तर दिया नहीं तब शेख ने अपना हाथ बढ़ाया और बादशाह के हाथ में डालकर कहा ''हमने आपका हाथ पकड़ लिया है।'' शाहिनशाह हंस कर रह गया। इस घटना का उल्लेख शाहिनशाह अपनी गोष्ठियों में किया करता था। यह शेख कितना मूर्ख था और शाहिनशाह कितना शिष्ट था। शेख प्राय: शेखी मारा करता था। उसको अपने आचरण पर पश्चात्ताप नहीं था। तथापि शाहिनशाह ने उसकी उपेक्षा की और उसको सुधारने के लिये कुछ नहीं किया। यह शेख, शेख बहलूल का छोटा भाई था। दोनों भाई पहाड़ पर कुटियों में रहा करते थे और तन्त्र-मन्त्र किया करते थे। भोले लोग इनकी बातें में आ जाते थे। शेख का बड़ा भाई बादशाह हुमायूं की सेवा करता था जिसका तन्त्र-मन्त्र की ओर झुकाव था। जब अकबर का राज्य हुआ तो शेख आगरा आया और दरबार में उपस्थित हुआ, जहाँ उसे सम्मान प्राप्त हुआ। शेख गदाई को इस शेख से बैर था। उसने खानखाना को इस शेख की लिखी हुई पुस्तक बताई जिसमें उसने अपने लिए विचित्र बातें लिखी थीं। इनके द्वारा यह सीधे-साधे लोगों को अपनी ओर आकर्षित किया करता था। इससे खानखाना उससे नाराज हो गया। तब शेख खानखाना के दुर्व्यवहार के डर से भाग कर ग्वालियर चला गया और 10 मई, 1553 को उसकी मृत्यु हो गई।

मालवा के विरुद्ध अभियान

इस समय सुजाअत खां मालवा का शासक था। वह सुजावल खां भी कहलाता था। मालवा बड़ा सम्पन्न और उपजाऊ देश था। सुजाअत खां की मृत्यु के बाद यह देश उसके पुत्र बाजबहादुर खां के हाथ में आया।

सुजावल खां, सलीम खां के दरबार में रहा करता था। फिर उसको आशंका होने लगी तो वह अनुमति बिना ही मालवा चला गया। उसको पकड़ने के लिये सलीम खां एक बड़ी सेना लेकर वहाँ गया तो सुजावल खां ने डूंगरपुर के राजा के पास शरण ली। सलीम खां ने उसके पास अपने आदमी भेजे और वायदे करके उसको अपने पास बुला लिया। फिर सलीम खां ने सारा मालवा अपने विश्वस्त लोगों को जागीरों में बांट दिया। सुजावल खां को भी कुछ परगने दे दिये। तत्पश्चात् जब मुहम्मद खां अदली के हाथ में सत्ता आई

तो उसने मालवा सुजावल खां दे दिया, जो मरण पर्यन्त वहाँ का सुबेदार बना रहा। उसके बाद बाजबहादुर सुबेदार बना। अब अकबर के हाथ में सत्ता आई तो उसने मालवा के प्रशासन की ओर ध्यान दिया। उसने निश्चय किया कि यदि बाजबहादुर अच्छा व्यवहार करे और दरबार में उपस्थित हो तो ठीक है। यदि नहीं तो ऐसे सम्पन्न देश को ऐसे इन्द्रियपरायण से मुक्त करना ही उचित होगा। इस विचार के अनुसार बहादुर खां को अब उधर भेजा गया। उसके साथ बड़े-बड़े अफसर थे। उद्देश्य यह था कि उत्पीड़ित लोगों के साथ सहानुभूति की जाये। बहादुर खां ने उस प्रान्त की विजय के लिए प्रयाण किया परन्तु जब उसकी सेना का शिविर सीरी [1] में लगा हुआ था तो बैराम खां के विद्रोह की खबर आई इसलिए उस प्रान्त की विजय का कार्य स्थगित कर दिया गया।

***

प्रकरण 23

पांचवें इलाही वर्ष की घटनाएं

इस वर्ष का आरम्भ 12 मार्च, 1560 को हुआ। अब बैराम खां अपने को युग का अद्वितीय पुरुष मानने लग गया था। वह समझता था कि उसका साहस प्रशासनिक क्षमता, कार्यपरायणता और सच्चाई किसी में नहीं है। चाटुकारों की बातें सुनकर वह यह मानने लगा था कि उसके बिना भारत का शासन नहीं चल सकता है। इसलिये उसने ऐसे लज्जाजनक कार्य किये जो उसको नहीं करने चाहिये थे। एक बार एक शाही हाथी मस्त हो गया। महावत उसको नहीं संभाल सका। मस्त हाथी ने बैराम खां के एक हाथी पर आक्रमण किया और उसकी आतें निकाल दीं। बैराम खां को इतना क्रोध आया कि उसने मस्त हाथी के महावत को मरवा डाला। इस प्रकार उसने स्वामिभक्ति और आदर की सीमा का उल्लंघन किया। इससे भी अधिक विचित्र घटना यह हुई कि एक दिन शाहिनशाह का एक हाथी मस्त होकर जमुना में घुस गया। बैराम खां नाव में बैठ कर सैर कर रहा था। हाथी नाव की ओर आने लगा। बैराम खां बड़ा डरा परन्तु अन्त में महावत ने हाथी को बस में कर लिया और बैराम खां बच गया। जब इस घटना की सूचना शाहिनशाह को मिली तो बैराम खां को सान्त्वना देने के लिये महावत को बांध कर उसके पास भेज दिया गया। महावत निर्दोष था परन्तु अब बैराम खां का पतन निकट ही था इसलिये उसने महावत को मरवा डाला और इस बात का विचार नहीं किया कि वह शाही हाथी का महावत था और शाहिनशह ने शिष्टता से प्रेरित होकर उसको बांध कर बैराम खां के पास भेजा था। उसने

---

1. यह या तो ग्वालियर के निकट का शिवपुरी होगा या बुन्देलखण्ड का सियोरहा हो सकता है। किसी किसी प्रति में सीपकी लिखा है।

यह भी नहीं सोचा कि जब हाथी मस्त हो जावे तो उसका क्या किया जा सकता है। तथापि शाहिनशाह ने इसकी उपेक्षा की। बैराम खां ने ऊंचे-ऊंचे पद अपने चाटुकारों को दे दिये थे। स्वर्गीय बादशाह हुमायूं ने उसको अकबर का अतालिक (संरक्षक) नियुक्त किया था। अकबर उसकी खान बाबा शब्द से सम्बोधन करता था। इसीलिये बैराम खां की ओर से मर्यादाओं का उल्लंघन होने लगा। इसका कारण यह था कि वली-बेग-जुअलकादर और शेख गदाई-काम्बू जैसे कपट-कुशल चाटुकार उसको बहकाया करते थे। बैराम खां के मस्तिष्क में विनाशकारी भाव भर गये। जब अकबर को इसका पता लगा तो उसने माहम अनगा, आदम खां, मिर्जा शरफुद्दीन हुसेन और कई दरबारियों से बात की और कहा कि अब मैं राजसत्ता अपने हाथ में लेकर बैराम खां और उसके चाटुकारों को दण्ड देना चाहता हूं जिससे उनकी प्रमाद निद्रा भंग हो जाये। माहम अनगा ने अकबर के विचारों की शिहाबुद्दीन अहमद खां को गुप्त रूप से सूचना भेज दी। 19 मार्च, 1560 को अकबर अलीगढ़ के समीप शिकार करने के लिये रवाना हुआ और उसने जमुना नदी को पार किया। दूसरे दिन अकबर जलेसर पहुंचा और वहाँ से सिकन्दरा गया। माहम अनगा ने आदम खां के श्वसुर मुहम्मद बाकी बकलानी को भी यह गुप्त बात बतला दी थी। बकलानी ने इसकी सूचना बैराम खां को दे दी परन्तु बैराम खां ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। उस समय अकबर की माता मरियम मकानी दिल्ली में बीमार थी इसलिये अकबर दिल्ली की ओर रवाना हुआ और खुर्जा पहुंचा। वहाँ शिहाबुद्दीन अहमद खां और उसके भाई-बन्धु अकबर से मिले। फिर अकबर 27 मार्च, 1560 को दिल्ली पहुंचा। अकबर ने अपने विशेष अनुचरों से और वृद्ध कुटुम्बियों से कहा कि बैराम खां अपने सत्पथ से विचलित हो गया है। इसलिये उसकी उपेक्षा करके मैं दिल्ली आ गया हूं। इसके बाद बड़े-बड़े अमीर अकबर के पास उपस्थित होने लगे और उनको ऊंचे पद प्राप्त होने लगे। शमसुद्दीन मुहम्मद खां अतका दरबार में उपस्थित हुआ तो उसको आशातीत पदवृद्धि प्राप्त हुई। दूरदर्शिता और सतर्कता की दृष्टि से उसने दिल्ली के दुर्ग की मरम्मत शुरू करवा दी। फिर दूर-दूर यह खबर फैल गई कि अब बैराम खां पर शाहिनशाह अकबर की कृपा नहीं है। यह खबर सुनते ही किया खां गूंग अकबर के पास उपस्थित हुआ। यह पुराना और योग्य उच्चाधिकारी था। उसके पश्चात् अन्य कर्मचारी दरबार में आने लगे। माहम अनगा और शिहाबुद्दीन अहमद खां मिलकर वकालत का काम करने लगे।

***

प्रकरण 24

बैराम खां की निद्रा खुली

उपरोक्त घटनाओं के घटने पर भी बैराम खां नहीं समझा कि उसका पासा उलट गया है। परन्तु शीघ्र ही यह प्रकट हो गया कि अकबर शिकार के बहाने से दिल्ली गया

था। उसका उद्देश्य कुछ और ही था। अब बैराम खां को मालूम हो गया कि उसको पद से हटा दिया गया है। उसने तरसून मुहम्मद खां, हाजी मुहम्मद खां सीसतानी और ख्वाजा अमीनुद्दीन महमूद को दरबार में भेजकर अपनी अधीनता प्रकट की और अपने अपराधों की क्षमा मांगी। इन प्रतिनिधियों को वापस नहीं जाने दिया और वस्तुस्थिति का पता बैराम खां को उनके पत्रों से लगा तो वह अचम्भित हो गया। तब उसने व्याकुल होकर अकबर के पास उपस्थित होने का निश्चय किया। सलाहकारों ने अकबर को सलाह दी कि बैराम खां से नहीं मिला जाये। उसके आने से पहले ही अकबर लाहौर चला जाये। यदि बैराम खां लाहौर पहुंचे तो अकबर काबुल चला जाये। दूसरे सलाहकारों की सम्मति थी कि इस प्रकार चला जाना उचित नहीं है। बैराम खां के साथ लड़ाई करने की तैयारी की जाये। अन्त में तरसून मुहम्मद खां और मीर हबीब उल्ला को भेजकर बैराम खां से कहलाया कि वह नहीं आये। बादशाह उससे किसी भी हालत में नहीं मिलेगा। अब बैराम खां के मन में कई विचार उत्पन्न हुए। मुख्य विचार यह था कि प्रत्यक्ष में राजभक्त बना रहे और राजद्रोह करे। दूसरा विचार यह था कि अपना शेष जीवन तीर्थस्थानों पर व्यतीत किया जाये। अब अकबर शासन का सूत्र अपने हाथ में लेना चाहता था, इसलिये बैराम खां ने सोचा कि मक्का पहुंच कर खुदा की याद करना ही अच्छा मार्ग है। अन्त में बैराम खां ने प्रकट किया कि वह मक्का जा रहा है परन्तु उसने इसकन्दर अफगान के पुत्र गाजी खां को इसलिये भेजा कि शाही इलाकों में उपद्रव करे। उसने सब ओर गुप्त पत्र भेजे। जब इस बात की खबर अकबर के कानों तक पहुंची तो उसने बैराम खां के नाम एक फरमान जारी किया।

''तुम्हारे सलाहकारों के कारण तुम विपत्ति में फंस गये हो। तुमने इसका परिणाम नहीं सोचा है और इसकन्दर खां के पुत्र को उपद्रव करने के लिए प्रेरित किया है। तुमने तातार खां आदि अन्य लोगों को भी उपद्रव करने के लिये उकसाया है। तुम अलवर की ओर जा रहे हो और वहाँ से तुम्हारा विचार लाहौर जाने का है। हम जानते हैं कि तुम स्वयं तो राजभक्त हो परन्तु बुरे सलाहकारों ने तुमको ऐसी सलाह दी है। तुमने यह भी कहा कि राजद्रोह करके तुम कलंकित नहीं होना चाहते हो। अब तुमने मक्का की यात्रा करने का दृढ़ निश्चय कर लिया है तो तुमको अपनी इच्छानुसार हमसे मिलने की अनुमति दी जाती है। हम तुम्हारी गत सेवाओं का स्मरण करके तुम पर अनुग्रह करेंगे।''

बैराम खां पर इसका कुछ प्रभाव नहीं हुआ और वह विनाश-पथ पर ही चलता रहा। शासन का सूत्र माहम अनगा ने अपने हाथ में ले लिया। शिहाबुद्दीन अहमद और ख्वाजा जहाँ उसके सहायक बन गये। माहम अनगा ने अली कुली खां के भाई बहादुर खां को वकील नियुक्त करके अकबर को सूचित कर दिया। इस पद के लिए जितनी योग्यता और परिश्रमशीलता चाहिये थी उतनी बहादुर खां में नहीं थी। यह नियुक्ति इसलिये की गई थी कि किया खां गुंग सुल्तान हुसेन जलाईर और मुहम्मद अमीन दीवाना बहादुर खां से मिले हुए थे और सब मिलकर शिहाबुद्दीन अहमद खां ख्वाजा जहाँ और अन्य लोगों का विरोध करते थे। इस विरोध को दबाने के लिये बादशाह अकबर ने बहादुर खां की नियुक्ति मान

ली थी। किया खां को बहराईच की जागीर देकर वहां भेज दिया। सुल्तान हुसैन खां को कुछ दिन बन्दी रखकर मुक्त कर दिया। मुहम्मद अमीन दीवाना भाग गया और इधर-उधर मारा-मारा फिरने लगा। इस प्रकार ये लोग छिन्न-भिन्न हो गये। तब बहादुर खां को ईटावे की जागीर देकर वहाँ भेज दिया और फिर उसे पदच्युत कर दिया। वास्तव में बहादुर खां का तो केवल नाम था। वकील के पद का कार्य माहम अनगा ही करती थी; क्योंकि बुद्धि, साहस आदि गुण थे।

***

प्रकरण 25-26

बैराम खां के दमन के लिये शाही सेना का प्रयाण

बैराम खां और उसके साथियों की योजनायें विफल हो गईं। 8 अप्रैल, 1560 को बैराम खां आगरे से निकलकर अलवर की ओर चला। बयाना पहुंच कर उसने शाह अबुल मआली और मुहम्मद अमीन दीवाना को जो वहाँ दुर्ग में बन्दी थे मुक्त कर दिया। प्रत्यक्ष में तो उसने उनसे कहा कि वे शाही दरबार में उपस्थित होवें परन्तु उसका हार्दिक अभिप्राय तो और ही था। ये लोग उत्पात करने में ही कुशल थे। बैराम खां चाहता था कि वे राजद्रोह करें।

जब अकबर को मालूम हुआ कि बैराम खां आगरा से चल दिया है और उसका विचार पंजाब की ओर जाकर उपद्रव करने का है तो बादशाह ने सोचा कि दिल्ली से नागौर पहुंचा जाये, जिससे बैराम खां उधर की ओर अपने कदम न जमा सके और पंजाब जाने का उसका मार्ग रुक जाये। इस उद्देश्य से शाही सेना 18 अप्रैल, 1560 को दिल्ली रवाना हुई। पहली मंजिल पर जाकर शाहिनशाह ने मीर अब्दुल लतीफ कछविनी को बैराम खां को समझाने के लिए भेजा। अब्दुल लतीफ कछविनी बुद्धिमान और राजभक्त था। बैराम खां से कहलाया कि तुम्हारी सेवा सर्व-विदित है। पहले हम आमोद-प्रमोद में लगे रहते थे और राजकाज सारा तुम्हारे हाथ में सौंप रखा था। अब हमने शासन-कार्य की ओर ध्यान लगा दिया है। इसलिये तुम राजकार्य को छोड़कर मक्का की यात्रा करो। तुमको पहले से ही यात्रा करने की इच्छा थी। तुम जहाँ चाहोगे वहां तुम्हारे खर्च के लिये जागीर दे दी जायेंगी और हर फसल की आमदनी तुम्हारे पास पहुंचती रहेगी।

शाह अबुल मआली राजद्रोह करके उत्पात करना चाहता था। उसकी योजना थी कि शाही सेना में प्रवेश करके फिर कोई उपद्रव किया जाये। बयाना के दुर्ग से मुक्त होकर

वह झंझर पहुंचा, जहाँ उस समय अकबर की सेना का शिविर लगा हुआ था। शाहिनशाह ने आदेश दिया कि उसको बेडियां डालकर शिहाबुद्दीन अहमद खां के सुपुर्द कर दिया जाये और उसको हज्जाज भेज दिया जाये।

ज्यों-ज्यों बैराम खां का राजद्रोह बढ़ता जाता था, त्यों-त्यों उसके प्रतिष्ठित साथी उसको छोड़ते जाते थे। नासिरुलमुल्क पीर मुहम्मद खां शेखानी उसको छोड़कर शाही दरबार में आ गया। शाहिनशाह ने उसको खान की उपाधि प्रदान की और नक्कारा और निशान से सुशोभित किया।

अब यह सोचा गया कि बैराम खां का पीछा करने वाली शाही सेना का नेतृत्व स्वयं अकबर को नहीं करना चाहिये। अतः आदम खां, पीर मुहम्मद खां, मजनू खां को बड़ी सेना देकर नागौर की ओर रवाना किया गया। इनको आदेश दिया गया—यदि बैराम खां मक्का की यात्रा पर न जाये और पंजाब की ओर जाकर उत्पात करना चाहे तो उसको दण्ड दिया जाये। अन्यथा उसको साम्राज्य से रवाना करने की व्यवस्था कर दी जाये। नागौर और उसका इलाका शरिफुद्दीन अहमद के सुपुर्द कर दिया गया। बैराम खां ने सिकन्दर खां के पुत्र को और गाजी खां तनर के पुत्र को सम्भल के इलाके में गड़बड़ मचाने के लिये भेजा था। इन लोगों ने मितर सेन से मिलकर वहाँ उपद्रव किया। उसका दमन करने के लिये अकबर ने मुहम्मद सभीक खां को भेजा जिसने उनको दण्ड दिया। फिर शाही सेना तो बैराम खां का पीछा करने के लिये रवाना हो गई और अकबर 3 मई, 1560 को वापस दिल्ली आ गया।

जब बैराम खां सरकार मेवात में था तो उसके शिविर में यह खबर फैल गई कि शाही सेना उसका पीछा करती हुई आ रही है। तब और भी अफसर उसको छोड़कर जाने लगे। उसके पास केवल वली बेग, उसके दो पुत्र हुसेन कुली बेग और ईस्माइल कुली-बेग तथा शाह कुली खां बैरम और हुसेन खां और कुछ इने-गिने लोग रह गये। सैनिकों के झुण्ड के झुण्ड उसका पक्ष त्याग कर शाहिनशाह के पास चले गये। तब बैराम खां ने देख लिया कि उसकी स्थिति बिगड़े बिना नहीं रहेगी। अतः उसने अकबर के पास प्रार्थना पत्र भेजा और तीर्थस्थानों की यात्रा करने की अनुमति मांगी। उसने कुछ हाथी एक निशान, एक नक्क़ारा और अन्य पद चिन्ह हुसेन कुली बेग के साथ अकबर के पास भेज दिये। जो शाही उच्च कर्मचारी बैराम खां का पीछा कर रहे थे उनको उसने लिखा ''आप लोग क्यों कष्ट कर रहे हैं। अब मेरा हृदय संसार से फिर गया है। मैंने अपने पद के चिन्ह दरबार में भेज दिये हैं।'' हुसेन कुली खां दरबार में पहुंचा तो सब लोगों ने समझा कि बैराम खां यात्रा पर रवाना हो गया। कुछ समय बाद खबर आई कि बैराम खां मक्का की ओर नहीं, पंजाब की ओर गया है।

***

प्रकरण 27

बैराम खां का पलायन

शाही सेना बैराम खां का पीछा कर रही थी इसलिये वह साम्राज्य को छोड़कर बीकानेर राज्य में पहुंच गया। वहाँ का राजा राय कल्याण मल और उसका पुत्र रायसिंह उससे मिलने के लिये आये। वहाँ कुछ समय ठहर कर वह सोचता रहा कि उत्पात किस प्रकार किया जाये। उसकी प्रत्येक योजना विफल होती हुई दिखाई देती थी परन्तु उसके सलाहकार उसको भड़का रहे थे इसलिये उसने यात्रा करने का विचार त्याग दिया और वह खुले तौर पर विद्रोही बन गया। सीमा के कर्मचारियों को उसने लिखा कि मैं तो हज्जाज जा रहा था परन्तु मुझे मालूम हुआ कि कुछ लोग मेरे विरुद्ध अकबर के कान भर रहे हैं विशेषकर माहम अनगा मेरे विनाश के लिए यत्न कर रही है। इसलिये मैं पहले इन लोगों को दण्डित करना चाहता हूं। उसके बाद यात्रा पर रवाना होऊंगा। जब अकबर को बैराम खां के इन विचारों का पता चला तो उसके नाम निम्नलिखित फरमान लिखा गया।

***

प्रकरण 28

बैराम खां के नाम का फरमान

''खानखाना को विदित हो कि उसने इस परिवार की अच्छी सेवायें की थीं। उसके अच्छे गुणों की दृष्टि से बादशाह हुमायूं ने उस पर बड़ी कृपायें की थीं और उसको हमारा अतालिक (संरक्षक) नियुक्त किया था। बादशाह हुमायूं के देहान्त के पश्चात् बैराम खां ने वकील (प्रधानमंत्री) का पद ग्रहण किया और तत्परता से काम किया। इस पद पर उसने 5 वर्ष तक काम किया तो उसके कुछ अनुचित कार्य दृष्टि में आये। उसने शेख गदाई को सदर के पद पर नियुक्त किया। सदर के काम के अतिरिक्त शेख गदाई आदेशों पर अपनी मुहर लगाया करता था। वह योग्य नहीं था तो भी उसको दरबार में सैयदों और उलमाओं के ऊपर माना जाता था। वह घोड़े पर बैठा हुआ हमसे मिलता था। अपने छोटे-छोटे नौकरों को बैराम खां ने सुल्तान और खान की उपाधियां दी थीं और निशान तथा नक्कारों से सम्मानित किया था। वह अपने अनुचरों के भारी से भारी अपराधों की ओर ध्यान नहीं देता था परन्तु दरबार के सेवक यदि कोई क्षुद्र अपराध भी करते थे तो उन्हें या तो प्राणदण्ड देता था या उनको बन्दी बनाता था या उनकी सम्पत्ति लुटवा देता था। वह अनेक प्रकार के अत्याचार करता था और शाह कुली नारंजी मुहम्मद ताहिर और लंग सारबान जैसे चाटुकार उसने अपने सेवक बना लिये थे। उसने कई ऐसे कार्य किये हैं जिनसे हमको बड़ा

दुख हुआ है। हम उसको प्रसन्न रखना चाहते थे और उस पर विश्वास करते थे इसीलिए हमने इन अनुचित कार्यों की ओर ध्यान नहीं दिया और जान-बूझकर उनकी उपेक्षा की। अन्त में हमारी सेवा में निवेदन किया गया कि वह इस धूर्त मण्डली के बहकाने से विद्रोह करने का विचार कर रहा है और हमारे वफादार नौकरों को हमसे जुदा कर रहा है। उसकी दुष्टता को विफल करने के लिए हम आगरा से दिल्ली की ओर गये और हमने उसको लिखा कि तुम्हारे अनेक कार्य हमारी दृष्टि में आये हैं और हमने तुम्हारी बातें सुनी हैं। यद्यपि हमारा बड़ा अहित हो चुका है तथापि हम उसको खानखाना मानते हैं और हमने शपथपूर्वक उसको आश्वासन दिलाया कि हम न उसका वध करना चाहते हैं और न उसको अपमानित करने का विचार है परन्तु अब हम स्वयं राजकाज की ओर ध्यान देना चाहते हैं। इसलिये वह अपना मार्ग निश्चित कर ले। हमारा ख्याल था कि इस समाचार को सुनकर वह प्रसन्न होगा परन्तु हमको मालूम हुआ कि वह हमारी सारी कृपाओं को भूल गया। इसलिये 40 वर्ष से उस पर जो अनुग्रह की वर्षा की जा रही है उसकी उसने अपेक्षा की है। जब उसने कर्त्तव्य का मार्ग त्याग दिया है। उसने ईसकन्दर के पुत्र को विद्रोह करने के लिए सन्देश भेजा है और तातर खां पंजबिया को भी विद्रोह करने के लिए बुलाया। वह स्वयं लाहौर की तरफ जाने का विचार कर रहा है। उसका विचार वहाँ पहुंच कर उत्पात करने का और विरोध करने का है। उसने साम्राज्य में फूट फैला दी है। अभिमान और दम्भ ने उसकी बुद्धि के नेत्र बन्द कर दिये हैं। उसकी पिछली निष्ठा को देखते हुए हम सोचते हैं कि वे कार्य स्वयं उसके नहीं हैं। ये दुष्ट लोगों की प्रेरणा से किये गये हैं। अपनी निष्ठा प्रकट करने के लिये उसको चाहिए कि वह ऐसे लोगों का साथ छोड़ दे और उन्हें पकड़ कर हमारे पास भेज दे। इन पांच वर्षों में हमने उसकी इच्छाओं का आदर किया है और उसके प्रतिकूल कोई काम नहीं किया है तो उसको भी चाहिए कि हमारे आदेश को स्वीकार करे। ऐसा करने पर हम उसके अपराधों को क्षमा कर देंगे और जब भी हमको उसकी सेवा की आवश्यकता होगी तो हम उसको बुलावेंगे। हम तो अब भी चाहते हैं कि उसका नाम कलंकित न हो। उसको खबरदार रहना चाहिए। यदि वह अज्ञान और अदूरदर्शिता के कारण कर्तव्य-मार्ग का त्याग करेगा तो हम अपनी सेना-सहित प्रयाण करेंगे और ईश्वर की कृपा से उसको समाप्त कर देंगे। उसको इस भुलावे में नहीं रहना चाहिए कि जिन लोगों पर उसने कृपा की है वे इस स्थिति में उसका साथ देंगे। वह यह नहीं जानता कि भाग्य उसी का साथ देता है जिस पर ईश्वर की कृपा होती है। जो लोग अपने को उसके पुत्र और भाई कहते थे वे उसको छोड़ आये हैं और जो अभी उसके पास हैं वे भी एक-एक करके दरबार में आ रहे हैं।

खानखाना का पतन निकट था। वह अन्धकार में प्रवेश कर रहा था अत: इन शब्दों का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा बल्कि वह और अधिक असन्तुष्ट हुआ। सारांश यह है कि बीकानेर से पंजाब की ओर चला गया। जब वह शेर मुहम्मद दीवाना की जागीर के तबर हिन्द नामक दुर्ग के निकट पहुंचा तो उसने अपने पुत्र रहीम को और शेष परिवार को शेर मुहम्मद के सुपुर्द कर दिया और वह आगे चला गया। शेर मुहम्मद खानखाना से पृथक हो गया और अपने वास्तविक हितकर्ता की ओर उसने ध्यान दिया। उसने खानखाना

के सब माल को जो वे तबर हिन्द में छोड़ गया था अपने हाथ में ले लिया और उसके परिवार को दरबार में भेज दिया। जब बैराम खां धाराह के निकट पहुंचा तो अब्दुल्ला मुगल सुरक्षा की व्यवस्था करके लड़ने के लिए तैयार हो गया। वली बेग धाराह आया परन्तु वह हार गया। अब बैराम खां के उल्टे दिन थे। जिस कार्य को वह अपने लिये हितकर मानता था वह अहितकर सिद्ध होता था। फिर वह आगे जालन्धर पहुंचा।

***

प्रकरण 29

बैराम खां का मार्ग रोकने के लिए सेना भेजी

जब अकबर दिल्ली में था तो खबर आई कि बैराम खां बीकानेर से पंजाब की ओर कूच कर रहा है। अकबर ने निश्चय किया कि एक सेना भेजकर उसका मार्ग रोका जाये जिससे लाहौर प्रान्त में उत्पात खड़ा न हो सके। कुछ अदूरदर्शी लोगों ने सलाह दी कि बादशाह स्वयं जाकर युद्ध करे। दूसरे लोगों का कहना था कि शाही सेना ही भेज दी जाये। अकबर ने दोनों मत स्वीकार करके निश्चय किया कि शाही सेना आगे जाये और वह स्वयं पीछे से प्रयाण करे। माहम अनगा की सलाह मानकर उसने आदम खां को आगे नहीं भेजा। शमसुद्दीन मुहम्मद खां अतका और उसके पुत्र युसूफ मुहम्मद खां कोकल ताश, महंदी कासिम खां, मुहम्मद कासिम खां, निशापुरी अली कुली खां, मीर लतीफ हसन खां जो शाहबुद्दीन का रिस्तेदार था, अहमद खां और अन्य कई सरदारों को नियुक्त किया गया कि वे खानखाना को पंजाब की ओर जाने से रोके। शमसुद्दीन मुहम्मद ख्रां और ये बड़े-बड़े उच्च कर्मचारी पंजाब की ओर रवाना हुए। शाहिनशाह का भाग्य प्रतिदिन बढ़ता जाता था। उनको इस पर पूरा भरोसा था। जब वे रवाना हो गये तो अकबर ने अपने प्रयाण की व्यवस्था की।

जब बादशाह ने सोच विचार करके प्रयाण करने का निश्चय कर लिया तो उसने शासन का संचालन करते रहने के लिये ख्वाजा अब्दुल मजीद को आसफ खां की उपाधि देकर दिल्ली का राजकाज चलाने के लिए नियुक्त किया जो वजीर का एक कर्त्तव्य था। अकबर ने उससे कहा, अपनी बुद्धि और पद का अभिमान न करना और पिछली कृपाओं को भूल न जाना, अपनी पद वृद्धि से और भी अधिक विनम्र बनना और यह समझना कि जो कुछ कृपा की गई है वह तुम्हारी सेवाओं को दृष्टि में रख कर की गई है। अब्दुल मजीद ने अपना ध्यान लगन, परिश्रम और राजभक्ति के साथ किया।

हुसेन कुली बेग को बन्दी बनाया

जब बैराम खां के विद्रोह का कोलाहल फैल गया तो एक आदेश जारी किया गया कि हुसेन कुली बेग को पकड़ कर आदम खां के सुपुर्द कर दिया जाये। शाहिनशाह ने आदम खां को सूचित किया कि हुसेन कुली बेग की कोई क्षति नहीं होनी चाहिए अन्यथा उस (आदम खां) को उत्तरदायी माना जायेगा। 12 अगस्त, 1960 को विद्रोह के दमन के लिये अकबर ने दिल्ली से प्रयाण किया। शाही उच्च कर्मचारी दिगदार पहुंचे जो जालन्धर परगना के निकट और सतलज और बया नदी के मध्य स्थित है। गुनाचूर के पास जो दिगदार में है उन्होंने बैराम खां का मार्ग रोका। बैराम खां जालन्धर पर अधिकार करने की योजना बना रहा था तो उसने सुना कि अतका खां (शमसुद्दीन मुहम्मद खां अतका) आ पहुंचा है। अभिमानवश वह अतका खां की उपेक्षा करके लड़ने के लिये तैयार हो गया। दम्भ में आकर उसने अपनी सेना का व्यूह बनाया। सेना के अग्रभाग में वली बेग शाह कुली खां महरम, इस्माईल कुली खां, हुसेन खां, याकूब खां और कितने ही अन्य लोग थे परन्तु इनके भाग्य में पराजय थी। दूसरी ओर शमसुद्दीन मुहम्मद खां ने अपनी सेना सजाई। बादशाह का भाग्य उसका साथ दे रहा था। अपने सैनिकों को प्रोत्साहित करके वह आगे बढ़ा। वह मध्य भाग की अध्यक्षता कर रहा था। दाहिने पार्श्व का अध्यक्ष मुहम्मद कासीम खां अन्दराबी, किया खां, साहिब हसन और अन्य राजभक्त सेवक अग्रभाग में थे। फर्ख खां निशापुरी था। बायें पार्श्व का नेतृत्व महंदी कासिम खां कर रहा था। अली कुली खां और कुछ वीर लोग अल्तमस में थे। यूसूफ मुहम्मद खां कोकलतास कुछ वीर सवारों के साथ मध्य भाग और अल्तमस के बीच में था। अतका खां को अपने लोगों की कर्तव्यनिष्ठा पर पूर्ण विश्वास नहीं था इसलिये उसने उनको इस विषय की शपथ दिलवाई और युद्ध में प्रवृत्त करने से पहले उनमें दृढ़ता का संचार किया। बैराम खां के सैनिकों की संख्या बढ़ी नहीं थी परन्तु वे अच्छे और वीर सैनिक थे। शाही सेना में से कितने ही लोगों ने उसके पास पत्र भेजे थे जिनके आधार पर उसको शाही सेना पर भरोसा था।

जब दोनों सेनाओं में गुनाचूर नामक गांव के निकट युद्ध हुआ तो दोनों पक्ष वीरतापूर्वक लड़े। पहली मुठभेड़ में शत्रु की अग्रसेना ने शाही सेना को भगा दिया परन्तु अतका और यूसूफ खां रणभूमि पर डटे रहे। बैराम खां आगे बढ़ रहा था और उसको विजय का उल्लास था। इसी अर्से में अतका खां की वह सेना जो पीछे खड़ी थी आगे आई। बैराम खां ने अपने हाथियों से उस पर आक्रमण करवाया। परन्तु एकाएक स्थिति बदल गई। शाही सेना के वीर लोगों ने महावतों को बाणों से मार गिराया जिससे हाथियों का प्रहार विफल हो गया। अतका खां ने देखा कि बैराम खां बड़े साहस से लड़ रहा है तो उसने स्वयं ही उस पर आक्रमण करने की तैयारी की। यूसूफ मुहम्मद खां ने कहा कि हमारे अधिकांश लोगों ने सिरों पर धूल डाल ली है। अब लड़ने का क्या समय है। हमारे पास सैनिक तो कम हैं परन्तु शाहिनशाह का भाग्य विशाल है। वह हमारा साथ देगा। अब पलायन का विचार छोड़ो, मारो या मर जाओ। अतका खां स्वयं लड़ने के लिये तैयार हो गया। जब बैराम खां पीछे मुड़ा तो शाही सैनिकों ने तलवारें निकालीं और बैराम खां की सेना पर

आक्रमण किया। तब बैराम खां को पीछे हटना पड़ा। यद्यपि शाही सेना में फूट थी तो भी उसको विजय प्राप्त हुई। शत्रु सेना तितर-बितर हो गई। कितने ही आहत और अधमरे लोग भूमि-सात् हो गये। ईस्माइल कुली खां को जीवित पकड़ लिया गया। यह भी खबर आई कि वली बेग किसी गन्ने के खेते में छिपा हुआ है, उसको पकड़ लिया गया और हुसेन खां भी जिसकी आंख में तीर लग चुका था बन्दी बना लिया गया। याकूब हमदानी अहमद बेग और बहुत-से दूसरे लोग भी पकड़े गये। शाही सेना ने बहुत सा माल लूट लिया। अतका खां बड़ा दूरदर्शी था। उसने भागते हुए शत्रु का पीछा नहीं किया। यह विजय किसी गुप्त शक्ति की सहायता से प्राप्त हुई थी।

शाहिनशाह शिकार करता हुआ आगे बढ़ता जा रहा था। सरहिन्द के पास सन्देशवाहकों ने उसको विजय का शुभ समाचार सुनाया। इस समाचार से परेशानी शान्त हो गई और विजय-प्राप्ति के उपलक्ष्य में आनन्द मनाया गया तथा ईश्वर को धन्यवाद दिया गया। उसी दिन से साम्राज्य के मामलों की नई व्यवस्था होने लगी।

मुनीम खां का आगमन

जब बादशाह अकबर का शिविरि सरहिन्द में था तो मुनीम खां काबुल से आ पहुंचा। उसको आदेश देकर बुलाया गया था। उसके साथ मुकीम खां, कासिम खां, शगुन मुहम्मद जो मिर्जा मुहम्मद हकीम का मामा था और अन्य कई सैनिक और उच्च कर्मचारी आये। 10 सितम्बर को बादशाह ने उनके साथ कृपापूर्वक भेंट की। मुनीम खां को वकील (प्रधान मंत्री) नियुक्त किया गया और खानखाना की उपाधि से सम्मानित किया गया। अन्य कर्मचारियों को भी यथायोग्य बख्शीसें प्राप्त हुईं। इसी समय शमसुद्दीन मुहम्मद खां उतका और अन्य राजभक्तों को जिन्होंने अच्छी सेवायें की थीं और जो विजयी होकर आये थे कृपापूर्ण भेंटें और सन्मानसूचक वेष प्रदान किये गये। कुछ ऐसे हतभाग्य व्यक्ति थे जो रणभूमि में बन्दी बना लिये गये थे। इनमें वली बेग उसका पुत्र ईस्माइल कुली, हुसेन खां अहमद बेग तुर्कमान और अन्य लोग थे। इनको बादशाह के सामने उपस्थित किया गया। उनके पैरों और गर्दनों में बेडियां पड़ी हुई थीं और उन्हीं के साथ छूट का माल भी था। एक झण्डा मशहद के रजवी के मजार के लिए भेजा गया था परन्तु वह नहीं जा सका तो उसकी वापसी बहुत शुभ मानी गई। वली बेग के गहरे घाव लग चुके थे। कारावास में ही उसकी मृत्यु हो गई तो उसका सिर काट कर पूर्वी प्रान्तों में घुमाया गया ताकि लोग सचेत हो जायें। दूसरे लोगों को कारावास में ही रखा गया। फिर जब निकटस्थ दरबारियों ने सिफारिश की तो उन्हें छोड़ दिया गया तदनन्तर उनको ऊंचे पद भी प्राप्त हुए।

बहादुर खां का पागलपन

जब वली बेग के सिर को लेकर एक शाही कर्मचारी जिसका नाम तवाची था, इटावे के परगने में आया तो बहादुर खां ने उसको मार डाला। इटावा बहादुर खां की जागीर में था। बहादुर खां ने और भी कई अनुचित कार्य किये। बादशाह के कोप से उसकी रक्षा

करने के लिए मित्रों ने बहादुर खां को सलाह दी कि वह पागल बन जाये तो वह पागल की-सी चेष्टायें करने लगा। इस प्रकार वह दण्ड से बच गया। शाही कर्मचारियों ने वास्तविक स्थिति का बादशाह को पता नहीं लगने दिया। फिर बहुत अर्से बाद यह भेद खुला। परन्तु तब मामला पुराना हो चुका था।

***

प्रकरण 30

अकबर का लाहौर जाना और वापसी

जब बैराम खां की ओर से किसी प्रकार का भय नहीं रहा और यह निश्चय हो गया कि वह निर्मूल हो जायेगा तो अतका खां का सम्मानपूर्वक स्वागत किया गया। बादशाह अकबर ने सेनाओं को शिविर में ही छोड़ कर लाहौर जाने का निश्चय किया। लाहौर जाते हुए वह मार्ग में शिकार भी करता गया। सरहिन्द में सेना का नेतृत्व मुनीम खां को दिया गया था। 17 सितम्बर, 1560 को अकबर लाहौर पहुंचा। अतका खां ने बड़ी दावतें दीं। बादशाह अकबर ने उस पर अनुग्रह की वर्षा की और पंजाब के कुछ अच्छे से इलाके उसको और उसके भाई बन्धुओं को प्रदान किये। जब बादशाह लाहौर में ठहरा हुआ था तो खान-ए-आजिम बीमार हो गया। बादशाह उसको वहीं छोड़कर वापस सेना में आ गया जिसको वह मुनीम खां के सुपुर्द करके गया था।

***

प्रकरण 31

सिवालिक पहाड़ियों में बैराम खां का पीछा

बैराम खां तलवारा के राजा गणेश की शरण में चला गया था। वह स्थान सिवालिक पहाड़ियों में दृढ़ और सुरक्षित है। 1 अक्टूबर, 1560 को अकबर ने सिवालिक पहाड़ियों की ओर प्रयाण किया। शाही सेना मांचीवाड़ा में अकबर की प्रतीक्षा कर रही थी। जब वह निकट आया तो मुनीख खां ने उसका स्वागत किया। शाही सेना के वीर लोगों ने सिवालिक पहाड़ियों की घाटियों में घुस कर आगे बढ़ना शुरू किया। वहां के हिन्दू राजाओं ने उनका रास्ता रोका और कई लड़ाईयां हुईं। दोनों पक्ष के कितने ही लोग मारे गये। शाही सेना

का एक प्रसिद्ध सेनानायक सुल्तान हुसेन जलाईर मारा गया। राजा लोग हार कर भाग गये। उनके कितने ही लोगों का वध किया गया।

जब बैराम खां ने सुना कि शाही सेना विजय घोष करती हुई आगे बढ़ रही है तो उसने अपने एक विश्वस्त सेवक जमाल खां को अपने अपराधों की क्षमा मांगने के लिये भेजा। उसने निवेदन करवाया कि परिस्थिति के वश उससे अपराध हुए हैं और अब वह बहुत लज्जित है। बादशाह उसकी दीन दशा पर दया करके अब क्षमा कर दे। जमाल खां ने बादशाह के शिविर में आकर प्रार्थना-पत्र पेश किया और बैराम खां की इच्छा मौखिक रूप से भी प्रकट की। अकबर बादशाह ने अपनी उदारता और कृपालुता से प्रेरित होकर बैराम खां के सब अपराध क्षमा कर दिये और उसको आश्वस्त करने के लिये मौलाना अब्दुल्ला को भेजा। बैराम खां के चित्त को फिर भी शान्ति नहीं हुई। उसने कहा "मैं लज्जित हूँ। अपने कर्मों के कारण मैं झुका हुआ हूँ और सब प्रकार के दण्ड का पात्र हूं। मुझे बादशाह की कृपा और उदारता पर भरोसा है और मेरे हृदय में कोई क्षोभ नहीं है परन्तु बादशाह के पास चगताई सरदार है। उनके कारण अनिष्ट हो सकता है। यदि मुनीम खां आकर मुझे आश्वासन दे दें और शपथपूर्वक बात करें तो मैं उसके द्वारा आकर बादशाह को सलाम करूं और फिर बादशाह से अनुमति प्राप्त करके अपना शेष जीवन पवित्र स्थानों पर व्यतीत करूं और अपने कर्मों पर पश्चात्ताप करूं।" बादशाह ने यह प्रार्थना स्वीकार की। उस समय बादशाह का शिविर हाजीपुर नामक कस्बे के पास था तो सतलज और व्यास नदी के बीच में स्थित है। बादशाह ने मुनीम खां ख्वाजा जहां, अरफ खां, हाजी मुहम्मद खां सीसतानी को भेजा कि बैराम खां से मिले और उसको आवश्यक वचन देकर दरबार में ले आये। ये लोग पहाड़ों की घाटियों में पहुंचे जहाँ बैराम खां छिपा हुआ था। जब बैराम खां ने मुनीम खां को देखा तो उसे विश्वास हो गया कि बादशाह ने जो आदेश भेजा था वह सच्चा था। उसने आगे बढ़कर मुनीम खां का आलिगन किया और लज्जा प्रकट की। मुनीम खां ने उसको प्रोत्साहित किया और बादशाह के दरबार में उपस्थित होने के लिये प्रेरित किया। इसके लिये उससे अनेक वायदे किये तब बाबाई जम्बूर और शाह कुली महरम, बैराम खां चोंगा पकड़ कर रोने लगे और कहने लगे, विश्वासघात होने वाला है और उसको नहीं जाना चाहिये। मुनीम खां ने और दूसरे राजदूतों ने उनको सान्त्वना दी परन्तु उनको सन्तोष नहीं हुआ। उनको अपने विषय में भी आशंका थी। तब मुनीम खां ने उनसे कहा, "आज रात तुम लोग यहीं ठहरो और समाचार की प्रतीक्षा करो और फिर जब तुम्हारा चित्त शान्त हो जावे तब आकर बादशाह को सलाम करना।" तब उन्होंने बैराम खां को जाने दिया और वे पीछे रह गये। शाही सेना पहाड़ियों के सहारे प्रतीक्षा कर रही थी और अवसरवादी लोग कई प्रकार की बातें कर रहे थे। उनमें ही मुनीम खां, बैराम खां को लेकर आ गया तो सेना ने हर्षनाद किया। राजद्रोह फैलाने वालों के लिये यह अशुभ दिन था। उनके मुख काले हो गये। बैराम खां ने अपने गले में रुमाल डाला और लज्जा तथा पश्चात्ताप के साथ बादशाह को सिजदा किया। उसने बादशाह के चरणों में अपना सिर रख दिया। बैराम खां को दुःख था, लज्जा थी और क्षमा-प्राप्ति कर हर्ष भी था। बादशाह ने अपने हाथ से बैराम खां का सिर उठाया और फिर उसका आलिगन किया। उसके गले से रुमाल हटाया और उसके

पश्चात्ताप के आंसू पूछे फिर उसके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में प्रश्न किया और उसको अपनी दाहिनी ओर बैठाया। जब बैराम खां वकील (मुख्य मंत्री) था तब उसका यही स्थान था। मुनीम खां को उसके पास बैठाया गया। दूसरे उच्चाधिकारी लोग यथा योग्य स्थानों पर बैठ गये। बादशाह ने ऐसे अनुग्रह के साथ बात की कि बैराम खां के मुख पर लज्जा के चिह्न नहीं रहे। फिर बादशाह ने बैराम खां को स्वयम् अपनी पोशाक प्रदान की और हज जाने की अनुमति दी। बैराम खां के साथ तरसून मुहम्मद खां और हाजी मुहम्मद खां सीसतानी नियुक्त किये और उन्हें आदेश दिया कि वे साम्राज्य की सीमा तक उसको पहुंचा आयें। ये लोग उसको नागौर तक पहुंचा कर वापस आ गये। इनको बैराम खां के साथ बादशाह ने दूरदर्शिता और सतर्कता की दृष्टि से भेजा था।

एक दिन बैराम खां ने हाजी मुहम्मद खां सीसतानी से कहा "मुझे किसी के द्रोह या विद्रोह से इतना दुख नहीं हुआ जितना तुम्हारे द्रोह से। तुम पुराने अहसानों को भूल गये।" हाजी मुहम्मद खां ने उत्तर दिया "स्वर्गीय बादशाह आपके प्रति बड़ा कृपालु था और वर्तमान बादशाह का भी आप पर अनुग्रह था तो भी आपने विद्रोह किया। जब तलवार उठाई तब जो होना था हुआ। यदि मैं आपसे पृथक् हो गया हूं तो अनोखी बात क्या है और मैंने क्या किया है।" बैराम खां यह सुनकर बड़ा लज्जित हुआ और उसने कोई प्रत्युत्तर नहीं दिया। मैंने प्रामाणिक लोगों से सुना है कि अपनी यात्रा में बैराम खां को ये सबल शब्द बार-बार याद आते रहे ओर उसे दुख होता रहा। ईश्वर की कृपा से बादशाह की विशाल-हृदयता और सहज कृपालुता का प्रभाव सब लोगों के हृदयों पर पड़ा। यह साधारण-सा आदमी जो अपने साहस और चातुर्य का बड़ा अभिमान करता था प्रमाद निद्रा से उठ कर विद्रोह के भंवर से बच गया। राजभक्त लोगों के चेहरे दमकने लगे, सबको प्रसन्नता हुई। खान अजीम अतका खां का एक पत्र प्रकाश में आया है जिसमें विविध घटनाओं का वर्णन है। मैं इस इकबाल नाम में उसकी तद्वत एक प्रति उद्धृत करता हूं, बुद्धिमान लोगों को इससे शिक्षा प्राप्त होगी।

शमसुद्दीन मुहम्मद अतका का प्रार्थना-पत्र

प्रार्थना और भक्ति प्रदर्शित करने के पश्चात् मैं निवेदन करता हूँ कि जब मैं दिल्ली आया और बादशाह सलामत ने मुझ पर कृपा प्रकट करके बैराम खां का निशान नक्कारा और तुमनतोग मुझे प्रदान किये और मुझे पंजाब का सूबेदार नियुक्त किया तो मैंने सोचा कि बादशाह के शुभचिन्तक की हैसियत से मुझे इस अनुग्रह के अनुसार सेवा करनी चाहिये जिससे कोई भी स्वामिभक्त सम्राट् सेवक मेरी पदोन्नति का विरोध न कर सके। जब यह सूचना मिली कि राजद्रोही लोग पत्रों के द्वारा और सन्देश भेजकर बैराम खां को प्रेरित करके फिरोजपुर के समीप ले आये हैं तो आदेश जारी हुआ कि साम्राज्य के स्तम्भ-रूप सेवक एकत्र होकर बतलावें कि इस स्थिति में साम्राज्य के हित के लिये क्या करना ठीक होगा। इस सभा में बैराम खां का यह पत्र प्रस्तुत किया गया जो उसने दरवेश मुहम्मद खां को लिखा था। इस पत्र में लिखा हुआ था कि "मैं बादशाह का सेवक और दास हूं परन्तु मैं बादशाह के वकीलों (मंत्रियों) से बदला लेना चाहता हूँ। इस सभा में सम्राट के प्रत्येक

हितैषी ने अपनी-अपनी सम्मति प्रकट की कि बैराम खां के दमन के लिये क्या करना चाहिये। इससे दो दिन पूर्व ही बैराम खां के सारे पदचिन्ह मुझे प्रदान किये जा चुके थे। इसलिये मैंने निश्चय किया कि अब बादशाह की सुसेवा करने का अवसर आ गया है। साम्राज्य के स्तम्भरूप उच्चाधिकारियों में बड़ी बहस हुई। वहां छोटे और बड़े सब एकत्र हो गये थे। मुझ तुच्छ व्यक्ति ने प्रस्ताव किया कि ईश्वर की कृपा से और बादशाह के अनन्त अनुग्रह से बैराम खां के विषय में सारा उत्तरदायित्व मुझ पर आ गया है। यदि वह कहीं भी मेरे दृष्टिपथ में आया और मैंने आगे बढ़ने में प्रमाद किया तो मुझे लड़की और नपुंसक से भी हीन समझना।'' उच्च कर्मचारियों ने कहा ''बैराम खां का दमन करना महाकार्य है। जब तक बादशाह स्वयं नहीं जायेंगे तब तक उसको पकड़ना सम्भव नहीं होगा। जब साम्राज्य के स्तम्भों की यह सम्मति थी तो मैंने कोई अधिक बात नहीं कही और अपने स्वामी से निवेदन किया कि मुहम्मद कासिम खां और महंदी कासिम खां इजाजत लेकर मुलतान और लाहौर की ओर चले गये हैं इसलिये मुझ सेवक को भी नियुक्त करके जाने दिया जाये तो मैं दैनिक घटनाओं के समाचार नित्य प्रति भेजता रहूँगा। मेरी प्रार्थना पर बादशाह ने कृपापूर्वक अच्छा विचार किया और आदेश दिया कि मैं बड़े-बड़े राजकर्मचारियों के साथ रवाना होकर बैराम खां का दमन करूं। यह भी आदेश हुआ कि एक हजार हाथी सेना में और भर्ती किये जायें। मैं रवाना होकर रोहतक के पास और माहीम के परगने में चार-पांच दिन तक ठहरा परन्तु कोई नया सैनिक वहां मुझे दिखाई नहीं दिया। जब मैंने बादशाह को प्रार्थना-पत्र भेजा तो उपरोक्त एक हजार आदमियों में से 15 आदमी मेरे पास पहुंचे। युद्ध के विषय में इन लोगों को बड़ी चिन्ता हुई। इस समय वर्षा ऋतु थी।'' मार्गों में कीचड़ और पानी भरा हुआ था इसलिये प्रस्थान करने में कुछ विलम्ब हुआ। लोगों ने (बादशाह की माता को) अपना साधन बनाया और मेरे विषय में लाखों बातें कहीं। उन्होंने कहा कि मैं प्रतिदिन दो कोस चलता हूँ और डर के कारण आगे नहीं बढ़ता हूं। यदि मामला मेरे सुपुर्द रहेगा तो कार्य सिद्धि भी होगी। इसलिये मेरी जागीर और भत्ता आदि छीन लिया जाये। माता ने लोगों के कहने के अनुसार काम किया और मेरी बीस वर्ष की सेवा की उपेक्षा करके श्रीमान् तक इन लोगों की बातें पहुंचा दीं। वस्तुस्थिति का श्रीमान् को पता है। मेरा पुत्र अजीज मुहम्मद लोगों के शब्दों और कटाक्ष को सहन नहीं कर सकता है इसलिये मुझे लिखा ''पिता लोगों के शब्दों ने हमको मार डाला है अब आपके भाग्य में जो होगा सो होगा। यथा सम्भव शीघ्रता करो और बैराम खां के मामले को समाप्त करो।''

मुझको ज्ञात था कि क्या प्रपंच किये जा रहे हैं। ईश्वर की कृपा के भरोसे और बादशाह के भाग्य पर विश्वास करके मैं बैराम खां के दमन के लिये आगे बढ़ा। अब श्रीमान् के सौभाग्य से बैराम खां का मामला समाप्त हो चुका है। उसके कितने ही अनुचर और साथी मारे जा चुके, उसके सारे बन्धु बान्धव पकड़ कर दरबार में उपस्थित किये जा चुके हैं। ईश्वर हमारी रक्षा करें। यदि ऐसा नहीं होता तो नहीं कहा जा सकता कि क्या होता। बहुत सम्भव है कि बैराम खां ने श्रीमान् को वस्तुस्थिति बतला दी होगी।

विजय के उपरान्त साम्राज्य के ऐसे हितैषियों को जो युद्ध में उपस्थित नहीं थे और जिनकी सेवाओं को श्रीमान् जानते भी नहीं हैं, दस गुणे पुरस्कार और बख्सीसें प्राप्त हो चुकी हैं। अब तक किसी ने उन हितैषियों के विषय में कुछ पूछा भी नहीं है जो युद्ध में उपस्थित थे। जान मुहम्मद सुल्तान बहसूदी जालन्धर के दुर्ग में दो दिन था उसकी सिफारिश की गई है कि उसे खान की उपाधि दी जावे और यह उसको मिल भी गई है। उसके अतिरिक्त प्रत्येक व्यक्ति को उनकी सेवाओं की अपेक्षा दस गुणे पुरस्कार मिल चुके हैं। अन्त में जब मेरी ओर मेरे पुत्र युसूफ मुहम्मद की, जिन्होंने इस महायुद्ध में तलवार उठाई थी, बारी आई तो मुझ पर कृपा की गई कि विजय-पत्र में मेरे नाम के आगे अतका जोड़ दिया जावे। मैं समझता हूं कि बेगम (माहम अनगा) इस मामले के बीच में है परन्तु मैं उसकी बुराई नहीं करना चाहता। जो कुछ अब मैं लिखना चाहता हूँ उसका साक्षी ईश्वर है। मैंने अपने प्राण हथेली पर रखकर अपने बारह वर्षीय पुत्र को साथ लेकर बैराम खां का सामना किया था। उसके साथ लगभग बीस रिश्तेदार और सेवक थे। परगनों से कोई उच्च कर्मचारी मेरी सहायता के लिए नहीं आया। मेरे साथ के लोगों ने जैसा काम किया उसके विषय में बैराम खां ने निवेदन किया होगा। बैराम खां के सब अंगरक्षकों को जो आपके गुप्तचर थे बख्सीसें उपाधियां, और दो या तीन करोड़ (दाम) प्राप्त कर चुके हैं। यूसूफ मुहम्मद खां ने बैराम खां और उसके खान और सुल्तान लोगों का तलवार से सामना किया था। श्रीमान् ने उसको खान की उपाधि प्रदान की है। कर्मचारियों ने उसके लिये एक करोड़ का आदेश दिया था परन्तु उसके लिये कोई जागीर मंजूर नहीं हुई है। मुझे भी एक करोड़ की बख्सीस का कर्मचारियों ने विश्वास दिया है और खान-ए-आजम की उपाधि प्राप्त हुई परन्तु कर्मचारियों ने मुझको फिरोजपुर में केवल चालीस लाख की जागीर दी है। श्रीमान् मेरे सब अनुचर जीवन पर अपने भाइयों और पुत्रों के साथ आपकी सेवा कर रहे हैं। उन्हें पुरस्कार की आशा है। अब श्रीमान् प्रत्येक को खान की या सुल्तान की उपाधि से सम्मानित किया है। बैराम खां को निशान, नक्कारा और तुमनतार मुझको प्रदान किया गया और बैराम खां पर विजय प्राप्त होने पर विजय-वेष भी मुझे मिला है और बैराम खां का पद भी प्राप्त हुआ है। इसलिये मुझे आशा है कि बैराम खां का कार्य भी मुझ तुच्छ सेवक को प्रदान किया जायेगा।

***

प्रकरण 32

बैराम खां की हत्या

अभी शाही शिविर सरहिन्द में ही था। अब आदेश दिया गया कि सेना सीधे मार्ग से दिल्ली जाये और बादशाह अपने निजी अनुचरों के साथ हिसार फिरोजा की ओर जायेगा।

तब हिसार फिरोजा में बादशाह का शिविर लगा तो शिकारियों ने निवेदन किया कि इस जंगल में चीते बहुत हैं और उनको पकड़ने की एक कला है। यह सुनकर बादशाह ने आवश्यक व्यवस्था करने का आदेश दिया तो तुरन्त ही सब सामान तैयार करके कई खाइयां खोदी गईं। कई चीते पकड़ लिये गये। उसके बाद बादशाह ने दिल्ली की ओर प्रयाण किया। 24 नवम्बर, 1560 को बादशाह की सवारी दिल्ली पहुंची।

काबुल में अव्यवस्था

जब बादशाह के आवश्यक आदेशानुसार मुनीम खां काबुल से रवाना हुआ तो वह काबुल को अपने पुत्र गनी खां के सुपुर्द कर आया था। उसकी सहायता करने के लिए और उसको उचित सलाह देने के लिए मुनीम खां ने हैदर मुहम्मद अख्ता बेगी को नियुक्त किया था। इन दोनों की अयोग्यता और बचपन के कारण काबुल की व्यवस्था बिगड़ गई। जब बादशाह की सवारी दिल्ली पहुंची तो गनी खां का प्रार्थना-पत्र दरबार में पेश हुआ जिसमें लिखा था कि हैदर मुहम्मद अख्ताबेग का काम असन्तोषजनक है और उसका चरित्र भी अच्छा नहीं है। तब मुनीम खां की सलाह से हैदर मुहम्मद को दरबार में बुला लिया गया और गनी खां को सहायता देने के लिये करा-काकेपुत्र सगुन, दरवेष मुहम्मद, ख्वाजा दोस्त, ख्वाजगी मुहम्मद हुसेन को और बहुत-सी सेना को अबुल फतह के नेतृत्व में काबुल भेजा गया।

आगरा को प्रस्थान

बादशाह कुछ दिन दिल्ली में ठहरा और फिर 21 दिसम्बर, 1560 को जलमार्ग से आगरे की ओर रवाना हुआ। उपराव लोग और साम्राज्य के स्तम्भरूप बड़े-बड़े लोग बादशाह के साथ रहें और शिविर उसी दिशा में स्थलमार्ग से रवाना हुआ। बादशाह 31 दिसम्बर को आगरे पहुंचा। वहां उसने आगरे के दुर्ग में निवास किया और बड़े-बड़े भवनों का शिलान्यास किया। बैराम खां का मकान मुनीम खानखाना को दे दिया गया। दूसरे अमीर और उमरावों ने यमुना नदी के दोनों तटों पर अपने-अपने मकान बनाना शुरू किया। इसी अर्से में मुनीम खां ने एक बहुत बड़ा भोज दिया जिसमें बादशाह भी सम्मिलित हुआ।

बड़े-बड़े विद्वानों का आगमन

इस शुभ वर्ष में कई लोग अपने घर छोड़कर बादशाह अकबर के दरबार में आये। कारण यह था कि इन लोगों ने अकबर की न्यायशीलता और उदारता की कहानियां सुनी थीं। दरबार में आने पर इन लोगों के उद्देश्यों की पूर्ति हुई। ऐसे लोगों में एक ख्वाजा अब्दुल शहीद था जो ख्वाजा अब्दुल्ला का पुत्र था। ख्वाजा अब्दुल शहीद में अनेक बाह्य आभ्यन्तर गुण थे। ये ख्वाजा बादशाह की विद्वान् मण्डली में सम्मिलित हो गया। अकबर ने उसके प्रति आदर प्रकट किया। दूसरा विद्वान् मौलाना सईद तुर्कीस्तानी था जो ट्रान्स ओवजीयाना के विद्वानों में अग्रगण्य था। उसने अपनी आयु मौलाना अहमद जूनेद की संगति में व्यतीत की थी। मौलाना सईद का भी बादशाह अकबर से परिचय हो गया। यह मौलाना भी विद्वान् था और उसमें आन्तरिक ज्ञान था। वह गणित, भौतिक विज्ञान और ब्रह्म विज्ञान में विशेष

पारंगत तो नहीं था परन्तु उस समय ट्रान्स ओविजयाना में जो विद्यायें प्रचलित थीं उनमें उसकी अच्छी गति थी। इस समय प्रत्येक देश से विविध श्रेणियों के योग्य और कुशल लोग बादशाह की सेवा में आ रहे थे। ये लोग आत्मज्ञान और सांसारिक ज्ञान में बड़े कुशल थे। उस समय ईश्वर की कृपा से साम्राज्य उन्नत हो रहा था। प्रशासन दृढ़ होता जाता था। धर्म के ज्ञाताओं को आश्रय मिल रहा था।

मिर्जा सरफुद्दीन हुसेन का विवाह

इस वर्ष कई घटनायें हुईं जिनमें मिर्जा सरफुद्दीन हुसेन का विवाह भी था। मिर्जा सरफुद्दीन उच्चकुलीन था। बादशाह की उस पर कृपा थी इसलिए उसको उन्नति की दृष्टि से देखा जाता था। बादशाह ने उसको उच्च पद प्रदान किया था और साम्राज्य का उसको स्तम्भ बनाना चाहता था। शाही सेवक उसके आन्तरिक और बाह्य गुणों को जानते थे इसलिए अकबर ने अपनी सगी बहिन बख्शी बानू बेगम का विवाह मिर्जा सरफुद्दीन हुसेन से कर दिया। इस विवाह से इस मिर्जा की स्थिति बहुत ऊंची हो गई फिर उसको सरकार नागौर जाने की अनुमति प्रदान कर दी गई। बख्शी बानू बेगम का प्रथम विवाह मिर्जा इब्राहीम से हुआ था परन्तु वह गत वर्ष विधवा हो गई थी। सरफुद्दीन हुसेन के साथ उसका दूसरा विवाह था।

कश्मीर विजय का विफल प्रयास

इसी वर्ष एक घटना यह हुई कि मिर्जा करा बहादुर खां को, जो मिर्जा हैदर गुरगान का भाई था, कश्मीर की विजय के लिये रवाना किया गया। करा बहादुर कश्मीर देश से परिचित था। कश्मीरियों के प्रपंचों के कारण गड़बड़ियां हो रही थीं। कश्मीर के शासक गाजी खां के अन्याय की कहानियां भी बादशाह के कान तक पहुंच चुकी थी। इसलिये करा बहादुर को गाजी खां के विरुद्ध भेजा गया। उसकी सहायतार्थ अच्छी सेना दी गई। गाजी खाँ, काशी चक का पुत्र था। वह अपने पिता की मृत्यु के बाद कश्मीर का शासक बना था परन्तु वास्तविक बात यह थी कि गाजी खां काशी चक के भाई हुसेन चक का पुत्र था। जब हुसेन चक के दिन पूरे हो गये तो काशी चक में कामवासना से या राजनीतिक दृष्टि से हुसेन खां की गर्भवती पत्नी को अपनी पत्नी बना लिया। इसके दो या तीन मास पश्चात् उस पत्नी से गाजी खां उत्पन्न हुआ था।

करा बहादुर की कठिनाइयां

करा बहादुर न तो कुशल सैनिक था और न वह श्रमशील व्यक्ति था। वह बहुत विलम्ब करके रवाना हआ। जब ग्रीष्म ऋतु प्रचंड हो चुकी थी तब वह राजोरी पहुंचा। नसरत खां दौलत चक का भतीजा फतह चक, लौहर अंकरी नजीरीना, रमकी चक का पुत्र यूसुफ चक और ख्वाजा हाजी आकर उससे मिल गयें परन्तु जब उन्होंने देखा कि करा बहादुर की सेना सुसंगठित नहीं है तो नसरत खां, फतह चक, लौहर और अंकरी भागकर कश्मीर चले गये। तब सेना तीन मास तक विम्भर के निकट लाली खोखर में तीन मास तक पड़ी रही और सहायक सेना के आगमन की प्रतीक्षा करती रही। सहायक सेना के

नायक पुराने लोग थे। इसलिये उनको आने में विलम्ब हुआ। इस प्रकार की स्थिरता और सुस्ती से काश्मीर में प्रवेश नहीं किया जा सकता था। उस देश के मार्ग बड़े दुर्गम हैं। जब वहां के शासक को बाह्य शत्रु के प्रयाण की खबर मिलती है तो वह घाटियों पर कब्जा कर लेता है। इस हालत में हजारों रुस्तम भी कश्मीर पर अपना अधिकार स्थापित नहीं कर सकते। गाजी खां ने शाही सेना के आगमन की खबर सुन ली थी और कुछ मास व्यतीत हो चुके थे। इसलिये उसने मार्ग और घाटियां इस प्रकार रोक ली थीं कि उनमें प्रवेश नहीं किया जा सकता था। पहाड़ियों से नीचे की ओर उसने अपनी सेना भी भेज दी थी। करा बहादुर ने राजोरी के निकट कुछ दिन तक लड़ाई की। परन्तु उसको हार कर वापस जाना पड़ा। यह पराजय केवल कश्मीरियों के कारण ही नहीं हुई थी। अब एक प्रकार का ज्वर फैल गया था। वर्षा ऋतु शुरू हो गई थी और सहायक सेना भी नहीं आई थी तो भी आश्चर्यजनक युद्ध हुआ। शाही सेना में केवल गिनती के सैनिक थे तो भी उन्होंने बड़े वीर कार्य किए और अपने साहस का परिचय दिया। कूचक बहादुर का दिल रुस्तम का-सा था। उसने विशेष वीर कार्य किये परन्तु विजय असम्भव थी। भाग्य यह चाहता था कि कश्मीर की विजय अभी नहीं, आगे चलकर हो। जब अकबर बादशाह शासन का संचालन स्वयं अपने हाथ में ले ले और काम बिगाड़ने वाले विद्रोही राजकर्मचारियों का अन्त हो जावे। करा बहादुर जैसी व्यवस्था कर सकता था वैसी व्यवस्था करके राजोरी के समीप दायरा के दुर्ग में आ गया। कूचक बहादुर बाण से आहत हो गया। उसको बन्दी बनाकर गाजी खां के समक्ष उपस्थित किया गया। कश्मीरी लोग इस व्यक्ति की वीरता देख चुके थे इसलिए गाजी खां से कृपापूर्वक मिला और उसको चिकित्सा के लिए हकीमों के सुपुर्द कर दिया परन्तु चिकित्सा से कोई लाभ नहीं हुआ और उसका अन्त हो गया। अगले दिन करा बहादुर नौसहरा पहुंच गया। इस समय बादशाह अपनी राजधानी आगरा में था और उसके भाग्य का उदय हो रहा था। सब दिशाओं के देशों पर विजय प्राप्त हो रही थी। प्रतिदिन विजय के समाचार आते थे और लोगों के समूह उसको बधाई देने के लिए उपस्थित होते थे। उसके राज्य का विस्तार होता जाता था। उसकी बुद्धि भी दूरदर्शी बनती जाती थी और लोगों में उसके प्रति वफादारी का विकास हो रहा था।

अनेक घटनाओं में एक घटना इस वर्ष यह हुई कि बैराम खां की मृत्यु का समाचार आया। बादशाह ने अपनी मानवता और उदारता के कारण खेद प्रकट किया। जो कुछ घटनायें हुई थीं उनकी उपेक्षा की। इनमें से कुछ घटनाओं का उल्लेख किया जा चुका है। वास्तव में बैराम खां बड़ा सज्जन था, उसमें उत्तम गुण थे परन्तु उसकी संगति अच्छी नहीं थी और वह चाटुकार लोगों से घिरा हुआ रहता था। प्राय: ऊंचा पद प्राप्त करके मनुष्य चाटुकारी की बातों को सत्य समझने लगता है। इसलिए बैराम खां ने अकबर के सच्चे सौंदर्य को नहीं समझा। उसके गुण लड़कपन में छुपे हुए थे। उसकी राजनैतिक दुर्दशा अभी प्रकट नहीं हुई थी। बैराम खां ने दूसरों के दोषों को तो देखा परन्तु अपने दोषों की ओर से आंखें मूंद लीं। उसके मित्र अनुभव शून्य थे और उनकी दृष्टि सीमित थी फिर भी सौभाग्यवश उसने अन्त तक विद्रोह नहीं किया और पश्चात्ताप कर लिया। बादशाह ने उसको क्षमा कर दिया और उसको अपने कुटुम्बसहित सम्मानपूर्वक सब प्रकार का सामान देकर पुण्य तीर्थों

की यात्रा के लिए रवाना कर दिया। तब वह गुजरात के पाटन नगर में पहुंचा जो पहले नहरवाला कहलाता था विश्राम करने के लिए बैराम खां इस नगर में कुछ दिन ठहरा। उस समय वहां का फौजदार मूसा खां फूलादी था, जिसकी स्थिति बड़ी दृढ़ थी। वह कितने ही अफगानों से घिरा रहता था। इनमें से एक का नाम मुबारक खां लौहानी था। जब मच्छीवाड़ा में लड़ाई हुई तो मुबारक खां का पिता रणभूमि में मारा गया था। वहां शाही सेना का नेतृत्व बैराम खां कर रहा था। इस पागल अफगान में बदले की भावना पैदा हुई और उसने बैराम खां को मार डालने का दृढ़ संकल्प कर लिया। इसके अतिरिक्त शेर खां के पुत्र सलीम खां की कश्मीरी पत्नी और उसकी पुत्री बैराम खां के साथ हज्ज जाने का विचार कर रही थी। यह भी व्यवस्था हो चुकी थी कि बैराम खां के पुत्र के साथ इस लड़की का विवाह कर दिया जाये। यह बात अफगानों को अच्छी नहीं लगी थी।

बैराम खां की हत्या

पाटन में बैराम खां प्रायः बागों में सेर करने जाया करता था। वह एक दिन एक झील की सैर करने गया। इसके बीच में एक बारहदरी बनी हुई थी जहां नाव के द्वारा पहुंचा जाता था। जब बैराम खां नाव से उतरा तो मुबारक खां लौहानी और 30-40 अफगान झील के तट पर आक्रमण करने के लिये आ गये। प्रत्यक्ष में ऐसा जान पड़ता था कि वे उससे सलाम करने आये हैं इसलिये बैराम खां ने उनको बुलाया। जब मुबारक खां लौहानी उसके पास पहुंचा तो उसने बैराम खां के सीने में तलवार घुसेड़ दी जो उसके पीठ से निकल आई। दूसरे अफगान ने बैराम खां के सिर पर वार करके उसको समाप्त कर दिया। अपने अन्तिम क्षण में बैराम खां ने अल्लाह अकबर का उच्चारण किया। उसकी अभिलाषा थी कि शहीद हो। इसके लिए वह अपनी नमाज के साथ प्रार्थना किया करता था। उसकी यह इच्छा पूरी हुई।

बैराम खां के साथी परेशान होकर तितर-बितर हो गये। बैराम खां धूल में पड़ा हुआ था और उसके शरीर से रक्त बह रहा था। तब कुछ फकीर आये और उसको उठाकर शेख हिसाम की कब्र के अहाते में दफनाया। शेख हिसाम अपने समय का बड़ा फकीर था। यह घटना 21 जनवरी, 1561 को घटी। फिर खानजहां हुसेन कुली खां के प्रयत्न से बैराम खां के शरीर को मसहद पहुंचाया गया। इस अवसर पर पाटन के बदमाशों ने बैराम खां के शिविर को लूट लिया। उन्होंने दुष्टता करने में कोई कमी नहीं रखी। इस हत्या से बैराम खां के परिजनों में बड़ा दुःख छा गया। मुहम्मद अमीन दीवाना, बाबाई जम्बूर और ख्वाजा मुल्क, बैराम खां के चार वर्षीय पुत्र अब्दुल रहीम को और उसकी माता को तथा कुछ अनुचरों को उस भीड़ में से निकाल कर अहमदाबाद ले गये। कुछ दुष्ट अफगानों ने उनका पीछा किया तो हतभाग्य अनुचरों को रास्ते पर अहमदाबाद तक कई बार लड़ाईयां लड़नी पड़ीं। ये लोग अहमदाबाद में चार मास ठहरे। तत्पश्चात् मुहम्मद अमीन दीवाना और कुछ सेवकों ने यह उचित समझा कि अब्दुल रहीम को अकबर के समक्ष प्रस्तुत किया जाये। ये लोग शाही दरबार में उपस्थित हुए उससे पूर्व ही अकबर को बैराम खां की मृत्यु का समाचार मिल चुका था और उसने यह आदेश दे दिया था कि अब्दुल रहीम को दरबार

में प्रस्तुत किया जाये। यह आदेश अब्दुल रहीम के अनुचरों को जालौर में मिला जिसका आशय यह था कि अब्दुल रहीम दरबार में आये, बादशाह उसकी परवरिश करेगा। सितम्बर, 1561 में जो शासन का छठा वर्ष था बाबाई जम्बूर और यादगार हुसेन आदि अब्दुल रहीम को लेकर आगरा पहुंचे और उसको अकबर के चरणों में रखा। अकबर उस बालक से सहज अपनी कृपालुता से मिला। अपनी देख-रेख में उसका पालन करवाया। अकबर ने परख लिया कि बच्चे के मस्तक पर प्रकाश है इसलिये उसने बुराई करने वालों की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। कुछ समय बाद अब्दुलरहीम को मिर्जा खान की उपाधि प्रदान की गई। शनैः-शनैः उसकी शिष्टता और सहज सज्जनता विकसित होने लगी और उसको उच्च पद प्राप्त हो गया। अन्त में वह खानखाना बन गया। इसका विवरण यथास्थान दिया जायेगा। इस वर्ष के अन्त में माहम अनगा ने विचार किया कि उसके ज्येष्ठ पुत्र बाकी मुहम्मद खां का विवाह कर दिया जाये। इस समय शासन की बागडोर माहम अनगा के हाथ में थी। बाकी खां बकलानी नामक सरदार के दो पुत्रियां थीं। एक का विवाह माहम अनगा के छोटे पुत्र आदम खां से हो चुका था इसलिये माहम अनगा चाहती थी कि बड़ी पुत्री का विवाह उसके बड़े पुत्र से हो जाये। इसके लिये उसने अकबर से अनुमति प्राप्त की और बड़े समारोह के साथ विवाह किया गया। इस उत्सव में अकबर स्वयं सम्मिलित हुआ।

***

प्रकरण 33

मालवा पर चढ़ाई

बादशाह अकबर को सूचना मिली कि मालवा का सुल्तान बाजबहादुर बड़ा अन्यायी और अत्याचारी है और उसकी प्रजा उसके कुकर्मों से बड़ी दुखी है। तब बादशाह ने एक सेना खड़ी की और उस अभिमानी और अन्यायी सुल्तान के विरुद्ध भेजी। उद्देश्य यह था कि उस देश के लोग अत्याचार से मुक्त हो जायें। प्रशासकों के नाम आदेश जारी किये गये कि वीर और राजभक्त सेनानायकों की अध्यक्षता में एक बड़ी सेना तैयार करके इस काम में लगाई जाये। शासन के पांचवें वर्ष और 968 के आरम्भ में (सितम्बर, 1560) पीर मुहम्मद खां, अब्दुल्ला खां, किया खां कंग, शाह मुहम्मद कुली तोक बाई किया खां साहब हसन मिराक बहादुर समांजी खां, पापन्द मुहम्मद खां मीरम अरगून, शाह फनाई और अन्य कर्तव्यनिष्ठ तथा राजभक्त वीरों को आदम खां के नेतृत्व में नियुक्त किया गया और इन लोगों को आदेश हुआ कि मालवा के उत्पीड़ित लोगों की सहायता करे। यदि वहां के शासक की प्रमाद निद्रा खुल जाये और वह अपना ढंग सुधारने के लिए तैयार हो जाये तो उसे शाही दया की आशा दिलाई जाये और उसको दरबार में उपस्थित होने की अनुमति प्रदान की जाये। वह जैसा व्यवहार करे वैसा ही उसके साथ बर्ताव किया जाये। यदि वह

धृष्टता के मद के कारण फिसल जाये और आज्ञापालन के मार्ग पर न चले तो उसको दण्ड दिया जाये जिससे दूसरे दम्भी लोगों को भी शिक्षा मिल सके। वीर सैनिक लोग साहसपूर्वक शाही सेवा के नियमों के अनुसार विजय करने के लिये रवाना हुए। उन्होंने इस प्रकार प्रयाण किया कि बाजार के लोग भी उनके साथ-साथ चल सके परन्तु लोगों ने यह भी नहीं समझा कि वे बहुत धीरे चल रहे हैं।

***

प्रकरण 34

मालवा पर विजय

वीर शाही सेना मालवे के समीप पहुंची और उसको बाजबहादुर के अभियान और व्यसन का पता लगा तो उन्हें खबर मिली कि बाजबहादुर अपनी शक्ति का दुरुपयोग कर रहा है और लोगों पर बड़ी क्रूरताएं की जा रही हैं। शाही सेना ने अपना व्यूह बनाया। आदम खां और पीर मुहम्मद खां मध्य भाग में रहे। दायां पार्श्व अब्दुल्ला खां और कई अन्य लोगों के सुपुर्द किया। किया खां कंग और अन्य लोग बायें पार्श्व के नायक थे। सेना के अग्रभाग का नेतृत्व मुहम्मद खां कन्धार और शादिक खां को दिया गया।

बाजबहादुर में सहज प्रमाद और धृष्टता थी। वह राजकाज की ओर ध्यान नहीं देता था। विशेषज्ञों ने लिखा है कि थोड़ी मात्रा में और निश्चित समय पर अपने शरीर की स्थिति के अनुसार और स्वभाव के अनुकूल मद्यपान किया जा सकता है। परन्तु यह व्यक्ति तो पाशविक व्यसनों में डूबा हुआ था और निरन्तर पीया करता था। उसको रात और दिन की कोई खबर नहीं थी। बुद्धिमान ओर दूरदर्शी लोग अवकाश के समय संगीत सुनते हैं और नाच देखते हैं जिससे मनोविनोद होता है, परन्तु बाजबहादुर तो अपना सारा समय नाच-गाने में ही लगाया करता था।

जब शाही सेना सारंगपुर पहुंची तो बाजबहादुर की नींद खुली। इस नगर को बाज-बहादुर स्वर्ग तुल्य समझता था। सेना के आगमन का समाचार सुनकर बाजबहादुर सारंगपुर से बाहर निकला और तीन कोस दूर उसने अपना शिविर लगाया तब व्यूह बनाकर युद्ध करने के लिए तैयार हो गया। मध्य भाग का नेतृत्व उसने अपने हाथ में लिया। दायें पार्श्व का नेतृत्व उसने सलीम खां खासाखेल को दिया जो रायसिन और चन्देरी का फौजदार था। बायां पार्श्व आदम के पास था। अग्रसेना का नायकत्व ताज खां खासाखेल और सूफी कर रहे थे। इनके मस्तिष्क में भी बड़ा दम्भ था। दोनों पक्षों के वीर आपस में झपटें करने लगे। कुशल आदमियों के सुपुर्द गतिविधि देखते रहने का काम किया गया। प्रतिदिन शाही सेना के वीर और धीर सैनिक किसी अनुभवी राजभक्त के नेतृत्व में शत्रु के पार्श्वों की ओर

झपटते थे। उनका आना-जाना बन्द कर देते थे और बन्जारों को जो अन्न लेकर सेना में आना चाहते थे नहीं आने देते थे। इस प्रकार शत्रु की स्थिति बड़ी विषम बन गई। एक दिन शाह मुहम्मद कन्धारी शादिक खां, पायन्दा मुहम्मद खां मुगल, शाह फनाई मिहर अली सिल्दूज, सामंजी खां और मुहम्मद ख्वाजा कुस्तीगीर की बारी आई। ये लोग एक पहर रात के बाद निकले और रास्ता भूल गये तो शत्रु के दूसरी ओर जा पहुंचे। एक लड़ाई शुरू हुई और खूब मुठभड़ हुई। जब इसकी खबर शाही शिविर में आई तो अब्दुल्ला खां, किया खां कंग और कई अन्य लोग सवार होकर उधर गये और लड़ाई में सम्मिलित हो गये। पहले तो आदम ने रुस्तम की भांति लड़कर शाही सेना को पीछे धकेल दिया तथापि शादिक खां और कई अन्य लोग एक रुने पर कब्जा करके वहां छिप गये। फिर किया खां और सलीम खां में लड़ाई हुई जिसमें किया खां जीता। शादिक खां और किया खां ने मिलकर बाजबहादुर को पीछे धकेल दिया। दिन के एक पहर से भी अधिक समय व्यतीत हो जाने से शाही सेना को विजय की आशा दिखाई देने लगी। बादशाह के सौभाग्य से अच्छी विजय प्राप्त हुई। बाजबहादुर खानदेश और बुरहानपुर की ओर भाग गया। उसका सारा सामान और सम्पत्ति अन्तःपुर की गायिकायें और नर्तकियां जो उसके विनोद के साधन थे विजयी लोगों के हाथ में आ गये। जब उसने देखा कि हारने वाला है तो उसने अपनी पत्नियां और उपपत्नियां अपने विश्वस्त सेवकों के सुपुर्द कर दी थीं और आदेश दिया था कि यदि उसकी पराजय की निश्चित खबर आये तो उन सबका तलवार से वध कर दिया जाये जिससे वे अपरिचित लोगों के हाथ में न पड़ें। जब बाजबहादुर की पराजय स्पष्ट दिखाई देने लगी तो इन सेवकों ने आदेश का पालन किया और अपनी तलवारों से कितनी ही स्त्रियों को मार डाला। इस प्रकार निरपराध स्त्रियां अन्याय की तलवार को भेंट हो गईं। कुछ तो आहत हो गईं, कुछ में अभी सांस था, कितनी ही कि अभी मरने की बारी नहीं आई थी कि विजयी शाही सेना ने नगर में प्रवेश किया। दुष्ट वधक इन निरपराध स्त्रियों पर अभी वार नहीं कर पाये थे। इनमें मुख्य रूपमती थी जो अपनी सुन्दरता और मोहकता के कारण संसार में प्रसिद्ध थी। बाजबहादुर उस पर अति मुग्ध था और उसके लिये हिन्दी भाषा में कवितायें बनाता था। एक पिशाच ने जो उसका वध करने के लिये नियुक्त किया गया, तलवार चलाई जिससे उसके कई गहरे घाव लगे। ठीक उसी समय विजयी सेना आ पहुंची और उस अधमरी सुन्दर स्त्री को बाहर निकाल लाई। जब बाजबहादुर भाग गया तो आदम खां तुरन्त ही सारंगपुर पहुंचा। वह वहां के कोष को हथियाना चाहता था। चाहे वह ऊपर हो या भूमिगत हो। वह अन्तःपुर पर भी कब्जा करना चाहता था जहां की गायिकायें और सुन्दर युवतियां संसार में प्रसिद्ध थीं। उनकी सुन्दरता के गीत हाटों और बाजारों में गाये जाते थे। आदम खां ने बाजबहादुर की सम्पत्ति पर कब्जा कर लिया और उसकी उपपत्नियों और गायिकाओं को अपने हाथ में लेकर रूपमती को ढूंढने के लिए आदमी भेजे। जब यह खबर उसके कान तक पहुंची तो उसका रक्त खौलने लगा। बाजबहादुर के प्रेम का स्मरण करके उसने धैर्यपूर्वक हलाहल विष का पान कर लिया और अपने प्राण त्याग दिये।

आदम खां के कुकर्म

जब बादशाह के सौभाग्य से आदम खां को विजय प्राप्त हो गई तो उसका सहज मोह और अभिमान जागृत हो गया। वह मूर्खता के काम करने लगा। उसका मस्तिष्क विकृत हो गया। उसने पीर मुहम्मद खां की शिक्षा पर भी कोई ध्यान नहीं दिया। उसने इस महाविजय के उपलक्ष में ईश्वर को धन्यवाद दिया, पुण्यदान किया और शाही अफसरों को प्रसन्न करने के लिये बहुत बड़ा भोज दिया और सब सेवकों को बख्सीसें दीं। तत्पश्चात् जीते हुए प्रदेश को उसने इस प्रकार विभाजित किया, सारंगपुर और कुछ अच्छे-अच्छे परगने उसने अपने पास रख लिये। माण्डू और उज्जैन पीर मुहम्मद को दिये, सरकार हिन्दया किया को और मन्दसौर तथा उसके इलाके शादिक खां को दिये। अब्दुल्ला खां मुगल अपनी जागीर काल्पी को चला गया। आदम खां ने सारे उत्तम पदार्थ, गड़ा हुआ धन, सुन्दर और मनोहर युवतियां और कितनी ही गायिकायें अपने लिये रख लीं। इस लूट के माल में से उसने कुछ हाथी छांट कर बादशाह को भेज दिये और विजयवृतान्त भी लिख भेजा।

अफगानों पर विजय

इसी वर्ष खानजमा ने अफगानों पर विजय प्राप्त की। खानजमा वास्तव में राजभक्त नहीं था परन्तु अभी उसके कर्मों का पर्दा नहीं हटा था इसलिये उसको साम्राज्य का अच्छा सेवक माना जाता था। जब बैराम खां संसार से चल बसा तो अफगानों ने सोचा कि उनके लिये अच्छा अवसर है। अत: उन्होंने मुवारिज या अदली के पुत्र को अपना नेता बनाया और उसका नाम शेर खां रखा। उन्होंने एकत्र होकर खानजमा पर आक्रमण करने का और उसको समाप्त कर देने का विचार किया। खानजमा को उनके विचारों से परिचय था इसलिए वह जौनपुर के दुर्ग को दृढ़ करने में लग गया। उसने आस-पास के अधिकारियों को सूचना भेजी तो सिकन्दर खां उजबेग के अतिरिक्त रारे ही उसके पास आ गये। इनमें बहादुर खां, इब्राहीम खां उजबेग, मजनू खां काकसाल, शाहन खां जलाईर, मीर अली अकबर, कमाल खां गक्खड़ और कुछ अन्य लोग उल्लेखनीय थे। शत्रु के पास बीस हजार सवार, पचास हजार प्यादे और पांच हजार हाथी थे इसलिये उसके विरुद्ध प्रयाण करना उचित नहीं समझा गया। अफगानों ने इस अवसर का लाभ उठाया, सेना के साथ प्रयाण किया और गोमती नदी तक जा पहुंचे जिसके तट पर जौनपुर स्थित है। तीसरे दिन उन्होंने सेना सहित नदी को पार किया। शेर खां और फतह खां और बहुत-से सैनिक सुल्तान हुसेन सुरंकी की मस्जिद की ओर आगे बढ़े। दाहिनी ओर उन्होंने याकूब खां, फनू, सैयद सुलेमान सलीम खां खरवार और जाहर खां को भेजा। उधर की ओर लाल दरवाजा था। बायीं ओर हसन खां बचगोटी और फतह खां के पुत्र आदम खां को रवाना किया। उधर की ओर शेख बहलूल का वेध था। खानजमा ने अपने आदमी तैयार रखे। वीर लोग सब ओर से अपने प्राणों को हथेली पर रखकर समर भूमि में कूद पड़े। हसन खां बचगोटी पर कई सूरवीरों ने प्रहार किया तो वह बाणों की वर्षा से बचने के लिये भाग निकला। तब शेर खां कुछ वीर सैनिकों के साथ आगे आया। उसके सैनिक बड़े शौर्य के साथ लड़े। उसने विजयी लोगों को नगर की गलियों में धकेल दिया। अफगानों ने समझा कि उनको विजय प्राप्त हो गई तो वे दूसरी

दिशा की ओर मुड़ गये। इसी बीच में खानजमा अपने वीर और धीर सैनिकों के साथ आगे आया और उसने पराजय को विजय में परिवर्तित कर दिया। उसने पीछे से शत्रुओं पर बाणों की वर्षा की। ईश्वर की सहायता से फिर महाविजय की घोषणा कर दी गई, शाही सेवकों को लूट का बहुत-सा माल मिला और कितने ही अच्छे-अच्छे हाथी उनके हाथ लगे।

***

प्रकरण 35

अकबर का सारंगपुर प्रयाण

बादशाह अकबर पूर्वी प्रान्तों में जाना चाहता था। वहां अली कुली खां को विजय प्राप्त हो चुकी थी इसलिये उसको बड़ा दम्भ आ गया था और उसने लूट का माल बादशाह को नहीं भेजा था परन्तु मालवे में आदम खां ने विद्रोह कर दिया था। उसका मस्तिष्क भी विजय-प्राप्ति के कारण फिर गया था इसलिये आदम खां का दमन आवश्यक था। अत: अकबर ने मालवा पहुंच कर वहां की यथोचित व्यवस्था करना अधिक आवश्यक समझा। वह इस विषय में विचार ही कर रहा था कि शादिक खां ने आकर मालवा की स्थिति का वर्णन किया तो बादशाह का निश्चय और भी दृढ़ हो गया और उसने अधिकारियों को आदेश दिया कि मालवा पर चढ़ाई करने के लिये आवश्यक तैयारी की जाये। अकबर अपनी सहज कृपालुता के कारण आदम खां का सुधार करना चाहता था। साथ ही उस सुखद प्रान्त को देखने की भी उसकी इच्छा थी। उसने मुनीम खां खानखाना, ख्वाजा जहां और कुछ अन्य लोगों को आगरे में छोड़ा और उच्चाधिकारियों को सूचित किये बिना ही उसने 27 अप्रैल, 1561 को प्रयाण शुरू कर दिया। उसके साथ उसके विशेष सेवक थे।

रणथम्भौर और गागरोन

अकबर के मार्ग में रणथम्भौर दुर्ग था। वहां का दुर्गाध्यक्ष राय सुर्जन था। अकबर ने इस दुर्ग को जीतना आवश्यक नहीं समझा। जब राय सुर्जन को अकबर की सवारी का समाचार मिला तो उसने अपने योग्य अधिकारियों द्वारा उपर्युक्त भेंटे भेजीं और अपनी अधीनता प्रकट की। अकबर ने प्रयाण जारी रखा। जब बादशाह मालवा प्रान्त के दृढ़ दुर्ग गागरोन के निकट ठहरा हुआ था तो उसको विदित हुआ कि बाजबहादुर ने यह दुर्ग अपने एक विश्वस्त व्यक्ति को दे दिया था, परन्तु वह व्यक्ति इस पर अभी तक कब्जा नहीं कर सका। बादशाह को यह भी विदित हुआ कि आदम खां का भी इस दुर्ग को जीतने का विचार था। जब बादशाह वहां ठहरा हुआ था तो उसने इस दुर्ग को घेरा डलवाया। जब दुर्गपति को मालूम हुआ कि बादशाह उस दुर्ग पर अधिकार करना चाहता है तो उसने दुर्गद्वार की

चाबियां बादशाह के पास भेज दीं। बादशाह ने उसका सम्मान किया और उसके प्रति कृपा प्रदर्शित की। वहां पर खालदीन को दुर्गपति बनाकर अकबर ने रात-दिन प्रयाण किया और सारंगपुर के पास पहुंच गया। आगरा से सारंगपुर के बीच में बड़ी ऊंची-नीची पहाड़ियां हैं परन्तु अकबर ने यह मार्ग 16 दिन में पूर कर लिया और 13 मई, 1561 के दिन उसने सारंगपुर के जिले में अपने विजयी ध्वज खड़े कर दिये।

आदम खां से भेंट

आश्चर्यजनक बात यह हुई कि उसी दिन गागरोन की विजय के विचार से बाजबहादुर सारंगपुर से रवाना हुआ। वह 2-3 कोस आ गया। उसको अकबर के प्रयाण का कुछ भी पता नहीं था। माहम अनगा ने शीघ्रगामी धावन भेजकर आदम खां को बादशाह के प्रयाण की सूचना देना चाहा था परन्तु वे लोग बादशाह से पीछ रह गये। अपनी सेना को व्यवस्थित करके आदम खां गागरोन की ओर शान्तिपूर्वक प्रयाण कर रहा था। उसको कुछ अन्तर पर रात्रि में बादशाह के प्रयाण के चिन्ह दिखाई दिये। आदम खां के कुछ सैनिक आगे चले गये थे। वे अकबर के अनुचरों तक पहुंच गये। जब उनकी दृष्टि बादशाह पर पड़ी तो उन्होंने घोड़ों से उतर कर बादशाह को सलाम किया। आदम खां को यह देखकर भय हुआ कि उसके आदमी इतने परेशान होकर घोड़ों से क्यों उतर गये। उसने कहा, हे खुदा ये लोग किसके प्रति आदर प्रकट कर रहे हैं। फिर उसने अपना घोड़ा आगे बढ़ाया और वह और भी समीप पहुंचा। तब उसकी दृष्टि बादशाह पर पड़ी तो वह हक्काबक्का रह गया और उसने बादशाह के प्रति अधीनता प्रकट की। अकबर का सहज स्वभाव था कि वह अपने सेवकों के अपराधों को क्षमा कर देता था, इसलिये आदम खां को देखकर वह उतरा और कुछ समय तक उससे बात की। आदम खां के साथियों ने भी बादशाह के प्रति आदर प्रकट किया। फिर अकबर पुनः सवार होकर सारंगपुर की ओर चला और उस नगर में आदम खां के निवास पर पहुंचा। आदम खां ने दुर्लभ और सुन्दर वस्तुयें उसको भेंट की परन्तु उसका दिल नहीं खुला। आदम खां बाह्य रूप से मिथ्याचार कर रहा था जिससे अकबर को कोई प्रसन्नता नहीं होती थी। आदम खां ने जो भी किया वह अकबर को पसन्द नहीं आया। आदम खां ने अकबर को एक पोशाक भेंट की। अकबर धूल से भरे हुए मार्ग को तय करके आया था इसलिये आदम खां चाहता था कि वह कपड़े बदल ले, परन्तु बादशाह ने समझा कि आदम खां की भेंट मिथ्याचारपूर्ण है इसलिये उसने पोशाक स्वीकार नहीं की। तब आदम खां बड़ा परेशान हुआ और दुखी होकर दरबारियों की चाटुता करने लगा। अन्त में बादशाह को उसकी दुःखित दशा पर दया आई और अपनी विशाल हृदयता से प्रेरित होकर उसने पोशाक स्वीकार कर ली। इस प्रकार उसने आदम खां पर कृपा की और उससे अच्छी बातें कीं। उस दिन उसकी महिलायें पीछे रह गई थीं इसलिये बादशाह उस दिन आदम खां के मकान की छत पर सोया। आदम खां घात में बैठा रहा। वह देखता था कि देखें अकबर उसके जनाने पर दृष्टि डालता है या नहीं। यदि वह ऐसा करता तो आदम खां इस बहाने से उसका वध करता परन्तु अकबर के मन में ऐसा विचार ही नहीं था। वह

बहुत लम्बा प्रयाण करके आया था। इसलिये वह खूब सोया और आदम खां के जनाने का उसको विचार भी नहीं आया। आदम खां को अकबर का वध करने के लिये न तो कोई बहाना मिला और न उसमें शक्ति थी। ईश्वर ने अकबर की रक्षा की।

अकबर की वापसी

अगले दिन माहम अनगा अकबर के जनाने को लेकर आई जो पीछे रह गया था और उसने मनोविनोद की व्यवस्था की। माहम अनगा ने आदम खां की प्रमाद निद्रा को भंग किया और आदम खां को प्रेरित किया कि अकबर का यथोचित आदर करे। तब उसने अनेक भेंटें दीं और भोज की व्यवस्था की और बाजबहादुर से जो कुछ प्राप्त हुआ था, वह उसने अकबर के सामने प्रस्तुत किया। इसमें चल और अचल सम्पत्ति थी, बाजबहादुर की स्त्रियां थीं, गायिकायें और नर्तकिया थीं और वेश्यायें थीं। अकबर ने इन सब वस्तुओं को स्वीकार किया और उनमें से कुछ आदम खां को वापस दे दी। सारंगपुर में चार दिन ठहर कर 17 मई, 1561 को अकबर ने आगरे की ओर वापस प्रयाण किया।

आदम खां की कामुकता

सारंगपुर से एक मंजिल ही पार हुई थी और अकबर पाटनकोर पहुंचा था कि आदम खां के मन में कुविचार उत्पन्न हुए। माहम अनगा पर अकबर की बड़ी कृपा थी इसलिए उसने कुछ नहीं कहा। आदम खां ने शाही अन्तःपुर की उन स्त्रियों के साथ षड़यन्त्र किया जो उसकी माता माहम अनगा की सेविकायें थीं। इनकी सहायता से उसने बादशाह के अन्तःपुर के डेरे में से बाजबहादुर की दो विशेष रूपवती युवतियां बुलवा लीं। इनको अकबर अभी-अभी देख चुका था। आदम खां का ऐसा ख्याल था कि सब लोग प्रस्थान की तैयारी में हैं इसलिए इस बात का किसी को पता नहीं लगेगा। अब इस अफवाह का पता अकबर को लगा तो उसने एक दिन के लिये प्रयाण बन्द कर दिया और उन सुन्दर युवतियों की तलाश करने के लिये आदमी भेजे। ये लोग उन्हें पकड़कर वापस ले आये। माहम अनगा ने समझा कि यदि इन युवतियों को बादशाह के समाने प्रस्तुत किया जायेगा तो उसकी कार्यवाहियों का पता लग जायेगा और उसके पुत्र का द्रोह भी प्रकट हो जायेगा। इसलिये माहम अनगा ने इन दोनों मनोहर युवतियों का वध करवा दिया और कहा—''कटा हुआ सिर बोलता नहीं है।'' बादशाह ने इस हत्या की और आंखें मूंद ली; क्योंकि अब तक उस पर माहम अनगा का प्रभाव था।

इसके पश्चात् अकबर की वापसी के समय जब मालवा के अधिकारियों को अकबर के प्रयाण का पता लगता था तो वे उसकी सेवा में उपस्थित हुआ करते थे। जब अकबर के डेरे सारंगपुर के बाहर लगे हुए थे तो मीर मुहम्मद खां, किया खां, हबीब अली खां और अन्य अधिकारियों ने आकर उसको सलाम किया और बादशाह ने प्रत्येक अधिकारी के प्रति कृपा प्रकट की तथा उसकी पदोन्नति की। आदम खां, पीर मुहम्मद खां और मालवा के अन्य अधिकारी लोग अकबर से ईजाजत लेकर अपनी-अपनी जागीरों पर चले गये और

बादशाह की सवारी आगरा की ओर चली। मार्ग में अकबर शिकार तो करता जाता था परन्तु शीघ्रता से प्रयाण करता जाता था।

शेर का शिकार

जब अकबर नटवर के दुर्ग के पास पहुंचा तो एक शेरनी जिसके साथ पांच बच्चे थे सवारी के सामने आ खड़ी हुई। अकबर बड़ा साहसी वीर था। वह उस भयंकर शेरनी के सामने अकेला और निडर चला गया। जब दर्शकों ने उसको देखा तो उनको रोमांच हो गया और पसीना आ गया। बादशाह ने लपककर उस पर वार किया और तलवार के एक ही प्रहार से उसको मार दिया। शेरनी घातक प्रहार से आहत होकर गिर पड़ी तो चारों ओर से लोगों ने हर्षध्वनि की। अकबर ने प्रथम बार ही यह शेर का शिकार किया था। अकबर के अनुचरों ने शेरनी के बच्चों को तलवारों और तीरों से मार डाला।

अकबर आगरा पहुंचा

4 जून, 1561 को अकबर आगरा पहुंचा। इस प्रयाण में एक मास और सात दिन लगे थे। जाने में सोलह दिन लगे। सारंगपुर में चार दिन मुकाम रहा और वापस आने में सत्रह दिन लगे। इस प्रयाण में साहस और बुद्धि के कई काम किये गये।

***

प्रकरण 36

एक अनोखी कहानी

बहराईच के नगर में सालार मसूद गाजी की कब्र है। वह गजनी की सेना का एक नायक था और शहीद हो गया था। भारतवर्ष में यह प्रथा है कि नाना प्रकार के रंगों के झण्डे बनाकर लोग इस कब्र पर ले जाते हैं और कई प्रकार की भेंटें चढ़ाते हैं। आगरे से बहुत-से लोग वहां जाते हैं और नगर के पास कई रात तक जागरण करते हैं। इस मेले में भले और बुरे सब प्रकार के लोग आते हैं। इस पुस्तक के लेखक अबुल फजल ने सुना कि "एक रात आगरे के निकट इस प्रकार का मेला लगा तो मैं भेष बदलकर नदी पार करके वहां गया। मैं नाना प्रकार के लोगों पर विचार कर रहा था तो एकाएक एक बदमाश ने मुझे पहचान लिया और दूसरे लोगों से कह दिया। जब मुझे इस बात का पता लगा तो मैंने तुरन्त ही अपने आपको घुमाना शुरू किया और भेड़ें आदमी की भांति में देखने लगा जिससे मेरा स्वरूप बदल गया। लोगों ने समझा कि मैं दर्शक हूं और लोगों को देख रहा हूं। भले आदमियों ने मुझको देखा तो मेरे रूपान्तर के कारण वे मुझे नहीं पहचान सके और

एक दूसरे से कहने लगे ये आंखें और स्वरूप उस प्रकार का नहीं है। मैं चुपचाप वहां से रवाना हो गया और अपने महल में आ गया।''

जब अकबर आगरे के समीप शिकार कर रहा था तो एक गीदड़ ने एक हिरण के छोटे-से बच्चे पर आक्रमण किया। गीदढ़ उसको दबाने ही वाला था, तब उस बच्चे की माता घबरा गई, फिर साहस करके वह उधर दौड़ी और उसने गीदड़ पर कई बार आक्रमण किया। गीदड़ की स्थिति बहुत बुरी हो गई तो वह एक तालाब में डूब गया और पानी को एक प्रकार का दुर्ग बना लिया। जब बादशाह ने उस ओर देखा तो दर्शकों ने भी बड़ा शोर मचाया। बादशाह इस प्रकार प्रत्यक्ष में तो शिकार आदि में व्यस्त रहता था और विशेष कर चीतों का शिकार किया करता था परन्तु वह साम्राज्य के मामलों में भी व्यस्त रहता था। वह दूसरे देशों पर विजय प्राप्त करता था। राजभक्तों की पदोन्नति करता था। दुष्टों का दमन करता था तथा लोगों के गुणों की परीक्षा करता था। वह छोटे-से-छोटे काम की भी उपेक्षा नहीं करता था। अन्त में खानजमा की खबर आई तो बादशाह अकबर ने निश्चय किया कि उस प्रदेश की ओर जाना चाहिए।

***

प्रकरण 37

खानजमा का दमन

जिस मनुष्य में वास्तविक मानवता की कमी होती है वह अपने स्वामी के प्रति कर्तव्य की उपेक्षा करता है, उसमें दम्भ आ जाता है और अपने ईश्वर रूप स्वामी के प्रति वह अभिमान करने लगता है और अपने बराबर वालों और साथियों के साथ घमण्ड का व्यवहार करता है। साथ ही वह सारे मनुष्यों को सताने लगता है। ये सारी बातें अलीकुली खां पर जो खानजमा के नाम से प्रसिद्ध था लागू होती है। उसमें शारीरिक साहस बहुत था परन्तु ऐसा साहस तो पशुओं में भी होता है। इस साहस के कारण वह अपने आपको बहुत बड़ा समझने लगा और उसका मस्तिष्क फिर गया।

आदिल खां के पुत्र ने बहुत-से दुष्ट अफगान इकट्ठे कर लिये थे। खानजमा ने उसको हरा दिया। इससे खानजमा को बड़ा अभिमान हो गया और उसके अच्छे गुण सब लुप्त हो गये। तब शिकार के बहाने से बादशाह अकबर ने उस प्रान्त की ओर प्रयाण किया। बादशाह ने कहा यदि इस दुष्ट में कुछ भलाई शेष है और वह अपनी प्रमाद निद्रा को त्याग कर हमारे प्रति अधीनता प्रकट करने के लिये आता है तो मैं उसके अपराधों को क्षमा करके वापस आ जाऊंगा क्योंकि वह एक ऐसा पौधा है जिसको हमने ही लगाया है और शासकों में वह गुण होना चाहिये कि वे अपराधों को क्षमा कर दे। यदि वह अच्छे विचारों से प्रेरित

नहीं होता है और हमारी सेवा में उसको अपना हित दिखाई नहीं देता है और उसका रोग पुराना और असाध्य हो गया है तो उस प्रान्त के निवासियों को अत्याचारियों के हाथ से बचाया जायेगा। इन प्रशासनिक विचारों के अनुसार ईश्वर की सहायता से बादशाह अकबर ने 17 जुलाई, 1561 को पूर्वीय प्रान्तों की ओर प्रयाण किया। उसने आगरे की रक्षा मुईनुद्दीन अहमद खां, फरनखुदी के सुपूर्द की। मुनीम खां खानखाना ख्वाजा जहां और बहुत-से सम्राट् सेवकों को अपने साथ लिया। वह मंजिल दर मंजिल चला और मार्ग में अपने न्याय का प्रकाश करता गया। प्रत्यक्ष में तो वह शिकार किया करता था परन्तु उसका अन्तर आत्मा ईश्वर के साथ था।

अब्दुल्ला खां उजबेग का आतिथ्य

जब बादशाह का शिविर काल्पी के इलाके में पहुंचा तो अब्दुल्ला खां उजबेग ने बादशाह के दरबारियों द्वारा प्रार्थना करवाई कि ''बादशाह मेरे मकान पर आकर कृपादृष्टि से मेरी कीर्ति में वृद्धि करें। यदि बादशाह इस प्रकार मेरी प्रतिष्ठा बढ़ायेंगे तो इसमें क्या अनौचित्य होगा। बादशाह बड़ा शिष्ट था इसलिये उसने उजबेग की प्रार्थना स्वीकार की और अपने प्रकाश से उसके निवासस्थान को आलोकित कर दिया। अब्दुल्ला ने बादशाह के प्रति सिजदा किया। दिन भर बादशाह ने उसके मकान में जो जमुना नदी के तट पर स्थित था, आनन्द मनाया और हर्ष तथा आह्लाद में समय व्यतीत किया।''

खानजमा की अधीनता

काल्पी से बादशाह अकबर ने कर्रा की ओर प्रयाण किया जो गंगा नदी के तट पर स्थित है। कर्रा के बाहरी भाग में अपने डेरे लगाकर बादशाह पास ही शिकार करने चला गया। उस सुखद स्थान पर उसने कई दिन व्यतीत किये। खानजमा और उसका भाई बहादुर खां प्रमाद निद्रा छोड़कर बादशाह के प्रति अधीनता प्रकट करने के लिए आये। ऐसा करने से उनका सिर ऊंचा हो गया। उन्होंने पेशकश के रूप में उस प्रदेश की कई वस्तुएं भेंट की। उन्होंने दिलशंकर पल्टा दलील सब दिल्ला और जगमोहन नामक प्रसद्ध हाथी भेंट किये। साथ ही दोनों ने लज्जा और पश्चात्ताप प्रकट किया। बादशाह ने अपने सत् सिद्धान्तों के अनुसार इनके पूर्व अपराधों को भुला दिया, मानो उन्होंने कोई अपराध किया ही न हो। उन दोनों पर बड़ा अनुग्रह किया गया। बादशाह ने कहा कि ''मानवता का आश्चर्यकारी वृक्ष ईश्वर ने उत्पन्न किया है। पुष्पों को और घास को निर्मूल करना बहुत बुरी बात है तो फिर मनुष्य तो एक विशेष प्रकार का वृक्ष है। इसको निर्मूल नहीं करना चाहिये। बादशाह ने खानजमा और बहादुर खां को क्षमा कर दिया।''

राजा रामचन्द्र पर अभियान

इसी समय राजा रामचन्द्र पर अभियान करने के लिये अब्दुल मजीद आसफ खां को पन्ना की ओर भेजा गया। आसफ खां को आदेश दिया गया कि यदि राजा रामचन्द्र उचित व्यवहार करे और गाजी खां तनूरी तथा अन्य लोगों को जो उस प्रदेश में भाग गये हैं पकड़

ले और रामचन्द्र स्वयं आज्ञापालन करने लग जाये तो उसके साथ नर्मी का व्यवहार करके वापस आ जाये। उस समय वर्षा ऋतु थी। राजा बड़ा हठी था, शाही योद्धा वापस आकर अपनी-अपनी जागीरों पर चले गये। अब बादशाह को कर्रा में 21 दिन हो चुके थे और उस प्रदेश के विषय में उसका चित्त शान्त हो गया था। अत: वापस राजधानी को लौटने की बात उसके कानों में गूंजने लगी। दोनों भाई (खान-ए-जमा और बहादुर खां) तीन मंजिल तक बादशाह के साथ रहे और फिर उसकी अनेक कृपायें प्राप्त करके उन्होंने ईजाजत मांग ली। बादशाह ने सारे प्रदेश को उस दिन में पार कर लिया और 29 अगस्त 1561 को वह आगरा पहुंचा। यह सारा प्रयाण उसने एक मास चौदह दिन में पूरा किया था। वह चौदह दिन तक तो चलता रहा। बीस दिन तक ठहरा और वापस आने में उसको दस दिन लगे। वापसी पर सज्जनों ने बादशाह का स्वागत किया, उसने सब को यथायोग्य पुरस्कार दिया।

शमसुद्दीन मुहम्मद खां अतका का आगमन

नवम्बर, 1561 में शमसुद्दीन मुहम्मद अतका जिसको आजीम खां की उपाधि थी, पंजाब से आया और बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ। उसने बादशाह को उपयुक्त भेंटें दीं और बादशाह ने उस पर बड़ी कृपा की। फिर अतका ने राजनैतिक और वित्तीय मामले अपने हाथ में ले लिये। सेना और प्रजा के मामलों को भी वह देखने लगा। माहम अनगा में बड़ी बुद्धि थी और बादशाह के प्रति उसकी निष्ठा थी। उसने बादशाह की बड़ी सेवायें की थीं। वह वास्तव में मुख्य मंत्री थी। उसको मुहम्मद खां अतका की नियुक्ति अच्छी नहीं लगी। उस समय मुनीम खां खानखाना वकील था और मसनद पर बैठा करता था। उसके मन को भी इस नियुक्ति से दुख हुआ। जब खान-आजिम ने भक्तिपूर्वक बादशाह अकबर की सेवा करना शुरू किया तो माहम अनगा और मुनीम खां को चाहिये था कि वे शमसुद्दीन मुहम्मद खां अतका को अपना सहायक समझते और दुखी होने के बजाय इस नियुक्ति के लिये ईश्वर को धन्यवाद देते।

चुनार दुर्ग पर बादशाह का अधिकार

चुनार बड़ा दुर्गम दुर्ग है। इस वर्ष वह बादशाह के अधिकार में आ गया। यह दुर्ग शक्ति या युक्ति के प्रयोग से शायद ही किसी ने छीना होगा। इसकी प्राचीरें इतनी ऊंची हैं कि उन तक कोई शत्रु नहीं पहुंच सकता। इसमें अन्न और जल की कमी नहीं है। इसलिये वह बाह्य जगत पर आश्रित नहीं है। जब आदिल का पुत्र इस दुर्ग को छोड़कर इधर-उधर भटकने लगा तो यह दुर्ग फत्तू (फतह खां मसन्द आली) के अधिकार में आ गया। फत्तू आदिल की जाति का था, वह इस दुर्ग को अपना शरणस्थान समझता था और इसको दृढ़ करने में उसने बड़ा परिश्रम किया। जब बादशाह अकबर कर्रा से वापस आया और आगरा पहुंचा तो उसने इस दुर्ग पर अधिकार करने के लिये ख्वाजा अब्दुल मजीद आसफ खां को रवाना किया। फत्तू में बुद्धि थी। उसने देख लिया कि अफगानों की पराजय का दिन आ गया है। इसलिये उसने अपने कई आदमियों को अपनी अधीनता प्रकट करने के लिये

भेजा। उसने नम्रतापूर्वक निवेदन करवाया कि "यदि शेख मुहम्मद[1] मेरा हाथ पकड़कर बादशाह के दरबार में मुझे ले जाये और उसके चरणों का चुम्बन करवाये तो मैं बादशाह का सेवक बनने के लिये तैयार हूँ और सन्तोषपूर्वक इस दुर्ग को शाही सेवकों के सुपुर्द कर दूंगा। उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली गई। शेख मुहम्मद जाकर उसको अधीनता प्रकट करवाने के लिये ले आया। बादशाह के दरबार में आकर सिजदा किया तो उसका मस्तक प्रकाशित हो गया। बादशाह ने उस पर कई प्रकार की कृपायें कीं और उसको अमीर की उपाधि द्वारा सम्मानित किया। चुनार के दुर्ग में हसन अली तुर्कमान को दुर्गपति बनाकर भेज दिया।"

हवाई हाथी की लड़ाई

हवाई नामक हाथी बड़ा शक्तिशाली पशु था और उसकी गणना विशेष हाथियों में की जाती थी। क्रोध, भयकर्त्ता और दुष्टता में उसकी समानता कोई नहीं कर सकता था। बड़े-बड़े अनुभवी महावत भी उस पर कठिनता से चढ़ सकते थे और फिर उसको लड़ाना तो अत्यन्त ही दुष्कर कार्य था। एक दिन पोलो के मैदान में यह हाथी भयंकर बनकर घूम रहा था और अनेक प्रकार की कलायें कर रहा था तो बादशाह अकबर इस पर सवार हो गया और फिर उसको अपने काबू में किया। रन बागा भी लगभग हवाई जैसा ही था। अनुभवी और राजभक्त लोगों ने जो वहां उपस्थित थे, ऐसा दृश्य पहले कभी नहीं देखा था। जो दरबारी वहां खड़े हुए थे उनको साहस नहीं हुआ कि वे अकबर को उतर जाने के लिये कहे, परन्तु उन्होंने निश्चय किया कि अतका खां को सूचित किया कि वह अकबर को उतारे। अतका खां आया और दृश्य को देखकर वह भी बड़ा घबराया। उसने चिल्लाकर निवेदन किया। छोटे और बड़े लोगों ने ईश्वर से अकबर की रक्षा के लिये प्रार्थना की। जब अकबर ने अतका खां को देखा तो उसने कहा तुमको रोना-पीटना नहीं चाहिये। यदि तुम चिल्लाहट समाप्त नहीं करोगे तो मैं जान-बूझ कर हाथी के ऊपर से गिर जाऊंगा। जब अतका खां ने देखा कि बादशाह अपनी हठ पर तुला हुआ है तो उसने अकबर की आज्ञा मान ली और वह प्रत्यक्ष में शान्तिपूर्वक बैठ गया। अकबर शान्तिपूर्वक हवाई हाथी को लड़ाता रहा। अन्त मे इस हाथी ने अपने प्रतिपक्षी को हरा दिया। रन बागा का धैर्य टूट गया और वह भाग गया। हवाई हाथी ने न आगे देखा न पीछे और ऊंचे और नीचे स्थानों पर ध्यान न देकर उसने रन बागा का पीछा किया। बादशाह चट्टान की भांति अचल रूप से उस पर बैठा रहा। बहुत दूर तक दौड़ने के बाद हाथी जमुना नदी के तट पर पहुंचा जहां एक बड़ी पुल बनी हुई थी। रन बागा नामक हाथी भी परेशान होकर इस पुल पर पहुंच गया। हवाई हाथी भी इसी पुल पर चढ़ गया। इन दोनों हाथियों के भार के कारण नावों की पुल कभी पानी में डूब जाती थी और कभी ऊपर आ जाती थी। शाही सेवक पुल के दोनों ओर तैर रहे थे। फिर हाथी पुल पार करके दूसरी ओर पहुंच गये। दर्शक लोग इस आश्चर्यकारी दृश्य को दख रहे थे। अकबर ने हवाई हाथी को रोका। रन बागा जान बचाकर भाग गया। तब लोगों की जान में जान आई। कुछ लोगों का ख्याल था कि

1. यह ग्वालियर वाला मुहम्मद घोस था और उस समय 80 वर्ष का था।

शायद बादशाह के दिमाग पर शराब का असर था इसीलिये उसने यह कार्य किया। परन्तु उनकी यह भ्रान्ति शीघ्र ही दूर हो गई।

आदम खां का आगमन

जब अकबर आगरे में ठहरा हुआ था तो उसको वह विचार आया कि पीर मुहम्मद खां शेरवानी को मालवा का सूबेदार नियुक्त करके आदम खां को दरबार में बुला लिया जाये। इस आदेश का आदम खां ने पालन किया और मालवे का काम मुहम्मद खां के सुपुर्द करके वह आगरे की ओर रवाना हो गया। शीघ्रतापूर्वक यात्रा करके वह दरबार में उपस्थित हुआ तो उस पर अनेक शाही कृपायें की गईं। माहम अनगा अपने प्रतिष्ठित पुत्र की जुदाई से दुखी थी। अब आदम खां के आगमन से उसको सान्त्वना मिली। पीर मुहम्मद खां आदम खां के साथ-साथ काम करता था और उससे दुखी था। उसको भी अब सान्त्वना हुई और अब मालवा की जनता अन्याय से मुक्त होकर शान्ति का अनुभव करने लगी। आदम खां की मूर्खता पर रोक लग गई और वह आत्मविनाश से बच गया। बादशाह ने अब उसके सुधार का निश्चय कर लिया।

ख्वाजा मुइनुद्दीन विषयक गान सुना

एक रात्रि को बादशाह शिकार करने के लिये फतेहपुर गया हुआ था तो वह मंडाकर नामक गांव के पास से निकला जो आगरे से फतेहपुर जाने वाले मार्ग पर स्थित है। वहां बहुत-से भारतीय गायक ख्वाजा मुइनुद्दीन का गुणगान कर रहे थे। यह ख्वाजा अजमेर में शयन कर रहा है। बादशाह के सामने सभाओं में कई बार इस ख्वाजा की सिद्धियों और करामातों की चर्चा हो चुकी थी। बादशाह को सत्य की खोज करने की लग थी। अजमेर जाने वाले यात्रियों से भी वह मिला करता था। इनकी बातें सुनकर वह भी प्रकाश प्राप्त करना चाहता था। इसलिये उसके मन में ख्वाजा की दरगाह में जाने की इच्छा उत्पन्न हुई।

***

प्रकरण 38

ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती का संक्षिप्त वृत्तान्त

ख्वाजा सीसता का निवासी था। उसको सिज्जी लिखा जाता है। अरबी में यह शब्द सिठजी है। इसके प्रतिष्ठित पिता का नाम ख्वाजा हसन था जो सन्तोषी कृषक था। जब उसका देहान्त हुआ तो ख्वाजा मुइनुद्दीन 15 वर्ष का था। तब कन्दूज निवासी शेख इब्राहीम मज्जूब का ध्यान उसकी ओर आकर्षित हुआ। शेख की उस पर दृष्टि पड़ते ही ख्वाजा की आत्मा ईश्वर की खोज में व्यस्त हो गई और बाह्य संसार से उसका सम्बन्ध टूट गया। तब ख्वाजा समरकन्द और बुखारा गया और कुछ समय तक वहां ज्ञान-प्राप्ति में व्यस्त रहा।

वहां से वह खुरासान पहुंचा और वहीं वह बड़ा हुआ। जब वह हारुन में था तो ख्वाजा का शेख उसमान हारुनी से परिचय हुआ और ख्वाजा उसका शिष्य बन गया। हारुन निशापुर के अधीन एक इलाका है। 20 वर्ष तक ख्वाजा मुइनुद्दीन ने इस शेख के सत्संग में रहकर कठोर तपस्या की और कई विचित्र और अज्ञात देशों की यात्रा की। उस समय के अनेक सन्तों से ख्वाजा का परिचय हो गया। इनमें शेख नजमुद्दीन कूबरी था। सारांश यह है कि मुइनुद्दीन चिश्ती सम्प्रदाय का एक बहुत बड़ा आदमी है। यह ख्वाजा मोदूद चिश्ती से तीसरा और इब्राहीम आदम से नवां है। मुइनुद्दीन बिन साम गजनी से भारतवर्ष पर आक्रमण करने आया उससे पहले ही ख्वाजा मुइनुद्दीन अपने पीर से अनुमति प्राप्त करके इस देश में आ गया था। भारत में आकर उसने अजमेर को अपना निवास बनाया। यहीं पर भारत का राजा राय पिथौरा रहता था। ख्वाजा तपस्याओं का और आध्यात्मिक क्रियाओं का स्वामी था और अपने कसायों से उसने बड़े युद्ध किये थे। उसकी अनेक सिद्धियों की कहानियां कही जाती हैं परन्तु सबसे बड़ी सिद्धि तो विषयेच्छा से युद्ध करना है क्योंकि यही सब अनाचारों का स्रोत है। अन्दीजान का निवासी ख्वाजा कुतुबुद्दीन उषी बगदाद में 522 हिज्री के रजब मास में समरकन्द निवासी इमाम अबू-ए-लेस की मस्जिद में शेख शिहाबुद्दीन सुहरावर्दी, किरमान निवासी शेख उहादुद्दीन और कई अन्य सन्तों के समक्ष ख्वाजा मुइनुद्दीन का शिष्य बन गया था। शेख फरीद शकरगंज किसी पाटन [1] में दफनाया गया था। कुतुबुद्दीन का शिष्य था और शेख निजामुद्दीन औलिया जो अमीर खुसरू का पीर था, शेख फरीद का शिष्य था। सारांश यह है कि ख्वाजा की शिक्षा के फलस्वरूप बहुत-से सिद्ध पुरुष [2] हो चुके हैं। ईश्वर इन सब की आत्माओं को पवित्र करे।

***

प्रकरण 39

अजमेर यात्रा और बिहारीमल की पुत्री से विवाह

बुधवार, 14 जनवरी, 1562 को बादशाह अकबर थोड़े-से अनुचरों को अपने साथ लेकर जो शिकार में साथ जाया करते थे अजमेर के लिये रवाना हुआ। यह भी आदेश दिया गया कि माहम अनगा शाही अन्त:पुर को मेवात के मार्ग से अजमेर ले जाये। इस आदेश

1. यह स्थान पीर पाटन कहलाता है और मुल्तान के समीप है।
2. मुइनुद्दीन भारतवर्ष का बड़ा सन्त माना जाता है। अकबर ने इसकी दरगाह को एक बहुत बड़ा डेग भेंट किया था जिसमें चावल पकाये जाते हैं और जिसका उपयोग इस समय भी होता है। दारा शिकोह ने इस ख्वाजा का बड़ा रोचक वृत्तान्त लिखा है। दारा शिकोह का जन्म अजमेर में ही हुआ था। अब उसकी बहिन जहांनारा ने ख्वाजा का जीवन-चरित्र लिखा है। जहांनारा और उसके पिता ने ख्वाजा के दरगाह की यात्रा की थी। जहांनारा ने इस घटना तक ही ख्वाजा का वृत्तान्त लिखा है।

के अनुसार वह शीघ्र गति से उधर की ओर रवाना हो गई। जब बादशाह कलावली (करौली) पहुंचा तो चगताई खां, जो बादशाह का घनिष्ठ दरबारी था और जो उससे बात कर सकता था, बादशाह से निवेदन किया कि राजा बिहारीमल बड़ा राजभक्त है और कछवाहा राजपूतों का प्रमुख है जो राजपूतों में प्रसिद्ध जाति है। उसने कहा कि ''यह राजा अपनी बुद्धि और पराक्रम के लिए प्रसिद्ध है। वह सदा से शाही परिवार का वफादार रहा है और उसने उत्तम सेवायें की हैं। वही दिल्ली में भी बादशाह की दृष्टि में आ चुका है और उसने राजभक्त का-सा व्यवहार किया है। शरीफुद्दीन हुसेन मिर्जा से इस राजा को बड़ा भय है क्योंकि उसने बहुत बुरा बर्ताव किया है। उसके भय से राजा पहाड़ियों में छिपा रहता है। यदि बादशाह की कृपादृष्टि उस पर हो जाये और उसको इस विपत्ति में से निकाल दिया जाये तो उसका छुटकारा हो जायेगा और फिर शायद उसकी सेवायें बादशाह को पसन्द आयेगी।''

जब मुहम्मद शरीफुद्दीन हुसेन को मेवात की जागीर मिली तो शरीफुद्दीन ने राजा बिहारीमल की राजधानी आमेर को हड़पने का विचार किया। बिहारीमल का बड़ा भाई पूर्णमल था। पूर्णमल का पुत्र सूजा स्वयं आमेर का राजा बनना चाहता था। अतः सूजा ने दुष्टतावश मिर्जा से भेंट की और विपत्तियों खड़ी कर दीं। मिर्जा ने राजा बिहारीमल पर एक सेना चढ़ाई। राजा के पास कोई बड़ी सेना नहीं थी इसलिए उसको शरीफुद्दीन हुसेन से संधि करनी पड़ी जिसके अनुसार राजा से एक द्रव्य राशि लेना ठहरा। निश्चित द्रव्य न दे दिया जाये तब तक के लिए बिहारीमल का पुत्र जगन्नाथ, राजसिंह, आशकरण का पुत्र, जगमल का पुत्र खंगार जो बिहारीमल के भतीजे थे, जमानत (ओल) के रूप में शरीफुद्दीन के पास रहने लगे। तब मिर्जा अजमेर और नागौर की ओर चला गया। उसका विचार था कि अब सेना खड़ी करके राजा बिहारीमल के परिवार का उच्छेद कर दिया जाये।

जब इस पुराने राजवंश की भक्ति की कहानी बादशाह अकबर को सुनाई गई तो उसने अनुमति दी कि राजा को बुलाकर उससे परिचय करवाया जाये। जब बादशाह की सवारी दौसा [1] पहुंची तो वहां के अधिकांश निवासी भयभीत होकर भाग गये। तब बादशाह ने कहा ''हम लोगों की भलाई करना चाहते हैं। हम उनको दुःख देना नहीं चाहते हैं। इन लोगों के भाग जाने का क्या कारण है। इन लोगों को शरीफुद्दीन हुसेन ने बहुत सताया है जिससे इनका अनुमान है कि हम भी इनको सतायेंगे इसलिए ही ये लोग भाग गये हैं। सायंकाल होते-होते राजा बिहारीमल के भाई रूपसी का पुत्र जयमल और इस जिले का मुखिया आये तो दरबारियों ने उनका बादशाह से परिचय करवाया और उन्होंने अपनी अधीनता प्रकट की। उन्होंने निवेदन किया कि मुखिया का पुत्र सेवा करने के लिए आ रहा है। बादशाह ने कहा उसके आने पर कोई विचार नहीं किया जा सकता। रूपसी स्वयं आकर हमारे आगमन को ईश्वर की देन माने और हमारी चौखट का चुम्बन करें। आवश्यकतावश रूपसी स्वयं आया और बादशाह के सामने प्रस्तुत हुआ तो उस पर अनेक कृपायें की गईं

---

1. यह कस्बा जयपुर से पूर्व में 32 मील के अन्तर पर स्थित है।

और उसको ऊंचा उठाया गया। अगले दिन सांगानेर [1] में बादशाह का शिविर लगा तो चगताई खां ने राजा बिहारीमल का और उसके बहुत-से बन्धु-बान्धवों का तथा उसकी जाति के मुख्य-मुख्य लोगों का बादशाह से परिचय करवाया। राजा का ज्येष्ठ पुत्र भगवन्त दास नहीं आया था। वह राज-परिवार की सुरक्षा के लिए आमेर में ही था। राजा ने उन्हें देखते ही समझ लिया कि उनको राजभक्ति और सचाई उनके व्यवहार से ही प्रकट हो रही है। बादशाह ने अपनी कृपा और उच्च पद के द्वारा उनके हृदयों को जीत लिया। सौभाग्यवश राजा को अच्छा विचार आया और उसने सोचा कि बादशाह का जमींदार बन कर एक प्रसिद्ध दरबारी बन जाये। इस प्रयोजन की पूर्ति के लिए उसने एक विशेष सम्बन्ध का विचार किया। वह यह था कि वह अपनी पुत्री को बादशाह के अन्तःपुर में पहुंचा दे। बादशाह में सहज उदारता है इसलिए उसने राजा बिहारीमल की प्रार्थना स्वीकार कर ली और उसको तथा चगताई खां को बिदा करते हुए कहा कि विवाह की शीघ्र तैयारी करके राजा अपनी लड़की को ले आये।

चीते वाले को दण्ड

बादशाह अकबर को चीतों का शिकार करने का बड़ा शौक था। एक चीता वाला बादशाह से कई बार बात कर चुका था इसलिये उसको बड़ा अभिमान हो गया था। एक दिन उसने किसी आदमी के पैरों में से नये जूते खुलवा लिये और वापस नहीं दिये। तब वह आदमी रोने-पीटने लगा। उसकी चिल्लाहट बादशाह ने सुनी तो उसको सत्य का पता लग गया। बादशाह ने इस अत्याचार की बात सुनते ही आदेश दिया कि चीते वाले को पकड़ कर उसके सामने प्रस्तुत किया जाये और जब वह आया तो आदेश दिया कि उसके दोनों पैर काट डाले जायें, जिससे लोगों को शिक्षा मिले और प्रमाद क्षेत्र के रहने वाले जंगली लोगों में बुद्धि उत्पन्न हो। इस दण्ड की कहानी सारे इलाके में फैल गई जिससे शान्ति स्थापित हो गई।

जयपुर की राजकुमारी से विवाह

जब बादशाह के डेरे सांभर में लगे हुए थे तो शरीफुद्दीन हुसेन मिर्जा को अपनी अधीनता प्रकट करने का अवसर मिला और उसने उपयुक्त भेंटें प्रस्तुत कीं। बादशाह ने आदेश दिया कि जगन्नाथ, राजसिंह और खंगार को मिर्जा ने राजा बिहारीमल से जमानत के रूप में अपने पास रख रहे हैं उनको मुक्त कर दिया जाये। मिर्जा ने यह बात मान ली परन्तु इसको कार्यान्वित करने में टालटूल करने लगा। बादशाह ने समझा कि इसका कोई कारण होगा और जगन्नाथ, राजसिंह और खंगार के आने की प्रतीक्षा करने लगा। इसी स्थान पर आदम खां पीछे से आकर शामिल हो गया और यहां से सवारी शीघ्रातिशीघ्र अजमेर की ओर चली और शुभ मुहुर्त पर उस सुखदायक स्थान पर पहुंच गई। बादशाह ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह पर गया और वहां के लोगों को सौभाग्य प्राप्त हुआ। माहम अनगा अन्तःपुर की महिलाओं को मेवात के मार्ग से ले आई। बादशाह ने निश्चय किया

1. यह जयपुर के दक्षिण-पूर्व में सात मील के अन्तर पर एक कस्बा है।

कि वापसी यात्रा शीघ्र की जाये। सरफुद्दीन हुसेन मिर्जा को आदेश हुआ था कि वह मेरठा को जीत ले परन्तु उसने कहा कि यह काम तब ही पूरा हो सकता है, जब शिकार के बहाने स्वयं बादशाह उधर की ओर जाये। उसका ख्याल था कि अभी कुछ दिन बादशाह अजमेर में ही ठहरेगा। परन्तु वह तो शीघ्रातिशीघ्र राजधानी को वापस जाना चाहता था इसलिए समीपस्थ जागीरदारों को आदेश दिया गया कि वे मिर्जा की सहायता करें। इन जागीरदारों में तरसून मुहम्मद खान, शाह गुदाग खां, उसका पुत्र अब्दुल मतलब, खुर्रम खां और मुहम्मद हुसेन शेख थे। इसके पश्चात् बादशाह आगरे की ओर रवाना हुआ। यह भी कठोर आदेश हुआ कि जो व्यक्ति मिर्जा ने जमानत के रूप में अपने पास रखे हैं उनको सामने प्रस्तुत किया जाये। तदनुसार शाही शिविर सांभर में लगा हुआ था तो मिर्जा ने जगन्नाथ, राजसिंह और खंगार को बादशाह के सामने उपस्थित किया। राजा बिहारीमल ने अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार बड़े प्रशंसनीय ढंग से विवाह की व्यवस्था की और अपनी भाग्यशाली पुत्री को अन्तःपुर में भेजने के लिये ले आया। विवाह उत्सव के लिये बादशाह की सवारी एक दिन सांभर में ठहरी, फिर सरफुद्दीन हुसेन को अपने स्थान पर चले जाने की अनुमति प्रदान की और बादशाह ने अपना कूच फिर जारी कर दिया। जब बादशाह रणथम्भौर के निकट पहुंचा तो राजा बिहारीमल और उसके पुत्रों ने अधीनता प्रकट की। मानसिंह को स्थायी रूप से शाही सेना में ले लिया गया। यह राजा भगवन्त दास का पुत्र था और राजा भगवन्त दास राजा बिहारीमल का उत्तराधिकारी था। राजा बिहारीमल ने चाहा कि बादशाह उसके स्थान पर जाकर उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाये जिसने उसके वंश का अभ्युदय हो परन्तु बादशाह ने आगरा पहुंचने का निश्चय कर लिया था और अपनी इच्छापूर्ति के लिये जल्दी कर रहा था इसलिये आमेर जाना किसी दूसरे समय के लिये स्थगित रखा गया। राजा के साथ अनेक कृपायें की गईं और उसको जाने की अनुमति दे दी गई। राजा भगवन्त दास, मानसिंह और उनके कुछ अन्य बन्धु-बान्धव राजधानी के लिए रवाना हो गये। इतनी लम्बी दूरी को तीन दिन में पार करके शुक्रवार के दिन बादशाह राजधानी में पहुंच गया। शिविर पीछे से मंजिल-ब-मंजिल पहुंचा।

***

प्रकरण 40

सातवें इलाही वर्ष का आरम्भ

दासता बन्द की

इस वर्ष बादशाह ने एक शुभकर्म यह किया कि दासता बन्द कर दी। इससे पहले विजयी सेनायें लोगों के स्त्री-बच्चों को दास बना लिया करती थी। उनका या तो उपभोग किया जाता था या उनको बेच दिया जाता था। बादशाह ने ईश्वर-भक्ति से और दूरदर्शिता

से तथा सद्विचार से प्रेरित होकर आदेश दिया कि उसके साम्राज्य से विजयी सेना का कोई सैनिक ऐसा काम नहीं करेगा। सैनिक चाहे बड़ा हो या छोटा हो उसको किसी को भी दास बनाने का अधिकार नहीं था। हारे हुए लोगों के स्त्री-बच्चे अपने घर या रिश्तेदारों के पास जा सकते थे। बादशाह ने समझा कि स्त्रियों और निरपराध बच्चों को दण्ड देना अन्याय है। यदि पुरुष धृष्टता का मार्ग ग्रहण करते हैं तो इसमें उनकी पत्नियों का क्या दोष है। यदि पिता बादशाह का विरोध करते हैं तो उनके बच्चों ने क्या अपराध किया है इसके अतिरिक्त सैनिक लोग लोभवश गांवों पर आक्रमण करके लूट लिया करते थे। जब इस विषय में आदेश दिया गया हो यह प्रथा बन्द हुई।

मेरठा दुर्ग का विजय

एक बड़ी कीर्तिकारी घटना यह हुई कि शाही सेना ने मेरठा का दुर्ग जीत लिया। जब बादशाह अजमेर से वापस आ रहा था तो उसने मुहम्मद सरफुद्दीन हुसेन को इस दुर्ग की ओर उसके प्रदेश की विजय के लिए रवाना किया। उसकी सहायतार्थ कई बड़े-बड़े अधिकारी दिये गए। उस समय मेरठा राय मालदेव के अधिकार में था जो भारतवर्ष के राजाओं में सर्वाधिक शक्तिशाली था। रामदेव ने यह दुर्ग अपने एक बड़े सरदार जगमल के सुपुर्द कर दिया और उसकी सहायतार्थ देवदास नामक राजपूत को वहां छोड़ा जो अपनी वीरता के लिए प्रसिद्ध था। इसके अतिरिक्त दुर्ग के रक्षार्थ 500 राजपूत नियुक्त किए। जब बादशाह अकबर अजमेर से आगरा पहुंच गया तो सरफुद्दीन हुसेन ने दूसरे अधिकारियों के साथ और सेनासहित इस प्रदेश की विजय के लिए प्रयाण किया। जब शाही सेना नगर के पास पहुंची तो सैनिक दुर्ग के निकट जा पहुंचे। दुर्गरक्षक सेना को बाहर निकलने का साहस नहीं हुआ। शाही सेना के चार सवारों ने दुर्ग द्वार पर तीर चलाना शुरू किया। तब दुर्ग के राजपूत प्राचीर पर आ खड़े हुए, उन्होंने प्राचीर के रन्ध्रों के पीछे से तीर और गोलियां चलाईं और ईंट और पत्थर फेंके। दो सवार मारे गये और शेष दो आहत होकर वापस आ गये। मुहम्मद सरफुद्दीन हुसेन ने सोचा कि धीरे-धीरे आगे बढ़ना चाहिए इसलिए उसके लोग मेरठा नगर में जहां-तहां जम गए और दुर्ग को बड़ी सावधानी से घेर लिया, तोपों के मंच खड़े किए गये और कई सुरंगे बनाई गईं। दुर्गरक्षक इनको रोकते थे और प्रतिदिन लड़ाई होती थी। मौका देखकर वे लोग बाहर आते थे और अपनी वीरता दिखाकर वापस चले जाते थे। अन्त में एक सुरंग दुर्ग की बुर्ज तक पहुंच गया और उसमें बारूद भर कर आग लगाई गई तो बुर्ज पिंजारे की रूई के समान टुकड़े-टुकड़े होकर गिर गई। तब शाही सेना के वीर सैनिकों को युद्ध करने के लिए मार्ग मिल गया और वे आगे बढ़े राजपूत लोगों ने अपने जीवन से हाथ धोकर बड़ा कड़ा सामना किया। बड़ा घमासान युद्ध हुआ जो दिन भर चलता रहा। दोनों पक्षों ने अपने-अपने साहस का परिचय दिया। शाही सेना के वीर शहीद होकर अमर हो गये और शत्रु पक्ष के बहुत-से लोग मारे गये। जब रात हुई तो सब अपनी अपनी तोपों के पास चले गये और रात्रि में शत्रु ने दुर्ग दीवार की दरार की मरम्मत कर ली, परन्तु एक बार दीवार टूट जाने पर दुर्ग की रक्षा नहीं हो सकती इसलिए वह दुर्ग

शत्रुओं का कारागार बन गया। बहुत-से राजपूतों ने बाहर आकर मुहम्मद सरफुद्दीन से प्राणदान मांगा परन्तु उसने स्वीकृति नहीं दी। फिर लम्बी वार्ता हुई और अफसरों ने परस्पर सलाह की तो यह ठहरा तक राजपूत लोग अपनी समस्त सम्पत्ति को दुर्ग में छोड़ कर निकल जायें। इस शर्त के अनुसार विजयी सैनिक पीछे हट गये। अगले दिन जगमल अधमरा होकर बाहर आ गया। देवदास ने मर जाना ठीक समझा और अपनी सम्पत्ति को जला दिया। वह क्रोधी सर्प की भांति बाहर निकला और चार या पांच सौ राजपूतों सहित उसने शाही सेना का सामना किया। जयमल और लूणकरण जैसे राजपूतों ने जो शाही सेना में सम्मिलित थे और जिनकी दुर्गसेना से लड़ाई थी मुहम्मद सरफुद्दीन हुसेन से कहा कि इन लोगों ने संधि-भंग करके सम्पत्ति जला दी है। समझौता तो यह हुआ था कि अपनी सम्पत्ति छोड़कर वे बाहर निकल जाये। इन लोगों ने समझौता भंग कर दिया है इसलिए यह दूरदर्शिता की बात नहीं है कि ऐसे दुष्टों को जीवित छोड़ा जाये। मुहम्मद सरफुद्दीन ने इस बात पर सहमति की और अपनी सेना जमाई। वह स्वयं सेना के मध्य में था। शाह बुदग खां, उसका पुत्र अब्दुल मतलब और मुहम्मद हुसेन शेख बायें पार्श्व में थे। जयमल लूणकरण मूज़ा और अन्य राजपूत दायें पार्श्व में थे। वे देवदास का पीछा कर रहे थे। जब उसको मालूम हुआ कि शाही सेना आगे बढ़ रही है तो वह बड़े साहस के साथ सेना के मध्य भाग पर झपटा तब घमासान युद्ध हुआ। देवदास अपने घोड़े से गिर पड़ा तो उस पर हमला करके शाही सैनिकों ने उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। शाही सेना विजय और कीर्ति प्राप्त करके वापस आ गई। कुछ लोगों का कहना था कि देवदास आहत होकर युद्ध में से निकल गया और दस बारह वर्ष पश्चात् एक जोगी प्रकट हुआ जो अपना नाम देवदास बतलाता था। कुछ लोगों ने उसको पहचान लिया और कुछ ने उसको नहीं माना। वह कुछ दिन जीवित रहा और फिर एक मुठभेड़ में मारा गया। अन्य राजपूत अधमरे होकर बचे। मेरठा दुर्ग और उसके अधीन इलाके शाही अधिकारियों के हाथ में आ गये।

***

प्रकरण 41

परौंख की लड़ाई में स्वयं अकबर बादशाह लड़ा

साकेत नामक कस्बा आगरे से लगभग 30 कोस दूर है। यहां के निवासी डकैतियाँ किया करते थे और सरकार का मुकाबला करते थे। कृतघ्नता में इनकी बराबरी कोई नहीं कर सकता था। विशेषकर आठ गांव जो अटघड़ा कहलाते थे, डकैतियां, वध और उपद्रव करने में प्रसिद्ध थे। संसार में ऐसे दुष्ट और लोग नहीं थे वहां के शाही अधिकारी उन

लोगों की सदा शिकायत किया करते थे। अन्त में शिकार करने के लिये बादशाह अकबर उधर की ओर गया। उस समय ख्वाजा इब्राहीम बदख्शी की जागीर में था। हापा नाम के एक ब्राह्मण ने शिकारियों के द्वारा मौका पाकर बादशाह से इन लोगों के उत्पीड़न की बात सुनाई और कहा कि ''इन्होंने मेरे निरपराध पुत्र को मार डाला है और मेरी सम्पत्ति लूट ली है। उसकी शिकायत सुनकर बादशाह बड़ा क्रुद्ध हुआ और उसने घोषित किया कि अगले दिन प्रात: स्वयं जाकर इन दुष्टों को दण्ड देगा। प्रात:काल वह शिकार के लिये निकला। उसके साथ थोड़े से आदमी थे। उसने कुछ लोगों को आगे भेज दिया। फिर वह भी उस गांव में जा पहुंचा। जो लोग आगे गये थे उन्होंने उपस्थित होकर निवेदन किया कि बादशाह के आगमन का समाचार सुनकर विद्रोही लोग भाग गये हैं। अब बादशाह ने न्याय बुद्धि से आदेश दिया कि उन लोगों का जहां भी वे गये हों पीछा किया जाये। जिन्होंने मेरा सामना किया उनमें से एक को मैंने मार डाला है और एक को बांधकर ले आया हूं। मुझको आगे बढ़ने का आदेश नहीं था इसलिये मैं वापस आ गया हूं। बादशाह ने अपना घोड़ा और तेज चलाया और डेढ़ पहर दिन चढ़े वह परोख गांव में पहुंच गया तो भेदियों ने आकर निवेदन किया कि दूसरे गांव के लोग भी डरकर यहां आ छिपे हैं। जब बादशाह गांव में पहुंचा तो एक आदमी बाहर आया और सलाम करके उसने कहा कि विरोधी लोग इस गांव में नहीं आये हैं।'' बादशाह ने उदारतापूर्वक किसी को उन लोगों के पास भेजा और उनको सन्मार्ग पर लाने का प्रयत्न किया परन्तु ये लोग वर्षों से अपराध करते आये थे और अब भी ये लड़ने के लिये तैयार हो गये। यह नियम था कि शिकार में बादशाह के साथ एक हजार से अधिक सैनिक न जायें। जिस रात को यह आदेश दिया गया था तो भागने वाले अपने प्राण बचाने के लिये सारी दिशाओं में फैल गये थे। लगभग 200 आदमी बादशाह के साथ थे और 200 हाथी भी थे परन्तु विद्रोहियों की संख्या 4000 से अधिक थी तो भी जोर की लड़ाई हुई, परन्तु शत्रुओं की संख्या बहुत बड़ी थी और बादशाह के साथ थोड़े-से लोग थे इसलिये काम आगे नहीं बढ़ा। एकाएक बादशाह ने देखा कि उसके सैनिक वृक्षों के नीचे छिपे हुए हैं। जोर की आंधी चलने लग गई थी और जगह-जगह आग लग गई थी। कठोरता करने का अवसर आ गया था परन्तु बादशाह ने विद्रोहियों के दुष्कर्मों की ओर ध्यान नहीं दिया और वह दिल शंकर हाथी पर बैठा हुआ आगे बढ़ा। गांव के आगे आग लगी हुई थी इसलिए हाथी आगे नहीं बढ़ सकता था इसलिये गांव के पीछे से गया। बादशाह ने स्वयं मुझे यह वृत्तान्त सुनाया। जब हाथी को गांव की गलियों में चलाया तो मैंने देखा कि एक छत पर पीले रंग का कवच है। दसतम खां का कवच इसी रंग का था इसलिए मैंने सोचा कि वह उसी का होगा। मैं हाथी को बढ़ाकर छत के निकट पहुंच गया। इसी बीच में लाठियां, पत्थर और तीर बरसने लगे। जब मैं निकट पहुंचा तो मैंने देखा कि एक कवचधारी आदमी मुकबिल खां एक दम्भी आदमी से लड़ रहा है और उसको छत से नीचे गिराने का प्रयास कर रहा है। कई लोग वहां आ गये थे और मुकबिल खां को समाप्त करना चाहते थे। उसी समय बादशाह ने अपने हाथी को आगे बढ़ाया। बन्दा अली, मुनीम खां, काकुल बेग और सुल्तान अली, खालदार का बड़ा भाई छत पर जा चढ़े तो विद्रोही लोग भाग गये और शत्रु को समाप्त कर दिया। उस समय हाथी का आगे का पैर

अन्न की खाई में धंस गया। झुझार खां फौजदार अकबर के पीछे हाथी पर बैठा हुआ था। वह अकबर पर गिर पड़ा। बादशाह में दैवी शक्ति थी, उसके द्वारा उसने हाथी पर काबू कर लिया। बादशाह उस मकान पर चढ़ना चाहता था जहां से विद्रोही लड़ रहे थे। उस समय बादशाह के साथ केवल राजा भगवन्त दास और राजा बक्षीचन्द (मगरकोट का राजा) ही थे। अकबर को बड़ी प्यास लगी हुई थी तो राजा भगवन्त दास ने अपने पास से उसको पानी पिलाया। उस समय एक हिन्दू ने तलवार का प्रहार किया जो हाथी के दांत पर लगी। तब हाथी ने क्रुद्ध होकर उस तलवारधारी को अपने पैरों से कुचल डाला। फिर एक 15 वर्ष का लड़का आवेश में आकर छत से हाथी पर कूदा। झुझार खां उसको मार डालना चाहता था परन्तु बादशाह ने उसको रोका। जब वे लोग उस मकान के पास आये तो उन्होंने देखा कि खास फौजदार आकर आश्चर्य के साथ उस काम को देख रहे हैं। बादशाह ने दरवाजे पर हाथी बढ़ाया, एक राजपूत तीर चला रहा था। सात तीर बादशाह की ढाल पर लगे। इनमें से पांच ढाल फोड़कर तीन या पांच अंगुल आगे निकल गये और दो ढाल में ही रह गये। बादशाह की रक्षा दैवी ढाल कर रही थी। अन्त में बादशाह ने दीवार तोड़ डाली और वह मकान में चला गया। तीन, चार हाथी और भी लड़ाई में शामिल हुए और कितने ही दुस्साहसी विद्रोही मारे गये। मकान को बिलकुल नष्ट कर दिया गया। लगभग एक हजार विद्रोही समाप्त हो गये। अभी एक पहर दिन शेष था कि काम समाप्त हो गया।

***

प्रकरण 42

मालवा प्रदेश पर अब्दुल्ला खां उजबेग की नियुक्ति

जब बादशाह के आदेशानुसार आदम खां आगरा आया तो शाही संदेशवाहक खबर लाये कि बाजबहादुर आवास के समीप आ पहुंचा है और सेना खड़ी कर रहा है। पीर मोहम्मद खां जल्दबाज था और विचारपूर्वक काम नहीं करता था। उसने सेना तैयार करके उधर की ओर प्रयाण किया। बाजबहादुर ने पीर मोहम्मद की गतिविधि की सूचना पाकर उससे लड़ने के लिये प्रस्थान किया। छोटी-सी लड़ाई हुई और बाजबहादुर का बहुत-सा सामान विजेताओं के हाथ में आ गया। फिर वहां से पीर मोहम्मद खां बीजगढ़ को जीतने के लिये चला। वहां बाजबहादुर खां का सेवक इतिमाद खां दुर्गपति था, उसने उनको दृढ़ करने में बड़ा परिश्रम किया। घेरा लम्बे अर्से तक चलता रहा। जय दीवाना यार अली बिलूच, टाईम कोकलताश, मौलाना मुहतशम, मलिक मुहम्मद और मिर्जा आफाक ने

वीरतापूर्वक दुर्ग द्वार पर आक्रमण किये। एक दिन मुहम्मद मीर कातिब ने प्रबल आक्रमण किया, जिसकी सबने प्रशंसा की। अन्त में एक दिन प्रातःकाल ही पीर मुहम्मद का प्रधान सेवक खुसरू शाह सीढ़ी लगाकर दुर्ग पर चढ़ गया। फिर 200 अन्य वीर भी जा पहुंचे। दुर्गरक्षक निश्चिन्त सोये हुए थे। प्रातःकाल दुर्ग पर विजय प्राप्त होने लगी और शत्रु भागने लगे, एक लड़ाई हुई तो वीर लोग खूब लड़े। जब दुर्गरक्षक सेना विपत्ति में फंस गई तो उन्होंने चिल्ला कर शरण के लिये प्रार्थना की। इतिमाद खां एक नौकर के साथ चिल्लाता हुआ आया कि हमें शरण दो और पीर मुहम्मद खां के पास ले चलो। उसके एक तीर लगा जिससे उसकी तत्काल ही मृत्यु हो गई। इतिमाद खां के सेवक ने तलवार निकाली और वीरतापूर्वक लड़ा। फिर वह मारा गया, अन्य कितने ही लोग तलवार के भेंट हो गये। जो बचे उनको दुर्ग से बाहर अपने प्राण लेकर निकल जाने की इजाजत दे दी गई। शाही सेवकों के हाथ में लूट का बहुत-सा माल आया। दुर्ग की व्यवस्था करने के लिये वीर मुहम्मद खां वहां कुछ दिन ठहरा और फिर उसने सुल्तानपुर की ओर प्रयाण किया। एक छोटी-सी लड़ाई के बाद यह नगर भी साम्राज्य में मिला लिया गया। वहां से पीर मुहम्मद बीजागढ़ लौटा, वहां उसको मालूम हुआ कि बाजबहादुर ने खानदेश के शासक मीरान मुबारिक शाह की शरण ली है और मीरान बाजबहादुर की सैनिक सहायता कर रहा है तब पीर मोहम्मद खां ने अपनी सेना का फालतू सामान किले में रखा और एक हजार वीर सैनिक अपने साथ लेकर उसने शीघ्र प्रयाण किया। वह एकाएक असीर और बुरहानपुर पहुंच कर संग्रहीत सेना को समाप्त करना चाहता था। नर्वदा नदी को पार करके उसने एक रात में 40 कोस प्रयाण किया, असीर से 2 कोस के अन्दर एक दुर्ग था जिसमें सैनिक हाथी थे, इस छोटे से दुर्ग को शीघ्र छीन लिया और हाथी लूट लिये गये। इस दुर्ग की रक्षार्थ मीरान ने कुछ सेना भेजी थी, परन्तु मीर मुहम्मद खां इससे पहले ही दुर्ग को जीत चुका था और अब बुरहानपुर की ओर जो खानदेश में है और जहाँ वहां का शासक रहता है कूच कर रहा था। पीर मुहम्मद खां को कुछ दूरी पर शत्रु की सेना से उड़ती हुई धूल दिखाई दी तो उसने खुसरू शाह यारअली बिलूच को शत्रु को समाप्त करने आगे भेजा। उन्होंने शत्रु को छिन्न-भिन्न कर कर दिया और बहुतों को तलवार के घाट उतार दिया। अगले दिन वह बुरहानपुर पहुंचे और वहां उन्होंने बड़ी लूट की जिसमें उनको बहुत-सा सामान और धन प्राप्त हुआ। मीरान असीरगढ़ में ही ठहरा रहा। वीर मुहम्मद खां ने समझा कि वापस लौट जाना उचित होगा।

बाजबहादुर से युद्ध और पीर मुहम्मद की मृत्यु

इसी बीच में सूचना आई कि खानदेश की सेना के साथ बाजबहादुर आ रहा है, और उसका इरादा बीजागढ़ पर आक्रमण करने का है वहां पहुंचने पर बाजबहादुर को मालूम हुआ कि पीर मुहम्मद खां शीघ्रता से छोटी-सी सेना के साथ असीरगढ़ और बुरहानपुर पर आक्रमण करने के लिये चला गया है इस ख़बर से बाजबहादुर बड़ा परेशान हुआ और उसने उधर की ओर प्रयाण किया। ठीक इसी समय लूट के माल से लदे हुए लोग वापस आ रहे थे उनमें से कई आदमी अलग हो गये थे। उनको मालूम हुआ कि बाजबहादुर समीप ही है, तब पीर मुहम्मद खां ने अनुभवी लोगों से परामर्श किया तो अधिकांश लोग इस बात

पर सहमत थे कि उस समय लड़ाई करना उचित नहीं है, क्योंकि सैनिक बड़ा परिश्रम कर चुके हैं, विजय प्राप्त कर चुके हैं और उनमें से प्रत्येक लूट के माल से लदा हुआ है अतः लड़ाई करके नर्बदा नदी को पार करना मुनासिब है। हांडिया पहुंच कर और सेना खड़ी की जाए और फिर युद्ध किया जाए पीर मुहम्मद खां का अन्त आ चुका था इसलिए उसने अनुभवी लोगों की बात नहीं मानी, वह लड़ाई करने पर तुल गया। उसके साथियों ने उसका समर्थन नहीं किया। कुछ लड़ाई के बाद वे लोग दृढ़ नहीं रहे। यार अली विलूच ने पीर मुहम्मद खां के घोड़े की लगाम पकड़ कर रणभूमि से उसको बाहर निकाला; क्योंकि वहां ठहरे रहने में कोई लाभ नहीं था। पीर मुहम्मद खां ने अपना घोड़ा नदी में डाल दिया। तैरते-तैरते वह विपत्ति में फंस गया। उसी समय कुछ कछर नदी पार कर रहे थे वह उसके घोड़े के समीप पहुंचे और लाते मारने लगे। पीर मुहम्मद घोड़े से पानी में गिर पड़ा। उसके साथियों ने उसको डूबने से बचाने के लिए कोई प्रयास नहीं किया और वह डूब कर मर गया।

किया खां कंग शाह मुहम्मद किलाती, हब्बीब अली खां और कई अन्य अधिकारी जिनकी इस प्रान्त में जागीरें थीं हतोत्साह होकर शाही दरबार में पहुंचे उनमें से प्रत्येक को यथा योग्य दण्ड मिला और मालवा पर बाजबहादुर का अधिकार हो गया।

अब्दुल्ला खां उजबेग की नियुक्ति और बाजबहादुर का पराजय

अब अकबर ने देखा कि ऐसे व्यक्ति को नियुक्त किया जाए जिसमें साहस, बुद्धि और शक्ति हो और जो शान्तिपूर्ण निर्णय कर सके। इसलिए उसने अब्दुल्ला खां उजबेग को मालवा की विजय के लिये नियुक्त किया। उसको जीवन और मरण का अधिकार सौंप दिया गया। उसके साथ ख्वाजा मुइनुद्दीन अहमद फरन खुदी को भी भेजा ताकि वह उस प्रान्त की व्यवस्था ठीक करे और जागीरदारों की स्थिति की जांच करे। यह ख्वाजा अपनी योग्यता और ईमानदारी के लिए प्रसिद्ध था। उसके साथ अन्य कई लोग भी इस महत्वपूर्ण कार्य के लिए भेजे गये। यह आदेश दिया गया कि जब सेना उस प्रान्त के शत्रुओं को समाप्त कर दे तो अब्दुल्ला खां वहां ठहर कर प्रान्त का शासन करे मुईन खां छोटे और बड़े कृषकों को और दूसरे लोगों को आश्वस्त और प्रोत्साहित करे। सेना-संचालन से जो जागीरें अस्तव्यस्त हो गई हैं और जागीरदार इधर-उधर चले गये हैं उन्हें नियमानुसार पुनः जागीरें देकर बसाये। जब ये काम पूरा हो जाये तो वह शाही दरबार में लौट आये इस आदेश के अनुसार अब्दुल्ला खां ने बड़े-बड़े उच्च कर्मचारियों के साथ और उपयुक्त सेना के साथ मालवा-विजय का कार्य शुरू कर दिया। इस अभियान की सूचना मिलने पर बाजबहादुर घबरा गया और उसने सोचा कि अब सामना नहीं किया जा सकता। शाही सेना के पहुंचने से पहले ही वह मालवा छोड़ कर एक सुरक्षित स्थान पर पहुंच गया। शाही सेना ने मालवा में प्रवेश किया। कई वीर लोगों ने बाजबहादुर का पीछा किया और उसके कई सैनिकों को मार डाला। फिर बाजबहादुर इधर-उधर भटकने लगा। उसने राणा उदयसिंह की शरण ली। जब बादशाह अकबर की कीर्ति और दयालुता प्रसिद्ध होने लगी तो वह शाही दरबार

में आया और उस पर कृपा की गई। सारांश यह है कि मालवा शाही कर्मचारियों के हाथ में आ गया और अब्दुल्ला मालवा की राजधानी माण्डू में चला गया और नगर, कस्बे और गांव उसने उच्च कर्मचारियों में विभक्त कर दिये, उज्जैन, सारंगपुर और अन्य जागीरों में शाही कर्मचारी पहुंच गये। इस प्रकार प्रान्त की व्यवस्था पूरी करके मुइन खां शाही दरबार में चला गया, उसको शाही अनुग्रह प्राप्त हुआ।

राजा गणेश का दमन

राजा गणेश नन्दून का जमीनदार था। यह स्थान पंजाब के पहाड़ी देश में और व्यास और सतलज नदियों के बीच में स्थित था। इस राजा ने मूर्खतावश जान मुहम्मद बहसुदी पर आक्रमण कर दिया जो परगना वीरका का जागीरदार था। यह परगना राजा गणेश के परगने से मिला हुआ था। राजा गणेश का आक्रमण असफल हुआ। उसकी प्रतिष्ठा और सम्पत्ति नष्ट हो गई। उसका सामान लूट लिया गया और उसकी सुन्दर स्त्री भी लुटेरों के हाथ में पड़ गई। वह आभूषणों से लदी हुई थी इसलिए कुछ अधर्म लोगों ने उसको मार कर आभूषण छीन लिए। अब यह खबर पंजाब के अधिकारियों को मिली तो खान किलान, कुतुबुद्दीन मुहम्मद खां और कुछ अन्य लोगों को दण्ड दिया गया और वह इधर-उधर भटकने लगा। फिर राय टोडरमल ने उसको दरबार में प्रस्तुत किया तो बादशाह उससे अच्छी तरह मिला। फिर गणेश ने सम्राट् की अच्छी सेवा की।

शाहतहमास्प का राजदूत

इस समय ईरान का बादशाह शाहतहमास्प था। पिछले समय से ही अकबर के कुटुम्ब के साथ उसका अच्छा सम्बन्ध था। जब उसने अपने चचेरे भाई सैयद बेग को राजदूत बनाकर अकबर की सेवा में भेजा, सैयद बेग प्रधान मंत्री (वकील) मासूम बेग का पुत्र था। सैयद बेग को इसलिए भेजा गया था कि वह स्वर्गीय सम्राट् हुमायूं बादशाह की मृत्यु पर शाहतहमास्प की ओर से शोक प्रकट करे और राज्याभिषेक पर अकबर को बधाई दे। भेंट करने के लिए इस राजदूत के साथ शाह ने अरबी, ईराकी और तुर्की घोड़े सुन्दर वस्त्र और अनोखी तथा आश्चर्यकारी वस्तुएं भेजी थीं जब राजदूत राजधानी के निकट पहुंचा तो बादशाह ने कई बड़े अधिकारियों को बाहर जाकर उसका स्वागत करने के लिए और उसे उपयुक्त स्थान पर ठहराने के लिए भेजा और उसके खर्च के लिए 14 लाख दाम भी भेजे जो सात सौ ईरानी तोमन के बराबर होते थे। जब राजदूत विश्राम करके अपनी थकान उतार चुका तो उसको दरबार में उपस्थित होने का सम्मान प्रदान किया गया। उसने निवेदन किया कि ईरान का शाह (बादशाह) अकबर की समृद्धि के लिए ईश्वर से प्रार्थना किया करता है। फिर उसने शाह का पुत्र अकबर की सेवा में प्रस्तुत किया और सब भेटें उसके सामने जमाईं। अकबर ने शाह के स्वास्थ्य के विषय में प्रश्न किये और राजदूत पर अनेक कृपाएं कीं।

***

प्रकरण 43

शाह का पत्र

शाह के पत्र में लिखा था कि स्वर्गीय बादशाह हुमायूं और हमारे बीच में स्नेह और मेल था। ईश्वर उसको बहिप्त प्रदान करें। अब हमने आपकी विजय और अभ्युदय के समाचार सुने हैं, आपके साथ हमारी सद्भावना और मित्रता है इसलिए हमारी अभिलाषा है कि आपका हर्ष और यश प्रतिदिन बढ़ते रहें और आपकी कीर्ति का प्रकाश मनुष्य जाति में फैल जाए। यह किसी से छिपा हुआ नहीं है कि जब बादशाह हुमायूं के साथ हमारी मित्रता और भाईचारा हुआ तो हम चाहते थे कि उसकी कीर्ति निरन्तर बढ़ती रहे और हमने उसकी स्थिति और प्रतिष्ठा को बढ़ाने में सब भांति अपनी शक्ति लगा दी थी। हम निरभिमान पूर्वक कह सकते हैं कि हुमायूं के साथ हमारा भ्रात्री सम्बन्ध था और हमने यथाशक्ति और यथावकाश हमारा कर्तव्य पूरा किया है। परन्तु ईश्वर के अटल नियम के अनुसार उसका देहान्त हो गया है। इसके पश्चात् प्रतिष्ठित कुटुम्ब को आपने प्रकाशित कर दिया है। जब से आप राजसिंहासन पर बैठे हैं तब से हम आपकी ओर आकर्षित हो रहे हैं और हमारी इच्छा थी कि हमारा एक उच्चाधिकारी स्वर्गीय बादशाह के निधन पर शोक प्रकट करे और राज्याभिषेक के लिए आपको बधाई दे। परन्तु एक के बाद दूसरी रुकावटें आती गईं इसलिए इस कार्य में विलम्ब हुआ। जब रुकावटें हट गईं तो हम राजदूत भेजना चाहते थे परन्तु इसी बीच में बहराम खां हमारे दरबार में आ गया। उसने हमको सद्भावना का सन्देश दिया। जिन दिनों में वह हमारे यहां ठहरा हुआ था तो हमने उसको कई सभाओं में बुलाया और उस पर अनेक कृपाएं कीं जहां तक कि हमने उसको अमीर और सुल्तान की उपाधि दी। तत्पश्चात् उसको विदा किया। अब हम सैयद बेग को अपना राजदूत बनाकर भेज रहे हैं यह मासूम बेग सफवी का पुत्र है जो हमारे राज्य का स्तम्भ था। सैयद बेग के साथ मीर दीवान को भी भेजा जा रहा है जो उच्चकुलीन है और हमारे उच्चाधिकारियों में उसकी बड़ी प्रतिष्ठा है। ये हमारी ओर से स्वर्गीय बादशाह के निधन पर शोक प्रकट करेगा और आपके राज्यारोहण के लिए आपको बधाई देगा। इससे हमारी कुलक्रमानुगत प्रीति और मैत्री दृढ़ होगी और समय के प्रभाव से उसमें कमी नहीं आयेगी। हमको आशा है कि आप इस राजदूत पर कृपा करेंगे, इसको लम्बे अर्से तक नहीं रोकेंगे और वापस आने की इजाजत दे देंगे। इसके बाद आप हमारे पास सन्देश और पत्र भेजते रहें और घटनाओं और स्थितियों से हमको सूचित करते रहेंगे। ईश्वर से प्रार्थना है कि आजीवन और बल का भोग करें, आप राज-सिंहासन पर दृढ़ रहें, युग-युगान्तर तक आपके हृदय की अभिलाषायें पूर्ण होती रहें, आपको विजय प्राप्त होती रहे।

***

प्रकरण 44

आदम खां को दण्ड

राजधानी आगरा में जो घटना घटी बादशाह की न्यायपरायणता का उदाहरण है। माहम अनगा के छोटे पुत्र आदम खां में न समझ थी न शिष्टता थी। वह यौवन के मद में चूर था और समृद्धि का उसको बड़ा अभिमान था। वह शमसुद्दीन मुहम्मद अतगा खां से सदैव ईर्ष्या करता था। मुनीम खां खानखाना को भी यही रोग था। वह आदम खां को कलह और प्रपंच करने के लिये उकसाया करता था। अन्त में 16 मई, 1562 को एक असाधारण घटना घटी। एक दिन मुनीम खां, अतगा खां, शिहाबुद्दीन अहमद खां और अन्य सरदार शाही हाल में बैठे हुए लोग आदम खां का सम्मान करने के लिये उठे और अतगा खां भी आधा खड़ा हुआ। हाल में प्रवेश करते ही आदमखां ने अपने खंजर पर हाथ रखा और वह अतगा खां की ओर चला, फिर उसने क्रुद्ध होकर अपने सेवक खुशाम उजबेग को और अन्य साहसी लोगों को जो उसके साथ थे, संकेत किया कि तुम लोग चुपचाप क्यों खड़े हो। तो दुष्ट खुशाम ने अपना खंजर निकाल कर अतगा खां के सीने पर घातक घाव कर दिया। अतगा खां भयभीत होकर हाल के दरवाजे की ओर दौड़ा तो तुरन्त ही खुदा बर्दी ने आकर उस पर तलवार के दो वार किये। वह महापुरुष दीवाने-आम के चौक में शहीद हो गया। इस हत्या के कारण महल में कोलाहल मच गया और भय छा गया। तब आदम खां जिसका अन्त समीप था, शाही अन्तःपुर की ओर चला गया। वह दुर्भावनाओं से भरा हुआ था। बादशाह सो गया था परन्तु उसका भाग्य जग रहा था। आदम खां के हाथ में तलवार थी, उसने महल का चक्कर लगाया और अन्दर घुसने का प्रयास किया परन्तु नियामत नामक ख्वाजा सरा ने, जो दरवाजे के पास खड़ा था। एकदम दरवाजा बन्द कर दिया। यद्यपि दुस्साहसी आदम खां ने नियामत को धमकाया और दरवाजा खोलने के लिये कहा परन्तु उसने नहीं खोला। जो लोग पास ही खड़े थे उन्होंने आदम खां को दण्ड नहीं दिया। वे लोग कायरता के कारण हक्के-बक्के रह गये। न जाने क्यों उन्होंने उसको नहीं मारा। यह प्रत्यक्ष था कि इन लोगों के विचार भी अच्छे नहीं थे।

बादशाह भयंकर कोलाहल को सुनकर जगा और उसने पूछा कि क्या हुआ? अन्तःपुर की पर्दायतें कुछ नहीं जानती थीं इसलिये बादशाह ने ही महल की दीवार से बाहर सिर निकाल कर पूछा तो रफीक ने जो एक पुराना सेवक था सब वृत्तान्त सुनाया। इस भयंकर वृत्तान्त को सुनकर बादशाह को भय हुआ और उसने और विवरण पूछा। तब रफीक ने लौह लुहान शव दिखाया और अपने कथन की आवृत्ति की। जब बादशाह ने शव को देखा तो उसको बड़ा क्रोध आया। ईश्वर की प्रेरणा से वह उस दरवाजे से नहीं निकला जहां आदम खां खड़ा हुआ कुविचार कर रहा था। अकबर दूसरे दरवाजे से निकला। ज्यों ही वह निकल रहा था तो अन्तःपुर के एक सेवक ने उसके हाथ में एक कुल्हाड़ी दे दी। बादशाह ने छत पर जाकर देखा कि आदम खां खड़ा है तो उसने कहा "मूर्ख के बच्चे,

तुमने हमारे अतगा को क्यों मार डाला।'' आदम खां ने दुस्साहस करके बादशाह के हाथ पकड़ लिये और कहा, ''जांच करो, जल्दबाजी न करो, पूरी तलाश नहीं हुई है।''

अन्त में बादशाह ने अपने हाथ छुड़ा लिये और आदमखां की तलवार झपटी। आदमखां ने भी अपनी तलवार पर हाथ रखा। तब बादशाह ने उसके मुख पर ऐसा जोर का घूसने मारा कि वह दुष्ट चक्कर खा कर लोट-पोट हो गया और बेहोश हो गया। सौभाग्य से उस समय फरहत खां और संग्राम हुसनाक वहां मौजूद थे। बादशाह ने क्रुद्ध होकर कहा, ''वहां क्यों खड़े हो, इस पागल को बांधो। तब उन दोनों ने और कई अन्य लोगों ने बादशाह का आदेश मान कर उसको बांधा। तब आदेश दिया गया कि आदम खां को छत से नीचे फेंक दिया जाये। उन लोगों ने शायद आदम खां का विचार करके उसको भलीभांति नीचे नहीं फेंका, जिससे वह अर्द्ध जीवित रह गया। तब अकबर ने आदेश दिया कि उसको पुनः ऊपर लाया जाये। अब लोग उसको बाल पकड़ कर घसीट लाये और आदेशानुसार उसको ऐसा गिराया कि उसकी गर्दन टूट गई और उसका मस्तिष्क नष्ट हो गया। इस प्रकार उस रक्तपिपासू और व्यसनी पुरुष को अपने कर्मों का फल मिला। अकबर के घूसे का चिन्ह आदम खां के मुख पर ऐसा लगा हुआ था कि लोगों ने समझा कि उस पर कुल्हाड़ी का प्रहार किया गया है।'' मुनीम खां खानखाना और शिहाबुद्दीन अहमद खां वहां मौजूद थे। वे बादशाह के क्रोध से बचने के लिये भाग कर छिप गये। जब अतगा खां के ज्येष्ठ पुत्र युसूफ मुहम्मद खां ने अपने पिता के वध का समाचार सुना तो वह और उसकी जाति के लोग सशस्त्र होकर आदम खां और माहम अनगा की घात करने के लिये छिप कर बैठ गये। यूसूफ को मालूम नहीं था कि अकबर न्याय कर चुका है। माहम अनगा को इसका पता नहीं है। हत्यारे को प्राणदण्ड दिया जा चुका है।

जब लोगों को बादशाह के न्याय का पता लगा तो उनको बड़ा सन्तोष हुआ। अतगा जाति घात में बैठी हुई आदम खां और माहम अनगा के अन्य रिश्तेदारों के आने की प्रतीक्षा कर रही थी। उनका ख्याल था कि आदम खां की मृत्यु का समाचार झूठा है इसलिये वे उससे बदला लेने कि लिये बैठे थे। परन्तु जब यह खबर सर्वत्र फैल गई तो उन्होंने कुछ दरबारियों के द्वारा बादशाह से निवेदन करवाया कि दुष्ट आदम खां का शरीर उन्हें बतला दिया जाये जिससे उनके चित्त को शान्ति हो और उनकी भावनाओं पर जो आघात हुआ है उस पर मरहम लग जाये। बादशाह ने यह प्रार्थना स्वीकार की तो अतगा जाति के प्रतिनिधि शेख मुहम्मद गजनवी ने जाकर आदम खां के शरीर को देख लिया। तब अतगा जाति का क्षोभ शान्त हो गया और उन्होंने बादशाह की बड़ी ही प्रशंसा की।

यह कार्य करके बादशाह अपने अन्तःपुर में चला गया। उस समय माहम अनगा बीमार थी और अपने मकान में बिस्तर पर लेटी हुई थी। उसने सुना कि आदम खां ने बहुत बड़ी हत्या कर डाली है और बादशाह ने उसको कैद कर लिया है। मातृ प्रेम से प्रेरित होकर वह बादशाह के पास अपने पुत्र को मुक्त करवाने के लिये गई तो अकबर ने कहा, आदम खां ने हमारे अतगा को मार डाला है इसके बदले में हमने उसको दण्ड दिया है। तब अनगा ने कहा—''आपने ठीक किया।'' परन्तु अब तक माहम अनगा को यह पता नहीं था कि

उसके पुत्र को प्राणदण्ड दिया जा चुका है। उसी समय आदम खां के मकान से दस्तम खान की माता बीबी नजीबा बेगम ने आकर माहम अनगा को सारा वृत्तान्त सुना दिया। अनगा ने पूछा कि आदम खां को किस प्रकार मारा गया तो नजीबा बेगम ने उत्तर दिया—''उसके मुख पर कुल्हाड़ी के प्रहार का चिन्ह है इससे अधिक मुझको जानकारी नहीं है।'' परन्तु चिन्ह तो अकबर के घूसे का था जब माहम अनगा को पूरा-पूरा पता लग गया कि उसके पुत्र को मार दिया गया है तो बादशाह के प्रति आदर की भावना से उसने न कोई शिकायत की और न वह रोई परन्तु उसके हृदय पर हजारों घातक चोटें लग चुकी थीं। उसका चेहरा फीका पड़ गया और उसने अपने पुत्र के शव को देखना चाहा तो बादशाह ने उसको सान्त्वना दी परन्तु उसे शव को देखने के लिए नहीं जाने दिया। बादशाह जानता था कि अपने पुत्र की दुर्गति देखकर वह और अधिक व्याकुल हो जायेगी। बादशाह के आदेश से आदम खां और शमसुद्दीन मुहम्मद अतगा खां के शरीरों को उसी दिन दिल्ली भेज दिया गया। बादशाह ने माहम अनगा को बहुत समझाया-बुझाया और फिर अगले दिन उसको अपने पुत्र के मकान पर जाने की ईजाजत दे दी। माहम अनगा बड़ी बुद्धिमती थी। अपने पुत्र के मकान पर जाकर उसने ईश्वर का सहारा लिया और फिर जब वह अपने मकान पर आई तो उसका धैर्य टूट गया और वह करुणा क्रंदन करने लगी। उसका रोग और बढ़ गया। 40 दिन बाद उसकी मृत्यु हो गई जिससे बादशाह को बड़ा शोक हुआ। उसके शरीर को आदरपूर्वक दिल्ली पहुंचाया गया और कुछ कदम बादशाह उसके साथ चला। साम्राज्य के समस्त उच्च कर्मचारियों ने और शाही परिवार के सदस्यों ने माहम अनगा के प्रति आदर प्रकट किया। फिर बादशाह के आदेश से माहम अनगा और आदम खां का एक विशाल स्मारक बनाया गया।[1]

इसी प्रकार अतगा खां की मृत्यु पर शोक मनाया गया। उसके भाइयों और बच्चों को सान्त्वना दी गई और उसकी समस्त जाति को धैर्य बंधाया गया। इस जाति के लोगों को बादशाह ने अच्छी शिक्षा दिलाई और उनकी उन्नति की।

***

1. यह स्मारक दिल्ली में है और भूलभुलैया कहलाता है। सैयद अहमद ने असार-ए-मनादीद में इसका वर्णन किया है। अब यह डाक बंगला बना दिया गया है। सैयद अहमद ने शमसुद्दीन की कब्र का चित्र भी दिया है।

प्रकरण 45

इतिमाद खां की पदोन्नति और निजी भूमि की व्यवस्था उसको सौंपी गई

अधिकारी लोग अकबर की निजी भूमि का कर संग्रह करने में प्रमाद करते थे और अपनी जेबें भरते थे। जो कुछ संग्रह होता था वह उसको हड़प जाया करते थे। इससे अकबर के निजी विभाग की क्षति होती थी परन्तु उसने कोई कार्यवाही नहीं की। वह इसके लिए उपयुक्त समय की प्रतीक्षा कर रहा था।

ख्वाजा फूल मलिक एक ख्वाजा सरा था। बादशाह की इस पर सुदृष्टि थी। शेरशाह अफगान के पुत्र सलीम खां के समय में यह ख्वाजा अपनी ईमानदारी के लिये प्रसिद्ध था और उसको मुहम्मद खां की उपाधि प्राप्त हुई थी। आदम खां की मृत्यु के बाद उसको शाही सेवकों में भरती कर लिया गया था और उसने अच्छी सेवा की थी। उसने अकबर का रुख देखकर कर-संग्रह के विषय में और आयवृद्धि के बारे में उससे निवेदन किया। बादशाह ने उसकी बात ध्यान से सुनी और उसे प्रोत्साहन किया तथा उसको इतिमाद खां की उपाधि से सम्मानित किया और शाही कर का संग्रह उसके सुपुर्द कर दिया। इतिमाद खां ने उत्तम व्यवस्था की और जो कुछ अकबर ने सोचा-विचारा था उसको कार्यान्वित किया। उसकी उत्तम व्यवस्था से लुटेरों के हाथ कुंठित हो गये और वे निराश होकर चल दिये। राज्य की आय ही राज्य का आधार है। इसी से सेना का काम चलता है और राज्य की शक्ति स्थिर रहती है।

मुनीम खां पर अनुग्रह

मुनीम खां खानखाना विचित्र व्यक्ति था। उसमें सूझ-बूझ नहीं थी और विवेक की कमी थी, साथ ही वह राज्य के काम को समझता भी था। उसको बादशाह ने काबुल से बुलाकर खानखाना की उपाधि से सम्मानित किया था। उसको वकील का पद और पूर्ण अधिकार दिया था परन्तु वह इस उदारता को नहीं समझा। उसको यह भय हुआ कि खान-ए-आजम की हत्या में उसको आदम खां का साथी माना गया होगा। इस भय के कारण वह अपने मस्तिष्क को स्थिर नहीं रख सका और जिस दिन अतगा की हत्या हुई उसी दिन वह भाग गया। आदम खां को उसने हत्या करने के लिये इसलिये उकसाया था कि वह अज्ञानवश यह समझता था कि इस हत्या के बाद शासन की सारी व्यवस्था ठीक हो जायेगी। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। उसने दुःखी होकर काबुल जाने का निश्चय कर लिया जहाँ उसका पुत्र गनी खां सुबेदार था, राजधानी छोड़कर वह पहाड़ियों के सहारे-सहारे चल दिया। मुहम्मद कासीम मीरवह उसके साथ था। जब बादशाह ने यह समाचार सुना तो उसने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया और कहा कि मुनीम खां कहीं नहीं गया है वह वापस आ जायेगा। लोगों ने खुले तौर पर कहा कि उसकी सम्पत्ति जब्त कर ली जाये पर बादशाह ने अपनी

उदारता के कारण यह सुझाव नहीं माना और कहा यदि मुनीम खां काबुल गया है तो क्या बात है वहां भी हमारा राज्य है। वह भय के कारण भागा है, स्वामिद्रोह के कारण नहीं। यदि वह वापस नहीं आयेगा तो उसकी सम्पत्ति काबुल भेज दी जायेगी। उसके घरबार के साथ कोई हस्तक्षेप नहीं किया जाये। भाग्य से ऐसा हुआ कि 6 दिन तक पहाड़ियों और रेतीले मैदानों में चलकर मुनीम खां और उसका साथी सरुट के परगने में पहुंचे जो मीर मुहम्मद मुंशी की जागीर थी। मीर मुंशी का सेवक कासिम अली सीस्तानी उस परगने का सिकदार था। उसने सुना कि दो शाही उच्च कर्मचारी उधर होकर निकल रहे हैं और वे बड़े तृस्त जान पड़ते हैं। उसने कुछ गांव वालों से उनका मार्ग रुकवा दिया और उन्हें पकड़वा लिया। सैयद मुहम्मद बारहा की जागीर भी पास ही थी। जब उसने इस घटना का समाचार सुना तो वह मुनीम खां को अपने मकान पर ले आया और उसके साथ आदर और शिष्टता का व्यवहार किया और सम्मानपूर्वक उसको अपने साथ बादशाह के पास ले गया। अकबर ने मुनीम खां के साथ कृपापूर्ण व्यवहार किया। उसको वकील का पद और खानखाना की उपाधि प्रदान की जिससे मुनीम खां की आत्मा को बड़ा सन्तोष हुआ।

तानसेन

बादशाह को संगीत का बहुत अच्छा ज्ञान है। वह भारतीय और ईरानी संगीत की बारीकियों को खूब समझता है। वह संगीत के सिद्धान्तों से परिचित है ओर राग-रागनियां भी जानता है। उस समय तानसेन ग्वालियर के कलावन्तों में बड़ा प्रसिद्ध और अग्रणी था। बादशाह ने उसकी प्रसिद्ध सुनी और उसको यह भी समाचार मिला कि अब तानसेन सेवानिवृत्त होना चाहता है। उस समय वह पन्ना के राजा रामचन्द्र की सेवा करता था। बादशाह ने आदेश दिया कि उसको शाही गायकों में रख लिया जाये। तब जलाल खां कुर्ची को जो बादशाह का प्रिय और कृपापात्र सेवक था भेजा गया कि राजा से कहकर तानसेन को ले आये। राजा ने तानसेन को शाही दरबार में भेजना अपना गौरव समझा और उसको उपयुक्त भेंटें देकर बिदा किया। राजा ने जलाल खां के साथ बादशाह के लिए हाथी और रत्न भेंटस्वरूप भेजे। बादशाह तानसेन से मिलकर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसको बख्शीसों से लाद दिया। तानसेन ने बादशाह की लम्बे अर्से तक सेवा की। तानसेन ने संगीत का बड़ा विकास किया।

***

प्रकरण 46

आठवां इलाही वर्ष 10 मार्च, 1563 को आरम्भ हुआ

राजा रामचन्द्र की पराजय

ख्वाजा अब्दुल मजीद अपनी योग्यता के लिए प्रसिद्ध था। बादशाह ने उसको आसफ खां की उपाधि प्रदान की थी। वह पहले लेखक था, फिर उसको सैनिक पद दे दिया गया। वह शान्ति और युद्ध दोनों कार्यों में कुशल था। सरकार करा के पास उसकी जागीर थी। उसके समीप ही पन्ना राज्य था। आसफ खां ने इस राज्य पर अधिकार करने के लिए बड़ा प्रयास किया। पहले तो उसने राजा रामचन्द्र को सलाह देने के लिए सन्देश भेजे। वह भारत के प्रसिद्ध राजाओं में माना जाता था। उसके पूर्वज वहां कई पीढ़ियों से शासन कर रहे थे। आसफ खां ने राजा रामचन्द्र को सलाह दी कि अभिमान छोड़कर वह बादशाह की अधीनता स्वीकार कर ले और गाजी खां तन्नूरी को वापस भेज दे। जो विद्रोह करके उसकी शरण में चला गया है। राजा रामचन्द्र को शुभ बात नहीं सूझी। उसने आसफ खां की सलाह सुनी-अनसुनी कर दी। उसको अधीनता और आज्ञापालन की बात बुरी लगी और उसका अभिमान भभक उठा। दुर्भाग्यावश वह युद्ध करने के लिए तैयार हो गया। आसफ खां की पीठ पर शाही घराने की प्रतिष्ठा थी। उसने उपयुक्त सेना सहित राजा रामचन्द्र के विरुद्ध प्रयाण किया तो राजा रामचन्द्र गाजी खां तन्नूरी और राजपूतों की सेना के साथ मुकाबला करने के लिए आया। दोनों पक्ष के वीर लोगों ने अपने प्राणों से हाथ धोकर घमासान युद्ध किया।

बड़े संघर्ष के बाद आसफ खां को विजय प्राप्त हुई और गाजी खां तन्नूरी तथा राजा रामचन्द्र के बहुत-से लोग तलवार के भेंट हो गये। उसने हार कर बान्धू नामक दुर्ग में शरण ली। यह दुर्ग उस इलाके में सबसे अधिक दृढ़ था। विजयी लोगों के हाथ में लूट का अपार माल आया। उस समय प्रसिद्ध राजाओं में (जिनमें शायद बीरबल था) बीच बचाव किया। ये लोग लम्बे अर्से से बादशाह की सेवा कर रहे थे इसलिये उन पर बादशाह की कृपा थी। उनके कहने से आदेश दिया गया कि राजा रामचन्द्र ने बादशाह के प्रति अधीनता प्रकट की है और उसको शाही सेवकों में सम्मिलित कर लिया गया है। इसलिये उसके राज्य में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया जाये। इन आदेशों के फलस्वरूप आसफ खां वापस अपनी जागीर पर चला गया।

***

प्रकरण 47

मुनीम खां खानखाना की काबुल में नियुक्ति और उसके बाद की घटनायें

बादशाह अकबर को काबुल की व्यवस्था का बड़ा ध्यान था और उधर के मामलों के विषय में उसको सदैव कुतूहल रहता था। अब उसने सुना कि मुनीम खां का भाई फाजिल बेग दूसरे अमीरों से मिल गया है जिनमें अमीर बाबूस, शाह वली अतगा, अली मुहम्मद अस्फ, सियोन्ज सिद्दी भाई, ख्वाजा खास मलिक मुख्य हैं और कितने ही अन्य लोग भी हैं। इन सब ने मिलकर मिर्जा मुहम्मद हकीम की नेक माता माह चुचक बेगम से शिकायत की है कि गनी खां का बर्ताव बहुत बुरा है। इन सब ने प्रयास किया कि उसको काबुल जैसे सुखद स्थान से हटा दिया जाये। इस स्थिति में बादशाह ने मुनीम खां को मिर्जा मुहम्मद हकीम का संरक्षक नियुक्त करके काबुल भेज दिया। इसका विवरण निम्नलिखित है—

फाजिल बेग अन्धा था परन्तु प्रपंच और कलह उत्पन्न करने में कुशल था। इसका सारा शरीर आंखों का काम करता था। उसको अपने भतीजे के शासन से बड़ा असन्तोष था और वह क्षुब्ध रहा करता था। यह सच है कि मुनीम खां का पुत्र गनी खां विवेकशून्य था। इसके अतिरिक्त उसको सत्ता का बड़ा मद था। इससे उसका पतन हो रहा था। इसलिये विरोधी दल ने बेगम को अपने दल में सम्मिलित कर लिया और सातवें इलाही वर्ष के चतुर्थ मास (शहरीयार) में जब गनी खां जमा की ओर खरबूजों के खेत में गया हुआ था तो सरदारों ने नगर को दृढ़ करके दुर्ग द्वार बन्द कर दिये। गनी खां ने सेना तैयार की और दिल्ली दरवाजे पर आ पहुंचा और सिया संग पहाड़ी पर ठहर गया परन्तु उसका उद्देश्य पूरा नहीं हुआ। अब उसने सरदारों के पास एक दूत भेजा। उसका खयाल था कि दूत अपनी चतुरता और कुशलता के द्वारा कुछ कर सकेगा। उपरोक्त सरदारों ने जवाब दिया कि गनी खां की नियुक्ति बादशाह ने नहीं की है और उसके अत्याचार के कारण लोगों की दुर्दशा हो चुकी है। अत: उसके लिये यह उचित है कि वह सकुशल वापस चला जाये। यदि वह पुन: काबुल पर शासन करना चाहता है तो शाही दरबार में जाकर अपने आचरण की परीक्षा दे और बादशाह के दीवान का आदेश लेकर आये। उसके अनुसार काम किया जायेगा। जब इस प्रकार की बातें चल रही थीं तो गनी खां के लोग उसको छोड़ कर भागने लगे। जब वह बहुत दिन तक ठहरा, उसने देखा कि वह नगर में प्रवेश नहीं कर सकता। उसको यह भी भय था कि कहीं वह पकड़ लिया जाये। अत: हमजा अरब और मीर मगीसुद्दीन निसापुरी की सलाह से जलालाबाद की ओर चला गया। नगर में उसकी जो सम्पत्ति थी उसको लोगों ने लूट लिया। काबुल के लोगों को यह साहस तूलक खां कूचीन के कारण हुआ था।

गनी खां नवयुवक था और स्वभाव से दुष्ट था। अब उसमें दुस्साहस और अभिमान आ गया था। वह समझता था कि दूसरों की हानि में उसका लाभ है। वह लोगों के साथ

और प्रतिष्ठा पर विचार नहीं करता था और सबसे लड़ाई-झगड़े करता था। उसमें शिष्टता नहीं थी इसलिये उसने अकारण ही तूलक खां कूचीन को गिरफ्तार कर लिया। कूचीन अपने बल और शौर्य के लिये प्रसिद्ध था और स्वर्गीय बादशाह हुमायूं का घनिष्ठ दरबारी था। गनी खां ने उसको और उसके कई रिश्तेदारों को कारावास में डाल दिया।

अन्त में कुछ दूरदर्शी लोगों ने बीच-बचाव करके कूचीन को मुक्त करवा दिया। इस अपमान के बाद तूलक खां मामा खातून नामक अपने गांव को चला गया जो उसकी जागीर में था। वहां वह बदला लेने का अवसर देखने लगा। इसी अर्से में बल्ख से एक कारवां आ रहा था। गनी खां ने सुना कि यह कारवां चारी कारान पर आ पहुंचा है। गाजी खां ने यह कह कर कि वह ख्वाजा शिह्या रान जा रहा है, इस कारवां की ओर कूच किया। वह कुछ अच्छा-अच्छा सामान लेना चाहता था। वहां पहुंचकर उसने एक मद्यगोष्ठी की और भोगविलास में डूब गया। तूलक खां अवसर देख ही रहा था। जब उसने इस अभियान की खबर सुनी तो उसने समझा कि यह अच्छा अवसर है। अपने रिश्तेदारों और सेवकों के साथ उसने गनी खां का पीछा किया और मध्य रात्रि को गनी खां को जा दबाया। गनी खां बेहोश था और सोया पड़ा था। तूलक खां ने उसको और कराचा खां के पुत्र सगून को गिरफ़्तार कर लिया और बन्दी बना लिया। इसके अतिरिक्त उसने गनी खां को खूब फटकारा। अब यह समझकर कि नगर का सूबेदार बन्दी बना लिया गया है इसलिए नगर भी छीन लिया जाये। तूलक खां वहां से वापस आया। उसने सेना खड़ी की और काबुल की सेना को अपने में मिलाकर वह दो कोस के अन्तर पर ख्वाजा रिवास नामक स्थान पर ठहर गया। फाजिल बेग अब्दुल फतह उसका पुत्र गनी खां के लोग लड़ने के लिये तैयार हो गये। तूलक खां ने देखा कि सफलता नहीं मिलेगी और नगर पर अधिकार नहीं हो सकेगा। इसलिये थोड़े-से ही सन्तुष्ट होकर उसने सन्धि का और प्रदेश के विभाजन का प्रस्ताव किया। फाजिल बेग ने समझा कि इस प्रकार की सन्धि हो जाने पर उसके भाई के लड़के को छोड़ दिया जायेगा इसलिए उसने नगर के मुख्य पुरुष को तूलक खां के पास भेजा। इस व्यक्ति ने मामूर-ए-पाईमीनार से जूहाक और बामीयान तक का प्रदेश तूलक के सुपुर्द कर दिया। यह इलाका काबुल प्रदेश के पंचमांश के बराबर था। इस प्रकार विद्रोह की ज्वालाओं को शान्त करके गनी खां को तूलक खां के चंगुल से छुड़ाया गया।

काबुल पहुंच कर गनी खां ने कोई अच्छा काम नहीं किया। वह संधि और समझौते को भूल गया और अपनी समस्त सेना के साथ तूलक के विरुद्ध प्रयाण किया। तूलक ने भी काबुल में रहना उचित नहीं समझा। वह अपने रिश्तेदारों और आदमियों के साथ-साथ बादशाह के दरबार में शरण लेने के लिये भारत की ओर चल दिया। गनी खां ने एक बड़ी सेना के साथ उसका पीछा किया। झाला नामक गांव के पास जहां धोरबन्द नदी की थाह है। काबुल की सेना ने उसको जा दबाया और एक लड़ाई हुई। अन्त में तूलक खां और उसका पुत्र इसफनदियार और उसके कुछ रिश्तेदार और सेवक वीरतापूर्वक काबुल की बड़ी सेना में से रास्ता चीर कर निकल गये परन्तु बाबाई कूचीन, मस्कीन कूचीन और उसके अन्य सेवक मारे गये। गनी खां विजयी होकर वहां से काबुल लौट आया और पहले से

भी अधिक अत्याचार करने लगा और बड़ी डींगें मारने लगा। वह जानता था कि मिर्जा मुहम्मद हकीम का कारोबार अव्यवस्थित है परन्तु उसने उस ओर ध्यान नहीं दिया। अत: मिर्जा के लोगों को और काबुल के शेष लोगों को बड़ा दुख हुआ। गनी बेग का दमन करने के लिये ये लोग फाजिल बेग और उसके पुत्र अबुल फतह से मिल गये। संयोगवश इस समय ममूरा नामक गांव के खेत खरबूजों से भरे हुए थे। उसकी प्रबल इच्छा हुई कि इन खेतों में जाना चाहिये।

उसका पतन समीप था इसलिये वह खरबूजों के खेत में गया और उसने सारी रात वहीं व्यतीत की। अबुल फतह बेग और नगर के अन्य प्रसिद्ध लोगों ने इस अवसर का लाभ उठाया और मिर्जा मुहम्मद हकीम को लौह दरवाजे के पास लाकर ये ढोल पीटने लगे और बाजे बजाने लगे। तब बड़ा कोलाहल मच गया। इसकी खबर सुनकर गनी खां परेशान हो गया और उसके पास जो थोड़े-से आदमी थे उन्हें अपने साथ लेकर वह नगर की ओर आया। वहां आकर उसने देखा कि स्थिति ने नया रूप धारण कर लिया है। शान्ति के द्वार बन्द हो गये हैं। शत्रुता के द्वार खुल गये हैं और वह आगे नहीं बढ़ सकता। यदि वह और समीप जाता तो यह बहुत सम्भव था कि उसके साथी जिनके कुटुम्ब नगर के अन्दर थे उसे अकेला छोड़कर चले जाते। यह भी भय था कि वे उसको पकड़ कर अपने साथ ले जाते। इस अचम्भित और व्यथित दशा में उसने अपने डेरे सियासंग की ओर चल दिये। जब गनी खां चल दिया तो माह चुचक बेगम ने काबुल का शासन अपने हाथ में लेकर फाजिल बेग को मिर्जा मुहम्मद हकीम का वकील नियुक्त कर दिया। फाजिल बेग मित्रहीन था इसलिये उसका पुत्र अबुल फतह नायब की हैसियत से काम करता था। परन्तु उसमें न उदारता थी, न दूरदर्शी बुद्धि थी, इसलिये जागीरें देने में और राजकाज करने में उसने न्यायपूर्वक काम नहीं किया ओर बड़ी मूर्खता की। सबसे बुरा काम उसने यह किया कि अच्छी-अच्छी जागीरें उसने अपने लिए रख लीं और निम्न श्रेणी की जागीरें मिर्जा को दे दीं और बड़े अत्याचार किये। उसने गजनी मिर्जा खिजर खां को दी जो हजारों का एक सरदार था और बाबूस बेग को गिरफ्तार कर लिया तथा उसकी सम्पत्ति छीन ली। जब दो मास तक ऐसे अत्यचार होते रहे तो मिर्जा मुहम्मद हकीम की माता और पुराने सेवकों ने विद्रोह करने का निश्चय किया। वली अतगा, अली मुहम्मद अस्प, मोरंग, (शाह अली का रिश्तेदार), मासूम काबुली, सीथून्दूक ईदि सरपस्त और कई अनेक लोगों ने फाज़िल बेग के पुत्र के विरुद्ध षड़यन्त्र किया और अवसर की प्रतीक्षा करने लगे। एक दिन उन्होंने उसको अपने मकान के बाहर महल सातून के चौक में एक डेरे में बुलाया और वहां मद्यगोष्ठी की। पहले सातून दीवानखाना था। मद्य के प्याले खूब घुमाये गये और रात तक मद्यपान चलता रहा। अबुल फतह ने कई बार जाना चाहा परन्तु गोष्ठी के लोगों ने चाटुता करके उसको रोक लिया। इस मूर्ख को पता नहीं था कि वे उसके अभ्युदय का अन्तिम दिवस है। जब वह खूब सो गया तो लोगों ने तलवारें खींचीं और डेरे में प्रवेश किया तथा उसको मार डाला। मीरम बहादुर नामक व्यक्ति ने उसका सिर काटकर भाले पर टांक दिया। उसके शरीर को दुर्ग से नीचे फेंक दिया। तब काबुल में बड़ा कोलाहल मचा। जब फाजिल बेग ने अबुल फतह की गति सुनी तो वह भयभीत हो गया और अपना सामान बटोर कर उसने

हजारों के डेरों में जाना चाहा परन्तु मिर्जा के कुछ लोगों ने उसका पीछा किया। उसको पकड़ लिया और दुर्ग में लाकर उसका वध कर दिया। इसके बाद शाह वली अतगा काबूल का व्यवस्थापक बन गया। मूर्खता में आकर उसने आदिल शाह की उपाधि धारण कर ली और हैदर कासिम कोहबर को खानखाना का और नपुंसक ख्वाजा खास मलिक को इखलास खां की उपाधियां दीं। उपाधियां देना बादशाह का ही अधिकार था, फिर बेगम को सन्देह हुआ कि वही विद्रोह करने का विचार कर रहा है। इसलिये उसको मरवा दिया गया। काबुल की व्यवस्था बेगम ने अपने हाथ में ले ली और हैदर कासिम कोहबर को मिर्जा का वकील नियुक्त कर दिया।

जब गनी खां के निष्कासन और काबुल की अव्यवस्था का समाचार शाही दरबार में पहुंचा तो बादशाह को यह विचार आया कि मुनीम खां काबुल जाने के लिये बड़ा आतुर है इसलिये उसको मिर्जा हकीम का संरक्षक नियुक्त करके वहां भेज दिया जाये जिससे वह अपने पुत्र का बदला ले सके और काबुल के लोगों की स्थिति को सुधार सके। उस समय मुनीम खां को इटावा की तरफ मियां लोगों ने राजा के विरुद्ध भेजा हुआ था। उसको वापस बुलाकर काबुल रवाना किया गया। उसके साथ मुहम्मद कुलीन खास बिरलास, हैदर मुहम्मद खान अतगा बेगी आदि सरदारों को और कई प्रसिद्ध वीरों को भी भेजा गया। मुनीम खां ने इस नियुक्ति को बड़ा लाभकारी समझा और शीघ्र ही हजाजत लेकर वह काबुल की ओर रवाना हो गया और जलालाबाद पहुंच गया। वह इतना जल्दी चला कि सेना उसके साथ नहीं लग सकी। मुहम्मद कुली खां बिरलास मुलतान का सूबेदार था और उसके पास बड़ी सेना थी परन्तु वह भी मुनीख खां के पास नहीं पहुंचा। जब बेगम ने सुना कि मुनीम खां आ रहा है तो उसने काबुल के उच्चाधिकारियों से परामर्श करके निश्चय किया कि सेना खड़ी की जाये जो मिर्जा को साथ लेकर मुनीम खां का सामना करने के लिये प्रयाण करें और लमघानात में लड़ाई की जाये। यदि विजय प्राप्त हो जाये तो सर्वोत्तम है और यदि पराजय हो तो महमन्द और खलील नामक जातियों से मिलकर सरदार लोग बादशाह की सेवा में जायें और उससे शरण की भिक्षा मांगें अन्यथा खानखाना अपने भाई पुत्र और भतीजे का बदला लेगा।

जब मुनीम खां देह गुलमान पहुंचा तो उसे खबर मिली कि ईदी सरमस्त जलालाबाद आकर सामना करने की तैयारी कर रहा है। तब ईदी के विरुद्ध उसने तैमूर इक्का और ख्वाजा किलां की ओर एक सेना को भेजा। दुर्ग को दृढ़ बनाकर वह लड़ने के लिये बाहर निकला। अगले दिन जलालाबाद को घेरने के लिये खानखाना ने प्रयाण किया। इसी बीच खबर मिली कि मुहम्मद हकीम और काबुल की सेना आ रही है। तब जबर वर्दी बेग को जो स्वर्गीय बादशाह का एक उच्च कर्मचारी था और जो अब साधु बन गया था और सेना के साथ प्रयाण कर रहा था, मिर्जा के पास इस उद्देश्य से भेजा कि शायद युद्ध किये बिना ही सामले का निपटारा हो जाये और यदि ऐसा न हो सके तो अगले दिन युद्ध किया जाये; क्योंकि तारा सामने था। तैमूर इक्का अग्रसेना से आया और उसने कहा कि शत्रु की संख्या बहुत थोडी है इसलिये युद्ध कल तक के लिये स्थगित नहीं करना चाहिये। खानखाना को युद्ध

करने की बड़ी उत्सुकता थी और हैदर मुहम्मद खां उसको उकसा रहा था। खानखाना और हैदर मुहम्मद खां दोनों को काबुल से बड़ा प्रेम था। उनको अपने साहस का बड़ा अभिमान था। इसलिये उन्होंने युद्ध करना ही ठीक समझा। इसी बीच में ख्वाजा किला जो अग्रसेना का नायब था, मारा गया और हसन जो बायें पार्श्व का नायब था अपने स्थान से हिला भी नहीं। दायें पार्श्व में काकशाल और अन्य लोग थे। उन्होंने भी अपने कर्तव्य का पालन नहीं किया। अबूल मआली तोपची ने जिसको काबूली लोग रम्मी खां कहा करते थे अपने घोड़े के चारों ओर अग्नि वर्षा की व्यवस्था की थी। उसमें से एक तीर कलामा हिसारी के लगा, जिससे वह मारा गया। ख्वाजा किला के मारे जाने से अब लोगों को दिल टूट गये थे। इसलिये वे रणभूमि पर दृढ़ नहीं रहे। ख्वाजा रुस्तम के मजार के पास चार बाग के समीप युद्ध हुआ जिसमें मुनीम खां की हार हुई। कितने ही लोग स्वामी द्रोह करके काबुली लोगों से जा मिले। मुनीम खां का सारा सामान लूट गया। बयाजीद बेग ने जो मुनीम खां का एक निजी सेवक था, लिखा है कि मुनीम खां के पास नकद और सामान सब मिलकर तीस लाख रुपये थे जिसको शत्रु लूट ले गये। शत्रु माल लूटने में व्यस्त हो गये, इसलिये मुनीम खां को वे नहीं पकड़ सके।

सब कुछ गवां कर मुनीम खां विक्राम (पेशावार) पहुंचा और वहां कुछ दिन ठहरा तथा सोचता रहा कि अब क्या करना चाहिये। अन्त में उसने यारी तवाची के साथ शाही दरबार में प्रार्थना-पत्र भेजा और निवेदन किया कि मैं बादशाह को मुख दिखाने योग्य नहीं हूं। मुझको आशा है कि मुझे मक्का जाने की इजाजत दे दी जायेगी। वहां जाकर मैं अपने अपराधों के धब्बों को धोऊंगा और फिर दरबार में उपस्थित होऊंगा। यदि मुझे यह इजाजत नहीं दी जाये तो मुझे आशा है कि कुछ समय के लिये मुझे पंजाब में जागीर प्रदान की जाये क्योंकि अब मेरे पास कोई सम्पत्ति नहीं है। तब मैं कुछ प्राप्त करके दरबार में उपस्थित होऊंगा। इस प्रार्थना-पत्र को भेजने के बाद भी वह विक्राम में नहीं ठहरा और वहां से सिन्ध नदी पर चला गया। फिर अपने शत्रु के भय से नदी पार करके वह गक्खड़ों के प्रदेश में पहुंचा। वहां उसने विश्राम किया। सुल्तान आदम ने उसके साथ अच्छा बर्ताव किया। खानखाना ऐसा परेशान था कि वह न तो यात्रा कर सकता था और न कहीं जा सकता था। उसके दिन बड़े परेशानी में बीते। जब बादशाह ने उसकी स्थिति का हाल सुना तो उसने उसको फटकारा और उसके प्रति दया भी की और उसको दुःख से मुक्त किया। मुनीम खां ने पंजाब में जागीर मांगी थी। इस विषय में उत्तर दिया गया कि उसकी पिछली जागीरें जो पंजाब की जागीरों से छोटी नहीं है जब्त नहीं की गई है। उदाहरणार्थ हिसार फिरोजा, सरकार ईटावा, खैराबाद, शाहपुर, कालानूर, जालन्धर, अन्दरा आदि जागीरों पर उसी का अधिकार है। यदि गक्खड़ों पर अभियान नहीं करना है तो लाहौर में ठहरने की आवश्यकता नहीं है। पत्र प्राप्त होते ही उसको दरबार में आ जाना चाहिये। जब मुनीम खां को शाही कृपा का पता लगा तो वह दरबार की ओर चल दिया और आठवें इलाही वर्ष के मध्य में वहां पहुंच गया। तब उस पर बादशाह ने बड़ी ही कृपा की। अब मुनीम खां को बादशाह के गुणों का पता लगा और उसने काबुल जाने का विचार छोड़ दिया। वह तन मन से बादशाह की सेवा करने लगा।

अब बादशाह के मन में शिकार करने का विचार आया और वह कुछ लोगों को साथ लेकर मथुरा के समीप पहुंचा, जहां उसने एक दिन में सात शेर मारे। पांच शेर तीरों और गोलियों से मारे गये और एक जीवित पकड़ लिया गया। इसके अतिरिक्त एक सिंह को कई वीरों ने मिलकर पकड़ा।

यात्री कर हटाया

भारतवर्ष में शासक लोग उन लोगों से कर लिया करते थे जो पवित्र स्थानों की यात्रा करने के लिये आते थे। यह कर यात्रियों के धन और पद के अनुसार लिया जाता था और कर्म कहलाता था। इससे राज्य को करोड़ों की आय होती थी। बादशाह ने अपनी बुद्धिमत्ता और धार्मिक उदारता से प्रेरित होकर यह कर बन्द कर दिया। उसने समझा कि इस प्रकार धन संग्रह करना अपराध है। अतः उसने आदेश दिया कि सारे साम्राज्य में कहीं भी ऐसा कर नहीं लिया जाये। पिछले समय में लोभ या कट्टरता के कारण शासक लोग ईश्वर के भक्तों से ऐसा कर लेते थे। बादशाह प्रायः कहा करता था कि चाहे कोई गलत धर्म के मार्ग पर चलता हो परन्तु यह कौन जानता है कि उसका मार्ग गलत ही है। ऐसे व्यक्ति के मार्ग में विघ्न उत्पन्न करना उचित नहीं है।

अठारह कोस की पैदल यात्रा

शिकार के बाद बादशाह ने 18 कोस की पैदल यात्रा की और एक ही दिन में वह राजधानी जा पहुंचा। उसके साथ युसूफ मुहम्मद खां, कोकल तास, मिर्जा कोका, सेफ खां, सुजात खां, मीर अली अकबर, हकीम उल्मुल्क दस्तम खां, शिमाल खां, मतलब खां और अन्य लोग थे परन्तु इनमें से केवल मीर अली अकबर, हकीम उल्मुल्क और शिमाल खां ही बादशाह के साथ-साथ चल सके।

***

प्रकरण 48

गक्खड़ों के देश पर विजय और शाही सैनिकों की वीरता

गक्खड़ों का देश सिन्धु नदी और व्यास नदी के बीच में पहाड़ियों में है। यद्यपि भारत के पिछले शासकों ने बड़ी-बड़ी सैनिक तैयारियां करके इस देश को जीतने का और वहां शान्ति स्थापित करने का प्रयास किया था, तथापि उनको कोई सफलता नहीं मिली थी। गक्खड़ों के मुखिया सुल्तान आदम ने बादशाह अकबर के प्रति अपने कर्तव्य का पालन

नहीं किया था तो भी बादशाह ने आदम की पिछली तुच्छ सेवाओं का स्मरण करके उसके अपराधों पर ध्यान नहीं दिया। कमाल खां गक्खड़ बादशाह की सेवा में आया तो बादशाह ने कृपा करके उसको उपयुक्त जागीर प्रदान की। जब खानजमा और अदली के पुत्र में संघर्ष चल रहा था तब सरकार लखनऊ में और हंसवाह तथा फतेहपुर के परगनों में कमाल खां की जागीर थी। अब कमाल खां एक अच्छी बड़ी सेना लेकर बादशाह की सेवा करने आया। जब बादशाह को मालूम हुआ कि उसने अच्छी सेवा की है तो कमाल खां पर और भी अधिक कृपा की गई। बादशाह ने कहा कमाल खां ने अपने कर्तव्य का पालन किया है अब हमको चाहिये कि उस पर कृपा करें। उसकी जो भी इच्छा होगी, पूरी कर दी जायेगी। तब कमाल खां ने बादशाह के दरबारियों के द्वारा निवेदन करवाया कि मेरे पिता का प्रदेश मुझे दिला दिया जाये क्योंकि जब सलीम खां ने मुझे बन्दी बना लिया था तो मेरे चाचा आदम ने मेरा पैतृक प्रदेश दबा लिया था। तब से मुझे हमारों दुःख सहने पड़े हैं।

इसका वृत्तान्त यूं है कि जब सुल्तान सारंग ने शेर खां से लड़ाई की तो अन्त में सुल्तान सारंग और उसका पुत्र कमाल खां बन्दी बना लिये गये। सारंग खां का वध करवा दिया गया और कमाल खां को ग्वालियर के दुर्ग में रख दिया गया। इतने पर भी गक्खड़ों के देश पर विजय प्राप्त नहीं हुई और वहां सुल्तान सारंग के भाई सुल्तान आदम का शासन चलता रहा। अब शेर खां की मृत्यु हो गई तो सलीम खां की बारी आई। उसने भी गक्खडों के देश को जीतने के लिए बड़ा प्रयास किया परन्तु उसको सफलता नहीं मिली। एक आश्चर्यकारी बात यह हुई कि सलीम खां ने आदेश दिया कि ग्वालियर दुर्ग के सारे बन्दियों का वध कर दिया जाये। इसके लिये कारागार के नीचे एक सुरंग खोदा जाये और उसमें बारूद भर कर आग लगा दी जाये। तब बड़ा धमाका हुआ। कारागार की इमारत नष्ट हो गई और बन्दी लोगों के टुकड़े-टुकड़े हो गये। कमाल खां कारागार में था परन्तु भाग्यवश वह इस विपत्ति से बच गया। जिस कोने में वह बैठा हुआ था वहां तक आग पहुंची ही नहीं। जब सलीम खां ने इस दैवी रक्षा की खबर सुनी तो उसने कमाल खां से स्वामिभक्ति की शपथ ली और उसको मुक्त कर दिया। तब ही से सुल्तान आदम गक्खड़ देश पर शासन कर रहा था और कमाल खां अपने दिन दीनता और निराशा में व्यतीत कर रहा था। अन्त में अकबर के समय में उसने शाही सेवा करना शुरू किया।

जब कमाल खां ने बादशाह की सेवा में अपनी विपत्ति की कहानी रखी तो आदेश जारी हुआ कि गक्खड़ों के देश को जिस सुल्तान सारंग का राज्य था और जो अब सुल्तान आदम के अधिकार में है, दो भागों में विभक्त कर दिया जाये। एक भाग सुल्तान आदम के और दूसरा भाग कमाल खां के अधीन रहे। यह आदेश खान किलान मीर मुहम्मद खां और महंदी कासिम खां, कुतुबुद्दीन मुहम्मद खां, शरीफ खां, जान मुहम्मद खां बहमुदी, राना कपूरदेव और राजा रामचन्द्र के नाम जारी हुआ। इन लोगों की जागीरें पंजाब में थी। सुल्तान आदम ने आदेश का पालन नहीं किया इसलिए हुक्म हुआ कि शाही सेना पंजाब से उसके देश की ओर प्रयाण करे और उसको राजद्रोह के लिए दण्ड दें। इससे अन्य लोगों को चेतावनी मिल सके। जब कमाल खां को राज्य प्राप्ति की आशा हुई तो वह दरबार से पंजाब

की ओर रवाना हुआ। बड़े-बड़े शाही अफसरों ने सुल्तान आदम के पास शाही आदेश भेजे परन्तु उसने और उसके पुत्र लस्करों ने जो अपने पिता के कारोबार को देखा करता था, बादशाह की आज्ञा का पालन नहीं किया और अनेक बहाने बनाये। कमाल खां को कुछ प्राप्त नहीं हुआ तब अधिकारियों ने इस मामले की खबर दरबार में भेजी तो दूसरा आदेश हुआ कि आदम खां की पिछली सेवाओं पर विचार करके आधा देश उसके पास रहने दिया जायेगा, परन्तु दूसरा आधा हिस्सा वह अपने भाई के पुत्र को समर्पित कर दे। यदि अब भी वह आदेश की अवहेलना करे तो शाही सेना उसको दण्ड दे और सारे देश पर कमाल खां का शासन स्थापित कर दे। आदम खां ने विरोध प्रकट किया तो सेना ने गक्खड़ प्रदेश में प्रवेश किया। आदम खां ने मूर्खतावश सामना करने की तैयारी कर ली तो हिलान नामक कस्बे के पास एक बड़ी लड़ाई हुई। गक्खड़ लोग बड़े साहसी सैनिक थे परन्तु शाही सेना की सहायता ईश्वर कर रहा था। बादशाह के सौभाग्य से शाही सेना को विजय प्राप्त हुई और आदम खां को बन्दी बना लिया गया। उसका पुत्र लश्करी कश्मीर के पहाड़ों में भाग गया। कुछ दिन वह इधर-उधर भटकता रहा परन्तु फिर उसको भी गिरफ्तार कर लिया गया। कुछ इने-गिने शाही नौकरों ने गक्खड़ों के देश को दबा लिया और शाही आदेश के अनुसार सारा प्रदेश कमाल खां को दे दिया गया। सुल्तान आदम और उसका पुत्र कमाल खां के सुपुर्द कर दिए गये। कमाल खां ने स्वप्न में भी ऐसा अभ्युदय नहीं देखा था। परन्तु शाही अनुग्रह से यह प्राप्त हो गया। उसने लश्करी का वध करवा दिया और सुल्तान आदम को मृत्यु पर्यंत कारावास में रखा।

ख्वाजा मुईन का आगमन

इस वर्ष एक घटना यह हुई कि काशगर में ख्वाजा खामिन्द महमूद का पुत्र ख्वाजा मुईन शाही दरबार में आया। बादशाह के सौभाग्य की दिन-दिन वृद्धि हो रही थी। उसको देशों पर विजय प्राप्त हो रही थी। कृषि की उन्नति होती जाती थी। आवागमन के मार्ग सुरक्षित बन गये थे और चीजों के मूल्य घट रहे थे। सातों देशों से तुर्क, ताजिक, सैनिक, व्यापारी, मुल्ला दरवेश और अन्य लोग उसके यहां पहुंच रहे थे। इन्हीं लोगों में काशगर का ख्वाजा मुईन था। यह ख्वाजा खामिन्द महमूद का पुत्र था। महमूद ख्वाजा अब्दुल्ला का पुत्र था। अबदुल्ला ख्वाजजान ख्वाजा कहलाता था और नासिरुद्दीन ख्वाजा, अब्दुल्ला का वंशज था। ख्वाजा खामिन्द महमूद अपने भाइयों और कुटुम्ब में अपनी विशुद्ध नैतिकता और सच्चरित्रता के लिए प्रसिद्ध था। अपनी जवानी में उसने साधारण विज्ञानों का परिचय प्राप्त किया और फिर ईराक और खुरासान की यात्रा करता हुआ वह शिराज पहुंचा। मौलाना जलालुद्दीन दव्वानी से उसने हिक्मत (वैद्यक) पढ़ा और फिर वह समरकन्द गया। वहां से वह तुर्किस्तान और मुगलिस्तान पहुंचा। जब बाबर का भाग्य सूर्य ऊंचा आ रहा था तो महमूद तुर्फान से काशगर आया और वहां से आगरा गया। वहां बादशाह बाबर के उत्सवों में वह शामिल हुआ। उसको राजसभाओं में ऊंचा स्थान देकर सम्मानित किया गया। फिर उसको भारत से निकाल दिया गया तो वह काबुल आया और वहां रहने लगा। उसके दो पुत्र थे, एक का नाम ख्वाजा कासिम और दूसरे का नाम ख्वाजा मुईन था। ख्वाजा मुईन अपने पिता

के समय में ही काशगर चला गया था। वहां उसने अच्छा सम्मान प्राप्त किया। सुल्तान शहीद खां के पुत्र अब्दुल रशीद खां ने ख्वाजा मुईन को रूद खान-ए-सग-ए-यशब [1] प्रदान किया जो सग-ए-यशम भी कहलाता है। जब ख्वाजा ने सुना कि उसके पुत्र शरफुद्दीन हुसेन की कीर्ति बहुत बढ़ चुकी है और उसका पद ऊंचा हो गया है तो उसने अकबर के दरबार में उपस्थित होने का विचार किया और वह भारत की ओर रवाना हो गया। शरफुद्दीन हुसेन उससे मिलने के लिए नागौर से रवाना हुआ और अपने पिता के साथ शाही दरबार में पहुंचा। जब ख्वाजा मुईन आगरे के इलाके में पहुंचा तो बादशाह के आदेश के अनुसार उससे मिलने के लिए बहुत से अधिकारी गये और जब वह आगरा नगर के निकट पहुंचा तो बादशाह स्वयं ही उसके स्वागत के लिए गये। बादशाह के इस वर्ताव से ख्वाजा की कीर्ति सदा के लिए बढ़ गई। उसको आदरपूर्वक नगर में लाकर अच्छे प्रतिष्ठित मकान में ठहराया गया और उसका ऐसा सम्मान किया गया जैसा बादशाह दरवेशों (साधुओं) का किया करते हैं। ख्वाजा ने चीन और काशगर की दुर्लभ वस्तुयें भेंट की। लम्बे अर्से तक पिता और पुत्र दोनों पर बादशाह की कृपा रही। शरफुद्दीन हुसेन कुप्रभाव के कारण स्थिर नहीं रहा। उसमें पागलपन और व्याकुलता के विचारों ने प्रवेश किया जिसके कारण अक्टूबर 1562 में वह बादशाह के अतिथि गृह से भाग गया और अजमेर तथा नागौर की ओर चला गया जहां उसकी जागीरें थीं। उसकी जाने की तारीख 5 अक्टूबर 1562 निकलती है।

जब इस लज्जाजनक घटना का बादशाह को पता लगा तो उसको बड़ा अचम्भा हुआ। उसने शरफुद्दीन के विश्वस्त लोगों से और साथियों से इसका कारण पूछा। इतना पता लगा कि उसमें दुष्टता है और उसका मस्तिष्क विकृत है। तब बादशाह ने निश्चय किया कि नागौर के शासन के लिये कोई विश्वसनीय सेवक नियुक्त किया जाये अन्यथा चाटूकारों

---

1. रूद खान का अर्थ नदी का पुलिन है। मुईन को वास्तव में इस नदी में उत्पन्न होने वाला जयश पर (सूर्यकान्त) प्राप्त हुआ था। तारीख-ए-अल्फी में लिखा है कि ख्वाजा खामिन्द का काबुल में देहान्त हो गया तो उसका पुत्र मुईन काशगर चला गया। वहां अब्दुल्ला खां ने बड़ा सम्मान किया और उसको संग-ए-कुस्त प्रदान किया। ख्वाजा जादा संग-ए-कुस्त को बड़ी सावधानी से रखता था। उसकी इजाजत के बिना इसको कोई स्वप्न में भी नहीं देख सकता था। ख्वाजा के आदेशानुसार व्यापारी लोग संग पुस्त को साथ ले गये थे जहां इसकी बड़ी मांग थी। चीन से वस्त्र और अन्य चीजें मिली थी। इस प्रकार ख्वाजा ने अच्छी सम्पत्ति का संग्रह कर लिया था। उसका पुत्र शरफुद्दीन हुसेन भारतवर्ष में आया और बादशाह के दरबार में हाजिर हुआ। आदम खां और उसकी माता की शिफारिस से सरफुद्दीन बढ़ते बढ़ते नागार का फौजदार बन गया। उसने मेरठा भी जीत लिया। जब उसने सुना कि उसका पिता तुर्किस्तान से आ रहा है तो उसने मिलने के लिये वह लाहौर गया। यशम नामक पत्थर का एक गुण यह था कि इससे बिजली से रक्षा होती थी। यारकन्द में दो नदियां हैं, एक में सफेद सूर्यकान्त और दूसरी में काला सूर्यकान्त निकलता है। ये दोनों नदियां खोतान से उत्तर की ओर चलती हैं और तारीम नदी में गिरती हैं। खोतान के दक्षिण में भी सूर्यकान्त मिलता है। मआसीर की तीसरी जिल्द में ख्वाजा मुईन का वृत्तान्त है जो उसके पुत्र सरफुद्दीन के जीवन चरित्र में समाविष्ट है। इसमें ऐसा विवरण है जो अबूल फजल की पुस्तक में नहीं मिलता। मआसीर में यह भी लिखा है कि उसने कासगर अबूल खैर के समय में छोड़ा था। जब उसका पुत्र सरफुद्दीन भाग गया तो मुईन मक्का चला गया और खम्भात में उसकी मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु फताबी नामक जहाज में हुई थी। यह जहाज डूब गया इसलिए उसके शरीर का पता नहीं लगा।

के उकसाने से ख्वाजा का पुत्र वहां उत्पात खड़ा करके लोगों को भड़कायेगा। अतः बादशाह ने वली बेग जुअल कादिर के पुत्र हुसेन कुली बेग को ऊंचा पद प्रदान किया और उसको खान की उपाधि दी। सरफुद्दीन हुसेन की सारी जागीरें उसको दे दी और फिर आवश्यक हिदायतें करके उसको नागौर भेज दिया। उसके साथ हुसेन कुली के भाई कुली खां, मुहम्मद शादिक खां, मुहम्मद कुली तोकबाई, मिराक बहादुर और अन्य लोगों को सहायतार्थ रवाना किया। बादशाह ने कहा कि भूल करना तो मनुष्य के स्वभाव में है। अब मिर्जा सरफुद्दीन हुसेन को प्रमाद निद्रा छोड़ देनी चाहिये और अपने कर्मों पर लज्जित होना चाहिये। यदि वह ऐसा करें तो उस पर शाही कृपा की जाये और उसको दरबार में लाया जाये परन्तु यदि वह कृतघ्नता करे और मन में दुर्भावना रखे तो उसको ऐसा दण्ड दिया जाये कि उससे दूसरों को शिक्षा मिले। हुसेन कुली खां ने अपना कुटुम्ब हाजीपुर के दुर्ग में भेज दिया और नई सेवा के लिये तैयार होकर उसने नागौर की ओर प्रस्थान किया। जब भाग्यशाली शाही सेना पहुंची तो मिर्जा सरफुद्दीन हुसेन जो युद्ध करने का विचार कर रहा था कुछ भी तैयारी नहीं कर सका और विवश होकर उसने अजमेर का दुर्ग तरखान दीवाना के सुपुर्द कर दिया। यह दीवाना उसका एक विश्वस्त सेवक था। फिर सरफुद्दीन जालौर की ओर चला गया जिस पर उसने पहले ही अधिकार कर लिया था। वह वहां अपने अवसर की प्रतीक्षा करने लगा। शाही सेना ने अजमेर पहुंच कर दुर्ग को घेर लिया। अजमेर पर अधिकार करके शाही सेना आगे बढ़ने के लिये अपना मार्ग साफ करना चाहती थी। तरखान दीवाना ने बुद्धिपूर्वक काम किया। सन्धि करके उसने दुर्ग शाही सेना के सुपुर्द कर दिया। तब हुसेन कुली खां ने यह दुर्ग अपने विश्वस्त आदमियों को सौंप कर आगे प्रयाण किया। सरफुद्दीन हुसेन मिर्जा ने ईमान छोड़ दिया था और भाग्य ने उसको छोड़ दिया था। वह रणभूमि में स्थिर नहीं रह सका और साम्राज्य को छोड़ गया। वह प्रदेश मिर्जा से मुक्त हो गया और मेरठा का दुर्ग भी हुसेन कुली खां के हाथ में आ गया। यह फिर हुसेन कुली खां के हाथ में आ गया था। परन्तु अब बादशाह की आज्ञानुसार यह दुर्ग जयमल को दे दिया गया।

जोधपुर दुर्ग की विजय

जब मिर्जा सरफुद्दीन हुसेन के विषय में शाही सेवकों को कोई चिन्ता नहीं रही तो वे लोग जोधपुर दुर्ग को जीतने के लिए प्रयास करने लगे जो उस इलाके में सबसे अधिक दृढ़ दुर्ग था। यह बात छिपाने की नहीं है कि यह दुर्ग राय मालदेव की राजधानी थी। मालदेव भारत का एक बड़ा राजा था। उसका पद और प्रतिष्ठा ऊंची थी। उसका राज्य विस्तृत था और उसके सेवकों की संख्या काफी बड़ी थी। उसके देहान्त के बाद उसका पुत्र चन्द्रसेन उत्तराधिकारी बना और यह दुर्ग उसके हाथ में आ गया। शाही सेवकों ने इस दुर्ग को घेर लिया। तब राय मालदेव का बड़ा पुत्र रामराय शाही सेना में जा मिला। फिर उसने शाही दरबार में उपस्थित होकर अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाई। हुसेन कुली खां को सहायता देने के लिये मुईनुद्दीन अहमद खां फरनखुदी और मुजफ्फर मुगल को सहायता देने के लिए भेजा गया। ईश्वर की सहायता से इस दुर्ग पर शीघ्र ही विजय प्राप्त हो गई।

ख्वाजा मुजफ्फर अली तरबती

जब साम्राज्य की शासन व्यवस्था बादशाह के भाग्य से अच्छी हो गई तो उसने निश्चय किया कि दीवानगिरी की मसनद स्वामिभक्त और कार्यकुशल आदमी को प्रदान की जाये जिससे राजनैतिक और वित्तीय मामलों का काम भली भांति चले। यह विचार करने पर बादशाह का ध्यान मुजफ्फर अली तरकती की ओर आकर्षित हुआ तो उसको इस पद से अलंकृत किया गया और उसको मुजफ्फर खान की उपाधि दी गई। उसने अपने कर्तव्य का पालन करके योग्यता का परिचय दिया। फिर अच्छी सेवाओं के कारण उसको बसीर का पद प्रदान किया गया। मुजफ्फर खां में साहस और बुद्धि दोनों थी। वह तलवार और कमल दोनों का उपयोग करना जानता था। यह पहले बैराम खां का सेवक था। जब बैराम खां ने विद्रोह किया जो मुजफ्फर खां को दरवेश उजबेग ने गिरफ्तार करके शाही दरबार में भेज दिया था। संकुचित दृष्टि वाले लोगों ने बादशाह को सुझाया था कि मुजफ्फर खां को मार दिया जाये, परन्तु बादशाह इस व्यक्ति की क्षमता और योग्यता को देख चुका था इसलिये उसको प्राण दण्ड नहीं दिया गया। कुछ समय के लिये वह परगना परसूर का वित्त संग्राहक रहा। इसमें उसको दीवान-ए-बियाताक के पद पर नियुक्त किया गया। तदनन्तर उसको और भी उच्च पद प्राप्त हुआ।

***

प्रकरण 49

अबूल-मआली का दुबारा आना, उसका उत्पात और पतन

पहले लिखा जा चुका है कि इस दुष्ट व्यक्ति ने बार-बार कई अनुचित कार्य किये थे, परन्तु बादशाह की सहज दयालुता के कारण उसका वध नहीं करवाया गया था बल्कि उस पर कृपा की गई थी, फिर उसके सुधार के लिये उसको मक्का भेज दिया गया था। उसको चाहिये था कि वह मक्का में अपना सुधार करता परन्तु वह पापों का पात्र बनकर और द्वेष बुद्धि से प्रेरित होकर पुनः साम्राज्य में आ गया। वह गुजरात में नहीं ठहरा और सीधा आगरा और दिल्ली की ओर चला। जब वह जालौर पहुंचा तो मिर्जा सरफुद्दीन हुसेन उससे मिल गया और भी अधिक विनाश की ओर जाने लगा। सरफुद्दीन हुसने मिर्जा ने उससे कहा कि मुझसे मेल कर लो, मैं तुमको तीन सौ अच्छे आदमी अपने अनुचरों में से छांट कर दूंगा। इनमें यार अली बलूच और मीर अली पुलाबी जैसे व्यक्ति होंगे। यदि तुम्हारे प्रयत्न से भारत में उपद्रव आगे बढ़ेगा तो मैं स्वयं तुम्हारा साथ दूंगा। यदि यहां सफलता नहीं होगी तो मैं काबुल जाऊंगा और वहां अवसर की प्रतीक्षा करूंगा। अपनी सहज मर्दन

और सरफुद्दीन मिर्जा के उकसाने से शाह अबूल मआली हाजी मआली हाजीपुर की ओर चला जहां हुसेन कुली खां और अन्य अधिकारियों के परिवार थे। जब वह हाजीपुर के निकट पहुंचा तो वहां उस पर अधिकार नहीं कर सका, क्योंकि शाही दरबार के आदेश के अनुसार अहमद बेग जो हुसेन कुली खां के रिश्तेदार थे वहां आ पहुंचे थे। तब यह दुर्भागी और मस्तिष्कहीन नवयुवक नारनौल की ओर मुड़ा क्योंकि अब उसने देख लिया था कि अब वह हाजीपुर को नहीं जीत सकता था। इस समय नारनौल बादशाह ने सुजात खां को दे दिया था और उसका पुत्र कबीम खां वहां का फौजदार था। मीर गेसू जो वहां का आमिल था उस समय शाही आय के एक अंश को दरबार में ले जाने का विचार कर रहा था। भूत और वर्तमान गुमाश्तों के मतभेद के कारण सावधानी नहीं बरती गई थी और लापरवाही की जा रही थी। एक दिन जब शाही अधिकारी लोग निश्चिन्त होकर सो रहे थे तो अबूल मआली कुछ बदमाशों को साथ ले आ पहुंचा। कबीम ने वीरता का काम नहीं किया और भाग गया। मीर गेसू भी बन्दी बना लिया गया। राजकोष का एक भाग बदमाशों के हाथ में आ गया और उन्होंने नगर को लूट लिया। जब हुसेन कुली खां ने सुना कि दुस्साहसी दुष्ट आ पहुंचा है तो उसने कुछ सैनिक देकर शादिक खां और अस्माइल कुली खां को भेजा। उसको यह डर था कि कहीं उसकी सम्पत्ति को जो हाजीपुर में है लूट लिया जाये। जब यह सैनिक लोग हाजीपुर के निकट पहुंचे तो उनको पता लगा कि वह दुष्ट नारनौल की ओर भाग गया है। तब वे उधर की ओर चले। उनके आने की खबर सुनकर अहमद बेग और इसकन्दर बेग आकर उससे मिल गये। जब वे नारनौल से बारह कोस के अन्दर थे तो खानजादा मुहम्मद से उनकी मुठभेड़ हो गई। वह अपनी जागीर छोड़कर अपने भाई के पास जा रहा था। इस प्रकार शाही सेवकों के हाथ में शिकार आ गई।

जब शाह अबूल मआली ने सैनिकों के आने की खबर सुनी तो वह नारनौल की ओर भाग गया। तब वीर पुरुषों को और भी अधिक शीघ्रता से आगे बढ़ने की प्रेरणा मिली। जब वे दहरसू पहुंचे तो उनको दो ऊंट मिले जिन पर चांदी लदी हुई थी ओर जो शाह अबूल मआली के पास जा रहे थे। इनको कुली खां और अहमद बेग ने पकड़ लिया। लालची सैनिकों में चांदी के विषय में लड़ाई हो गई। जो उनके नायकों तक पहुंच गई। फिर वे दहरसू ठहर गये। अहमद बेग और इसकन्दर बेग इस आकस्मिक झगड़े से परेशान हो गये इसलिये उन्होंने आगे बढ़कर अपने डेरे लगाये। प्रातःकाल भी वे आगे बढ़े और शादिक खां तथा ईस्माइल कुली खां की उन्होंने प्रतीक्षा नहीं की। कुछ बदख्शी लोग और कुछ ट्रान्स ओक्सियाना के लोग विद्रोही हो गये। दाना कुली शाही सेना को छोड़ कर अबूल मआली से जा मिला। अबूल मआली जंगल में ठहर कर अवसर की प्रतीक्षा करने लगा। जब वे वीर और स्वामिभक्त आ पहुंचे तो उसने घात में से निकल कर उन पर आक्रमण किया। विद्रोही लोग उससे मिल गये और उन्होंने अपने ही नेताओं के विरुद्ध तलवारें उठाई। अहमद बेग और इसकन्दर बेग वीरतापूर्वक लड़े और उन्होंने बहुत से विद्रोहियों को मारा परन्तु फिर वे स्वयम् शहीद हो गये। विजयी सेना के आने से पहले ही शाह अबूल मआली भाग गया। जब वह परगना झुन्झनू में पहुंचा तो वहां के सिकदार ने दुर्ग के द्वार बन्द कर दिये और वह युद्ध के लिये तैयार हो गया। उसने स्वामिभक्ति के मार्ग का अनुसरण किया। फिर अबूल मआली वहां से हिसार फिरोजा गया। मुनीम खां के सेवक बयाजीद बेग ने

दुर्ग की रक्षा के लिये प्रयास किया तो अबूल मआली हार कर वहां से काबुल की ओर चल दिया। इस समय बादशाह मथुरा के पास जो आगरा से 15 या 16 कोस के अन्तर पर है शिकार द्वारा अपना मनो-विनोद कर रहा था। जब उसने सुना कि शाह अबूल मआली उधर की ओर आ रहा है और उसने बुरा काम किया है तो तत्काल ही आदेश दिया गया कि शाह बुदाग खां तातार खां और रोमी खां जैसे स्वामिभक्त अधिकारियों को भेजा जाये जो उसका पीछा करते रहे और उसको पकड़े जिससे विद्रोह शान्त हो और लोगों को सुख मिले।

***

प्रकरण 50

बादशाह की सवारी का दिल्ली जाना

8 जनवरी 1564 को अकबर बादशाह दिल्ली गया। उसके आगमन से नगर आलोकित हो गया। अबूल मआली बादशाह की कीर्ति के प्रभाव से भारत में नहीं टिक सका और नष्ट होने के लिये काबुल पहुंच गया। दिल्ली पहुंचने के बाद जब बादशाह शेख निजामुद्दीन ओलिया की कब्र पर गया तो यह घटना घटी। कब्र से बादशाह अपने महल को वापस आ रहा था। जब वह चौराहे पर पहुंचा तो माहम अनगा के समीप में एक ऐसा व्यक्ति खड़ा था जिसकी मृत्यु होने वाली थी। जब बादशाह उस स्थान से आगे निकल गया तो उस व्यक्ति ने एक तीर चलाया जो बादशाह के बायें कन्धे में एक बालिश्त भर घुस गया। सब ओर हाहाकार मच गया और लोगों ने उस व्यक्ति को पकड़ लिया। वे चाहते थे कि उसको तत्काल नहीं मारा जाये और उससे पूछ-ताछ की जाये परन्तु बादशाह ने संकेत किया कि उसको तुरन्त ही मार दिया जाये जिससे वफादार लोगों पर सन्देह न हो। तब एक क्षण में ही लोगों ने उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। साथ के लोगों ने तीर निकाल दिया। मैंने अकबर के मुख से सुना है कि पहले तो उसको एक ख्याल हुआ कि किसी ने अनजाने छत पर से कोई पत्थर फेंका है। इतना गहरा घाव लगने पर भी बादशाह पूर्ववत घोड़े पर बैठा रहा और अपने महल पर गया। ईश्वर की कृपा से घाव घातक नहीं था। खिजर ख्वाजा खां और हकीम अर्यानुल मुल्क ने मिलकर चिकित्सा की और खुश्क पट्टी बांधी। प्रतिदिन घाव में फतीला या बत्ती रखी जाती थी। एक सप्ताह में घाव भर गया और बादशाह को पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त हो गया।

एक विचित्र बात यह हुई कि जब बादशाह आगरा से रवाना हुआ था तो वहां महल में एक कुतिया थी। जिस दिन बादशाह को तीर लगने की घटना घटी उसी दिन से यह कुतिया उदास और दुःखी रहने लगी और सात दिन तक उसने कुछ खाया पीया नहीं। जब बादशाह की स्वास्थ्य प्राप्ति की खबर आई तो कुतिया को शान्ति हुई।

बादशाह ने दूरदर्शिता से इस घटना की पूरी या लम्बी चौड़ी जांच नहीं करवाई। फिर भी इतना पता लग गया कि वह दुस्साहसी व्यक्ति सरफुद्दीन हुसेन मिर्जा के पिता का दास था और उसका नाम कुतलक फौलाद था। सरफुद्दीन ने उसको दुष्ट विचार से शाह अबूल मआली के साथ रहने के लिये जालौर से भेजा था। जब अबूल मआली भारत से भाग कर काबुल चला गया तो उसने फौलाद को इस अशुभ काम के लिये भेजा। फौलाद ने अपने विनाश के लिये यह काम किया।

21 जनवरी 1564 को पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त करके अकबर राजधानी आगरा को गया। उसने धीरे-धीरे यात्रा की। घाव भर चुका था फिर भी यह सोच कर कि अभी यह ताजा है और घोड़े की सवारी को सहन नहीं कर सकता, उसने अधिकांश यात्रा सुखासन द्वारा की। जब बादशाह आगरा पहुंचा तो लोगों ने बड़ा हर्ष प्रकट किया और बादशाह की स्वास्थ्य प्राप्ति पर ईश्वर को अनेक धन्यवाद दिया। फिर बादशाह प्रशासनिक कार्य में व्यस्त हो गया।

***

प्रकरण 51

जजिया कर हटाया

शासन का नवां वर्ष 11 मार्च 1564 को शुरू हुआ। इस वर्ष बादशाह ने सबसे बड़ी बखसीस यह की कि सारे भारतवर्ष में जजिया नामक कर बन्द कर दिया। उसका हिसाब नहीं लगाया जा सकता कि इस कर से कितनी आय हुआ करती थी। बादशाह की दीर्घ दृष्टि प्रशासन पर लगी हुई थी इसलिये उसने यह आदेश जारी करने पर बड़ा ध्यान दिया। अधिकारियों ने इसका विरोध किया और कहा कि इससे आय बहुत कम हो जायेगी परन्तु बादशाह ने उनकी बातों पर ध्यान नहीं दिया। पिछले बादशाहों ने यह कर इसलिये जारी किया था कि वे विरोधी धर्मों से गहरी घृणा करते थे। इसके राजनैतिक कारण भी थे और इससे उनको लाभ भी होता था इसलिये उन्होंने यह जजिया कर लगाया था। इससे उनके उद्देश्य की पूर्ति हो जाती थी। इस समय बादशाह के प्रति लोगों में बड़ी सद्भावना है। दूसरे धर्म के अनुयायी बादशाह के वफादार हैं और उनकी सेवा करने के लिये तत्पर हैं। पहले के बादशाहों ने यह कर इसलिये लगाया था कि उनको धन की बड़ी आवश्यकता थी परन्तु इस समय बादशाह के कितने ही राजकोष हैं और वे सब धन से परिपूर्ण हैं। उसके सेवक समृद्ध हैं तो फिर न्यायशील और विवेकवान बादशाह को इस प्रकार का कर लगाने की क्या आवश्यकता है।

अबूल मआली को दण्ड

अबूल मआली बुरी भावना से काबुल गया था। उसका पीछा करने के लिये एक सेना भेजी गई थी जो उसको पंजाब से बाहर निकाल कर वापस आ गई। अबूल मआली ने सिन्ध से माह चूचक बेगम को एक प्रार्थना पत्र भेजा, जिसमें उसने बादशाह हुमायूं के साथ अपना सम्बन्ध बतलाया। माह चूचक बेगम के पास काबूल में सारी सत्ता थी। वह मिर्जा मुहम्मद हकीम की माता थी। अबूल मआली ने लिखा है कि मैं आपकी शरण आया हूं। मैं सम्मान और कीर्ति की तलाश में हूं। इस पत्र को पढ़कर बेगम ने अपने विश्वस्त सलाहकारों से परामर्श किया तो उन्होंने संकुचित दृष्टि और स्वार्थवश कहा कि शाह अबूल मआली तरमीज के सैयदों का वंशज है और मुगलिस्तान तथा काशगर के शासकों का इन लोगों से विवाह सम्बन्ध है। अबूल मआली ने इस उच्च कुल से रक्षा की भिक्षा मांगी है तो उसके प्रति कृपा की जाये और उसको ऊंचा उठाया जाये और उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाई जाये। बेगम उसके साथ अपनी पुत्री अर्थात मुहम्मद हकीम की बहन का विवाह कर दे इससे इस कुल की प्रसिद्धि और कीर्ति बढ़ेगी और इसमें मेल हो जायेगा। बेगम का स्वभाव सरल था। वह इन लोगों के धोखे में आ गई और उसने शाह अबूल मआली के पत्र का सान्त्वनापूर्ण उत्तर भेजा और उसको सम्मान के साथ काबुल बुलाया। बेगम ने बादशाह अकबर से कुछ नहीं पूछा और अबूल मआली के साथ अपनी पुत्री फखरूतनिसा बेगम का विवाह कर दिया। इस प्रकार अपने कुटुम्ब और धर्म का संबंध उस दुष्ट आदमी से जोड़ दिया। इसका परिणाम शीघ्र ही यह हुआ कि थोड़े समय बाद ही बेगम को अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा।

बेगम का वध

इस घराने का स्वामी बन जाने के बाद अबूल मआली अपनी भावनाओं को नहीं दबा सका। उसके सलाहकारों ने भी उसको उकसाया। उसने बेगम पर और उसके गम्भीर परामर्श पर ध्यान नहीं दिया। उसमें न किसी प्रकार की कृतज्ञता थी और न भक्ति थी। उस समय कराचा खां का पुत्र सगून और साद्भान जो बेगम से द्वेष रखते थे अबूल मआली से आ मिले। उन्होंने कहा कि जब तक बेगम जीवित है तब तक कोई किसी पद पर सुरक्षित नहीं है। आपको भी फाजिल बेग, अबूल फतह और शाह अली अतका की भांति मार दिया जायेगा इसलिये आपको साहस के साथ काम करना चाहिये और मिर्जा मुहम्मद हकीम का उसकी इच्छानुसार पालन पोषण करना चाहिये। इस प्रकार सारे काबुंली लोग आपकी आज्ञा का पालन करेंगे। अबूल मआली दुष्ट पुरुष था। वह अज्ञानवश बेगम की कृपाओं को भूल गया और उसकी घात करने का विचार करने लगा।

सगून और ट्रान्स ओक्जियाना विजयाना के काजी जादा को उसने अपना मित्र बनाया और बेगम के महल की ओर चला। अबूल मआली एक द्वार से और उपरोक्त दोनों दुष्ट दूसरे द्वार से महल में घुसे, वहां अनेक स्त्रियां थीं। भूलवश उन्होंने एक निरपराध स्त्री को मार डाला। जब उनको मालुम हुआ कि उनसे भूल हो गई है और जो स्त्री मारी गई है

वह बेगम नहीं है तो वे बेगम की तलाश करते हुए अबूल मआली के पास पहुंचे। जब बेगम को उनकी दुर्भावना का पता लगा तो उसने इन अत्याचारियों को रोकने के लिये अपने कमरे का दरवाजा बन्द कर लिया। अबूल मआली ने उन दोनों दुष्टों की सहायता से दरवाजा तोड़कर कमरे में प्रवेश किया और बेगम को मार डाला। यह घटना अप्रैल, 1564 में हुई। बेगम की हत्या करके अबूल मआली, मिर्जा मुहम्मद हकीम की तलाश करने लगा। उसको वह दीवानखाने में लाया और अपने पास बिठाया। मिर्जा के परिवार के लोग भी इच्छापूर्वक या अनिच्छापूर्वक उसके पास उपस्थित हुये। फिर दूसरे दिन उसने हैदर कासिम कोहबर का वध करवाया। उसके कुटुम्ब के लोग पीढ़ी दर पीढ़ी बड़े-बड़े पदों पर थे और वह स्वयं इस समय मिर्जा का वकील था और देश का प्रशासन भली-भांति चला रहा था। अबूल मआली ने ख्वाजा खास मुल्क और कई अन्य लोगों का भी वध करवाया। उसने हैदर के भाई मुहम्मद कासिम को कारागार में डाल दिया, तब मुहम्मद मैदनी बाकी कामसाल, हसन खां ओर महसन खां तथा बेगम के अन्य सेवक अबूल मआली को मार डालने के लिए एक हो गये। इनमें से एक का नाम ईदी सरमस्त था। उसने अबूल मआली को सब खबर दे दी तो वह सशस्त्र होकर अपने अनुचरों के साथ लड़ने के लिए तैयार हो गया। ये सब लोग दुर्ग की ओर चले और अबूल मआली दूसरे मार्ग से आगे बढ़ा। दोनों पक्ष के कितने ही लोग मारे गये परन्तु अबूल मआली का दल विजयी हुआ और दूसरे लोगों को दुर्ग से बाहर निकाल दिया गया। जब रात हुई तो सब तितर-बितर हो गये। काकसाल लोग घोरबन्द को, मैदानी लोग मैदान की और हसन खां तथा महसरी खां जलालाबाद को चले गये। मुहम्मद कासिम जो हैदर कासिम का भाई था, कारागर से भागकर बदख्शां चला गया। उसने अबूल मआली की दुष्टता और काबुल की दुर्घटना की खबर मिर्जा सुलेमान को दी और उसको काबुल जाने के लिये प्रेरित किया। मिर्जा मुहम्मद हकीम इस समय बालक ही था परन्तु अपनी माता के वध से वह भयभीत हो गया और अपने हितैषियों की सलाह से उसने गुप्त रूप से मिर्जा सुलेमान के पास आदमी भेजे और उसको सहायतार्थ आने के लिए प्रेरित किया।

अबूल मआली का वध

दुर्घटनाओं की खबर सुनकर मिर्जा सुलेमान ने काबुल की ओर प्रयाण किया। उसने बदख्सी लोगों की एक सेना खड़ी कर ली थी। उसके आगमन की खबर से अबूल मआली क्षुब्ध हो गया। सेना इकट्ठी करके उसने मिर्जा मुहम्मद हकीम को अपने साथ लिया। वह मूर्खतावश समझता था कि मिर्जा उसके पक्ष में है। मिर्जा सुलेमान के आने से पहले ही अबूल मआली काबुल से निकला और घोरबन्द नदी पर पहुंचकर उसने पुल कर कब्जा कर लिया दूसरी ओर से मिर्जा सुलेमान भी शीघ्रतापूर्वक पुल पर जा पहुंचा और दोनों पक्ष युद्ध करने के लिये तैयार हो गये। अबूल मआली ने कुछ काबुलियों को लड़ने के लिए आगे भेजा। थोड़ी देर बाद उसने सुना कि काबुली हार गये। तब उसने अपनी सेना के मध्य में मिर्जा मुहम्मद हकीम को नियुक्त किया। मिर्जा सुलेमान बिलकुल सामने थे। अबूल

मआली हारे हुए काबुलियों की सहायता के लिये चला। अवसर देखकर मिर्जा मुहम्मद हकीम के लोगों ने अबूल मआली के घोड़े की लगाम पकड़ ली और उसको नदी की ओर चलाया और मिर्जा सुलेमान के पास ले गये। तब काबुल की सेना सारी तितर-बितर हो गई। अबूल मआली ने वापस आकर देखा कि स्थिति बहुत बुरी है। उसने परेशान होकर लड़ाई बन्द कर दी और हार मान ली। बदख्शां के लोगों ने उसका पीछा किया और चारीका-रान में उसको जा दबाया। फिर उसको पकड़ कर उन्होंने मिर्जा सुलेमान के सामने उपस्थित किया। सुलेमान को बड़ा हर्ष हुआ और वह मिर्जा मुहम्मद हकीम के साथ काबुल पहुंचा। दो दिन पश्चात् उसने अत्याचारी अबूल मआली को मिर्जा मुहम्मद हकीम के पास भेज दिया जिसने उसको गला घोंट कर मरवा दिया।

जब अबूल मआली का गला घोंटा जाने लगा तो वह बहुत रोया पीटा और दीनता पूर्वक उसने प्रार्थना की कि उसको कुछ दिन और जीवित रहने दिया जाये परन्तु इससे केवल उसका हीन चरित्र ही प्रकट हुआ। उसके शव को खानजादा बेगम और महन्दी ख्वाजा की कब्रों के पास दफना दिया गया।

इसके बाद मिर्जा सुलेमान काबुल की व्यवस्था करने में और मिर्जा मुहम्मद हकीम के शिक्षा का प्रबन्ध करने में व्यस्त हो गया। उसने बदख्शां में अपनी पुत्री को बुलवा कर मिर्जा मुहम्मद हकीम के साथ उसका विवाह कर दिया। उसने काबुल का बहुत बड़ा भाग बदख्शां के लोगों को दे दिया और अपने एक अफसर को जिसका नाम उमेद अली था, मिर्जा मुहम्मद हकीम का वकील नियुक्त किया। इस प्रकार काबुल का तीन चौथाई भाग उसने अपने आदमियों को दे दिया और अच्छी से अच्छी भूमि अपने लिए रख ली। मिर्जा मुहम्मद हकीम को और काबुलियों को नीच दरजे की भूमियां दी। सुलेमान समझता था कि ऐसा करने से काबुल उसके अधीन बना रहेगा।

***

प्रकरण 52

ख्वाजा अब्दुल मजीद आसफ खां के द्वारा गढ़ा कटंग की विजय

आसफ खां

ख्वाजा अब्दुल मजीद आसफ खां ताजिक था। इस जाति के लोग लेखक थे परन्तु आसफ खां ने तुर्कों के से वीर कार्य किये। अपनी सत् सेवा और स्वामिभक्ति के द्वारा उसने गढ़ा प्रदेश को जीत लिया।

गोन्डवारा

भारत के विस्तृत देश में एक गोन्डवारा प्रदेश है जहां गोड़ लोग निवास करते थे। इनकी जाति बहुत बड़ी है। ये प्रायः जंगलों में रहते हैं और आनन्द करते हैं। ये निम्न जाति के लोग हैं इसलिए भारतवर्ष के लोग उनसे घृणा करते हैं और उनको सभ्यता और धर्म के क्षेत्र से बाहर समझते हैं। इस प्रदेश का पूर्वी भाग रतनपुर से मिला हुआ है जो झाड़खण्ड में है। इसका पश्चिमी भाग रायसीन से मिला हुआ है जो मालवा में है। इस प्रदेश की लम्बाई 150 कोस है। इसके उत्तर में पन्ना राज्य है और इसके दक्षिण में दखिन है। इसकी चौड़ाई 80 कोस होगी। इस देश को गढ़ा कटंग कहते हैं। यह लम्बा चौड़ा देश है और इसमें कितने ही दुर्ग सम्पन्न नगर और कस्बे हैं। सच्चा वृत्तान्त बतलाने वाले लोगों ने कहा है कि गढ़ा कटंग में 70,000 गांव हैं। इनमें गढ़ नगर है और कटंग गांव है। यह सारा देश गढ़ा कटंग के नाम से प्रसिद्ध हो गया है। इस देश की राजधानी चौरागढ़ है। पिछले समय में इस देश में एक राजा नहीं था बल्कि अनेक राजा और रईस थे। इस समय भी कई राजा हैं तथा गढ़ा का राजा, गरोला का राजा, हरिया का राजा, बलवानी का राजा, दनकी का राजा, कठोला का राजा, मुगड़ा का राजा, मुंडला का राजा, बेवहार का राजा और लांजी का राजा।

इनकी सेनाओं में अधिकांश प्यादे हैं घुड़सवार केवल गिनती के हैं। जब मुसलमानों ने भारत को प्रथम बार जीता तो उनमें से कोई भी इन दृढ़ दुर्गों तक नहीं पहुंचा। अब आसफ खां सरकार कर्रा का जागीरदार है और उसने पन्ना राज्य को जीत लिया है। इस समय गढ़ कटंगा पर युगावती नाम की रानी का राज्य है जो अपने साहस दानशीलता और अनेक गुणों के कारण प्रसिद्ध थी। मैंने अनुभवी लोगों से सुना है कि उसके राज्य में तीस हजार गांव हैं। इनमें बारह हजार गांवों में उसके शिकदार हैं। शेष गांव उसके अधीन हैं। वहां के मुखिया लोग उसका आदेश मानते हैं। यह राय और महोबा के चंदेल राजा शलिवाहन की पुत्री थी। इस राजा ने इसका अमानदास के पुत्र दलपत के साथ विवाह कर दिया था। यद्यपि दलपत कुलीन नहीं था, परन्तु वह बड़ा धनवान था। राजा शलिवाहन की स्थिति अच्छी नहीं थी, इसलिये विवश होकर उसने यह विवाह किया। अमानदास ने गुजरात के सुल्तान बहादुर को रायसीन की विजय में सहायता दी थी इसलिये बहादुर ने उसको संग्राम शाही की उपाधि से सम्मानित करके उसकी प्रतिष्ठा बढ़ा दी थी। प्राचीन काल से गढ़ा का राजवंश उच्च और प्रतिष्ठित था परन्तु उसके अतिरिक्त उसके पास कुछ नहीं था। अमानदास के बाबा का पिता खरजी अपनी योग्यता और युक्ति के द्वारा इस प्रदेश के अन्य राजाओं से पेश-कश लिया करता था। उसके पास 100 सवार अैर 10,000 प्यादे थे। खरजी का पुत्र संगीनदास था जिसकी सेना में 500 घुड़सवार और 60,000 प्यादे थे। उसके घुड़सवार व प्यादों में बहुत से राजपूत थे। अपनी योग्यता के द्वारा उसने बड़ा प्रभाव जमा लिया था। उसका पुत्र अर्जुनदास था और अर्जुनदास का पुत्र अमानदास था। अमानद्रास बालक और दुष्ट था। वह अपने पिता के विरुद्ध काम किया करता था। उसके सुधार के लिये उसके पिता ने कुछ समय के लिये उसको कारागार में रख दिया था। जब उसने सदाचार की प्रतीज्ञा की तो उसको मुक्त किया गया था। परन्तु फिर भी वह अपने पुराने ढंग से मिश्रित कार्य

करने लगा और भाग कर पन्ना के राजा रामचन्द्र के बाबा वरसिंह देव के पास चला गया। इस राजा ने उसको अपना पुत्र मान लिया। फिर वरसिंह देव ने सुल्तान सिकन्दर लोदी की सेवा करना शुरू कर दिया, और वह अमानदास को वीरवाहन के पास छोड़ गया जो राजा रामचंद्र का पिता था। वीरवाहन उस समय नवयुवक ही था। प्रत्यक्ष में तो अमानदास सन्मार्ग पर चला। उसका पिता अर्जुनदास उससे अप्रसन्न था इसलिये उसने अपने कनिष्ठ पुत्र जोगीदास को अपना उत्तराधिकारी बना दिया। परन्तु जोगीदास अपने बड़े भाई के अधिकार का आदर करता था इसलिये उसने यह व्यवस्था स्वीकार नहीं की। उसने कहा मेरे बड़े भाई के होते हुए यह मेरे लिये उचित नहीं है कि मैं इस अधिकार को स्वीकार करूं। जब निकम्मे अमानदास ने सुना कि उसका पिता द्वितीय पुत्र को अपना उत्तराधिकारी बना रहा है तो वह अभिमान करके अपने माता के मकान में चला गया और वहां छिपा रहा। राजा के एक घनिष्ठ मित्र की सहायता से अमानदास ने एक रात को अवसर पाकर राजा का वध कर डाला। तब लोगों ने विद्रोह करके अमानदास को कैद कर लिया और राजा के दूसरे पुत्र को आदमी भेजकर बुला लिया। परन्तु उसने आने से इन्कार किया और कहा, ''मैं अपने बड़े भाई को पितातुल्य समझता हूं। मैं उसको कैसे मार सकता हूं। साथ ही मैं अपने भाई के अधीन भी नहीं रह सकता क्योंकि उसने बहुत बड़ी आत्महानि की है। जोगीदास को बहुत समझाया गया परन्तु वह नहीं समझा और विरक्त होकर वन में चला गया तब दो राजभक्त सामन्तों ने अमानदास की सेवा करना पसन्द नहीं किया बल्कि उन्होंने राजा वरसिंह देव को सब वृत्तान्त लिख भेजा और उसे प्रेरित किया कि अमानदास के राज्य को जीत ले। वरसिंह देव ने सुल्तान सिकन्दर के पास से आकर अमानदास के राज्य में प्रयाण किया। अमानदास उसका सामना नहीं कर सका और पर्वतों में जा छिपा और उसने कहा मैंने अज्ञान ओर विक्षिप्त चित्त की स्थिति में अपने पिता का वध किया है अब मैं लड़ाई कैसे लड़ सकता हूं। वरसिंह देव उस राज्य को जीतकर तथा वहां अपने आदमी नियुक्त करके जब वापस लौट रहा था तो अमानदास अपने कुछ अनुचरों सहित उससे मिला और अपनी अधीनता प्रकट की और बहुत रोया धोया तो वरसिंह देव ने उसका राज्य उसी को लौटा दिया। अमानदास फिर भी निरन्तर रोता रहा और अपने दुष्कर्मों के प्रति घृणा प्रकट करता रहा। यह नहीं कहा जा सकता कि वह मिथ्याचार कर रहा था या अपनी दुष्टता का अनुभव करके ईश्वर और संसार के सामने लज्जा प्रकट कर रहा था। उसकी मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र दलपत उसका उत्तराधिकारी बना और वह 7 वर्ष राज्य करके संसार से चल बसा। ऐसा कहा जाता है कि संग्राम के कोई पुत्र नहीं था। इसलिये उसने अपने सेवक गोविन्ददास कछावा से कहा तुम्हारी गर्भवती स्त्री का प्रसव मेरे अन्तःपुर में हो जाने दो। यदि उसकी पुत्री उत्पन्न हो तो तुम ले जाना और यदि पुत्र हो तो उसको मैं रख लूंगा। यह भेद किसी पर प्रकट नहीं होना चाहिए। गोविन्ददास ने यह आदेश स्वीकार किया और जब उसकी पत्नी को पुत्र उत्पन्न हुआ तो उसे अपना ही पुत्र मान लिया और उसका नाम दलपत रक्खा। दुर्गावती का विवाह इस दलपत के साथ ही हुआ था अब दलपत की मृत्यु हुई तो उसका पुत्र वीर नारायण 5 वर्ष का था। रानी दुर्गावती ने आधार कायथ और मान ब्राह्मण की अनुमति से अपने पुत्र को राजा बनाया परन्तु वास्तविक सत्ता उसने अपने ही

हाथ में रक्खी। उसमें साहस एवं योग्यता की कोई कमी नहीं थी और अपनी दूरदर्शिता और योग्यता के द्वारा उसने बड़े-बड़े कार्य किये। उसने बाजबहादुर और मियावा लोगों के साथ बड़ी लड़ाइयां लड़ी और सदैव विजयी हुई। उसकी सेना में 2000 सवार थे और एक हजार हाथी थे। उस देश के राजाओं के कोष भी उसके हाथ में आ गये थे। वह तीर और बंदूक से बहुत अच्छा निशाना लगाती थी। निरन्तर शिकार किया करती थी, अपनी बन्दूक से जंगली पशुओं को मारा करती थी। जब कभी वह सुनती कि शेर दिखाई दिया है तो वह पानी पीने के लिये भी नहीं रुकती थी और उसे मार कर ही चैन लेती थी। हिन्दुस्तान में उसके युद्धों की और उसकी दावतों की अनेक कहानियां हैं। परंतु उसमें एक दुर्गुण भी था। वह चाटुकारों से घिरी रहती थी और उसको अपनी विजय पर बड़ा अभिमान हो गया था। इसलिये उसने बादशाह की अधीनता स्वीकार नहीं की थी।

जब आसफ खां ने पन्ना राज्य को जीत लिया तो दुर्गावती को अपने सैन्य बल साहस और योग्यता के कारण आसफ खां से कोई भय नहीं हुआ। आसफ खां चाहता था कि रानी दुर्गावती मित्रता कर ले, इस उद्देश्य से उसने रानी के राज्य में अपने गुप्तचर और अनुभवी व्यापारी भेजे और उसके आय व्यय का पूरा पता लगाया। जब उसने उसके विपुल धन का कोष और अपार सम्पत्ति का हाल सुना तो उसकी इच्छा हुई कि उसके राज्य पर आधिपत्य किया जाए। फिर उसने गोड़वाना राज्य के सीमा स्थित गांव को लूटना शुरू किया। अन्त में बादशाह के आदेश से उसने 10 हजार सवार और बहुत बड़ी प्यादा सेना खड़ी करके गढ़ा की विजय के लिये तैयारी की। शाही आदेश के अनुसार उस प्रदेश के बड़े और छोटे कितने ही जागीरदारों ने उसका साथ दिया। रानी को एकदम खबर मिली विजयी शाही सेना दमोह तक आ पहुंची है। तब उसका प्रमाद भंग हुआ और उसके सैनिक अपने कुटुम्बों को सम्भालने के लिये इधर-उधर चले गये। उसके पास केवल 500 आदमी रह गये। रानी साहस करके विजयी सेना का सामना करने के लिये चली और आगा पीछा न सोचकर उसने युद्ध का स्वागत किया। आधारं उसका प्रशासन चलाता था और उसका हितैषी था। उसने बतलाया कि सेना के बहुत से सैनिक भाग गये हैं और शाही सेना बहुत बड़ी है। रानी ने उत्तर दिया सैनिक लोग तुम्हारी मूर्खता के कारण भाग गये हैं। मैं वर्षों से इस देश पर राज्य कर रही हूं। मैं भागने का विचार कैसे कर सकती हूं। अपकीर्ति के साथ जीवित रहने से तो कीर्ति के साथ मर जाना अच्छा है। अकबर बादशाह यहां होता तो दूसरी बात थी। आसफ खां मेरे विषय मे क्या जानता है। मेरे लिये यही सर्वोत्तम है कि मैं वीरतापूर्वक लड़कर मर जाऊं! फिर वह विजयी सेना की ओर 4 कूच आगे बढ़ी। आसफ खां शीघ्रतापूर्वक प्रयाण करता हुआ जा रहा था, वह दमोह पर ठहर गया। रानी ने 2000 सेना खड़ी कर ली थी, उसके अधिकारियों ने मिलकर कहा युद्ध करना तो अच्छा कार्य है। परन्तु विवेक को छोड़ना साहस और दूरदर्शिता नहीं है। किसी सुरक्षित स्थान पर ठहर कर सेना एकत्र की जाए। इन शब्दों को सुनकर रानी गढ़ा के वन की ओर चली और गढ़ा के उत्तर के वन में पहुंच गयी, अन्त में गढ़ा के पूर्व में नरहा नामक स्थान पर जा पहुंची। इस स्थान में जाना और वहां से निकलना बड़ा कठिन है। चारों ओर ऊंचे-ऊंचे पहाड़ हैं सामने गौर नामक एक नदी है और दूसरी एक और नर्वदा नामक भयंकर नदी है। नदी के प्रवाह से

गहरे रूणे बने हुए हैं जिनके कारण इस गांव तक पहुंचने का मार्ग बड़ा तंग एवं डरावना है। रानी के आगमन की खबर सुनकर आसफ खां दमोह में ठहरा हुआ था। तब उसको रानी की कोई खबर नहीं मिली थी। उसने अपने आदमी भेजे परन्तु उस प्रदेश की दुर्गमता के कारण कोई खबर नहीं मिल सकी। अन्त में उसने गढ़ा की ओर प्रयाण किया और गांव को लूट कर अपने अधीन करने लगा। जब उसको रानी की खबर मिली तो गढ़ा में कुछ सेना छोड़ कर आसफ खां ने उसका पीछा किया। उसकी सेना के आगमन की खबर पाकर रानी ने अपने अधिकारियों की एक समिति बुलाई और कहा यदि आप लोगों की सेना खड़ी हो जाये तब तक के लिये किसी अन्य स्थान पर जाना चाहते हैं तो जाये परन्तु मैं तो लड़ना चाहती हूं। जो जाना चाहें उन्हें छुट्टी है, मेरे सामने कोई तीसरा विकल्प नहीं है। या तो मैं मर जाऊंगी या मुझे विजय प्राप्त होगी अब रानी के पास 5000 सैनिक एकत्र हो गये थे, उन्होंने युद्ध करने का निश्चय किया। अगले दिन खबर आई कि नजीर मुहम्मद और आक मुहम्मद ने एक रूणे के सिरे पर अधिकार कर लिया है। यहां से आगे मार्ग जाता था। इस लड़ाई में हाथियों के फौजदार अर्जुनदास वेश ने लड़ते-लड़ते वीरगति प्राप्त की थी। रानी ने कवच धारण किया। अपने सिर पर शिरस्त्राण रक्खा और एक हाथी पर सवार होकर रणोत्सुक वीरों का सामना करने के लिये वह शनैःशनैः आगे बढ़ी। उसने अपने सैनिकों से कहा, जल्दी मत करो शत्रु को घाटी में घुसने दो। तब हम उसके सब ओर से ऊपर टूट पडेंगे। रानी ने जैसा सोचा था वैसा ही हुआ। दोनों पक्ष के कितने ही आदमी धराशायी हो गये और 300 मुगल शहीद हो गये। रानी विजयी होकर भागने वालों का पीछा करने लगी और रुणें में से बाहर निकली। सायं काल उसने अपने मुख्य लोगों को बुला कर पूछा कि अब उनकी क्या सलाह है। सबने अपनी बुद्धि और साहस के अनुसार उत्तर दिया तो रानी ने कहा कि हम इसी रात को हमला करके शत्रु को समाप्त कर दें अन्यथा आसफ खां स्वयं आकर घाटी पर कब्जा कर लेगा और तोपों के द्वारा फिर उसकी रक्षा करेगा, जो काम अभी सुकर है वह दुष्कर हो जायेगा। रानी के इस प्रस्ताव से कोई भी सरदार सहमत नहीं हुआ, अतः उसको बहुमत मानना पड़ा और जिस मार्ग से वह आई थी उसी मार्ग से वापस हटी। अपने स्थान पर पहुंच कर फिर उसने अपने स्वामिभक्त अनुचरों से रात में आक्रमण करने की बात की। रानी के बराबर साहस किसी में नहीं था, जब प्रातःकाल हुआ तो जिसका उसने अनुमान किया था वही हुआ। आसफ खां ने घाटी के सिरे पर आकर तोपें जमा दी और विजयी सेना ने घाटी में प्रवेश किया। रानी एक विशाल और शीघ्रगामी हाथी पर सवार हुई और बाहर निकली। इस हाथी का नाम सारमान था। रानी ने अपने सेना का व्यूह बनाकर और हाथियों को यथास्थान विभक्त करके युद्ध की तैयारी की। युद्ध आरम्भ हुआ, पहले वाणों की वर्षा हुई फिर बन्दूकें चली और फिर वीर लोग तलवारों और खंजरों से लड़ने लगे। रानी का पुत्र वीरशाह वीरतापूर्वक लड़ा और शूरता के बड़े-बड़े काम किये। तीसरे पहर तक युद्ध होता रहा। यदि इसका पूरा वर्णन किया जायेगा तो लम्बा हो जायेगा। राजा वीर शाह ने तीन बार शाही सेना को पीछे हटा दिया परन्तु तीसरे आक्रमण के समय वह आहत हो गया था। यह खबर सुनकर रानी ने अपने विश्वस्त सैनिकों को आदेश दिया कि उसको किसी सुरक्षित स्थान पर पहुंचा दिया जाये।

उन्होंने आदेश का पालन करके उसको एक एकान्त स्थान पर पहुंचा दिया। इस घटना के कारण बहुत से सैनिक रणभूमि छोड़ गये और रानी के पास केवल 300 सैनिक रह गये परन्तु रानी के निश्चय और साहस में किसी प्रकार की कमी नहीं आई। वह अपने वीर अनुचरों सहित जोर से लड़ती रही। फिर उसके दायीं कनपटी में एक तीर लगा जो उसने निकाल कर फेंक दिया। परन्तु उसका एक हिस्सा घाव में रह गया। फिर उसकी गरदन में दूसरा तीर लगा। वह भी उसने साहस के साथ निकाल कर फेंक दिया। परन्तु उसकी विपुल वेदना के कारण वह अचेत हो गई। जब उसको चेतना आई तो उसने अपने सेवक आधार से, जो बखीला जाति का था और बड़ा साहसी ओर स्वामिभक्त था और जो उसके हाथी का महावत था, कहा मैंने तुमको शिक्षा देने में सदैव परिश्रम किया है और मैं समझती रही हूं कि तुम एक दिन अच्छी सेवा करोगे। वह दिन आज आ गया है, मुझे शत्रु ने युद्ध में दबा लिया है। ईश्वर करे कि मेरा नाम और यश न डूबे और मैं शत्रु के हाथ में न पड़ूं इसलिये तुम स्वामिभक्त सेवक की भांति इस तीक्ष्ण खंजर के द्वारा मुझे समाप्त कर दो। ऐसे काम के लिये मेरा हाथ कैसे उठ सकता है। जिस हाथ ने आपसे बख्शीशें ली है वह कुकृत्य कैसे कर सकता है कि इस घातक रणभूमि से मैं आपको दूर ले जाऊं। मुझे इस शीघ्रगामी हाथी पर पूरा विश्वास है। जब रानी ने यह शब्द सुने और उसके हृदय की दुर्बलता देखी तो क्रोध करके कहा, क्या तुम इस लज्जाजनक कार्य को मेरे लिये अच्छा समझते हो ? तब उसने अपना खंजर निकाला और बड़े पुरुषार्थ के साथ अपने पर वार किया और वीरतापूर्वक अपने प्राणों का अन्त कर दिया। उसके कई स्वामिभक्त सेवकों ने भी वहीं वीरगति प्राप्त की। शाही सेना की बड़ी विजय हुई। 2000 हाथी और बहुत सा लूट का माल शाही सेवकों के हाथ में आया। साम्राज्य में एक लम्बा चौड़ा प्रदेश शामिल कर लिया गया। रानी ने 16 वर्ष राज्य किया था।

रानी का शानदार शासन समाप्त हो गया। दो मास पश्चात जब आसफ खां का चित्त मियाना देश के विषय में शान्त हो गया तो वह चौरागढ़ की विजय के लिये आगे बढ़ा। इस दुर्ग में बहुत साधन और दुर्लभ रत्न गड़े हुए थे। इसके संग्रह के लिये पिछले राजाओं ने वर्षों तक प्रयास किया था। इस धन की अभिलाषा से वीर शाही सैनिकों ने अपनी जान से हाथ धोकर आसफ खां का अनुसरण किया। रानी का पुत्र जो रण स्थल से हट कर दुर्ग में छिपा हुआ था अब बाहर निकला और शाही सेना से लड़ा। परन्तु दुर्ग पर विजय प्राप्त करने में थोड़ा ही समय लगा। राजा वीर पुरुष की भांति मारा गया। उसने भोज कायथ ओर मिया भिखारी रूमी को जौहर की व्यवस्था करने के लिये नियुक्त किया था। भारतीय राजाओं में यह प्रथा है कि ऐसी स्थिति में काष्ट रूई घास और घी का एक स्थान पर संग्रह किया जाता है और स्त्रियों को उनकी इच्छा से या अनिच्छा से उसमें जला दिया जाता है। यह जौहर कहलाता है। इन दोनों स्वामिभक्त नौकरों ने सम्मान की रक्षा करने के लिये यह सेवा की। जो आत्म दुर्बलता के कारण जलने से रुकी उनको उक्त भोज ने जला दिया। एक विचित्र बात हुई। जौहर के चार दिन बाद जब दरवाजा खोला गया तो दो स्त्रियां जीवित मिली। यह लकड़ियों के ढेर के पीछे जीवित रह गई थीं। इनमें से एक रानी की बहिन कमलावती थी और दूसरी राजा पुरागढ़ा की पुत्री थी जिसका वीर शाह से विवाह

होना था परन्तु अभी नहीं हुआ था। इन दोनों को बादशाह के अन्त:पुर में प्रविष्ट कर दिया गया।

दुर्ग की विजय के बाद आसफ खां के हाथ में अपार सोना व चांदी आई। सोने के सिक्के और पासे, बर्तन, रत्न, मोती, मूर्तियां, जो रत्नों से जड़ी हुई थीं और सोने की पशु प्रतिमाएं और अन्य दुर्लभ वस्तुएं उसके हाथ पड़ी। मैंने विश्वसनीय लोगों से सुना है कि 100 बड़े पात्र अलाउद्दीन के समय की अशर्फियों से भरे हुए थे ओर कितनी ही अन्य ऐसी वस्तुएं थी जिनकी गणना नहीं की जा सकती। जब आसफ खां को यह प्रभूत धन राशि प्राप्त हो गई तो उसका आत्म-विश्वास इतना बढ़ गया था कि उसकी कल्पना नहीं की जा सकती। उसने औचित्य का मार्ग छोड़ दिया। दुर्लभ रत्न बादशाह के पास नहीं भेजे और एक हजार हाथियों में से केवल 200 बादशाह को अर्पण किये। सारी दुर्लभ वस्तुएं उसने अपने पास रक्खी और फिर करा और गढ़ा का शासन करते हुए वह प्रमाद में अपने दिन व्यतीत करने लगा। बादशाह ने इन बातों पर ध्यान नहीं दिया। परन्तु जब तीसरी बार उसने अली कुली खां जमान को दण्ड देने के लिये तीसरा अभियान किया तो आसफ खां को बुलाया। आसफ खां ने आदेश का पालन करके बादशाह के दरबार के द्वार की चौखट का चुम्बन किया। जब शाही सेना जौनपुर में ठहरी हुई थी तो आसफ खां को सलाम करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इसका पूरा वर्णन यथा स्थान किया जायेगा।

***

प्रकरण 53

ख्वाजा मुअज्जम के आचरण पर बादशाह का क्रोध

ख्वाजा मुअज्जम मीरियम मकानी (बादशाह हुमायूं की पत्नी) का सौतेला भाई था, इसलिये उसको बड़ा अभिमान था। कई बार उसने व्यवहार में अति की। जब बादशाह बाबर जीवित था तो उसको अपनी पत्नी का बड़ा लिहाज था, इसलिए वह ख्वाजा मुअज्जम के अपराधों की उपेक्षा कर दिया करता था। जिस वर्ष बदख्शां पर अभियान किया गया तो ख्वाजा जहां ने बादशाह के दीवान ख्वाजा रसीदी पर आक्रमण किया और तलवार के बल से उसका रक्तपात कर डाला। इस भयंकर अपराध के बाद वह भाग कर काबुल आ गया, फिर बादशाह के निकट मित्रों के बीच से उसको दरबार में आने की इजाजत हो गई परन्तु वह दुराचरण की आवृति करने लगा। अन्त में बादशाह ने उसको निकाल दिया और वह हजाज चला गया। वह एक के बाद दूसरी दुष्टता करता रहा और फिर भारत लौट आया और पुनः अपने दुर्गुण प्रकट करने लगा। एक दिन जब बादशाह अकबर के दरबार में मंत्री

लोग और अधिकारी लोग बैठे हुए थे तो उसने मिर्जा अब्दुल्ला मुगल पर अकारण ही आक्रमण किया। अब्दुल्ला मुगल की गणना बड़े-बड़े अमीरों में की जाती थी। ख्वाजा मुअज्जम उसकी ओर दौड़ा, उसको लातें मारी घूसें लगाये। एक दूसरे अवसर पर उसने बैराम खां के प्रति बुरा व्यवहार किया था और अपने खंजर पर हाथ डाला था। उसको पुनः साम्राज्य से निकाल दिया गया तो वह गुजरात चला गया। वहां अपना और दूसरों का अहित करने में वह अपने दिन व्यतीत करने लगा। अपने दुराचरण और प्रतिकूल परिस्थिति के कारण वह वहां नहीं टिक सका ओर अकबर के दरबार में आ गया। जब आगरा अकबर की राजधानी बनी तो उस पर कृपा की कई और उसको ऊंचा पद प्रदान किया गया, परन्तु वह स्वभाव से ही दुष्ट था। इसलिये उसने अपने पिछले व्यवहार की उपेक्षा की और सैकड़ों दुस्साहस के काम किये। बैराम खां चाहता था कि उसको वली बेग के सुपुर्द कर दिया जाये जो उसको गुजरात पहुंचा दे। परन्तु इसी बीच में बैराम खां स्वयम् पदच्युत हो गया और ख्वाजा शाही खानदान से सम्बन्धित था इसलिये उस पर कृपा होती रही, परन्तु वह अपनी ही दुष्टता में फंस गया और सैकड़ों अपराध करता रहा। बेगम फातिमा बादशाह बाबर की उर्दू-बेगी थी और अब अकबर के अन्तःपुर में उसका ऊंचा स्थान था। उसकी पुत्री जहरा आगा ख्वाजा के अन्तःपुर में थी और उसको पशुता और दुष्टता के कारण सदैव दुःखी रहा करती थी। वह एक दिन आई और उसने निवेदन किया कि ख्वाजा जहां अपने परगने पर जा रहा है और उसकी पुत्री को भी अपने साथ ले जा रहा है। ख्वाजा दुष्ट है इसलिये उस निरपराध लड़की का वध करने की बात सोच रहा है। बेगम फातिमा ने बार-बार कहा कि बादशाह की न्यायशीलता से डर कर ख्वाजा मुअज्जम राजधानी में मेरी पुत्री का वध नहीं कर सकता, इसलिए उसको अपनी जागीर पर ले जा रहा है। बादशाह को इस पुरानी सेविका के दुःख पर दया आई और उसके दुःखी मन को शान्त किया। उसने कहा, मैं अभी शिकार पर जा रहा हूं तुम्हारे खातिर ख्वाजा के मकान के पास से नदी पार करूंगा। तब ख्वाजा सलाम करने आयेगा। उस समय मैं उसको सलाह दूंगा और तुम्हारी पुत्री का वध करने से उसको रोकूंगा। कुछ समय बाद बादशाह दुर्ग से निकला और नाव के द्वारा उसने नदी पार की। तब कुछ विशेष सेवकों को साथ लेकर वह ख्वाजा के कमान के पास होकर निकला। बादशाह के साथ दस्तम खां, ताहीर मुहम्मद खां आदि लोग थे। ख्वाजा का स्वभाव ऐसा था कि वह किसी का कहना नहीं मानता था इसलिये मीर फरारत और पेशरू खां को आगे भेजकर उससे कहलाया कि बादशाह आ रहा है ओर वह सन्मार्ग का अनुसरण करे। इन दोनों सरदारों के बाद दस्तम खां और मकबाल खां को भेजा कि यदि ख्वाजा पागल की भांति व्यवहार करे तो ताहीर मुहम्मद खां को सहायता दी जाये। जब इस दुर्दम्य उन्मत्त व्यक्ति ने ताहीर मुहम्मद खां और पेशरू खां से सुना कि बादशाह ने इस स्थान पर नदी पार की है और उसको बुलाया है तो वह आग बबूला हो गया और बोला मैं बादशाह के सामने नहीं जाऊंगा। तब वह क्रुद्ध होकर जनान खाने में पहुंचा और खंजर निकाल कर उसने जोहरा आगा को मार डाला। वह अभी हाल गुसलखाने में से निकल पर कपड़े पहन रही थी। इस प्रकार ख्वाजा ने आत्म विनाश के साधन जुटाये। तब उसने खिड़की में से अपना मुंह निकाला और रक्त से सना हुआ खंजर दस्तम खां की ओर

फेंक कर कहा, मैंने उसको मार डाला है जाओ कह दो। दस्तम खां उस खंजर को लेकर बादशाह के पास पहुंचा। जब बादशाह ने इस हत्याकाण्ड की खबर सुनी तो उसका क्रोध उबल पड़ा और उसने ख्वाजा के मकान में प्रवेश किया। उस पागल ने अपनी कमर में तलवार बांधी और उसकी मूठ पर हाथ रखे हुये बादशाह के सामने आया। बादशाह ने पूछा ''यह कैसा बर्ताव है। तुम्हारा हाथ तलवार की मूठ पर है। यदि तुमने इसको निकालने का साहस किया तो मैं तुम्हारे सिर पर ऐसा वार करूंगा कि तुम्हारे प्राण चल बसेंगे।'' जब उस पागल ने बादशाह का प्रभाव देखा तो उसके हाथ पांव कांपने लगे और वह झुक गया। उपस्थित लोगों ने उसको पकड़ लिया। एक गुजराती, तलवार लिये हुए ख्वाजा के पीछे खड़ा हुआ था। बादशाह ने उसका इरादा भांप लिया और कतलग कंदम खां को आदेश दिया कि उस पर वार करें। कतलग ने ऐसा वार किया कि उसका सिर उसके पैरों में आ गिरा। कुछ क्षण के लिये उसका धड़ खड़ा रहा और उसकी गर्दन की शिराओं में से रक्त के फव्वारे निकलते रहे। बादशाह ने ख्वाजा से पूछा कि तुमने उस निरपराध बेचारी स्त्री का वध किस अपराध के लिये किया है। तब उस पर पिशाच ने पागल की सी बातें की तो लोगों ने उसको लातें और घूसें मार कर चुप कर दिया। ये उसको बाल पकड़ कर लातें मारते हुए नदी पर ले आये। उसके नौकरों को भी बांधकर नदी में डुबों दिया। ख्वाजा मुअज्जम को भी नदी में डाल दिया, परन्तु वह प्राणों से चिपका रहा ओर उसने पागलपन की बातें करना बन्द नहीं किया। फिर उसको मकबील खां के सुपुर्द कर दिया जो उसको ग्वालियर ले गया। वहां उसको कारावास में डाल दिया गया। कारावास में उसकी मस्तिष्क रोग हो गया जिससे उसकी मृत्यु हो गई। दुर्ग के अन्दर एक पहाड़ी है जहां उसको दफना दिया गया फिर उसके शव को दिल्ली भेज दिया गया।

पटना के फतह खां पर अली कुली खां जमान की विजय

फतह खां, उसका भाई हसन खां, मल्लू खां और अन्य बहुत से लोगों ने रोहतास के दुर्ग से निकल कर बिहार पर और कई जागीरों पर जो खान जमान की थी अधिकार कर लिया। उन्होंने सलिम खां के पुत्र आवाज खां को गद्दी पर बिठाकर विद्रोह शुरू कर दिया। तब खान जमा और बहादुर खां, मजनू खां और इब्राहीम खां इस विद्रोह की ज्वालाओं को शान्त करने के लिये चले। अफगान लोगों की सेना बहुत बड़ी थी। इसलिए खान जमान ने युद्ध करना उचित नहीं समझा और सोन नदी के तट पर एक दुर्ग में शरण ली। तब मौलाना अलाउद्दीन बारी, मुल्ला अब्दुल्ला सुल्तानपुरी, शिहाबुद्दीन खां और वजीर खां शाही दरबार से आये। कारण यह था कि बादशाह ने यह निश्चय कर लिया था कि खान जमान को सत् परामर्श देकर और कृपा करके स्वामिभक्ति के मार्ग पर अचल रखा जाये। बंगाल के हाकीम सुलेमान करारानी पर भी काफी कृपा की गई। वह खान जमान के साथ था और उसने बादशाह के नाम का खुत्वा पढ़वाया था। यदि उचित समझा जाये तो सुलेमान को भी दरबार में लाना था। इन राजदूतों ने दुर्ग में आकर खानजमा को बादशाह की कृपा की खबर सुनाई। खानजमा उस समय व्याकुल था, इन लोगों ने उसको प्रोत्साहन दिया। एक दिन जब वे खानजमा के सन्मुख बैठे हुए थे तो काले दिल वाले अफगान

सुसज्जित सेना बहुत से जंगी हाथियों के साथ दुर्ग की ओर आये। उस समय खानजमा सेना इकट्ठी कर रहा था। जब वे लोग आए तो उन्होंने खानजमा के आदमियों को पीछे धकेल दिया। खानजमा की सारी सेना भाग गई और अफगानों ने उसके डेरों को लूटना शुरू कर दिया।

खानजमा के पास गिनती के आदमी थे। वे दुर्ग के अन्दर बैठा हुआ विचार कर रहा था कि लड़ा जाये या पीछे हटा जाये। हसन पाटनी बख्त बुलन्द नामक हाथी पर बैठा हुआ था। वह कुछ सैनिकों के साथ आगे बढ़ा। तब लोग भाग गये। खानजमा ने और उन थोड़े से लोगों ने जो उसके पास रह गये थे, निश्चय कर लिया। वह एक बुर्ज पर गया और वहां एक तोप रखी हुई थी। वह उसने चलाई उसका गोला हाथी के सिर पर लगा जिससे हाथी मर गया और शत्रु की सेना तितर-बितर हो गई। फिर एक हाथी जो बैराम खां ने बहादुर खां को दिया था और जो इस समय मस्त हो गया था, खानजमा की सेना पर छोड़ दिया गया। उसने अफगानों के एक हाथी को मार दिया तो बड़ा कोलाहल मचा। अफगानों ने समझा खानजमा की विजय हो गई इसलिये वे भाग गये। यह खबर सुनकर खानजमा के भागते हुए सैनिक वापस मुड़ गये और अफगानों पर आक्रमण करने लगे। उन्होंने बहुत-सा माल और अनेक हाथी लूट लिये। इतनी बड़ी विजय बादशाह के सौभाग्य से प्राप्त हुई। इसके बाद खानजमा वापस लौटा और जौनपुर की ओर चला गया और उसने राजपूतों को सम्मानपूर्वक वापस लौटा दिया।

अमीर मूर्तजा का आगमन

बादशाह अकबर का दरबार संसार के विद्वानों का केन्द्र बन गया था। वहां जो भी विद्वान आता था उसको सम्मान मिलता था। सैयद अमीर मूर्तजा इन विद्वानों में एक था। वह विद्वान जुर्जाजी कुटुम्ब का आदमी था। जुर्जानी कुटु म्ब में प्राचीन विज्ञान की विद्या थी। उसने सब तीर्थ स्थानों की यात्रा की थी और अब वह अकबर के आश्रय में आ गया था। वह अकबर की सभाओं में उपस्थित होने लगा और उसको शुभ माना जाने लगा। बादशाह ने इस मीर का आगमन अपने लिए सम्मान का विषय समझा और उसको अनेक भेंटे और बख्सीसें दीं।

***

प्रकरण 54

मालवा पर अभियान, हाथियों का शिकार, अब्दुल्ला खां पर चढ़ाई और राजधानी को वापसी

बादशाह ने सुना कि अब्दुल्ला खां उजबेग ने मालवा में विद्रोह कर दिया है तो बादशाह ने हाथियों के शिकार के बहाने से मालवा की ओर प्रयाण किया। (2 जुलाई 1564) इस समय घोर वर्षा हो रही थी और जिधर देखो उधर पानी ही पानी था फिर शाही सेना प्रयाण करती हुई नरवर और सीपरी जा पहुंची जहां के जंगलों में हाथी थे। जब शाही शिविर चम्बल पर पहुंचा तो देखा कि भारी वर्षा के कारण नदी में बाढ़ आ रही है। अत: यह आवश्यक था कि वहां कुछ सप्ताह ठहरा जाये जिससे सारी सेना नावों द्वारा नदी पार कर ले। जब हाथी नदी को पार करने लगे तो उनमें से एक हाथी जिसका नाम लकना था, रह गया फिर सेना ने ग्वालियर के पास पड़ाव डाला और वहां से नरवर पहुंचे। हाथियों का वन निकट ही था इसलिये उनका शिकार करने के लिये व्यवस्था की गई और शाही अनुचरों को कई दलों में विभक्त किया गया। हर एक दल में एक बड़ा अधिकारी था और उसके पास कई पालतू हाथी थे। प्रत्येक दल को ऐसे दृढ़ रस्से दिये गये थे कि जो पर्वताकार हाथियों को भी बांधकर खींच सके। तब आदेश दिया गया कि जब जंगली हाथी मिले तो पालतू हाथी उनका पांछा करें। जिससे जंगली हाथी थक कर चलने में अशक्त हो जाये। तब पालतू हाथी पर बैठा हुआ महावत, जंगली हाथी की गर्दन में रस्सा डाले और दूसरा रस्सा पालतू हाथी की गर्दन में डाले। इस प्रकार पालतू हाथी के द्वारा जंगली हाथी को घसीट कर लाया जाये। प्रतिदिन जंगली हाथी को वश में करने का प्रयास किया जाय और उसको चारा डाला जाये। ये आदमी उस पर चढ़े। इस प्रकार थोड़े ही अर्से में उसको पालतू कर लिया जाये। जंगली पशु को पालने की विधि यही है कि उसके प्रति नरमी दिखाई जाये और उसको घास, अन्न, जल, दिखाया जाये। हाथियों को पकड़ने का यही सर्वोत्तम उपाय मालूम होता है। जंगली हाथी का आकार बहुत बड़ा होता है और उसमें बड़ा बल होता है। उसको अधिक शक्तिशाली पालतू हाथी ही दबा सकते हैं।

बादशाह ने नरवर के वन में हाथियों का पीछा करके शिकार की इस विधि का उपयोग किया और प्रत्येक दिशा में अपना दल भेजा। शिकार से बादशाह का बड़ा मनो-विनोद हुआ। उस दिन कुछ दूरी पर एक हथनी दिखाई दी तो उसकी ओर हाथी दौड़ाये और उसको थकाया और एक दूसरे हाथी से उसको बांध दिया। ऐसा करने में मुल्ला किताबदार का पुत्र आदम को एक हाथी ने कुचल कर मार डाला। अगले दिन ईद कुर्बान का त्योहार था। इसलिये बादशाह शिकार करने केलिए गया। उस दिन हथनियों का एक झुण्ड दिखाई दिया जिसके साथ दो-तीन नर हाथी भी थे। बादशाह ने नौ हाथी पकड़वा लिये। तीसरे दिन घोड़े पर सवार होकर उस सघन वन में घूमा तो उसके सामने से 70

हाथियों का एक झुण्ड निकला। तब उसके आदेश से इन हाथियों को गहरे वन में घुसा दिया और हर एक का पैर एक पेड़ से बांध दिया और प्रत्येक हाथी को देखते रहने के लिये एक आदमी नियुक्त कर दिया। जंगल में ही बादशाह के लिए बढ़इयों ने एक तख्त बनाया। अगले दिन बादशाह और उसके दरबारी उस पर बैठे और सबने दरबार खां का गाना सुना। इसी बीच में रस्सों से बंधे हाथी आये। जो हाथी बदमाश थे, उसको दो शाही हाथियों के बीच में बांध दिया गया। तब कुछ और हाथियों को पकड़कर बादशाह ने मालवा की ओर प्रयाण किया। वर्षा के कारण प्रयाण बड़ा कठिन था। हाथियों को और ऊटों को ठहरना पड़ता था। अन्त में सैकड़ों विघ्नों को पार करके शाही सेना रनाड़ पहुंची और वहाँ डेरे लगाये गये। भारी वर्षा हो रही थी इसलिए सेना वहाँ दो तीन दिन ठहरी वहाँ से फिर सारंगपुर की ओर प्रयाण किया। रास्ते में गहरा कीचड़ था। जिसमें घोड़े और ऊंट फंस-फंस कर निकलते थे। बहुत से डेरे पीछे हट गये। बादशाह का खानखाना और अजीज कोकलदास के डेरे और दो तीन अन्य अधिकारियों के डेरे आगे पहुंच गये। अतः सब एक दिन के लिये ठहरे दूसरे दिन शाही ध्वज मांडू की ओर दिखाई देने लगे। पांच मंजिल के बाद खीराय कस्बे के मैदान में पहुंची। इसमें ताजा और हरा घास था इसलिये जानवरों को बड़ा सुख हुआ।

मांडू पर प्रयाण

बादशाह ने शिकार छोड़कर मांडू की ओर प्रयाण किया। जहाँ विद्रोही का निवास था। मार्ग में असरफ खां और इतिमाद खां को आगे भेजा गया कि वे अब्दुल्ला खां को जो अपने दुष्कर्मों के कारण भयभीत है यह खबर दे कि बादशाह की उस पर कृपा है और उसको अधीनता प्रकट करवाने के लिये दरबार में ले आये। अब्दुल्ला खां खीरार से सारंगपुर चला गया जो मालवा का प्रधान नगर है। पानी और कीचड़ को बादशाह ने एक ही दिन में पार कर लिया। सारंगपुर की सीमा पर मुहम्मद कासिम खां निशापुरी बादशाह से मिलने के लिये आया। वहाँ का शासन इसी के सुपुर्द था। उसने बादशाह से निवेदन किया कि मेरे मकान पर उतरें और वहाँ बादशाह को सात सौ घोड़े और खच्चर नजर किये। जो बादशाह ने अफसरों और सेवकों को बांट दिये। प्रातःकाल बादशाह उज्जैन की ओर चला जो प्राचीन काल में मालवा के राजाओं की राजधानी थी। असरफ खां और इतिमाद खां ने अब्दुल्ला खां के पास से लौट कर उसकी स्थिति से बादशाह को सूचित किया। इन लोगों ने भरसक प्रयत्न किया था परन्तु अब्दुल्ला खां के मिथ्याचारी हृदय पर उनका किंचित भी प्रभाव नहीं हुआ। उसने अपना कुटुम्ब दुर्ग से बाहर भेज दिया और फिर वह भी उनके पीछे चला गया। राजदूतों को इधर उधर की बातें करके वापस लौटा दिया। उसने कहलाया कि उसके धन और जन की क्षति नहीं होनी चाहिये। मांडू का इलाका उसी के पास रहना चाहिये। तीर्गरी वर्दी, खान कुली और इन्सान बख्शी को उसके साथ आने की इजाजत होनी चाहिये। मुनीम खां खानखाना ने बादशाह की दया का भरोसा करके अपने अपराधों की क्षमा मांगी जो बादशाह ने प्रदान की। उसने इतिमाद खां और दरबार खां को पुनः उसके पास भेजा।

जब अकबर बादशाह धार कस्बे में था तो एक स्त्री ने आकर शिकायत की कि अब्दुल्ला खां के करबेग मुहम्मद हसन ने मेरी अल्पवयस्का लड़की पर बड़ी नृशंसता की है और मेरे घर को लूट लिया है। बादशाह ने कहा कि न्याय की प्रतीक्षा करो उसको शीघ्र ही दण्ड दिया जायगा। इस नगर में बादशाह को यह भी खबर मिली कि जब उसके अभियान का समाचार अब्दुल्ला खां को मिला तो वह भयभीत होकर भाग गया और मांडू से लिवानी पहुंच गया। बादशाह ने मांडू से रवाना होकर उसका पीछा किया। मीर मुअज्जूल मुल्क, मुकीब खां, मुहम्मद कासिम आदि को आगे भेजा गया कि वे शीघ्रता से प्रयाण करके अब्दुल्ला खां को पकड़ लें। बादशाह भी सायंकाल लिवानी ग्राम पर पहुंच गया अब्दुल्ला खां वहाँ से पहले ही चला गया था। बादशाह ने रात अभी गांव में व्यतीत की। इसी बीच में इतिमाद खां और दरबार खां जिनको इसलिये भेजा गया था कि वे पथभ्रष्ट अब्दुल्ला खां को सन्मार्ग पर लावें, अब उनसे कहा गया कि अब्दुल्ला खां को सान्त्वना देकर ले आये। अगले दिन प्रातःकाल बादशाह लिवानी से आगे बढ़ा। मार्ग में ही राजदूतों ने वापस आकर कहा कि अब्दुल्ला पर उनकी सलाह का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। अब्दुल्ला खां ने अपने परिवार को आगे भेज दिया था और स्वयं उधर ठहर गया था। मार्ग उबड़ खाबड़ था तो भी मुहम्मद कासिम खां निशापुरी, खान आलम शाह, कुली खां आदि साहसपूर्वक आगे बढ़े और शत्रु पर बाणों की वर्षा की। अब्दुल्ला ने पीछे मुड़ कर लड़ना शुरू किया और अपने साथियों से कहा यह विपुल सेना लम्बी कूच कर चूकी है, थोड़े से लोग यहाँ पहुंचे हैं, हममें बल है हम वीरतापूर्वक आक्रमण करें। इस दुर्भावना से उसने जोरदार युद्ध किया। शाही सेना के लोग बड़े साहस और शौर्य के साथ लड़े। शाही झंडे आगे बढ़े। उस दिन खाकसार सुल्तान ने बादशाह को सुझाव दिया कि अभियान छोड़ दिया जाय तो बादशाह क्रोध से उबल पड़ा और उस व्यक्ति पर तलवार का वार किया परन्तु वह घोड़े के नीचे छिप गया। तो भी बादशाह ने घोड़े से नीचे उतर कर अपनी तलवार चलाई। यह तलवार नहीं मारती खांडा था इसलिये वह मरा नहीं। और बादशाह ने भी उसको गिरता हुआ देख कर छोड़ दिया।

फिर बादशाह स्वयं रणभूमि में पहुंचा और उस पर बाणों की वर्षा होने लगी। परन्तु ईश्वर ने उसकी रक्षा की। बादशाह के दायीं ओर मुनीम खां और बायीं ओर इतिमाद खां था। लड़ाई हो ही रही थी कि बादशाह ने विजय के बाजे बजवा दिये और खानखाना से कहा अब विलम्ब नहीं करना चाहिये। शत्रु पर आक्रमण कर देना चाहिये। तब बादशाह आगे बढ़ने ही वाला था कि खानखाना बोला, उसका विचार तो अच्छा है परन्तु यह अकेले आगे बढ़ने का समय नहीं है। हम सब स्वामिभक्त सेवक भी आक्रमण करेंगे। बादशाह को क्रोध आया और वह आगे बढ़ने ही वाला था कि इतिमाद खां ने उसके घोड़े की लगाम पकड़ ली तथापि आगे बढ़ा, तब शत्रु के पैर उखड़ गये और दिल दहल गया। अब्दुल्ला खां के कुछ लोग मारे गये और बहुत-से पकड़ लिये गये। बादशाह को विजय प्राप्त हो गई। उसके साथ केवल तीन सौ आदमी जिनमें मुनीम खां खानखाना मिर्जा अजीज कोकलतास, सैफ खां कोकलताश, मुकीम खां, राजा टोडरमल आदि थे। शत्रु के पास 1000 सवार थे तथापि बादशाह को विजय प्राप्त हुई।

विजय-प्राप्ति के बाद बादशाह उस रात वहीं ठहरा और कासिम खां निशापुरी के नेतृत्व में कुछ अधिकारियों को विद्रोही का पीछा करने को भेजा। भारी वर्षा के कारण वे लोग 4, 5 कोस से अधिक नहीं जा सके। प्रात:काल बादशाह ने प्रयाण किया और कुछ आदमियों को आगे भेज कर अग्रदल से कहलाया कि जैसे-तैसे विद्रोही से लड़ाई लड़ी जाये। 7 अगस्त, 1564 को शाही ध्वज अली नामक स्थान पर जा पहुंचा। हकीम ऐन उलमुल्क अली के राजा से परिचित था। वह राजा को ले आया जो शाही सेना में सम्मिलित हो गया। जब एक पहर रात रही तो बादशाह घोड़े पर सवार हुआ। उस समय बड़ी गर्मी थी। इसलिये बादशाह ने वृक्षों के नीचे कुछ आराम किया और खुशखबर खां को आगे भेजा कि अग्रदल की खबर लेकर आये। खुशखबर खां विजय की खबर लेकर आया। बादशाह अभी उसी स्थान पर ठहरा हुआ था।

खबर यह थी कि उधर के जमींदारों ने शाही सेना को सहायता दी और अच्छी सेवा की। शाही सेना एक घाटी के समीप अब्दुल्ला खां के शिविर पर टूट पड़ी। इस घाटी से चंपानेर दिखाई देता था। अब्दुल्ला खां अपनी स्त्रियों को जंगल में छोड़ कर अपने पुत्र के साथ भाग गया। शाही अफसरों ने उसकी सम्पत्ति स्त्रियों और हाथियों को घेर लिया और उसी मंजिल पर विश्राम किया। मीर मुइज्जुलमुल्क और अन्य अफसरों ने विद्रोहियों का पीछा किया और शीघ्रतापूर्वक आगे बढ़कर उन्हें जा दबाया। मीर मुइज्जुलमुल्क आहत हो गया और विद्रोही वहाँ से अधमरा होकर भाग गया और गुजरात की सीमा पर पहुंच गया। गुजरात में युद्ध करने का आदेश नहीं था इसलिये सेना वहीं ठहर गई। यह खबर सुनकर बादशाह ने ईश्वर को धन्यवाद दिया। शाही अधिकारियों ने लूट का माल, स्त्रियां, हाथी, घोड़े, रुपया और सामान बादशाह को दिखाया। इनमें आप रूप और गजगजाहान नामक दो हाथी अकबर को बड़े पसन्द आये।

ईश्वर को धन्यवाद देने के पश्चात् बादशाह ने मांडू की ओर वापस लौटने के लिये नौबतें बजवाईं। तीन दिन प्रयाण करके 10 अगस्त, 1564 को वह मांडू दुर्ग के सुख में पहुंच गया। वहाँ से अपने साम्राज्य में और विशेषकर आगरे को जहाँ ख्वाजा जहाँ और मुजफ्फर खां राजकाज चला रहे थे उसने अपनी विजय की खबर भेजी। वह लगभग एक मास तक मांडू में ठहरा था और वहाँ उसने प्रदेश के शासन की व्यवस्था के नियम बनाये थे। उसने अधिकारियों की यथायोग्य पदोन्नति की। इनमें मुकीम खां था जिसने लड़ाई में अच्छी सेवा की थी। उसको एक खिल्लत और शुजात खां की उपाधि देकर सम्मानित किया। विजय की खबर मालवा में सर्वत्र फैल गई थी, इसलिये उस प्रदेश के मुखिया लोगों ने बादशाह की सेवा में उपस्थित होकर सलाम की। वहाँ बादशाह को सूचित किया गया कि अब्दुल्ला खां भाग कर चंगेज खां के पास चला गया है जो गुजरात में शक्तिशाली है। तब बादशाह ने आदेश दिया कि एक योग्य अधिकारी को चंगेज खां के पास भेजकर निवेदन करवाया जाये कि अब्दुल्ला खां को बांध कर दरबार में भेज दे, या अपने देश से निकाल दे। इसके अनुसार हकीम आईनुलमुल्क को पत्र के साथ भेजा गया। चंगेज खां बादशाह के पत्र का स्वागत करने के लिये चांपानेर तक आया और उसने बड़ा आदर प्रकट किया।

तब उपयुक्त भेटों के साथ उसने अपने विश्वस्त सेवक दरबार में भेजे जिसका अभिप्राय यह प्रकट करना था कि वह बादशाह का दास है और उसके आदेश का पालन करने के लिये तैयार है। बादशाह अपराधों को क्षमा करने वाला है और कृपालु है, इसलिये अब्दुल्ला के अपराध क्षमा कर दिये जायें उसको दरबार में भेजने की अनुमति प्रदान की जाये। यदि बादशाह इस प्रार्थना को स्वीकार नहीं करेगा तो अब्दुल्ला खां को राज्य से निकाल दिया जायेगा। बादशाह अकबर आगरा पहुंचा। उसके एक दिन बाद हकीम आईनुलमुल्क चंगेज खां की भेटें लेकर वहाँ आया।

खान कुली पर कृपा

खान कुली अब्दुल्ला खां का एक वीर सैनिक था। उसको अब्दुल्ला खां ने हाड़ियां का शासन चलाने के लिये नियुक्त कर दिया था। उसने प्रार्थना-पत्र भेजा कि मैं इस समय आशा और भय के भंवर में फंसा हुआ हूँ। मुझको अपनी सुरक्षा का वचन देकर अनुगृहीत किया जाये। मैं बादशाह के दरबार का एक दास बन जाऊंगा। तब उसके नाम एक सान्त्वनापूर्ण आदेश जारी किया गया और वह कई साथियों सहित दरबार में उपस्थित हुआ और उसको सेवा मिली। इसी प्रकार दक्षिण से एक अधिकारी जिसका नाम मुकर्रिब खां था, बरार के मार्ग से दरबार में आया। बादशाह उससे कृपापूर्वक मिला और सरकार हाड़ियाँ उसको जागीर में दिया गया।

मीरान मुबारिक शाह ने पुत्री दी

मीरान मुबारिक शाह खानदेश का शासक था। इस देश पर उसके पूर्वजों का कितनी ही पीढ़ियों से शासन चला आ रहा था। उसने अपने राजदूतों के साथ शाही दरबार में भव्य भेंट भेजी। उसने बादशाह के घनिष्ठ मित्रों द्वारा निवेदन करवाया कि "मेरी बड़ी अभिलाषा है कि मेरी बेटी को बादशाह अपने अन्त:पुर में दाखिल कर ले।" बादशाह सबकी इच्छायें पूरी किया करता था। इसलिय मीरान की भी इच्छा पूरी की गई और उसके अनुकूल आदेश जारी किया गया। मीरान के राजदूतों के साथ इतिमाद खां नपुंसक को जो दरबार का एक विश्वस्त सेवक था, असीरगढ़ मीरान की पुत्री को लाने के लिये भेजा गया। मीरान ने शाही पत्र का भव्य स्वागत किया और इतिमाद खां को सम्मानपूर्वक दुर्ग में ले आया। उसने अपनी लड़की को विधिपूर्वक बादशाह के पास भेज दिया। उसके साथ कई सरदार भी भेजे। जब उस लड़की को लेकर इतिमाद खां आया तो बादशाह मांडू से एक मंजिल दूर जा चुका था। इतिमाद खां ने आकर लड़की को शाही अन्त:पुर में भेज दिया और बादशाह से निवेदन किया कि मीरान ने बड़े आदरपूर्वक बर्ताव किया और शाही दरबार के प्रति वफादारी बतलाई।

बाजबहादुर को पत्र

हसन खां खजांची, पाईन्दा मुहम्मद पंचभिया और खुदा बरयतिन को एक कृपापूर्ण पत्र देकर बाजबहादुर को जो पहले मालवा का सुल्तान था सान्त्वना देने के लिये भेजा।

वह इस समय इधर उधर भटकता फिरता था। जब शाही राजदूत पत्र लेकर आये तो बाजबहादुर ने इसको अपना अहोभाग्य समझा और बादशाह की सेवा करने के लिये वह उनके साथ जाने को तैयार हो गया। इस समय एक मूर्ख नपुंसक आगरे से आया और उसने ऐसी अनुचित बातें कहीं जो इस प्रकार के लोग किया करते हैं। इसलिये बाजबहादुर शाही दरबार में जाने से रुक गया। उसने कई प्रकार के बहाने बनाये और कहा कि कभी दूसरे अवसर पर आऊंगा। शाही राजदूतों को उसने वापस भेज दिया।

मांडू में बादशाह लगभग एक मास ठहरा और उसके प्रशासनिक नियम बनाये। फिर मुहर्रम मास में उसने आगरा की ओर प्रयाण किया। जब भारी वर्षा हो रही थी तो बादशाह ने आगरे के लिये प्रस्थान किया। मार्ग में बाढ़ें आ रही थीं और कीचड़ भरी हुई थी। बादशाह मस्त हाथियों पर सवारी करता था। एक दिन उसने खण्डेराव नामक हाथी की सवारी की। यह हाथी ऐसा विशाल और शक्तिशाली था कि महावत लोग उस पर टिक नहीं सकते थे परन्तु बादशाह ने बड़े तोक्ष्ण अंकुश का प्रयोग किया। अनुचर बादशाह की शक्ति को देखकर अचम्भित हो गये। शाही सेना पहले उज्जैन और फिर सारंगपुर पहुंची। वहाँ एक दिन ठहर कर फिर बादशाह खिरार गया। वहाँ से वह सीपरी पहुंचा। वहाँ उसको खबर मिली कि पास ही हाथियों का एक झुण्ड है। पता लगाया तो मालूम हुआ कि झुण्ड में सत्तर (70) हाथी हैं। तब सारे वन को घेर लिया गया और सब हाथियों को रस्सों से बांध दिया गया।

जब सांयकाल होने वाला था तो एक भील ने आकर खबर दी कि पास ही एक हाथियों का झुण्ड है। यह आदमी राजा जगमन डन्डेरा का सेवक था। बादशाह हाथी पर सवार हो गया तो उसने देखा कि लगभग 70 हाथियों का झुण्ड है। इनमें एक हाथी था जो बड़ा सुन्दर था। सब हाथियों को पकड़ कर सीपरी के दुर्ग में लाया गया। जब बादशाह को हाथियों के पकड़ने से सन्तोष हो गया तो उसने राजधानी की ओर प्रयाण किया। वह नरवर और ग्वालियर के मार्ग से गया। जब बादशाह आगरा नगर के निकट पहुंचा तो लोगों ने उसका भव्य स्वागत किया। उसने 9 अक्टूबर, 1564 को आगरे में प्रवेश किया।

जोड़लों का जन्म

इसी समय बादशाह के दो जोड़ले बालक हुये तो बड़ा उत्सव मनाया गया और खूब बाज़े बजे। कवियों ने कविता पाठ पढ़ा परन्तु एक मास बाद ही दोनों बालकों की मृत्यु हो गई जिससे बादशाह को बड़ा दुख हुआ।

नगर चैन की स्थापना

बादशाह ने ककराली नामक गांव को सुन्दर बनाने का निश्चय किया। यह आगरे से एक कोस की दूरी पर था। जब बादशाह शिकार के लिये बाहर निकलता या मनोविनोद के लिये जाता तो वह इस गांव में ठहरा करता था। जब वह मांडू से राजधानी को वापस लौटा तो उसने आदेश दिया कि ककराली में सुन्दर बाग लगाये जायें और अच्छे मकान बनाये जायें। तब इन्जिनीयर लोगों ने यह काम शुरू किया और थोड़े समय में ही पूरा कर दिया। बादशाह ने इसका नाम नगर-चैन रखा। वहाँ वह पोलो खेला करता था और शिकार किया करता था।

ईरान के शाह तहमास्प से भेंट

ईरान के शाह से बकर के सुल्तान मुहम्मद ने निवेदन किया कि मुझे खानखाना का पद प्रदान किया जाये। उसने शाह को बहुत-सा सोना भेंट किया। उसका खयाल था शाह की सिफारिश से यह पद प्राप्त हो जायेगा। शाह ने अकबर को पत्र लिखा जिसमें उसने इस बात का उल्लेख किया, परन्तु अकबर बादशाह ऊंचे पद सिफारिश के आधार पर नहीं देता था। वह योग्यता देखा करता था और उस समय खानखाना के पद पर मुनीम खां था। इसलिये शाह के निवेदन को स्वीकार नहीं किया और उसके राजदूत को यथाविधि लौटा दिया गया।

***

प्रकरण 55

मिर्जा मुहम्मद हकीम बादशाह अकबर की शरण चाहता है, मिर्जा सुलेमान से काबुल का छुटकारा आदि

यह पहले ही लिखा जा चुका है कि मिर्जा सुलेमान ने मिर्जा अबुल मआली को समाप्त करके काबुल में किस प्रकार बदख्शियों को नियुक्त किया। सुलेमान ने शाही कुल के अधिकारों को नहीं समझा और मित्र के वेश में शत्रु का काम किया। वह निरन्तर काबुल पर अधिकार करने का और मिर्जा हकीम को बदख्शां के एक जिले में रखने का निरंतर प्रयास कर रहा था। स्वामिभक्त काबुली लोग मिर्जा सुलेमान के इरादों को समझते थे परन्तु उनको यह निश्चय नहीं था कि क्या हो जायेगा। उसने एक बार तो अब्दुल रहमान बेग को और दूसरी बार मीर तोलक कदीमी के पुत्र को सेना सहित भेजा और दूसरी बार इसी प्रकार तंगरी बर्दी कुशबेगी को भेजा। तब काबुली लोगों के सन्देहों की पुष्टि हो गई और उन्होंने स्थिति को सुधारने के उपाय किये। इस मामले में विशेष काम करने वाले ख्वाजा हसन नक्शबन्दी, बाकी काकशाल, सियुन्दक, अली मुहम्मद अस्प, बन्दा अली मैदानी, अन्य मैदानियों के साथ और ख्वाजा खिजरियान तथा यार मुहम्मद अखून्द फिरोज और खलीफा अब्दुल्ला थे। उन लोगों ने इन घटनाओं से मिर्जा मुहम्मद हकीम को सूचित किया। अब वह समझदार हो गया था, बदख्शी लोगों के बर्ताव से और उनकी मितव्ययता से वह दुखी था। उसने काबुलियों की चिन्ता का अनुमोदन किया और बदख्शियों को हटाना शुरू किया। उसने करायतिम से और हुसेन काबुली से गजनी का प्रदेश वापस लेकर कासिम बेग परबन्ची को दे दी। सुलेमान ने वह प्रदेश करायतिम को दे दिया था। मिर्जा हकीम ने मुराद

ख्वाजा से बेगस वापस लेकर अपने अनुयायियों को दे दिया। सुलेमान ने जलालाबाद और उसका प्रदेश सिन्धु नदी तक काजी खां और सैयद खां तथा मुबारिज खां और बहाउद्दीन खां को दे दिया था। यह मिर्जा हकीम ने वापस लेकर अपने निजी इलाके में ले लिया। धीरे-धीरे उसने बदख्शियों के अत्याचारों को जो काबुल पर किये जा रहे थे, कम किया और सब को वहाँ से निकाल दिया। बदख्शी लोग दबकर सुलेमान के पास पहुंचे। सुलेमान काबुल जा रहा था। वहाँ की स्थिति को बस में लाना चाहता था, हिन्दू कोह में उसको गजनी मिल गया जिसने उसको सारा हाल सुना दिया तब वह शीघ्रता से काबुल की ओर जाने लगा। जब मिर्जा हकीम ने उसके आगमन का समाचार सुना तो उसने दुर्ग बाकी काकशाल और कुछ विश्वस्त लोगों के सुपुर्द किया और वह स्वामिभक्त अनुचरों को साथ लेकर जलालाबाद और पेशावर की ओर चल दिया। बरां नामक नदी के ऊपर पहुंच कर सुलेमान अपने आदमियों को विश्राम देने के लिये कुछ दिन वहाँ ठहरा। उसको मालूम हो गया था कि मुहम्मद हकीम मिर्जा जलालाबाद की ओर जा रहा है इसलिये उसने काबुल को छीनना अगले मौसम तक स्थगित रखा और मिर्जा हकीम को बन्दी बनाने के विचार से वह देह मीनार सें जलालाबाद की ओर चला। जब मिर्जा हकीम दका[1] नामक स्थान पर पहुंचा तो उसको यह गलत खबर मिली कि सुलेमान उसका पीछा नहीं कर रहा है। इसलिये मिर्जा हकीम वापस मुड़कर कोहबारान की ओर जाने लगा।

सुलेमान की पुत्री मूर्खतावश जलालाबाद में ठहर गई थी। अब उसको पश्चात्ताप हुआ और वह अपने पति मिर्जा हकीम के पास चली गई और उसने अपने अपराध के लिये क्षमा मांगी। मिर्जा हकीम उस समय वसाबल की सीमा पर था। इसी समय यह भी निश्चय हो गया कि सुलेमान उधर की ओर कूच कर रहा है। उसके विषय में जो पिछली रिपोर्ट मिली थी वह गलत है। तब मिर्जा हकीम शीघ्रता से गरीबखाना की ओर चला और वहाँ से अली मस्जिद की तरफ तथा फिर वहाँ से पेशावर की ओर चला। वहाँ वह कबिला-ए-हकीब के समीप ठहरा। उसी दिन सुलेमान का एक दूत आया। उसका विचार था कि मुहम्मद हकीम के लिये जाल बिछाया जाये। मिर्जा ने उसको थोड़ी देर बात करके विदा कर दिया और ख्वाजा हसन को सुलेमान के पास भेजा। मिर्जा हकीम स्वयं सिन्धु नदी की ओर चला। उसी समय खाकी गल्लावान ने जो पीछे रह गया था आकर खबर दी कि सुलेमान जलालाबाद आ पहुंचा है और कुछ सैनिकों सहित हरम बेगम को वहाँ रखकर आ रहा है। मिर्जा हकीम ने शीघ्रता से सिन्धु नदी पार की और गालिक बेग और तूफान आजी को एक विनयपूर्ण-प्रार्थना-पत्र के साथ अकबर के दरबार में भेजा। उसने अपनी दुखपूर्ण परिस्थिति का वर्णन करके सहायता के लिये प्रार्थना की।

मिर्जा हकीम सिन्ध-सागर के तट पर ठहर गया। उस समय पंजाब प्रान्त पर अतका खां के बड़े भाई मीर मुहम्मद खां का शासन था, इसलिए मिर्जा ने अपने दीवान ख्वाजा बेग महमूद और मखसूद जौहरी को उसके पास भेजकर सहायतार्थ प्रार्थना की। मीर मुहम्मद खां ने काजी इमाद को कुछ भेंट लेकर और उत्साहवर्द्धक सन्देश के साथ भेजा। पंजाब

---

1. खैबर की घाटी के पश्चिमी सिरे पर स्थित।

के अधिकारियों ने अपने-अपने पदों के अनुसार भेंटे भेजीं। जब सुलेमान ने सुना कि मिर्जा मुहम्मद हकीम सिन्ध नदी को पार कर गया है तो वह निराश होकर पेशावर से लौट आया। करप्पाह के मार्ग से वह जलालाबाद की ओर चला, मार्ग में सिनवरी अफगानों के साथ उसकी लड़ाई हुई। उनमें से कई मारे गये और कुछ बाजार के लोगों का माल लूट लिया गया। इस जाति का मुखिया हारु सिनवरी यहाँ मारा गया। सुलेमान ने जलालाबाद में कुछ सेना छोड़कर काबुल को घेरने के लिए रवाना हो गया। दुर्ग सेना पहले से सचेत थी और दुर्ग को दृढ़ बना लिया था। जिस समय अकबर बादशाह नगर चैन में था तो मिर्जा हकीम के राजदूतों ने आकर दरवारियों के द्वारा बादशाह से भेंट की और मिर्जा हकीम की प्रार्थना सुनाई। बादशाह ने समझा कि मिर्जा हकीम की विपत्ति का कारण यह है कि उसके पास कोई दूरदर्शी और हितैषी संरक्षक नहीं है, इसलिए बादशाह ने कुतुबुद्दीन खां को इस पद पर नियुक्त किया जो अपनी योग्यता के लिए प्रसिद्ध था। यह भी आदेश जारी किया कि पंजाब की उत्तम सेनायें मीर मुहम्मद खां के नेतृत्व में मिर्जा हकीम की सहायता करे और उसको काबुल पहुंचाकर दृढ़तापूर्वक गद्दी पर बैठा दे। इस कार्य को पूरा करके कुतुबुद्दीन खां काबुल में ठहरे और अन्य अधिकारी लोग अपने-अपने स्थान पर लौट आये। यह भी आदेश दिया गया कि मीर मुहम्मद खां, कुली खां, बिरलास, कुतुबुद्दीन खां, महन्दी कासिम खां, हसन सूफी सुल्तान, जान मुहम्मद बहसुदी, कमाल खां गभर, फाजिल मुहम्मद कुली खां और उस प्रदेश के मुखिया लोग शीघ्रता से प्रयाण करके मिर्जा के पास सिन्धु नदी के तट पर पहुंचे और उसके साथ सुलेमान के विरुद्ध अभियान करें और काबुल में उसके अत्याचार को रोकें। बादशाह ने शाही कोष से विपुल धनराशि और सुख-विलास की वस्तुयें राजदूतों के साथ भेजीं।

जब अधिकारियों को ये आदेश मिले तो वे मिर्जा की सेवा करने के लिये सेनासहित रवाना हुए। कुतुबुद्दीन, कमाल खां, फाजिल मुहम्मद, कुली खां और कुछ सेना और लोगों से पहले मिर्जा के पास पहुंची, जिससे मिर्जा की स्थिति सुधर गई। अलक बनारस के पास नदी पार करके ये लोग काबुल की ओर चले। मीर मुहम्मद खां और दूसरे अधिकारी भी पेशावर के पास मिर्जा से जो मिले। प्रत्येक अधिकारी ने पद के अनुरूप भेंटे प्रस्तुत कीं। सब मिलकर बड़ी आशा और ऊंचे इरादों के साथ काबुल की ओर चले और जलालाबाद जाकर ठहरे।

सुलेमान ने जलालाबाद कमबर नामक एक अपने आदमी के सुपुर्द कर दिया था। मीर मुहम्मद खां ने साकी तरबी और आरिफ बेग को उसे समझाने के लिए भेजा। कमबर ने सलाह नहीं मानी तो वीर लोग दुर्ग प्राचीन पर चढ़ गये और अन्दर प्रवेश करने का प्रयास करने लगे। बदख्शी लोगों ने उनका यथाशक्ति सामना किया और शत्रुओं पर बाणों और गोलियों से आक्रमण करने में कोई कमी नहीं रखी, तथापि आक्रमणकारी दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ते रहे। उनका साहस और भी बढ़ता गया। दुर्ग पर शाही सेना का एक घण्टे में कब्जा हो गया। कमबर अली और उसके तीन सौ आदमी मारे गये। उन्होंने दो आदमी को बचा रहने दिया ताकि वे सुलेमान के पास जाकर कमबर अली और उसके साथियों की दुर्गति का हाल सुनायें।

कमब्र का सिर काबुल की प्राचीर पर टांगने के लिये भेज दिया और बाकी काकशाल को और काबुल लोगों को सूचित किया कि शाही सेना आ रही है। जब बादशाह की सहायता की और जलालाबाद के छिन जाने की खबर काबुल पहुंची तो लोगों को बड़ा हर्ष हुआ। सुलेमान ने अपने भयभीत लोगों से कहा कि शाही सेना के आगमन की और जलालाबाद के छिन जाने की खबर झूठी है और काबुली लोग यूंही शोर मचा रहे हैं परन्तु फिर दो बदख्शी लोगों ने आकर विजय के समाचार की पुष्टि की। तब सुलेमान और हरम बेगम का साहस भंग हो गया और उन्होंने सोचा कि विजयी सेना से लड़ा जाये या बदख्शां को लौटा जाये। अन्त में उन्होंने निश्चय किया कि भाग जाना चाहिये।

अगले दिन सुलेमान काबुल का घेरा छोड़कर वापस मुड़ गया। जलालाबाद की ओर प्रयाण करके वह ख्वाजा रिवाज पहुंच गया और यह प्रकट किया कि मैं मिर्जा से लड़ने के लिए जा रहा हूं। जब रात हुई तो वह घबराकर बदख्शां की ओर चला गया। जब वह परवान नामक नदी को पार कर रहा था तो एक बड़ी बाढ़ आई और उसके बहुत सारे सामान को बहा ले गई। हजारों विपत्तियां सहकर वह बदख्शां पहुंचा। तब शाही सेना जगदालक पहुंची तो सुलेमान के भाग जाने की खबर काबुल आई। मिर्जा हकीम और अधिकारी लोग काबुल पहुंचे। काबुल के लोगों को बड़ा हर्ष हुआ और सबने भगवान से प्रार्थना की कि अकबर का राज्य अमर रहे। कुछ दिन बाद कुतुबुद्दीन खां गजनी गया जो उसके वंश का निवासस्थान था। कमाल खां उसके साथ था। उसने अपने जन्मस्थान पर कुछ दिन हर्षपूर्वक व्यतीत किये तथा अपनी जाति और मित्रों पर कृपा की। काबुल की सारी व्यवस्था पूरी करने के बाद खान किलान ने मूर्खतावश मिर्जा के वकील का पद स्वयं ग्रहण कर लिया और वह काबुल में ठहर गया। दूसरे अधिकारियों को उसने भारत की ओर बिदा कर दिया। मुहम्मद हकीम की छोटी बहन शकीनाबानू बेगम ने भारत में जाकर बादशाह अकबर को उसकी कृपा के लिए धन्यवाद दिया। कुतुबुद्दीन मुहम्मद खां उसके साथ था।

मिर्जा मुहम्मद हकीम के स्वभाव में सहज सौजन्य नहीं था और न उसमें बुद्धि का विकास हुआ था। उसके पास ईमानदार और स्वामिभक्त सेवकों की भी कमी थी, इसलिए अब सर्वत्र गड़बड़ होने लगी। अब खान किलान को प्रशासक नियुक्त किया गया। तब राजद्रोह करने वाले काबुली लोगों ने उपद्रव खड़ा किया। मुहम्मद हकीम मिर्जा अभी नवयुवक ही था इसलिये वह झूठी बातों को ध्यान से सुनने लगा। मीर मुहम्मद खां कठोर व्यक्ति था उसमें, मिर्जा और काबुली लोगों में मेलजोल नहीं रहा। वैसे तो मिर्जा उसकी बात मानता रहा परन्तु बहुत-से महत्वपूर्ण काम उसने खान किला के पूछे बिना ही कर दिये। एक काम उसने यह किया कि ख्वाजा हसन नक्शबन्दी के साथ जो काबुल में अपने दिन व्यतीत कर रहा था, बादशाह से पूछे बिना ही उसने अपनी बहन का विवाह ख्वाजा से कर दिया। इसका विवाह पहले इसकी माता ने शाह अब्दुल अमाली से किया था। अब ख्वाजा का पद ऊंचा हो गया और वह मिर्जा के घर का भी प्रबन्ध करने लगा और अनेक अवांछनीय कार्य करने लगा। मिर्जा के घराने के लोग भी ऐसी बातें किया करते थे जो खानकिला को पसन्द नहीं थी। मीर मुहम्मद खां जल्दबाज आदमी था परन्तु वह लोगों को

पहचान सकता था। वह कल होने वाली बातों का आज ही अनुमान कर लेता था। उसने देख लिया कि उसके बुरे दिन आने वाले हैं इसलिए एक दिन वह रात में ही किसी को खबर दिये बिना ही काबुल से चल दिया और उसने भारत का मार्ग लिया।

उसने बादशाह को सूचित किया कि मिर्जा के महल में प्रपंच हुआ करते हैं। एक घटना यह हुई कि फतह खां को सझाने के लिये कुलीज खां को रोहतास भेजा गया। रोहतास नामक दुर्ग भारत का एक बड़ा विशाल दुर्ग है और बिहार में स्थित है और एक ऊंची पहाड़ी पर बना हुआ है। इसकी लम्बाई और चौड़ाई पांच कोस से अधिक है। नीचे से ऊपर तक एक कोस का अन्तर है। विचित्र बात यह है कि इतनी ऊंचाई पर भी दो गज भूमि खोदने पर ही पानी निकल आता है। इस दुर्ग का निर्माण हुआ तब से इसको किसी ने नहीं जीता था। केवल शेर खां ने इस पर अधिकार किया था और उसने भी इसको छल से जीता था। स्त्रियों के वेष में उसने इस दुर्ग में अपने सैनिक घुसा दिये थे।

इसके पश्चात् फतह खां पटनी के हाथ में आया जो शेर खां और सलीम खां का एक बड़ा सरदार था। इस दुर्ग के बल पर वह सुलेमान से संघर्ष किया करता था जिसने बंगाल पर अपना कब्जा कर लिया था। जब अली कुली खां जबान के राजद्रोह के चिन्ह दूर-दूर तक दृष्टिगत होने लगे तो बादशाह ने उसको समझाने के लिये और स्वामिभक्ति का मार्ग ग्रहण करवाने के लिये कुलीच खां को फतह खां के पास भेजा और यह कहलाया कि जब शाही सेना जौनपुर पहुंचे तो वह (फतह खां अपनी स्वामिभक्ति का परिचय दे। कुलीच खां ने रोहतास पहुंचकर फतह खां को समझाया और उसके भाई हसन खां पटनी को वह बादशाह के दरबार में सेवार्थ ले आया। जब हाथियों का शिकार करके बादशाह की सवारी करहरा और नरवर से वापस लौटी तो हसन खां और उसके साथियों को दरबार में उपस्थित होने का अवसर प्राप्त हुआ और हसन खां पर बड़ी कृपा की गई।

इसी वर्ष के आरम्भ में हाजी बेगम का जो बादशाह हुमायूं की एक पत्नी थी और बादशाह की मां के मामा की लड़की को तथा अलामान मिर्जा की माता को यात्रा करने की इजाजत दी गई। उनके लिये सारी उत्तम व्यवस्था कर दी गई। बादशाह नहीं चाहता था कि वह हाजी बेगम से जुदा हो परन्तु उसने माता की इच्छा स्वीकार की। इस अवसर पर अन्य कई लोगों को भी यात्रा करने की इजाजत मिल गई।

***

प्रकरण 56

हाथियों के शिकार के लिये बादशाह का नरवर प्रांत पर अभियान

रजव मास में हाथियों के शिकार के लिये बादशाह ने नरवर को करहरा की ओर प्रयाण किया और फिर मृगया के आनन्द से आकर्षित होकर वह धौलपुर पहुंचा। हाथी पर सवार होकर उसने चम्बल नदी को पार किया और ग्वालियर के मार्ग से वह आगे चला। आदेशानुसार शिविर तो वहीं रहा और बादशाह ने थोड़े-से सेवकों के साथ वन में प्रवेश किया। फरायती लोग यह खबर लाये थे कि नरवर के वन में हाथियों के कई समूह घूम रहे हैं। दो दिन तक इस अपार वन में घूमने के पश्चात् बादशाह ने हाथियों का एक समूह देखा। तब उसने पुरानी रीति के अनुसार एक बाड़ा बनवाया और उसमें धकेल कर हाथियों को पकड़ लिया। एक दिन जब बादशाह नरवर के वन में शिकार में व्यस्त था तो उसने एक सांप देखा जो लगभग 7 अकबर शाही गज [1] लम्बा था और वह कई चीतलों (हिरणों) को खा गया था। बादशाह ने आदेश दिया कि उस हानिकर सांप को नष्ट कर दिया जाए। फिर राजकाज की व्यवस्था करने के लिये बादशाह वहाँ दो दिन ठहरा। तत्पश्चात् लश्कर खां मीरबख्शी को आसफ खां के पास गढ़ा भेज कर कहलाया कि वह उन जंगी हाथियों को और दूसरे सामान को दरबार में भेज दे जो रानी के साथ युद्ध करने में उसको प्राप्त हुआ है। यह भी आदेश हुआ लश्कर खां की अनुपस्थिति में उसका काम ख्वाजा गयासुद्दीन अली कजवीनी करे। बादशाह पुनः शिकार में लग गया।

***

प्रकरण 57

दसवें वर्ष का आरम्भ

शासन का दसवां वर्ष 11 मार्च, 1565 को शुरू हुआ। एक दिन फरायतियों ने सूचना दी कि एक वन हाथियों से भरा है, तो बादशाह तुरन्त ही शिकार के लिये रवाना हो गया। उसने वन में ही रात व्यतीत की और हाथियों को पकड़ कर डेरे में भेज दिया। दूसरे दिन जब वह वापस लौट रहा था तो सूचना मिली कि 8 कोस के उत्तर पर 250 से भी अधिक हाथी वन में स्वच्छन्द घूम रहे हैं। बादशाह रवाना होकर सायंकाल हाथियों के चरने के

1. अकबर शाही गज 41 अंगुल लम्बा होता था।

स्थान पर पहुंच गया। सेवकों ने हाथियों को घेर लिया और मध्य रात्रि में हाथियों को घेर लाये। उनमें से कुछ नरवर और कुछ ग्वालियर भेज दिये और शेष शाही शिविर में रख लिये। इसके लिये बादशाह दो दिन तक बयानवां नामक दुर्ग के समीप ठहरा। फिर बादशाह करहरा आया और दो दिन तक टिका। शेष हाथियों को पकड़ने के लिये सेवकों को वन में छोड़ कर बादशाह कूच कर ग्वालियर के लिये रवाना हुआ। इससे वह कुछ अस्वस्थ हो गया, परन्तु शीघ्र ही उसे स्वास्थ्य प्राप्त हो गया। इसके 5 या 6 दिन बाद आगरे की ओर प्रस्थान किया और शुभ समय पर वहाँ पहुंच गया।

इस वर्ष की मुख्य घटना यह थी कि आगरा दुर्ग की नींव डाली गई। आगरा हिन्दुस्तान के मध्य में स्थित है इसलिये बादशाह ने आदेश दिया कि वहाँ पर ऐसे दुर्ग का निर्माण किया जाय जो साम्राज्य प्रतिष्ठा और गौरव के अनुकूल हो। आदेशानुसार जमना के पूर्वी तट पर बने हुए दर्ग को ढहा दिया गया। यह प्राचीन दुर्ग था और इसके स्तम्भ हिल चुके थे। इसके स्थान पर अब एक दुर्गम दुर्ग बनाने का आदेश दिया गया। इसके लिये बड़े ऊँचे दर्जे के गणितज्ञ और स्वरूपकार नियत किये गये, जिन्होंने शुभ मुहुर्त में इस विशाल दुर्ग की आधारशिला रक्खी। इसके प्राचीर की मोटाई तीन बादशाही गज[1] थी, इसमें चार दरवाजे थे और चारों संसार की चारों दिशाओं की तरफ से रन्ध्रों तक दुर्ग तराशे हुए पत्थरों से बनाया गया था। प्रतिदिन 3, 4 हजार सक्रिय हृष्ट पुष्ट लोग इस काम में लगे रहते थे और उनको बहुत ही अच्छी तरह सटाया गया था। इसके निर्माण में 8 वर्ष लगे थे और यह कासिम खां मीर बर्रूबहर के निरीक्षण में तैयार हुआ था। इस समय यह सब प्रकार तैयार हो गया था।

इस वर्ष बादशाह ने निश्चय किया कि सदर के पद पर किसी व्यक्ति को नियुक्त किया जाये। वह ऐसा व्यक्ति हो जो बुद्धि और ईमानदारी के लिये प्रसिद्ध हो। इसके द्वारा साधु और भगवद्भक्त लोग बादशाह से पेंशन व आश्रय प्राप्त कर सकते हैं और निश्चिंत होकर भक्ति कर सकते हैं। ऐसे लोग प्रत्येक देश में मिलते हैं, परन्तु भारत के राज्यों में इनका बाहुल्य है। सदर में इतनी योग्यता होनी चाहिये कि वह प्रत्येक आदमी के गुणों को पहचान सके। किसी का पक्षपात नहीं करे। उसमें रात-दिन परिश्रम करने की आदत हो।

जब बादशाह ऐसा विचार कर रहा था तो मुजफ्फर खां ने जिसका उस समय राजकाज पर नियंत्रण था चाटुकारों के प्रभाव में आकर इस उच्च पद पर शेख अब्दुल नवी को नियुक्त कर दिया और बादशाह से निवेदन किया कि इस नियुक्ति की पुष्टि की जाय। बादशाह ने मुजफ्फर खां पर भरोसा करके यह नियुक्ति मान ली। अब्दुल नवी ने मिथ्याचारपूर्वक काम करना शुरू किया। प्रत्यक्ष में वह ईमानदार जान पड़ता था। बादशाह भी उससे प्रसन्न था। अब्दुल नवी अब्दुल कदूस का पौत्र था। इसको भारत में संत माना जाता था। परन्तु बादशाह लोगों के गुणों की कसौटी था इसलिये अब्दुल नवी का पर्दा हट गया।

---

1. बादशाही गज सिकन्दर लोदी के समय का था और हुमायूं के समय में उसकी लम्बाई 42 इसकन्दरी सिक्कों के बराबर होती थी। तबकाते अकबरी के अनुसार चौड़ाई 10 गज लम्बाई 40 गज और गहरायी 10 गज थी।

प्रकरण 58

खान जमान अली कुली आदि के दमन के लिये बादशाह का प्रयाण

अली कुली खां जमान भारतवर्ष में आया तभी से अनुचित कार्य करने लग गया था। उसमें पात्रता की कमी थी। उसका अभिमान प्रत्यक्ष हो गया था। बादशाह ने उसके कई अपराध क्षमा किये परन्तु जमान ने इस दयालुता का अर्थ नहीं समझा और दुष्टता पर दुष्टता करता गया। जब बादशाह को सूचना मिली कि इसकन्दर खां में राजद्रोह की भावना आ गई है तो बादशाह ने उसकी उपेक्षा की। जब बादशाह नरवर की ओर हाथियों के शिकार के लिए गया तो उसने अशरफ खां को इसकन्दर खां उजबेग के पास भेजा और उसको बुलाया। जब अशरफ खां अवध पहुंचा, जो इसकन्दर खां की जागीर थी, उसका आदरपूर्वक स्वागत किया गया। प्रत्यक्ष में इसकन्दर खां ने अधीनता प्रकट की और दरबार में जाने की तैयारी करने लगा। इस तैयारी में उसने बहुत समय लगा दिया। अन्त में उसने अशरफ खां से कहा, ''इब्राहीम खां हमारा बुजुर्ग है और पास ही रहता है। उससे मिलने चलें और उसके साथ में दरबार में चलूंगा''। तब वह अवध से सहारनपुर पहुंच गया जो इब्राहीम की जागीर थी। वहाँ से वे अली कुली खां के पास गये। वहाँ सब लोगों ने विद्रोह करने का निश्चय कर लिया और एक दूसरे से कहने लगे—बादशाह की सवारी इस समय बहुत दूर है और हाथियों के शिकार में व्यस्त है, अब हम दो दल बनायें। इसकन्दर खां और इब्राहीम खां लखनऊ के स्थलमार्ग से कन्नौज जायेंगे और वहाँ विद्रोह खड़ा करेंगे। अली कुली खां और उसका भाई बहादुर खां माणिक़पुर के मार्ग से मजनूं खां काकशाल के विरुद्ध प्रयाण करेंगे, जो वहाँ जागीरदार है। वहाँ राजद्रोह की ज्वालाएं उठाई जायेंगी। इस प्रकार आप लोगों को सफलता प्राप्त हो जायेगी। विद्रोहियों ने अपना मार्ग निश्चित करके अशरफ खां को अपने बीच में रोक लिया। इब्राहीम खां और इसकन्दर खां लखनऊ की ओर तथा अली कुली और बहादुर खां कर्रा और मणिकपुर की ओर चले गये।

जब इस विद्रोह की खबर उधर के अधिकारियों को मिली तो उनमें से शाह खां जलेर, शाह बुदा खां, अमीर खां, मुहम्मद अमीन दीवाना, सुल्तान कुली खालदार, चलमा तवाची, शाह ताहिर बदख्शी और उसका भाई शाह खलील उल्ला आदि लोगों ने एकत्र होकर विद्रोहियों का सामान किया। उनकी सिकन्दर खां और इब्राहीम खां से कल्वा नीमखार के पास जोर की लड़ाई हुई। मुहम्मद अमीन दीवाना ने विद्रोहियों के मध्य भाग पर आक्रमण किया और बहुतों को धूल में मिला दिया। परन्तु वह घोड़े से गिर पड़ा और विद्रोहियों ने उसे बन्दी बना दिया। यद्यपि शाह खां, शाह बुदा खां, मुहम्मद अमीन की गति को देखकर हतोत्साह हो गये, अन्त में वे परिश्रमपूर्वक आगे बढ़े और उन्होंने पुरुषार्थपूर्वक युद्ध किया और दोनों पक्ष के कितने ही लोग धराशायी हो गये। विद्रोहियों की संख्या बहुत बड़ी थी। अतः उन्होंने पीछे हटकर नीम का दुर्ग में जाना उचित समझा और इस परिस्थिति से बादशाह

को सूचित कर दिया। अली कुली खां और बहादुर खां मानकपुर की ओर चले। वहाँ उन्होंने बड़ी लूट-मार की। मजनूं खां काकशाल ने जो कि अनुभवी अधिकारी था, विद्रोहियों से लड़ना उचित नहीं समझा और मानकपुर दुर्ग में शरण ली। उसने आसफ खां को पत्र लिखा कि मेरे साथ शामिल हो जाओ। यह खबर सुनकर आसफ खां कुछ आदमियों को अपने साथ लेकर कर्रा पहुंचा और गढ़ा की रक्षा के लिये कुछ आदमी छोड़ गया। उसने चौरागढ़ में लूट का माल सैनिकों में बांट दिया और मजनू खां को सहायतार्थ बड़ी धनराशि दी। आसफ खां से यह सहायता प्राप्त करके मजनू खां ने अपने दुर्ग में से अली कुली खां की सेना से लड़ाई लड़ने के लिये वीर लोगों को भेजा। मजनूं खां और आसफ खां ने शीघ्रगामी धावनों को भेजकर शाही दरबार को वास्तविक स्थिति से वाकिफ करवाया। जब बार-बार शाही धावन आ रहे थे तो बादशाह हाथियों के शिकार में व्यस्त था परन्तु उसका ध्यान राजकाज की ओर भी पूरा था। जब बादशाह को अफसरों से खबर मिली तो उसने निश्चय किया कि विद्रोहियों को आमूल नष्ट कर दिया जाये और उसे उठने नहीं दिया जाये। इसलिये शीघ्र ही सेना खड़ी करने का आदेश दिया और मुनीम खां को सेना का अग्रणी बनाकर रवाना किया। इन दिनों बादशाह प्रातः से सायंकाल तक सेना को तैयार करने में लगा रहता था। उसने ऐसी बड़ी सेना तैयार कर ली जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

जब बादशाह को आवश्यक राजकाज से अवकाश मिला तो सरकारी काम आगरा में तरसून खां को सौंपकर 24 मई 1565 को उसने जमना नदी को पार किया और सेना सहित कन्नौज पहुंचा। मुनीम खां खानखाना आगे चला गया था। उसने आकर सलाम किया। किया खां विद्रोहियों में सम्मिलित हो गया था। खानखाना ने बीच-बचाव किया तो बादशाह ने उसके सब अपराध क्षमा कर दिये। वहाँ से बादशाह गंगा के तट पर गया। गंगापार करने में सेना को 10 दिन लगे। तब भेदिये लोग खबर लाये कि शाही सेना के प्रयाण की खबर सुनकर इसकन्दर खां लखनऊ में जम गया है। तब बादशाह ने ख्वाजा जहाँ मुजफ्फर खां, मुईन खां और अन्य सैनिक अधिकारियों को शिविर में छोड़कर कूच किया और एक रात एक दिन निरन्तर कूच करके दूसरे दिन प्रातःकाल वह लखनऊ के इलाके में पहुंच गया। तब आदेश हुआ कि यूसुफ मुहम्मद खां कोकलताश, सुजात खां और अन्य वीरों को आगे भेजा जाये। बादशाह की कूच का समाचार सुनकर सिकन्दर खां घबरा गया। बादशाह लखनऊ पहुंचा और वहाँ आराम किया और उसने योग्य तथा वीर पुरुषों को नियुक्त किया और उन्हें आदेश दिया कि भागने वालों का पीछा करें जो मिले उसे मार दें तो कितने ही लोग मारे गये। सिकन्दर खां अधमरा होकर भाग गया और अली कुली और बहादुर खां से जा मिला। इस घटना की खबर सुनकर अली कुली खां और बहादुर खां जो मजनू खां और आसफ खां का सामना कर रहे थे, घबरा गये। मणिकपुर के घेरे से हटकर वे जौनपुर चले गये। उन्होंने नरहन की थाह पर गंगा को पार किया। जब पीछे से शिविर आ गया तो बादशाह ने धीरे-धीरे जौनपुर की ओर प्रयाण किया। जब आसफ खां और मजनू खां के सामने से विघ्न हट गया तो वे जौनपुर से दो मंजिल पर शाही सेना में आ गये और बादशाह को उपयुक्त भेंटे अर्पण कीं। आसफ खां ने गढ़ा की दुर्लभ चीजें भेंट कीं जिनमें जंगी हाथी, इरानी और तुर्की घोड़े बादशाह को पसन्द आये। गढ़ा देश को जीतकर

आसफ खां ने चोरगढ़ का राजकोष हथिया लिया था और उसके बाद उसने अपनी सेना को सधाया था। वह चाहता था कि बादशाह उस सेना को देखे। दूसरे दिन प्रात:काल आसफ खां के 5000 सवार मैदान में आये जिनका बादशाह ने अवलोकन किया। दूसरे दिन अर्थात् 13 जुलाई को जौनपुर में शाही झण्डे फहराये गये। बादशाह दुर्ग के अन्दर ठहरा। अली कुली खां और दूसरे लोग गंगा पार करके भाग रहे थे इसलिये उनका पीछा करने को आसफ खां और मजनू खां तथा शाह मुहम्मद खां कन्दहाई को रवाना किया। अली कुली खां तथा दूसरे विद्रोही अधिकारी हाजीपुर के निकट एक स्थान में जा जमे थे। उन्होंने सुलेमान करारनी से सहायता मांगी। इसके हाथ में उस समय बंगाल का शासन था। अली कुली खां ने फतह खां और उसके भाई हसन खां से भी सहायता मांगी। तब बादशाह ने अपने विश्वस्त आदमी को जिसका नाम हाजी मुहम्मद खां सीसतानी था, सुलेमान करारनी के पास भेजा और कहलाया कि अली कुली खां को सहायता न दे। जब हाजी मुहम्मद खां सीसतानी रोहतास पहुंचा तो बहुत-से अफगानों ने जो विद्रोहियों से मिले हुए थे उसको बंगाल जाने से रोका और उसको अली कुली खां के समझ उपस्थित किया। अली कुली खां, हाजी मुहम्मद खां को अपने पक्ष में करना चाहता था इसलिये उसने अली कुली के साथ अच्छा व्यवहार किया परन्तु जब उसने देखा कि हाजी मुहम्मद उसका पक्ष ग्रहण नहीं करेगा तो उसको गिरफ्तार कर लिया। हाजी ने स्वामिभक्ति तो नहीं छोड़ी परन्तु अली कुली खां को अच्छी सलाह दी और सन्मार्ग पर आने की प्रेरणा दी। तब अन्त में अली कुली खां और उसकी माता बादशाह की सेवा में उपस्थित हुए।

उड़ीसा के राजा की अधीनता

भारत पर मुसलमानों ने विजय किया तब से उड़ीसा पर किसी सुल्तान का विजयध्वज नहीं फहराया था। उस देश के शासक सदैव शक्तिशाली थे और इस समय वहाँ का राजा विशेष बलवान था। बंगाल के सुल्तानों ने उड़ीसा को जीतना चाहा परन्तु नहीं जीत सके। इस प्रान्त की सीमा पर खतरनाक घाटियां, ऊंचे पर्वत और दुर्गम वन थे, जिनको पार करना कठिन था। जब कोई जगन्नाथ के राजा की शरण ग्रहण कर लेता था। तो बंगाल का सुल्तान उस पर हाथ नहीं डालता था। इब्राहीम सूर ने इस राजा की शरण ली थी और उसके निर्वाह के लिये राजा ने जागीर दे दी थी। सुलेमान करारनी ने बड़ा परिश्रम किया परन्तु वह उसका दमन नहीं कर सका और उससे सदैव डरता रहा। जब बादशाह जौनपुर में ठहरा हुआ था तो उसने निश्चय किया कि एक विश्वस्त पुरुष को राजा के पास भेजकर कहलाया जाये कि वह भी साम्राज्य का सेवक बन जाये। इस काम के लिये हसन खां खजांची और महापत्तर को नियुक्त किया गया। महापत्तर भारतीय कविता और संगीत में निपुण था। दोनों उड़ीसा पहुंचे तो जगन्नाथ के राजा ने उनको सम्मानपूर्वक अपने नगर में बुलाया और उनके साथ बड़ा उचित व्यवहार किया। राजा ने कहा कि यदि सुलेमान बादशाह की अधीनता स्वीकार नहीं करेगा तो वह सेना खड़ी करके इब्राहीम को बंगाल पर चढ़ा लायेगा। इब्राहीम सुलेमान का विरोधी था। राजा ने हसन खां और महापत्तर का तीन मास तक आतिथ्य किया और अच्छे-अच्छे हाथी और बहुमूल्य वस्तुयें शाही दरबार में भेजी। हसन खां महापत्तर और

राजा मुकुन्द देव का राजदूत जिसका नाम राई परमानन्द था, नगर चैन में शाही दरबार में हाजिर हुए। उस समय बादशाह की सवारी जौनपुर से वापस आ गई थी।

आसफ खां का पलायन

आसफ खां को अभी-अभी शाही सेना का सेनापति नियुक्त किया था परन्तु उसके मन में सन्देह था और कलहप्रिय लोगों की कहानियां सुना करता इसलिये उसके मन में डर बैठ गया और वह गढ़ा भाग गया। बात यह थी कि गढ़ा की विजय के बाद जब आसफ खां ने चौरगढ़ के राजकोष पर अधिकार किया तो उसने बादशाह को कोष नहीं बतलाया। इस प्रकार उसने स्वयं ही अपने पतन का सामान जुटा लिया। जब वह शाही सेनापति बन गया तो बड़े-बड़े अमीर उससे द्वेष करने लगे। इसलिये 16 सितम्बर, 1565 को वह अपने डेरे और सामान छोड़कर अपने भाई वजीर खां के साथ गढ़ा भाग गया। इसकी खबर प्रात:काल बादशाह को मिली। उस समय बादशाह जौनपुर में था और शिकार द्वारा अपना मनोविनोद कर रहा था। उसने मुनीम खां खानखाना को सेनापति नियुक्त किया और सुजात खां तथा अन्य कुछ वीर पुरुषों को आदेश दिया कि आसफ खां का पीछा करें। सुजात खां मणिकपुर पहुंचा और वहाँ उसने आसफ खां की तलाश की। वहाँ उसको पता लगा कि आसफ खां कर्रा पहुंच गया है और गढ़ा जाने की तैयारी करने लगा। उस पार आसफ खां को सुजात खां के आने की खबर मिल गई तो सुजात खां को नदी तट पर ही रोकने के लिये वह वापस मुड़ा। सुजात खां की नावें तट पर पहुंची ही थी कि आसफ खां ने उनको रोका तब एक जोर की लड़ाई हुई जो सायंकाल तक चलती रही। अंधेरा होने पर आसफ खां ने समझा कि भाग जाना श्रेयस्कर है। प्रात:काल सुजात खां ने आसफ खां का पीछा किया परन्तु आसफ खां के उन लोगों से जो पीछे रह गये थे सुजात खां को मालूम हुआ कि उस तक पहुंचना अत्यन्त कठिन होगा इसलिये सुजात खां ने वापस लौटकर बादशाह से सलाम किया।

कुलीच खां को रोहतास पहुंचा

यह पहले लिखा जा चुका है कि कुलीच खां को फतह खां को समझाने के लिये और उसकी अपनी जागीर में पुष्टि करने के लिये भेजा गया था। कुलीच खां ने यह व्यवस्था की कि जब शाही सेना जौनपुर पहुंचे तो फतह खां वहाँ आकर बादशाह के प्रति अधीनता प्रकट करें और अपने साथ बख्त बुलन्द हाथी को भी ले आये। एक कारण यह था कि शाही सेना राजधानी से रवाना हुई उससे पहले ही सुलेमान ने रोहतास को एक सेना भेज दी थी। उसकी योजना थी कि अली कुली खां की सहायता से रोहतास पर अधिकार कर लिया जायेगा। सुलेमान और अली कुली खां की संयुक्त सेना ने फतह खां की स्थिति बड़ी विषम कर दी तो खबर आई कि शाही सेना आ रही है। तब सुलेमान की सेना पीछे हट गई और फतह खां युद्ध सामग्री जुटाने लगा। उसने अपने भाई हसन खां को भी रोहतास बुलाया परन्तु हसन खां खुले तौर पर नहीं आ सकता था इसलिये उसने बादशाह से कहा कि मेरे साथ किसी बड़े अधिकारी को भेज दीजिये तो मैं अपने भाई को दुर्ग की चाबियों सहित

ले आऊंगा। इस काम के लिये कुलीच खां को नियुक्त किया गया तो वह रोहतास पहुंच गया। फतह खां ने बहुत झूठी बातें कीं। कुलीच खां वापस चला गया। इस दुर्ग की ओर पूर्वी प्रान्तों का विजय अगले प्रकरण का विषय है।

अली कुली खां शाही सेना के सामने लम्बे अर्से तक खड़ा रहा परन्तु कुछ नहीं कर सका। तब उसने विद्रोह की और तैयारी की। उसने सिकन्दर खां, बहादुर खां और कुछ सैनिकों को सरवर के इलाके में लूटमार करने के लिये भेजा। जब बादशाह को इस बात का पता लगा तो उसने शाह बुदायक खार सैयद खां, किया खां, हुसैन खां आदि को भेजा और आदेश दिया कि विद्रोहियों का मार्ग रोका जाये। शाही सेना निरन्तर कूच करके खैराबाद पहुंची। तब अली कुली खां इलाहाबाद की ओर कूच कर गया। उसने सोचा था कि ऐसा करने से शाही सेना फैल जायेगी। जब इसमें निराशा हुई तो उसने धोखा और मिथ्याचार का आश्रय लिया और मुनीम खां के पास बीबी सर्वकद को भेजा जो बाबर की सेवा कर चुकी थी। उसने मुनीम खां को पुरानी मित्रता की याद दिलाई। तब मुनीम खां ने अली कुली खां को धोखा भरी बातों पर विश्वास करके दरबार में सिफारिश पहुंचाई कि अली कुली खां का प्रस्ताव मान लिया जाये। बादशाह ने खानखाना का निवेदन स्वीकार करके ख्वाजा गयासुद्दीन अली कजविनी को यह पता लगाने के लिये भेजा कि अली कुली खां और मुनीम खां के बीच क्या बात हुई।

मुनीम खां ने अली कुली खां को लिखा कि हम दोनों स्वयं परस्पर मिले और सच्ची सेवा की नींव डाले। उस समय यह खबर थी कि आदिल खां और जमाल खां विलौंची घात में बैठेंगे और अली कुली खां को मार डालेंगे इसलिये अली कुली खां सावधान हो गया। फिर मुनीम खां और अली कुली खां नदी के मध्य में मिले, उनके पास दो-तीन नौकर थे। अली कुली खां चौसा के बाव घाट पर अपनी सेना लेकर आया और बक्सर में खानखाना के शिविर के सामने उसने अपने डेरे लगाये। उसके साथ तीन अफगान अफसर थे। दोनों पक्षों के मध्य में सन्देश आये और गये। अगले दिन अली कुली खां नाव द्वारा तीन आदमियों को साथ लेकर खानखाना के शिविर की ओर चला। उधर से खानखाना भी नाव में बैठकर आया। उसके साथ तीन आदमी थे। नदी के तटों पर दोनों सरदारों की सेनायें खड़ीं थीं। जब नदी के मध्य में दोनों नावें मिली तो अली कुली खां मुनीम खां की नाव में गया। दोनों ने एक दूसरे का आलिंगन किया और दोनों ने बड़ी मिथ्याचार की बातें की।

दोनों पक्षों ने खूब शपथ ली और बड़े-बड़े वायदे किये। इसी में कुछ समय व्यतीत हो गया। फिर यह ठहरा कि मिर्जा गयासुद्दीन अली बादशाह के पास जाकर उसको वस्तु-स्थिति से सूचित करे और निवेदन करे कि ख्वाजा जहां को जो उस समय राजकाज का संचालन करता था भेजा जाये और वह अली कुली खां के चित्त को शान्त करे। तब अली कुली स्वामिभक्त का वचन देगा। गयासुद्दीन के दरबार में जाकर परिस्थिति समझाई तो मुनीम खां की प्रार्थना के अनुसार ख्वाजा जहां को भेजा गया जो दूसरे दिन मुनीम खां से मिला। दोनों कुछ लोगों को साथ लेकर अली कुली खां के स्थान पर गये। अली कुली खां ने उनका

बड़ा स्वागत किया। दूसरे दिन मुनीम खां ने चाहा कि ख्वाजा जहां के साथ फिर अली कुली खां से मिलना चाहिए तब ख्वाजा जहां ने कहा अली कुली खां शान्त प्रकृति वाला पुरुष नहीं है। वह मुझसे अप्रसन्न है। मैं उसके निवासस्थान पर जाना वांछनीय नहीं समझता। यदि आप वहां जाने पर तुले हुए हैं तो अपनी सुरक्षा के लिये उससे जमानत लेनी चाहिये और जमानत में इब्राहीम खां उजबेग को अपने पास रखना चाहिये। अली कुली खां ने इब्राहीम खां को जमानत के रूप में भेज दिया तो अगले दिन मुनीम खां और ख्वाजा जहां अली कुली से मिलने गये और फिर दूसरे दिन इब्राहीम खां के निवासस्थान पर मुलाकात हुई। उस समय मजनू खां काकशाल, बाबा खां काकशाल और मिर्जा बेग उपस्थित थे। अली कुली खां का सब के साथ समझौता हो गया। अली कुली खां के दरबार में जाने के विषय में बहुत चर्चा हुई परन्तु उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उसने कहा कि मैंने इतनी कृतघ्नता की है कि दरबार में जाने का मुझे साहस नहीं होता। मैं अपनी माता को और इब्राहीम खां को जो हम से बुजुर्ग हैं बादशाह की सेवा में भेज दूंगा और फिर अच्छी सेवा के बाद मैं स्वयं उपस्थित होऊंगा। बड़ी बहस के बाद इस व्यवस्था पर सब सहमत हो गये।

अगले दिन अली कुली खां ने अपनी माता और इब्राहीम खां को कुछ प्रसिद्ध हाथियों के साथ भेज दिया। मीर हादी निजाम आका हाथियों के साथ था। खानखाना और ख्वाजा जहां ने सेना नदी तट पर छोड़ी और अली कुली खां की माता को इब्राहीम खां को और भेटों को अपने साथ लेकर वह दरबार में पहुंचे।

खानखाना ने इब्राहीम खां की गर्दन में तलवार और कफन बांध दिये थे वह नंगे सिर और नंगे पैर था। ऐसी दशा में उसको बादशाह के सामने उपस्थित किया गया। बादशाह ने कहा, यह स्पष्ट है कि यह लोग अपने वचनों पर दृढ़ नहीं रहेंगे। फिर भी आपके स्नेह के लिहाज से इन लोगों को क्षमा कर दिया गया है। इनकी जागीर भी पूर्ववत दे दी जायेगी। परन्तु जब तक शाही सेना शिकार और मनोविनोद के लिये इधर पड़ी हुई है तब तक अली कुली खां को गंगा पार करके इधर नहीं आना चाहिये। जब दरबार आगरा पहुँच जायेगा तब इन लोगों के कारिन्दे वहां आकर अपनी जागीरों के विषय में आदेश प्राप्त कर लेंगे और फिर जो भी आदेश दिया जायेगा उसके अनुसार ये अपनी जागीरों का उपभोग करेंगे। खानखाना की प्रतिष्ठा अत्यन्त उच्च हो गई। फिर यह आदेश दिया गया कि इब्राहीम खां की गर्दन से तलवार और कफन हटा दिये जायें। उस समय अली कुली की माता शाही अन्तःपुर में ठहरी हुई थी वह रांतनि पीटती थी और शाही क्षमा की प्रतीक्षा कर रही थी। जब उसको पता लगा कि अली कुली खां को क्षमा दे दी गई है तो उसको बड़ी प्रसन्नता हुई।

मीर मुइनुल मुल्क की लड़ाई

इसके कुछ दिन पश्चात् मीर मुइनुल मुल्क की लड़ाई की खबर आई। घटना इस प्रकार हुई कि अली कुली खां के उकसाने से बहादुर खां और सिकन्दर खां ने सरकार में उपद्रव खड़ा कर दिया था। तब शाही शिविर से एक काफी बड़ी सेना [illegible] आ पहुंची

तब विद्रोही लोग परेशान हो गये। उनका साहस भंग हो गया और वे चालाकी और धोका करने लगे। उन्होंने मीर मुइनुल मुल्क से कहलाया, आप यह कैसे मानते हैं कि हम शाही सेना का सामना करेंगे और युद्ध करेंगे। हमारी इच्छा तो यह है कि शाही सेवक बीच-बचाव करके हमारे अपराधों की सफाई कर दे। हमको कुछ हाथी मिले हैं जो हम बादशाह को भेंट कर रहे हैं। जब यह प्रकट होगा कि हमारे अपराध क्षमा कर दिये गये हैं तो हम स्वयं आकर क्षमा के लिए प्रार्थना करेंगे। मीर मुइनुल मुल्क और दूसरे अधिकारी लोग यह जानते थे कि यह सब धोखे की बातें हैं तो उन्होंने इस पर ध्यान नहीं दिया और उत्तर भेजा कि आपके अपराध ऐसे हैं कि रक्तपात के बिना उनका फैसला नहीं हो सकता। बहादुर खां ने फिर मुइनुल मुल्क से कहलाया कि हम दोनों परस्पर मिले और सब मामलों पर बातचीत करें। मीर मुइनुल मुल्क सहमत हो गया और कुछ अनुचरों के साथ बाहर आया। बहादुर खां भी कुछ सेवकों के साथ बाहर निकला और उसने मीर मुइनुल मुल्क का आलिंगन किया।

दोनों पक्षों से प्रस्ताव पेश किये गये। परन्तु शान्ति स्थापित नहीं हो सकी और व्यर्थ बातों में समय नष्ट हो गया।

जब इस बात की खबर बादशाह को मिली तो उसने आदेश दिया कि लश्कर खां और राजा टोडरमल भी शाही सेना में चले जायें यदि यह लड़ाई करना उचित समझे तो लड़ाई करे यदि विद्रोहियों की प्रार्थना पर विचार करना उचित माने तो उनको निराश न करे। जब यह दोनों स्वामिभक्त अधिकारी सेना में पहुंचे तो उन्होंने विद्रोहियों से कहलाया यदि उनमें सच्ची स्वामिभक्ति है तो वह शाही दरबार में आये, अन्यथा व्यर्थ समय नष्ट न करे। तब विद्रोहियों ने खैराबाद के निकट और अधिक उपद्रव करना शुरू किया। शाही सेना को पता नहीं था कि अली कुली खां ने क्या प्रार्थना की है और बादशाह ने अपनी उदारता की क्या घोषणा की है। राजा टोडरमल और लश्कर खां ने युद्ध करने का निश्चय कर लिया और अपनी सेना का व्यूह बनाया। मध्य भाग में मीर मुइनुल मुल्क, मीर अली अकबर, राजा टोडरमल, लश्कर खां, दौलत खां, फौजदार आदि रहे। बायें पार्श्व में किया खां हसन अक्ता और शेख सुल्तान तथा राज मित्रसेन आदि को रक्खा और बायें पार्श्व में बाकी खां, शाह बुदा खां, मुतलिब खां आदि को नियुक्त किया। अग्रसेना में मुहम्मद अमीन दीवाना मासूम खां फरनखुदी आदि थे। इसी भांति का व्यूह विद्रोहियों ने भी बनाया था, फिर जोर की लड़ाई हुई, जिसमें विरोधियों का एक सरदार मुहम्मद यार मारा गया और अन्य कितने ही लोग नष्ट हो गये। सिकन्दर खां विद्रोहियों के साथ था जो भाग गया। विजयी लोगों ने अनेक विद्रोही मारे। सिकन्दर के साथ बहुत से सिपाही भी भाग गये थे। विजयी सैनिकों ने सिकन्दर का पीछा किया और लूटमार करने लगे। बहादुर खां कुछ लोगों के साथ घात में बैठा हुआ था। उसने लड़ाई लड़ी तो बुदा खां, जो शाही सेना में था घोड़े से गिर पड़ा और उसे पकड़ लिया गया। उसके पुत्र अबुल मत्तालिब ने भी अच्छी सेना नहीं की। नासिर कुली और अन्य कई लोग शत्रु से जा मिले। फिर शाही सेना का मध्य भाग भी भाग गया। कितने ही लोगों ने धोखा दिया और पीठ दिखा दी। इस प्रकार शाही

सेना विजयी होती-होती हार गई। राजा टोडरमल, किया खां और इतिमाद खां खूब लड़े परन्तु सेना विचलित हो गई थी, इसलिये विजय प्राप्त नहीं हुई।

शेर मुहम्मद दीवाना ने समाना लूटा

शेर मुहम्मद दीवाना ख्वाजा मुअज्जम का एक सेवक था। फिर उसने बैराम खां की नौकरी कर ली और उसका बड़ा प्रिय बन गया। जब बैराम खां पर विपत्ति आई तो ख्वाजा कृतघ्नता के मार्ग का अनुसरण करने लगा।

शेर मुहम्मद खां वांछनीय व्यक्ति नहीं बन सका। कुछ समय के लिये वह समाना में रहा। जब अली कुली खां और कुछ अन्य लोगों ने विद्रोह किया और उसके दमन के लिये बादशाह ने सेना भेजी तो शेर मुहम्मद खां कुछ बदमाशों को एकत्र करके उपद्रव करने लगा। वहां का फौजदार मुल्ला नूरुद्दीन मुहम्मद तरखान था। उसने समाना का शासन करने के लिये मीर दोस्त मुहम्मद को वहां छोड़ दिया था। एक दिन इस दुष्ट ने दोस्त मुहम्मद को अपने मकान पर बुलाया। जब दावत चल रही थी तो उसने इस निरपराध आदमी की छाती पर बाण मारा और उसे मार दिया। इस परगने में उसकी जो कुछ सम्पत्ति थी वह भी उसने हथिया ली। इसी भांति उस परगने के शिकदार को मार डाला। तब बदमाश लोग उसके झण्डे के नीचे आ गये और वे आसपास के प्रान्तों पर आक्रमण करने लगे। तब मुल्ला नूरुद्दीन ने कुछ लोग इकट्ठे किये और उसका दमन करने लगा। नूरुद्दीन के आगमन की खबर सुनकर विद्रोही उसका मुकाबला करने के लिये तैयार हो गये। अली कुली खां का घोड़ा एक वृक्ष से टकराया और गिर पड़ा, तो कुछ लोगों ने दौड़ कर उसे पकड़ लिया। मुल्ला नूरुद्दीन ने उस पागल का वध करवा दिया।

बादशाह ने कृपा करके अली कुली खां और अन्य विद्रोही सरदारों को क्षमा कर दिया। फिर उसको बनारस और चुनार का किला देखने का खयाल आया। यह दुर्ग भारत के प्रसिद्ध दुर्गों में गिना जाता है इसलिये असरफ खां को जौनपुर में नियुक्त करके बादशाह ने 24 जनवरी 1566 को प्रयाण किया। तीन मंजिल के बाद वह बनारस पहुंच गया और वहां अपना शिविर लगाकर कुछ आदमियों के साथ चुनार गया। उसने दुर्ग को अन्दर और बाहर से देखा। इसी बीच में खबर आई कि पास के वन में कितने ही हाथी हैं। तब बादशाह कुछ सेवकों को साथ लेकर उस वन में गया। दो कोस चलने के बाद हाथियों का झुण्ड दिखाई दिया तो आदेश हुआ कि इनको सब ओर से घेर लिया जाये। तब 10 हाथी पकड़ लिये गये और मजबूत रस्सों से उनकी गर्दनें बांध कर उनको दुर्ग में लाया गया।

जब मुनीम खां ने अली कुली खां के पक्ष में बादशाह से बात की तो यह उत्तर मिला, ''उसको क्षमा कर दिया जायेगा परन्तु यदि वह आज्ञा मानता रहेगा तो हमको बड़ा आश्चर्य होगा'' और ऐसा ही हुआ। खानखाना के कहने से अली कुली खां और बहादुर खां को उनकी जागीरें इस शर्त पर दे दी थीं कि जब तक शाही डेरे पास में लगे हुए हैं तब तक खान-ए-जमा नदी पार नहीं करेगा। यह भी शर्त थी कि जब शाही ध्वज राजधानी को लौट जाये तो इन लोगों के कारिन्दे वहां आकर जागीर की सनदें ले आयें और फिर अपनी-

अपनी जागीरों पर कब्जा ले ले, परन्तु जिस दिन बादशाह बनारस और चुनार के लिये रवाना हुआ उसी दिन अली कुली खां नदी पार करके मुहम्मदाबाद आ गया और उसने गाजीपुर और जौनपुर अपने आदमी भेजे। बादशाह शिकार से लौट कर बनारस ठहरा हुआ था तो उसको खबर मिली कि समझौता भंग कर दिया गया है और अली कुली खां गंगा पार कर चुका है, बादशाह को क्रोध आया। ख्वाजा जहां, मुजफ्फर खां, राजा भगवानदास और अन्य स्वामिभक्त अधिकारियों को डेरों में छोड़कर वह कूच-दर-कूच अली कुली खां को दण्ड देने के लिये चला। जाफर खां तकलू और कासिम खां को गाजीपुर के विरुद्ध भेजा गया। जब वे दुर्ग द्वार पर पहुंचे तो दुर्गरक्षक एक बुर्ज से नदी में कूद पड़े और मुहम्मदाबाद पहुंच कर उन्होंने अली कुली खां को सूचित किया, वह घबरा कर भाग गया। जब वह सरवार के तट पर पहुंचा तो उसको और उसके साथियों को कुछ नावें मिल गई। ऐसे ही अवसर के लिये ये नावें वहां रखी गई थीं। इनके द्वारा वे सुरक्षित स्थान पर पहुंच गये। बादशाह और उसके साथी उसी रात को हाथियों पर सवार होकर जौनपुर पहुंच गये। रात्रि में बादशाह हाथी पर ही सोया और प्रात:काल होते ही फिर चल दिया। एक पहर दिन बीतने पर वे अली कुली खां के डेरों में पहुंच गये। अली कुली अपने डेरे और सामान वहीं छोड़कर भाग गया। अली कुली खां का हाथी बुलन्द बख्त उनके हाथों में पड़ गया। इसके पश्चात् मजनू खां काकसाल मिर्जा नजात खां और कुछ अन्य लोगों को आगे भेजा। शाम होते-होते खबर आई कि अली कुली सरवार नदी को पार कर रहा है। वे लोग पहले ही लम्बा मार्ग चल चुके थे और अब थोड़ा-सा दिन शेष था, इसलिए वे ठहर गये। प्रात:काल होते ही उन्होंने फिर कूच कर दिया। आगे जाने वाले लोग नदी तट पर पहुंच गये। उन्होंने अली कुली की नावें जिनमें उसका सामान भरा हुआ था, छीन लीं। नाव वालों से उनको अली कुली खां के विषय में पूरी सूचना मिल गई। तब शाही सेना ने सरवार नदी के किनारे-किनारे कूच किया। उन्होंने सर्वत्र अली कुली खां को तलाश किया परन्तु उसका कोई चिन्ह नहीं मिला। मुनीम खां ने एक तरकीब की थी। वह नहीं चाहता था कि अली कुली खां पकड़ लिया जाये इसलिए उस रात्रि को वह ठहर गया और अली कुली खां को उसने सचेत कर दिया। फिर मालूम हुआ कि अली कुली वन मार्ग से चीलू पाड़ा के दुर्ग पर जा पहुंचा है। बादशाह ने मुनीम खां के आचरण पर ध्यान नहीं दिया। शाही सेना के पास नावें नहीं थीं और उनको यह भी पता नही था कि इस नदी को कहां पर पार किया जा सकता है इसलिए सेना नदी के किनारे-किनारे कूच करती रही और चीलू पाड़ा के सामने उसने डेरे लगाये, दोनों ओर से तोपें चलाई गईं। जब अली कुली खां को यह मालूम हुआ कि बादशाह अकबर स्वयं सेना में उपस्थित है तो वह भाग गया। अगले दिन भी शाही सेना प्रयाण करती रही, फिर मऊ पहुंच कर उसने डेरे लगाये।

जब सिकन्दर खां और बहादुर खां ने सुना कि अली कुली खां के विरुद्ध अभियान हो रहा है और जौनपुर में असरफ खां ने अली कुली की माता को पकड़ लिया है और उसके पास केवल थोड़ी-सी सेना है इसलिये जौनपुर के किले को छीना जा सकता है तो उन दोनों ने उधर की ओर प्रयाण किया। असरफ खां के पास कोई विशेष तैयारी नहीं थी इसलिये वे दरवाजा तोड़कर अन्दर घुस गये। एक दल ने सीढ़ियों के द्वारा दुर्ग प्राचीर को

फांद कर अन्दर प्रवेश कर लिया। असरफ खां को इस घटना की खबर मिली इससे पहले ही वे लोग दुर्ग में प्रवेश कर चुके थे। बहादुर खां ने असरफ खां को कारागार में रख दिया और अली कुली की माता को उसने मुक्त कर दिया और नगर को खूब लूटा और लोगों पर अत्याचार किये। फिर वह शीघ्रतापूर्वक बनारस चला गया और वहां भी लोगों को लूटा। वहां खबर आई कि शाही सेना वापस लौट आयी है तब सिकन्दर और बहादुर ने नरहन नामक घाट पर पहुंच कर नदी पार की।

शाही सेना के दबाव से अली कुली खां भाग गया। जब सिकन्दर और बहादुर की गड़बड़ बादशाह ने सुनी तो उसने अपनी सेना शिविर की ओर प्रस्थान किया परन्तु विद्रोही लोग उसके आगमन की खबर सुनकर भाग गये थे। शिविर में अब शान्ति हो गई। वहां से बादशाह ने जौनपुर की ओर प्रयाण किया। जब वह निजामाबाद पहुंचा तो उसकी तुलना की गई। उसने बहुत बड़ा भोज दिया और लोगों ने उसकी दीर्घ आयु और दीर्घ शासन के लिये भगवान् से प्रार्थना की। उसके पश्चात् कूच करके बादशाह जौनपुर पहुंच गया। उसने निश्चय किया कि जब तक विद्रोही निर्मूलन हो जाये तब तक जोधपुर में ही निवास किया जाये। इसके अनुसार बड़े-बड़े अमीरों ने भी वहां अपने मकान बना लिये, फिर यह आदेश जारी हुआ कि जो सैनिक अधिकारी छुट्टी पर गये हुए हैं वे वापस आ जायें। इसके बाद अली कुली खां को पकड़ने का आदेश हुआ।

जब अली कुली खां को इसका पता लगा तो उसने मिर्जा मिराक रजवी को खेद और दुःख प्रकट करने के लिये बादशाह के पास भेजा और अपने अपराधों के लिए क्षमा मांगी और हजारों प्रकार की मीठी बातें कहलाईं। इस प्रकार उसने मुनीम खानखाना को एक बार बीच-बचाव करने के लिये प्रेरित किया। खानखाना को मालूम था कि बादशाह का रुख क्या है इसलिये उसको बीच-बचाव करने का साहस नहीं हुआ। उसने यह काम मीर मुर्तजा सरीफी, मुल्ला अब्दुल्ला सुल्तानपुरी और शेष अब्दुन नबी सदर को सौंपा। उन्होंने बादशाह के सामने सिफारिश की। बादशाह जानता था कि विद्रोही समय टालना चाहता है तथापि उसने यह प्रार्थना मान ली और विद्रोहियों के अपराध क्षमा कर दिये और अन्त में शर्त यह रखी कि वे लोग अपने दुष्कर्मों का पश्चात्ताप करें और भविष्य में स्वामिभक्त बने रहे। जब उनकी ओर से ऐसा प्रकट होगा तो उनकी जागीरें उनको दे दी जायेंगी। खानखाना और दूसरे सरदारों ने बादशाह को धन्यवाद दिया। फिर मीर मुर्तजा, मौलाना अब्दुल्ला और मुईन खां फरनखुदी को आदेश दिया गया कि वे अली कुली खां के पास जायें और उससे पश्चात्ताप करायें और उसे क्षमा की खबर सुनायें। इसके बाद बादशाह ने जौनपुर में ठहरने का विचार छोड़ दिया और वापस लौट जाने का निश्चय किया और 3 मार्च, 1566 को उसने जौनपुर से आगरे की ओर प्रयाण किया। एक सप्ताह में सेना माणिकपुर पहुंच गई और गंगा के किनारे डेरे लगाये गये। बादशाह के आदेश के अनुसार अधिकारियों ने एक ही दिन में एक पुल बना दिया। जब बादशाह राजधानी को पहुंच रहा था तो सुलेमान का भतीजा करारानी और इमात का पुत्र दरबार में उपस्थित हुए और बादशाह उनसे कृपापूर्वक मिला।

प्रकरण 59

बादशाह के शासन का ग्यारहवां वर्ष

शासन का ग्यारहवां वर्ष 10 मार्च, 1566 को शुरू हुआ। दो-तीन दिन तक कर्रा में बादशाह ने लोगां को आतिथ्य किया और नये वर्ष का भोज दिया। फिर खानेजमान के मामलों का निपटारा करने के लिए खानेखाना मुनीम खां को और मुजफ्फर खां को वहां छोड़ा। इन लोगों को आदेश दिया कि जो लोग खानेजमान के पास भेजे गये हैं, उनकी वापसी तक वहीं ठहरें। इसके पश्चात् शाही सेना कालपी को और फिर कालपी से राजधानी की ओर कूच करने लगी और 28 मार्च, 1566 को आगरा पहुंची। वहां कुछ दिन ठहर कर बादशाह नगरचैन गया। जो अब बनकर तैयार हो गया था। मुनीम खां और मुजफ्फर खां राजदूतों की वापसी की प्रतीक्षा में कर्रा टिके रहे। जब यह राजदूत अली कुली खां से मिलने गये तो उसने इनका आदरपूर्ण स्वागत किया और बड़ी मीठी-मीठी बातें कीं। उसने शपथ लेकर भविष्य में आज्ञापालन का मार्ग ग्रहण करने का वचन दिया। परन्तु यह सब मिथ्याचार की बातें थीं। इस प्रकार कर्तव्यपालन करके मुनीम खां और मुजफ्फर खां कूच-दर-कूच राजधानी की ओर चले। जब दोनों इटावा पहुंचे तो मुजफ्फर खां को मुनीम खां पर सन्देह होने लगा और वह (मुजफ्फर खां) शीघ्रता करके बादशाह के पास चला गया। बादशाह उससे कृपापूर्वक मिला। मुजफ्फर खां ने बादशाह को बतलाया कि मुनीम खां दोहरी चालें चल रहा है। फिर मुनीम खां तथा अन्य अधिकारी शाही दरबार में आ पहुंचे। लश्कर खां को बख्शी के पद से हटा दिया गया और ख्वाजा जहां को फटकारा गया। उसके पास से शाही मुहर लेकर उसको मक्का भेज दिया गया। इनके साथ कठोर व्यवहार हुआ इससे मुनीम खां और अधिक सचेत हो गया। मुजफ्फर खां की प्रतिष्ठा और बढ़ गई और दरबारियों के बीच-बचाव करने से ख्वाजा जहां को क्षमा दे दी गई।

इसी वर्ष बादशाह ने जमाबन्दी की ओर ध्यान दिया। उसके आदेशानुसार मुजफ्फर खां ने जमा रकमी को बन्द कर दिया गया जो बैराम खां के समय में की गई थी। इसमें व्यक्तियों की बहुलता और भूमि की कमी के कारण केवल दिखाने के लिये नाममात्र की वृद्धि की गई थी। इससे सम्बन्ध रखने वाले कागजों को प्रामाणिक माना जाता था। जो धन के लालचियों के लिये रुपया हड़पने का साधन बन गया था। कानूनगो और अन्य अधिकारियों ने जो साम्राज्य की भूमि से परिचित थे अपने ही अनुमान से भूमि की उपज निश्चित करके नया अंक निश्चित कर दिया था। यह हाल हासिल अर्थात् नियमित अंक तो नहीं था फिर भी पिछले अंकों की अपेक्षा नियमित कहा जा सकता था।

अभी दाग विभाग स्थापित नहीं किया गया था। किन्तु इस समय यह निश्चय किया गया कि प्रत्येक अधिकारी के पास और बादशाह के सेवकों के पास कितने अनुचर रहने चाहिये जिससे सेवा के समय उसके पास निश्चित संख्या में लोग तैयार रहें। ऐसे अनुचरों की तीन श्रेणियां बनाई गईं। प्रथम श्रेणी के अनुचर को 48000 दाम दूसरी श्रेणी के अनुचर

को 32000 दाम और तीसरी श्रेणी के अनुचर को 24700 दाम प्रति वर्ष मिलते थे।[1]

अब्दुल्ला खां उजबेग का लोप

अब्दुल्ला खां उजबेग हार कर गुजरात भाग गया था। चंगेज खां ने हकीम आइन उलमुल्क से इस विषय में समझौता किया था। उसके अनुसार उजबेग को गुजरात से निकाल दिया गया था। फिर वह विपत्तियों का मारा इधर-उधर घूमता फिरा। तत्पश्चात् उसने पुनः मालवा की सीमा पर आकर राजद्रोह करना शुरू किया। तब शिहाबुद्दीन अहमद खां ने जिसको पहले मालवा का व्यवस्थापक नियुक्त किया गया था, एक सेना खड़ी की और उसके विरुद्ध प्रयाण किया। अब्दुल्ला खां पकड़ा ही जाने वाला था। परन्तु किसी न किसी भांति हजारों कष्ट उठाकर वह अली कुली खां और सिकन्दर खां के पास पहुंच गया। इसके बाद उसका कोई पता नहीं लगा।

जलाल खां कुर्ची

बादशाह को मालूम हुआ कि जलाल खां के पास एक सुन्दर लड़का है, जिसके साथ जलाल खां का अनुचित सम्बन्ध है। इसलिये बादशाह उससे अप्रसन्न हो गया और उन दोनों को अलग-अलग कर दिया। तब जलाल खां उस लड़के के साथ रात में ही भाग गया। तब युसुफ खां तथा अन्य लोगों को उसका पीछा करने के लिये भेजा गया जो उन दोनों को पकड़कर दरबार में ले आये। जलाल खां को बड़े अर्से तक दरवाजे में खड़ा रखा जाता था और आने जाने वाले उसको लातें मारा करते थे। फिर बादशाह को जलाल खां की सेवाओं का स्मरण आया और पुनः उस पर अनुग्रह किया जाने लगा।

मेहंदी कासिम खां की गढ़ा पर नियुक्ति

पहले लिखा जा चुका है कि आसफ खां राजद्रोह के मार्ग पर चलने लग गया था जब शाही शिविर जौनपुर से आगरा आ गया तो बादशाह ने निश्चिय किया कि मेहंदी कासिम खां को, जो राजवंश का एक पुराना सेवक था, गढा भेजा जाये। वह वहां का प्रशासन करे और आसफ खां को पकड़े। मेहंदी कासिम खां ने वहां जाने की तैयारी कर ली परन्तु उसके आगमन से पहले ही आसफ खां को इसकी सूचना मिल गई और वह वहां से भाग गया, वह वन के पशु की भांति जंगलों में छिपता फिरा।

गढ़ा पहुंच कर मेहंदी कासिम खां ने आसफ खां का पीछा किया। अली कुली खां आसफ खां को अपने पक्ष में करना चाहता था उसने यह अच्छा मौका समझा और आसफ खां को पत्र लिखा कि मैं अकबर का विरोध करना चाहता हूं। आसफ खां मूर्खतावश अपने

---

1. इसके अनुसार एक प्राइवेट सैनिक को 24 से 48000 दाम प्रतिवर्ष मिलते थे। इसका अर्थ है कि उसको 1000 रुपया प्रतिवर्ष मिलता था। परन्तु वास्तव में एक सवार को 360 रुपया वार्षिक से अधिक नहीं दिया जाता था। उपरोक्त राशि शायद अधिकारियों को दी जाती होगी। यह भी हो सकता है कि उस समय दाम का मूल्य कम हो।

भाई वजीर खां के साथ जौनपुर पहुंचा और अली कुली खां से मिल गया। मेहंदी कासिम खां गढ़ा का हाकिम बन गया।

पोलो का खेल

जब बादशाह नगर चैन में था तो वह मनोविनोद के लिए पोलों खेला करता था। प्रत्यक्ष में वह पोलो खेलता था परन्तु वास्तव में वह प्रशासन का ध्यान रखता था और सांसारिक कामों का यथोचित संचालन करता था। इससे घोड़े अच्छे सध गये थे और लोगों को परिश्रम और सक्रियता की आदत पड़ गई थी।

यूसुफ मुहम्मद खां कोकलताश की मृत्यु

यूसुफ मुहम्मद, मुहम्मद अजीज का भाई था। वह अत्यधिक मद्यपान करता था। इसलिए 24 मई, 1566 को 5 दिन की बीमारी के बाद उसकी मृत्यु हो गई। उसके शव को नगरचैन से आगरा दफनाने के लिये भेज दिया गया। उसकी मृत्यु से बादशाह को बड़ा दु:ख हुआ। उसने दुखी परिवार के प्रति बड़ी संवेदना प्रकट की।

मेहंदी कासिम खां का हज्जाज जाना

मेहंदी कासिम खां को गढ़ा का हाकिम बनाकर आदेश दिया गया था कि वह आसफ खां को वहां से बाहर निकाल दे। गढ़ा का प्रदेश बिना परिश्रम के ही मेहंदी कासिम के हाथ में आ गया। परन्तु यह प्रदेश बहुत बड़ा था और वहां की परिस्थिति बिगड़ी हुई थी इसलिये मेहंदी कासिम का उत्साह टूट गया और वह निराश-सा रहने लगा और वर्ष के मध्य में शाही अनुमति प्राप्त किये बिना ही हज्जाज जाने के इरादे से वह दक्षिण की ओर चल दिया। जब बादशाह को इस बात का पता लगा तो उसने मेहंदी कासिम को क्षमा कर दिया और गढ़ा प्रदेश के प्रशासन का समुचित प्रबन्ध किया। इसके लिये शाह कुली खां नर्रज्जी और काकर अली खां तथा अन्य वीरों को उस प्रान्त में नियुक्त किया गया। इससे उस प्रदेश की स्थिति सुधर गई और बादशाह ने इन लोगों पर कृपा की।

***

प्रकरण 60

मिर्जा मुहम्मद हकीम के राजद्रोह के दमन के लिये बादशाह का अभियान और अन्य घटनाएं

शाही सेना के आगमन की खबर सुनकर मिर्जा सुलेमान बदख्शां चला गया था। परन्तु वह निरंतर काबुल लौटने का विचार किया करता था। जब उसे मालूम हुआ कि शाही

अधिकारियों में से वहां कोई नहीं है तो उसने समझा कि अवसर आ गया। चौथी बार सेना खड़ी करके हरम बेगम के साथ उसने काबुल के विरुद्ध प्रयाण किया। जब मिर्जा मुहम्मद हकीम को इसका पता लगा तो उसने काबुल का दुर्ग मासूम के सुपुर्द कर दिया। जो उसके सेवकों में साहस और बुद्धि के लिये प्रसिद्ध था और वह अपने प्रधानमंत्री ख्वाजा हसन नक्शबन्दी के साथ शकरदरा और घोरबन्द चला गया। मिर्जा सुलेमान ने काबुल पहुंच कर दुर्ग को घेर लिया। थोड़े दिन बाद ही उसको अनुभव हुआ कि वह दुर्ग को नहीं जीत सकता, उसको यह भी विदित हुआ कि मिर्जा घोरबन्द में है और हरम बेगम के छल और कपट के द्वारा अपने उद्देश्यों की पूर्ति करना चाहता है इस कलुषित उद्देश्य के साथ हरम बेगम मिर्जा सुलेमान को काबुल में छोड़ कर घोरबन्द गई। उसने मिर्जा हकीम के पास योग्य आदमियों को भेजकर कहलाया कि मैं तुमसे अपने पुत्र की अपेक्षा अधिक प्रेम करती हूं। विशेष कर इसलिये कि तुम से अब नया सम्बन्ध हो गया है। मेरी आत्मा का यह उद्देश्य है कि तुम्हारे साथ मेल बना रहे और अपने सम्बन्ध का आधार और भी दृढ़ हो जाये। इस समय मेरे आने का और तुमसे मिलने का उद्देश्य यह है कि मैं अपने स्नेह-सम्बन्धों को और भी दृढ़ करना चाहती हूं। मिर्जा हकीम बेगम के कपट में फंस गया और करा बाग के समीप जो काबुल से 12 कोस के अन्तर पर है उससे मिल कर सम्बन्ध को दृढ़ करने पर तैयार हो गया। जब उसने मिलने का पूरा निश्चय कर लिया तो अपने विश्वस्त आदमियों को इसलिये आगे भेजा कि वे शर्तें और वायदे करवायें और किसी प्रकार का मिथ्याचार न हो। जब राजदूत पहुंचे तो बेगम ने शपथ खाई और कहा कि कोई छल की बात नहीं है और जैसा कहा जाता है वैसा ही होगा। जब मिर्जा के आदमियों ने बेगम की शपथ सुनी तो उन्होंने वचन दिया कि कराबाग में वे बेगम और मिर्जा की मुलाकात की व्यवस्था कर देंगे और मिर्जा के साथ मेल-जोल और पुत्र सम्बन्ध पक्का हो जायेगा।

जब बेगम ने देखा कि षडयंत्र बन गया तो उसने आदमी भेज कर मिर्जा सुलेमान से कहलाया कि "मैंने मिर्जा के आदमियों के द्वारा ऐसी व्यवस्था कर दी है कि वह कराबाग आयेगा इसलिये आप दुर्ग के निकट कुछ सेना छोड़ कर कुछ लोगों के साथ शीघ्र प्रयाण करें और कराबाग के पास घात लगा कर बैठ जाये। जब मिर्जा वहां पहुंचे तो आप उसको बन्दी बना लें। जब मिर्जा सुलेमान को यह खबर मिली तो काबुल का घेरा उसने मुहम्मद कुली सिंघाली को सौंपा जो उसका एक विश्वस्त अधिकारी था और स्वयं रात में ही कूच करता हुआ चला और कराबाग के निकट एक पहाड़ी की चोटी के पीछे घात लगा कर बैठ गया। मिर्जा हकीम के राजदूत बेगम की शपथपूर्ण बातें सुनकर वापस चले गये। उन्होंने केवल बाह्य रूप देखा और अन्तः कपट को नहीं समझा। उन्होंने अपनी मुलाकात का बहुत अच्छा वृत्तान्त सुनाया। मिर्जा के सारे आदमियों ने उससे कहा कि बेगम से मिलना चाहिये, केवल बाकी काकशाल ने इसका विरोध किया। उसने कहा कि शपथ धोका देने के लिये की गई है। इस बहाने से बेगम आपको मिर्जा सुलेमान के चंगुल में फंसाना चाहती है। उसने सारे धोके का अच्छा विश्लेषण किया तथापि हकीम अपने कुछ विश्वस्त साथियों को लेकर कराबाग की ओर चला, मार्ग में उसको एक काबुली मिला जो मिर्जा सुलेमान के प्रयाण के समय बदख्शियों के साथ था परन्तु उनको छोड़कर मिर्जा हकीम से आ मिला

था। उसने कहा कि मिर्जा सुलेमान एक-एक पहाड़ी के पीछे घात लगा कर बैठा हुआ है और अपना अवसर देख रहा है मैं उस रात को उसके साथ था इस खबर को सुनकर मिर्जा ने वापस फिर-कर काबुल का रास्ता लिया। जब मिर्जा सुलेमान ने यह खबर सुनी तो उसने हकीम का पीछा किया और उसके कुछ आदमियों को पकड़ लिया। जो कुछ माल पीछे रह गया था लूट लिया गया। बाकी काकशाल और उसके भाई-बन्धु मिर्जा के पीछे-पीछे आ रहे थे। उन्होंने उसको और आगे चलाया। कुछ बदख्शी लोग मिर्जा के समीप पहुंच गये तो ऐसा मालूम होता था कि वह पकड़ लिया जायेगा। बाकी काकशाल और उसके भाई-बन्धु वीरतापूर्वक लड़े। बाणों और गोलियों से शत्रु को रोकते रहे, इसलिये मिर्जा आगे चला गया इस प्रकार वे मिर्जा को खतरनाक स्थान से निकाल लाये। मिर्जा सुलेमान ने उसका संजग की घाटी तक पीछा किया परन्तु जब उसको यह मालूम हुआ कि मिर्जा भाग गया है तो उसको ठहराना पड़ा। मिर्जा का सामान और उसके आदमी बदख्शी लोगों के हाथों में आ गये। जब रात्रि हुई तो मिर्जा हकीम घोरबन्द की एक घाटी में ठहर गया और जो सामान वह घोरबन्द में छोड़ आया था उसको लाने के लिये उसने अपने आदमी भेजे। दूसरे दिन वह हिन्दू कोह में पहुंच गया और अगले दिन मुजराये अशरफ आया जो उजबेगों के अधिकार में था। वहां से वह एक या दो मंजिल आगे चला। ख्वाजा हसन और उसके आदमी चाहते थे कि मिर्जा बल्ख के शासक पीर मुहम्मद खां के पास जायें और उससे सहायता मांगे। परन्तु बाकी काकशाल ने यह प्रस्ताव नहीं माना और कहा कि मैं तो मिर्जा को अकबर के दरबार में ले जाऊंगा। ख्वाजा हसन और अन्य लोग बल्ख चले गये। बाकी काकशाल और उसके भाई जो उसके मत में थे मिर्जा को घोरबन्द ले आये और वहां से वे ईसा और बहरा के मार्ग से जलालाबाद पहुंच गये। वहां से वे पेशावर आये और फिर सिन्धु नदी के तट पर जा पहुंचे। मिर्जा ने नदी पार करके अकबर के दरबार में एक प्रार्थना-पत्र भेजा जिसमें अपनी सारी विपत्ति का हाल लिखा। उसके कृपापात्रों ने यह प्रार्थना-पत्र बादशाह को नगरचैन में दिया। अकबर को यह खबर पहले ही मिल चुकी थी। उस समय मिर्जा हकीम का मामा फरीदून बादशाह के पास था और उसको काबुल लौट जाने की इजाजत मिल चुकी थी। उसको आदेश दिया गया था कि मिर्जा लड़का है और उसकी रक्षा करने वाला कोई नहीं है। इसलिये उसके कारोबार को देखा जाय और उसको स्वामिभक्ति के मार्ग पर दृढ़ रखा जाये। राजद्रोही लोगों को उससे मिलने का अवसर नहीं दिया जाए। फरीदून मिर्जा हकीम से मिला, उससे पहले ही सुलेमान काबुल आ गया था। जब मिर्जा हकीम के राजदूत आये तो अकबर ने खुशखबर खां को रुपया, सामान, खिलअत और खास घोड़ा देकर रवाना किया और आदेश दिया कि पंजाब के अधिकारी लोग काबुल जाकर सुलेमान का दमन करें। जब खुशखबर खां मिर्जा के शिविर के पास आया तो मिर्जा ने बाहर आकर शाही आदेश का स्वागत किया। फरीदून खुशखबर खां से पहले ही रवाना हो चुका था, अब वह भी आ गया। उसने मिर्जा को प्रेरित किया कि पंजाब पर कब्जा कर लिया जाय। उसने यह भी कहा कि लाहौर को जीत लेना सरल है। इतना ही नहीं, उसने मिर्जा को उकसाया कि खुशखबर खां को पकड़ लिया जाय। मिर्जा में बुद्धि का अभाव था, वह समझता था कि फरीदून का विचार ठीक है। तथापि वह खुशखबर खां को पकड़ने पर राजी

नहीं हुआ। एक रात उसने खुशखबर खां को बुलाकर विदा कर दिया। उस समय सुल्तान अली और हसन खां काबुल में थे। सुल्तान अली को लश्कर खां की उपाधि मिल चुकी थी। हसन खां शिहाबुद्दीन अकबर खां का भाई था जो भाग कर काबुल चला गया था। इन दोनों ने फरीदून से मिलकर कलह उत्पन्न किया। मिर्जा में बुद्धि की कमी थी और वह आगे की बात नहीं सोच सकता था। इन लोगों के बहकाने से उसने सिंधु-नदी पार की और लाहौर की ओर चला। उसके आदमियों ने भेड़ा के पास लूटमार की। यह खबर पंजाब के अधिकारियों को मिली तो मीर मुहम्मद खां, कुतुबुद्दीन खां और शरीफ खां ने मिलकर दुर्ग को दृढ़ किया और सारे मामले की सूचना शाही दरबार में भेज दी। तब बादशाह ने सेना इकट्ठी की। उधर मिर्जा हकीम लाहौर आ पहुंचा और दुर्ग प्राचीर के पास अपनी सेना ले आया। पंजाब के अधिकारियों ने दुर्ग की अच्छी रक्षा की और साहस तथा स्वामिभक्ति के साथ सेवा की। बादशाह ने राजधानी मुनीम खां, खानखाना के सुपुर्द की और माली मामले मुजफ्फर खां को सौंपे और 17 नवम्बर, 1566 को वह राजधानी से रवाना हुआ। मार्ग में शिकार करता हुआ वह दस दिन में दिल्ली पहुंचा, वहां मुसलमान संतों की कब्रों पर गया और मुताल्लिकों को खैरात दी, फिर वह हुमायूं की कब्र पर गया। जब मिर्जा हकीम ने सुना कि बादशाह प्रयाण करता हुआ आ रहा है तो वह भाग कर सिंधु नदी के तट पर चला गया। जब शाही सेना सतलज नदी पर पहुंची तो मिर्जा के भाग जाने की खबर आई, सेना ने लाहौर की ओर प्रयाण किया। फरवरी, 1567 के अंत में वह लाहौर पहुंच गया। बादशाह मेहंदी कासिम खां के निवास पर ठहरा। जिन लोगों ने दुर्ग की रक्षा की थी उनको पुरस्कृत किया गया। बादशाह ने मुहम्मद हकीम का पीछा नहीं किया। परन्तु सीमा की रक्षा करने के लिये और उत्पीड़ित कृषकों को सान्त्वना देने के लिए कुतुबुद्दीन खां और कमाल खां को नियुक्त किया गया। बादशाह ने समझा कि इस प्रकार मिर्जा निकल भागेगा। बादशाह ने लाहौर में ठहर कर प्रशासनिक व्यवस्था की और मनोविनोद किया। उसको यह भी मालूम हुआ कि सुलेमान काबुल को छोड़ कर चला गया है। इसलिये मिर्जा हकीम वहां पहुंच गया है।

मिर्जा सुलेमान की पराजय

जब सुलेमान ने मिर्जा हकीम के विरुद्ध शीघ्रता से प्रयाण किया तो वह काबुल का घेरा चलाने के लिये मुहम्मद कुली शिघाली को छोड़ गया था। मासूम खां ने दुर्ग से कितने ही लोगों को अपने साहस का प्रदर्शन करने के लिये बाहर भेजा। उन्होंने मुहम्मद कुली को हराया और बदख्शी लोगों का सामान छीन लिया। घेरा डालने वाले तितर-बितर हो गये। मुहम्मद कुली ने सुलेमान की पुत्रियों को जो अभियान के साथ थीं चारदीवार बाग में भेज दिया जो पास ही था और उस स्थान की किलाबंदी कर दी। काबुल के लोगों ने मुहम्मद कुली को घेर लिया और मासूम खां से कहलाया कि यदि वह जल्दी सहायता पहुंचा देगा तो वह आसानी से उन लोगों को पकड़ सकेगा, जिनकी स्थिति पहले ही बिगाड़ दी गई है। मासूम खां ने उत्तर दिया कि मिर्जा सुलेमान की लड़कियां अभियान के साथ हैं इसलिये ऐसा व्यवहार करना उनका अनादर होगा। फिर मासूम ने अपने आदमियों को वापस

बुला लिया। मिर्जा सुलेमान संजददरा से वापस आ गया और काबुल के दुर्ग के निकट पहुंच कर उसने फिर घेरा जारी कर दिया। मिर्जा हकीम के विरुद्ध उसने घात करना चाहा था जिसमें उसको निराशा हुई। मासूम खां प्रति दिन एक उपयुक्त आदमी के नेतृत्व में कुछ सेना भेजा करता था और बदख्शी लोगों से सफलतापूर्वक लड़ा करता था। लड़ते-लड़ते बदख्शी निर्बल हो गये और उनके आदमियों और घोड़ों में रोग फैल गया। सुलेमान को विवश होकर संधि प्रस्ताव करना पड़ा और काजी खां बदख्शी के द्वारा वह कुछ रुपया लेकर वापस लौट गया। पहले तो उसने अपनी पत्नी को बदख्शां भेजा और पीछे से स्वयं भी चला गया। इसी समय मिर्जा हकीम भारत से काबुल लौट आया तो अदूरदर्शी लोग बड़े लज्जित हुए। शाही शिविर लाहौर में ही रहा इसी समय बादशाह की तुला हुई और नियमानुसार वह सोने और चांदी में तौला गया। सम्पन्न और निर्धन लोगों को बख्शीशें और दान दिया गया। सूबेदारों ने आकर अधीनता प्रकट की और अपनी-अपनी हैसियत के अनुसार उन्होंने भी दान दिया। जो लोग नहीं आ सके उन्होंने अपने बच्चों या रिश्तेदारों को योग्य राजदूतों के साथ भेजा।

मुहम्मद बाकी को सहायता

मुहम्मद ईसा तरखान के पुत्र मुहम्मद बाकी ने जो ठठा का शासक था एक नम्र प्रार्थना-पत्र भेजा। उसके विश्वस्त अधिकारी लोग उपयुक्त भेटों के साथ इस पत्र को लेकर आये। पत्र में लिखा था कि ''मेरा पिता उच्च दरबार का दास था। उसने सच्चाई और स्वामिभक्ति के साथ अपने जीवन का बलिदान किया था, अब मैं भी अपना सिर झुका कर आज्ञा मानने के लिये तैयार हूं। इस समय चगेज खां के नियम के विरुद्ध और शाही आदेशों के प्रतिकूल कंधार के मिर्जाओं के कहने से सुल्तान महमूद बखरी मेरे विरुद्ध सेना चढ़ाकर ला रहा है। मुझ पर बादशाह की कृपा है इसलिये सुल्तान महमूद मेरे राज्य पर हाथ नहीं डाल सका और उसकी सेना तितर-बितर कर दी गई। अब मुझे आशा है कि मेरी स्वामिभक्ति और सच्चाई के कारण मुझे भी वफादार दासों में गिना जायेगा। दरबारियों के द्वारा यह प्रार्थना-पत्र बादशाह को सुनाया गया तो सुल्तान महमूद खां को आदेश दिया गया कि वह अपने राज्य की सीमा से बाहर पैर न रक्खे और बाकी खां के इलाके से दूर रहे। इस प्रकार बादशाह का अनुग्रह प्राप्त करके मुहम्मद बाकी खां के राजदूत वापस लौट गये।''

मुहम्मद सुल्तान मिर्जा और उलूग मिर्जा का विद्रोह

इन दोनों मिर्जाओं पर बादशाह की सुदृष्टि थी और सरकार सम्भल में इनको जागीर मिली हुई थी। ये उपद्रव करके दिल्ली के पास के गांव को लूटने लगे—उनका उन्मूलन करने के लिये मुनीम खां खानेखाना आगरा से दिल्ली गया। परन्तु उनको उसके आगमन से पहले ही खबर लग गई। इसलिये वे मांडू की ओर भाग गये।

मुहम्मद सुल्तान मिर्जा का पिता सुल्तान वैस मिर्जा था, जो बेकरा का पुत्र था। बेकरा मंसूर का पुत्र था और मंसूर के पिता का नाम भी बैकरा था, जो उमर शेख का पुत्र था।

उमर शेख अमीर-तिमूर गुरगान का पुत्र था। उसकी माता सुल्तान हुसेन मिर्जा की पुत्री थी। सुल्तान हुसेन मिर्जा ने मुहम्मद सुल्तान मिर्जा को शिक्षा दिलाई थी। सुल्तान हुसेन मिर्जा की मृत्यु के बाद, खुरासान के लोग इधर-उधर हो गये और मुहम्मद सुल्तान मिर्जा ने बाबर की नौकरी कर ली। उसको बादशाह का बड़ा अनुग्रह प्राप्त हुआ। बादशाह हुमायूं ने भी मुहम्मद सुल्तान पर वैसी ही कृपा रक्खी। मुहम्मद सुल्तान के दो पुत्र थे, एक का नाम उलूग मिर्जा और दूसरे का नाम शाह मिर्जा था। दोनों ही बादशाह के सफल सेवक थे, फिर उन्होंने कई बार विरोध किया। परन्तु हुमायूं ने अपनी सहज कृपालुता के कारण उस पर ध्यान नहीं दिया। अन्त में बलूग मिर्जा ने हजारों लोगों पर आक्रमण किया जिसमें वह मारा गया। वह दो पुत्र छोड़ गया, एक का नाम सिकन्दर मिर्जा और दूसरे का नाम मुहम्मद सुल्तान मिर्जा था। उलूग मिर्जा कवि की मृत्यु के बाद बादशाह हुमायूं ने उसके पुत्रों का सम्मान किया। उसने इसकन्दर मिर्जा को उलूग मिर्जा की और मुहम्मद सुल्तान मिर्जा को शाह मिर्जा की उपाधि दी। जब बादशाह अकबर तख्त पर बैठा तो उसने भी मुहम्मद सुल्तान मिर्जा और उसके पौत्रों तथा रिश्तेदारों पर कृपा की। जब मुहम्मद सुल्तान मिर्जा अति वृद्ध हो गया तो उसको सैनिक सेवा से मुक्त करके सरकार सम्भल में निर्वाह के लिये अजीमपुर का परगना जागीर में दिया गया। वृद्धावस्था में उसके कई बच्चे हुए। इब्राहीम हुसेन मिर्जा, मुहम्मद हुसेन मिर्जा और मसऊद हुसेन मिर्जा, आकिल हुसेन मिर्जा आदि। इनमें से प्रत्येक को जागीर मिली और वे सब अभियानों में साथ रहे। जौनपुर के झगड़े में वे बादशाह के निकट रहा करते थे। जब शाही शिविर जौनपुर से लौटा तो उनको सम्भल में अपनी जागीरों पर लौट जाने की इजाजत दे दी गई। जब शाही सेना आगरा से पंजाब की ओर मुहम्मद हकीम मिर्जा के विद्रोह का दमन करने के लिये कूच कर गई तो उलूग मिर्जा और शाह मिर्जा ने इब्राहीम हुसेन मिर्जा और मुहम्मद हुसेन मिर्जा से मिल कर उत्पात कर झंडा खड़ा कर दिया और सम्भल तथा उसके पास के इलाके को लूटना शुरू किया। उस जिले के जागीरदारों ने मिलकर मिर्जाओं के विरुद्ध प्रयाण किया। मिर्जा उनका सामना नहीं कर सके। इसलिये मिर्जा लोग भाग कर खानमा और सिकन्दर खां के पास चले गये। परन्तु खानजमा और सिकन्दर खां को उनकी संगति अच्छी नहीं लगती थी क्योंकि उनमें से प्रत्येक शासन करना चाहता था। वहां से वापस लौट कर उन्होंने दोआब को दबाना चाहा। नदी पार करके वे नीमकार परगने में पहुंच गये। यारशाही, हाजी खां शीस्तानी की बहन का लड़का था जो उधर के प्रदेश का जागीरदार था। उसने मिर्जाओं को दमन करने के लिये प्रयाण किया तो यारशाही हार गया। परन्तु वह वीरतापूर्वक लड़ा। बहुत-सा सामान सोना और हाथी मिर्जाओं ने लूट लिये और फिर लूट-खसोट करते हुए वे लोग दिल्ली की सीमा तक पहुंच गये। तब तातार खां ने दिल्ली दुर्ग को दृढ़ किया और मुनीम खां भी मिर्जाओं को वापस धकेलने के लिये आगरा से वापस आया। इन लोगों ने देखा कि मालवा खाली पड़ा है तो वे उधर चले गये। सम्पत के पास उनकी मीर मुइज्जुलमुल्क से लड़ाई हो गई। वह पंजाब जा रहा था उन्होंने उसको लूट लिया। मुनीम खां ने उनका पीछा करना उचित नहीं समझा और वह आगरा लौट आया। विद्रोहियों ने आगरे पर अपना अधिकार कर लिया। यह प्रान्त मुहम्मद कुली खां बरलास के सुपुर्द किया गया था। परन्तु बरलास उस समय

बादशाह के साथ लाहौर में था। बरलास का दामाद ख्वाजा हाजी था जो ख्वाजा किलंग भी कहलाता था, उसने उज्जैन को दृढ़ किया। परन्तु उसके कुछ विश्वासघातक साथी मिर्जाओं से जा मिले। ख्वाजा का सामान तो लुट गया परन्तु वह बच कर भाग गया। मुकर्रब खां दक्खिनी का भाई कदम खां हिन्दीया में था। मुहम्मद हुसेन मिर्जा ने उसको घेर लिया। मुकर्रब खां दक्खिनी सन्तवास के दुर्ग में था। मेहंदी कासिम खां की बहन का पुत्र हुसेन खां, मेहंदी कासिम खां को जो हज्जाज जा रहा था पहुंचा कर वापस आया। जब वह संतवास में पहुंचा तो मिर्जा लोगों का उपद्रव प्रगट हुआ तो उसने भी संतवास दुर्ग की शरण ली। इब्राहीम हुसेन मिर्जा ने घेरा जारी रक्खा। इसी समय मुहम्मद हुसेन मिर्जा ने हिन्दिया पर कब्जा करके कदम खां को मार डाला। जब वह लोग उसके सिर को संतवास दुर्ग में लाये तो मुकर्रब खां का हृदयभंग हो गया और उसने अधीनता स्वीकार कर ली। हुसेन खां भी बाहर आ गया। इब्राहीम हुसेन मिर्जा ने उसको अपनी सेवा अर्पित करना चाहा परन्तु उसने स्वीकार नहीं की। जब बादशाह अकबर अली कुली खां का दमन करने के लिये चला तो हुसेन खां को शाही सेवा दे दी गई। अंत में जब बादशाह को इन तमाम घटनाओं की खबर मिली तो उसने आदेश दिया कि मुहम्मद सुल्तान मिर्जा को अजीमपुर से हटा कर बयाना के दुर्ग में भेज दिया जाये और उस पर निगरानी रक्खी जाये।

***

प्रकरण 61

शासन का बारहवां वर्ष

शासन का बारहवां वर्ष 11 मार्च, 1567 को आरम्भ हुआ। बादशाह की इच्छा हुई कि कमरगा करके शिकार किया जाये तो बड़ा ही आनन्ददायक है। तब आदेश दिया गया कि पहाड़ों से पशु और पक्षियों को एक ओर, नदी जेलम से दूसरी ओर धकेला जाये। प्रत्येक जिले का काम एक अधिकारी को दिया गया और बख्सी तवाची, सजावाल जहां-तहां नियुक्त किये गये। लाहौर प्रान्त के गांव और कस्बे से हजारों आदमी वन पशुओं को घेरने के लिये नियुक्त हुए। लाहौर से लगभग 10 मील की दूरी पर इन पशुओं को इकट्ठा करने के लिये एक मैदान चुना गया। एक मास तक छोटे और बड़े सब अधिकारी इस काम में लगे रहे, तब उपयुक्त व्यवस्था हो गई और बहुत बड़ी संख्या में पशु इकट्ठे हो गये। तब बादशाह ने बाण, तलवार, भाले और बन्दूक का उपयोग किया। आरम्भ में शिकारगाह का वृत्त दस मील था परन्तु दिन-प्रतिदिन कमरगा छोटा होता गया। शिकार कई विधि से किया गया। अधिकारी लोग अपने सामने पर्दे डालकर पशुओं को देखा करते थे। रात्रि में वे मशालों का प्रयोग करते थे। प्रातः से सायं तक आनन्द-प्रमोद रहता था। बादशाह ने पांच दिन तक शिकार किया, फिर बड़े-बड़े अधिकारियों और अन्तःपुर के सेवकों को वहां आने की

इजाजत दे दी गई, फिर दरबार के सेवकों को भी इजाजत मिल गई। अन्त में सवारों और प्यादों को भी शिकार की इजाजत दे दी।

शिकार के दिनों में हमीद बकारी के मन में दुर्भावना पैदा हुई और उसने अपने धनुष पर बाण रख कर शाही दरबार के एक सेवक की ओर चलाया। इस सेवक ने मौका देखकर इस विषय में बादशाह से निवेदन किया तो बादशाह ने क्रुद्ध होकर कुलीच खां को अपनी खास तलवार देकर आदेश दिया कि हमीद बकारी का सिर काट दिया जाये। कुलीच खां ने बकारी पर दो बार वार किया परन्तु उसका बाल भी बांका नहीं हुआ, भाग्य का ऐसा ही विधान था।

मुजफ्फर खां का आना

शिकार के दिनों में ही मुजफ्फर खां आया। वह अपने साथ आसफ खां के भाई वजीर खां को लाया और दोनों भाइयों के लिये क्षमा मांगी। संक्षिप्त वृत्तान्त यह है कि जब दुर्भाग्यवश आसफ खां, अली कुली खां और बहादुर खां के जाल में फंस गया तो उसको उनकी संगति पसन्द नहीं आई और उनके दम्भ से उसको घृणा हो गई। अली कुली खां उसकी सम्पत्ति को लोभ की दृष्टि से देखा करता था। आसफ खां वहां से चले जाने का मौका देखने लगा। इसी बीच में अली कुली ने आसफ खां को बहादुर खां के साथ भेज दिया और वजीर खां को निगरानी में रख लिया। वजीर खां ने अपने भाई को सारा हाल लिख भेजा और सुझाया कि अमुक स्थान पर भाग चलना चाहिये। इस योजना के अनुसार एक रात्रि को आसफ खां, बहादुर खां को छोड़कर कर्रा और माणिकपुर की ओर चल दिया। वजीर खां भी जौनपुर से निकल कर उसी रास्ते से चला। बहादुर खां की गति का पता लगा तो उसने आसफ खां का पीछा किया और चुनार के पास उसको जा दबाया। दोनों में लड़ाई हुई तो आसफ खां को हरा कर कैदी बना लिया। उसको हाथी पर रखकर बहादुर खां चला गया। उसके आदमी लूट करने में लगे हुए थे कि वजीर खां और उसका पुत्र बहादुर खां आ गया। जब उसे मालूम हुआ कि आसफ खां को पकड़ लिया है तो वह आगे बढ़ा और वीरतापूर्वक लड़ा। बहादुर खां उसको नहीं रोक सका और भाग गया परन्तु आसफ खां को मारने के लिये संकेत कर गया। उस समय लोग आसफ खां को हाथी पर बिठा कर ला रहे थे। रक्षकों ने एक दो बार उसको तलवारों से आहत भी कर दिया। उसकी अंगुली का सिरा कट गया और उसके नाक पर घाव लग गया। तब वजीर खां के लोगों ने एक दम झपट कर आसफ खां को छुड़ा लिया। फिर वे कर्रा आकर ठहरे। इस लड़ाई में वजीर खां के पुत्र बहादुर खां ने बड़ी वीरता दिखाई, इसलिए उसका नाम बहादुर खां हो गया। आसफ खां को अपने पिछले कार्यों पर बड़ा पश्चात्ताप हुआ और लज्जापूर्वक वह शाही दरबार में चला गया। साथ ही उसने अपने भाई वजीर खां को मुजफ्फर खां के पास भेज दिया। उस समय मुजफ्फर खां, बादशाह के आदेश से आगरा से लाहौर जा रहा था। वजीर खां जब दिल्ली आया तो मुजफ्फर खां ने उसके सथ कृपापूर्ण व्यवहार किया। जब बादशाह शिकार में व्यस्त था तो मुजफ्फर खां ने वजीर खां के विषय में निवेदन किया और आसफ खां के लिए क्षमा मांगी। बादशाह ने दोनों भाइयों को क्षमा कर दिया, फिर आसफ

खां को माणिकपुर भेजकर आदेश दिया कि वह मजनू खां काकसाल के साथ काम करे। फिर बादशाह की सवारी राजधानी में आ पहुंची तो आसफ खां को सलाम करने का अवसर मिला और उसको शाही अनुग्रह प्राप्त हुआ।

अन्त में जब कमरगा समाप्त हो गया तो बादशाह ने वापसी का आदेश दिया और वह रावी नदी के तट पर पहुंचा, जहां लाहौर बसा हुआ है। बादशाह ने नदी में अपना घोड़ा तैरा दिया। उसके पीछे-पीछे उसके सेवकों ने घोड़े डाल दिये तो सबने सकुशल नदी पार कर ली, परन्तु खुशखबर खां और शेर मुहम्मद का पुत्र नूर मुहम्मद नदी में डूब गये। जब बादशाह लाहौर पहुचा तो वहां प्रशासनिक कार्यों में और लोगों के साथ न्याय करने में व्यस्त रहा।

मुहम्मद अमीन का पलायन

मुहम्मद अमीन अपने साहस के लिये बादशाह के साथियों में प्रसिद्ध था परन्तु उसका जीवन नियमित नहीं था। वह प्रायः अति किया करता था। जब शाही शिविर लाहौर में था तो उसका एक फौजदार से मुकाबला हो गया। यह फौजदार, खास हाथी पर सवार था। मुहम्मद अमीन ने बे रोक-टोक उस पर बाण चलाया। जब इस दुस्साहस की खबर बादशाह को मिली तो उसने आदेश दिया कि मुहम्मद अमीन का वध कर दिया जाये, परन्तु अन्तःपुर से सम्बन्धित दरबारियों ने बीच-बचाव किया तो बादशाह ने उसको प्राणदान तो दे दिया परन्तु यह आदेश किया कि उसको पीटा जाये। तब मुहम्मद अमीन उसी रात्रि को भागकर अली कुली खां के पास चला गया। जो कलहकारी लोगों का नेता था।

जूनेद कररानी का पलायन

जूनेद कररानी ने अनेक शाही कृपायें प्राप्त की थीं। वह हिन्डौन का जागीरदार था। वह अकारण ही डर कर गुजरात भाग गया। जब बादशाह पंजाब से वापस लौटने का विचार कर रहा था तो आगरे से मुनीम खां और अन्य लोगों के पत्र आये। अली कुली खां, बहादुर खां और इसकन्दर खां पुनः विद्रोह कर रहे हैं। मिर्जा हकीम के विद्रोह से उनका साहस बढ़ गया था और मूर्खतावश उन्होंने मिर्जा हकीम के नाम का खुत्बा भी पढ़ाया था। उन्होंने अपने स्वार्थ के लिये मिर्जा को विनाश के भंवर में डाल दिया था। जब अली कुली खां, बहादुर खां और इसकन्दर खां के विद्रोह की खबर बादशाह ने सुनी तो उसने आगरा लौटने का निश्चय किया। वह राजद्रोहियों को दण्ड देना चाहता था। उसने पंजाब की व्यवस्था की, वहां के परगनों को बड़े-बड़े अधिकारियों के सुपुर्द किया। सारे प्रान्त का प्रशासन मीर मुहम्मद खां के सुपुर्द किया और 23 मार्च, 1567 को राजधानी की ओर प्रयाण किया।

जब बादशाह का शिविर सरहिन्द पहुंचा जो मुजफ्फर खां ने ऐसी मूर्खता की जिस पर सबको आश्चर्य हुआ। उसको मालूम हुआ कि मुजफ्फर खां एक कुतुब खां नामक व्यक्ति से प्रेम करता है और उसने अपनी बुद्धि को बिदा कर दिया है। बादशाह ने कुतुब खां को बुलाया और उसको पहरेदारों के सुपुर्द कर दिया, जिससे मुजफ्फर खां जाल में

न फंसे। तब कुतुब खां फकीर बनकर जंगल में चला गया। तब बादशाह ने कुतुब को मुजफ्फर खां के पास भेज दिया।

थानेसर में संन्यासियों की लड़ाई

थानेसर के पास एक तालाब है जिसको छोटा-सा समुद्र कहा जा सकता है। प्राचीन काल में वहां एक मैदान था जो कुरुक्षेत्र कहलाता था। भारत के साधु प्राचीन काल से इसको पवित्र समझते थे। भारत के विभिन्न भागों से हिन्दू लोग इसकी यात्रा करने आते थे और पुण्यदान किया करते थे। इस वर्ष बादशाह के आगमन से पहले ही वहां बड़ी भीड़ हो गई थी। संन्यासियों में दो दल हैं, एक कुर कहलाता है और दूसरा पुरी कहलाता है। इन दोनों दलों में झगड़ा हो गया कि अमुक स्थान पर कौन बैठे। बहुत-से लोग इसलिये साधु बनते हैं कि संसार से विमुख हो जाते हैं। इसलिए इनमें लोभ और क्रोध बना रहता है। इस लड़ाई का कारण यह था कि पुरी सम्प्रदाय के साधु तालाब के तट पर एक स्थान पर बैठा करते थे और वहां भीख मांगा करते थे। भारतवर्ष के विभिन्न भागों से जो यात्री स्नान करने आते थे, उनको दान दिया करते थे। उस दिन कुरु सम्प्रदाय के साधुओं ने बलपूर्वक पुरी लोगों का स्थान ले लिया और पुरी लोग कुछ नहीं कर सके।

तब उनका नायक कीशुपुरी अम्बाला आया और बादशाह से न्याय के लिये प्रार्थना की और कहा कि "कुरु साधुओ ने धोखे से हमारा स्थान छीन लिया है। यद्यपि उनका सामना करने की हम में शक्ति नही है परन्तु हम उनसे लड़ेंगे। इसमें या तो हमारा रक्तपात हो जायेगा या हम उनसे अपना स्थान छीन लेंगे। यह स्थान परम्परा से हमारा है। हां, कभी-कभी कुछ समय के लिये पुरी साधु बैठे। अब हम उस स्थान पर बैठेंगे। जब तक हमारे शरीरों में प्राण हैं तब तक यह स्थान हमारे पास रहेगा।" जब बादशाह की सवारी थानेसर पहुंची तो बादशाह वहां गया और उसने साधुओं को समझाया, परन्तु उन पर कोई प्रभाव नहीं हुआ। वे मरने-मारने को और भी अधिक तैयार हो गये और उन्होंने चाहा कि उन्हें लड़ने दिया जाये तो उन्हें इजाजत दे दी गई। उस दिन प्रत्येक दल के बहुत-से लोग आये हुए थे। दोनों पक्ष के लोग आमने-सामने पंक्तिबद्ध होकर खड़े हो गये। तब प्रत्येक पक्ष से एक आदमी तलवार लेकर आगे बढ़ा। उसके बाद तीर चलाये गये और फिर पुरी साधुओं न कुरु साधुओं पर पत्थर मारने शुरू किये। पुरी साधुओं की संख्या कम थी इसलिए बादशाह ने तुरान के यतीम शाह और भारत के वीरु को आदेश दिया कि पुरी लोगों की सहायता की जाये तो इन दोनों ने कुरु साधुओं पर आक्रमण करने में पुरी साधुओं की सहायता की। परिणाम यह हुआ कि कुरु लोग भाग निकले। पुरी साधुओं ने उनका पीछा किया और उनमें से कितनों ही को समाप्त कर दिया। उन्होंने आनन्दकुर नामक उनके मुखिया को भी मार डाला। शेष लोग छिन्न-भिन्न हो गये। इस खेल को देखकर बादशाह बड़ा प्रसन्न हुआ। अगले दिंन उसने थानेसर से प्रयाण किया।

जब बादशाह का शिविर दिल्ली पहुंचा तो मिर्जा मिराक रजवी भाग गया, इसको लाहौर में जान-बाकी खां के सुपुर्द किया गया था। जानबाकी ने उसका पीछा किया परन्तु उसको पकड़ नहीं सका, इसलिए वह दरबार में उपस्थित होने से डरता था। बादशाह ने

फकीरों की कब्रों के दर्शन किये और उससे प्रेरणा चाही। इन कब्रों के फकीरों को उसने उष्कल दान दिया। तातार खां नगर का फौजदार था। उसने बादशाह से निवेदन किया कि मुहम्मद अमीन दीवाना लाहौर से भाग कर भोजपुर कस्बे में आ गया था और वहां के जागीरदार शिहाबुद्दीन तुर्कमान ने उसको अपने मकान में छिपाकर रखा था और फिर उसको एक घोड़ा और कुछ धन देकर विद्रोहियों के पास भेज दिया है। यह सुनकर बादशाह ने शाह फकरुद्दीन मसहदी को आदेश दिया कि मुहम्मद अमीन दीवाना को पकड़ कर दरबार में पेश करे। अगले दिन जब बादशाह पलवल आया तो शाह फकरुद्दीन ने मुहम्मद अमीन को पेश किया। उसको हसन चकदाई के सुपुर्द कर दिया जिसने उसको वहीं मार डाला।

जब आगरे के निवासियों ने बादशाह के आगमन की खबर सुनी तो उसका भव्य स्वागत करने के लिये वे बाहर आंये। खानखाना ने देश की दशा सुनाई और अली कुली खां और बहादुर खां ओर अन्य विद्रोहियों के अपराधों का वृत्तान्त कहा। जब अली कुली खां और अन्य विद्रोहियों ने सुना था कि बादशाह मुहम्मद हकीम मिर्जा के विद्रोह को दबाने के लिये चला गया है तो उन्होंने इसको अपने लिये अनुकूल अवसर समझा और विद्रोह करने की कल्पना करने लगे। अली कुली खां जौनपुर से सरहरपुर गया। जो इब्राहीम खां की जागीर में था। उसके शामिल होने के लिये इसकन्दर खां अवध (अयोध्या) से बाहर आया। उस नगर में सारे विद्रोहियों ने एकत्र होकर यह तय किया कि अली कुली खां अपनी सेना के साथ लखनऊ के मार्ग से आगे बढ़कर गंगा तक के इलाके को दबा ले, बहादुर खां, कर्रा ओर इसकन्दर खां तथा इब्राहीम खां, सरकार अवध और उसके पास के इलाकों पर कब्जा कर ले। इस प्रकार योजना बनाकर विद्रोही लोग अलग-अलग चले गये। अली कुली खां सरकार कन्नौज की ओर चला। उधर के जागीरदारों में ऐसा कोई नहीं था जो उसका मुकाबला करता इसलिये वे लोग कन्नौज चले गये। जब अली कुली खां कन्नौज पहुँचा तो मिर्जा युसुफ खां ने जो वहां का जागीरदार था, शेरगढ़ा में शरण ली। लोग इधर-उधर चले गये। राजभक्त लोगों ने दरबार में दरख्वास्तें भेजीं।

***

प्रकरण 62

आगरा से बादशाह का जौनपुर को प्रयाण और विजय-भूमि पर खानजमा व बहादुर खां की मृत्यु

जब बादशाह अकबर पंजाब से सफल होकर राजधानी को लौटा तो उसको अली कुली खां, बहादुर खां एवं अन्य विद्रोहियों के उत्पातों की खबर मिली। अतः उसने निश्चय किया कि इस राजद्रोह की ज्वालाओं को शान्त करने के लिये पूर्वी प्रान्तों की ओर प्रयाण

करना चाहिये। मुनीम खां खानखाना को आगरा का शासन सौंपकर उसने 2000 जंगी हाथी छांटे और सेना के प्रयाण से पहले मुजफ्फर मुगल मिर्जा कुली कुलीच खां, सैयद मुहम्मद मौजी और हाजी यूसुफ को आदेश दिया कि शीघ्रतापूर्वक आगे बढ़कर मिर्जा यूसुफ की सहायता करें जो कन्नौज में घिरा हुआ था, तत्पश्चात् 6 मई, 1567 को बादशाह अकबर सवार होकर चला।

जब बादशाह साकेत [1] नामक कस्बे पर पहुंचा तो अली कुली खां, जो कन्नौज के पास गंगा के नाव घाटों पर उत्पात मचा रहा था, अभियान की खबर सुनते ही माणिकपुर की ओर भाग गया जहां उसका भाई बहादुर खां, आसफ खां और मजनूं खां का सामना कर रहा था। शाही सेना साकेत से गंगा के तट पर पहुंची और अगले दिन गंगा पार करके वह कूच दर कूच आगे बढ़ने लगी। जब सेना मोहन [2] नामक कस्बे के पास पहुंची तो उसका नेतृत्व मुहम्मद कुली खां बरलास को दिया गया और उसके साथ मुजफ्फर खां, राजा टोडरमल, शाहबुदाग खां, उसका पुत्र अब्दुल मतलिब खां, हसन खां, किया खां, हाजी मुहम्मद खां सीस्तानी, आदिल खां, ख्वाजा गयासुद्दीन अली बख्शी और अन्य वीर लोगों को भेजा गया। सेना ने 3 जून, 1567 को इसकन्दर खां के विरुद्ध प्रयाण किया जो अवध में राजद्रोह कर रहा था। बादशाह कर्रा और माणिकपुर की ओर गया। जब वह रायबरेली पहुंचा तो आसफ खां और मजनू खां से खबर मिली कि अली कुली खां और उसका भाई ग्वालियर पर आक्रमण करने का विचार कर रहे हैं और गंगा को पार करना चाह रहे हैं। यह खबर सुनते ही बादशाह ने शीघ्रता से प्रयाण करने का निश्चय किया। उसके साथ के अधिकांश अधिकारियों को यह त्वरा अच्छी नहीं लगी। परन्तु बादशाह तो शीघ्रतापूर्वक प्रयाण करता रहा। आश्चर्यजनक बात यह थी कि बादशाह ने लम्बे मार्ग से प्रयाण नहीं किया और बीच के मार्ग का जो अपेक्षाकृत छोटा था अवलम्बन किया। परन्तु इस पर पानी नहीं मिलता था। तथापि ईश्व. की कृपा से बादशाह को पानी मिल गया। कारण यह था कि उस समय वर्षा हो गई थी और तालाब भर गये थे। सारी रात और अगले दिन दोपहर तक प्रयाण करके बादशाह माणिकपुर पहुंच गया। यहां का जागीरदार मुहिब्बअली ने उसकी सेवा की। प्रयाण का आरम्भ रात्रि के समय किया गया था। मार्ग से बहुत कम लोग परिचित थे। एक जंगल को पार करना था इसलिये सेना इधर-उधर बिखर गई और मार्ग का उसको पता नहीं था। उसके साथ थोड़े-से आदमी रह गये। मार्ग में माणिकपुर के निकट आसफ खां बादशाह के दरबार में आया और उसका अनुग्रहपूर्वक स्वागत हुआ, उसको तत्काल ही आगे जाने का आदेश दे दिया गया। उसको अपने शिविर में पहुंचना था जो खानेजमा के शिविर के सामने लगा हुआ था। कुछ समय बाद एक विश्वस्त धावन खबर लाया कि अली कुली और बहादुर ने सिगरौर [3] के परगने में गंगा पर पुल बनाकर नदी पार कर ली

---

1. यह पुराना कस्बा एटा जिला में स्थित है।
2. यह कस्बा अवध के जिले में लखनऊ से 18 मील के अन्तर पर है।
3. यह नवाबगंज का प्राचीन नाम है और यह कस्बा गंगा के बायें तट पर अभी वर्तमान है और इलाहाबाद से कुछ मील उत्तर की ओर है।

है। खबर सुनते ही बादशाह सवार होकर चल दिया। शिविर को वह राजा भगवन्त दास, ख्वाजा जहां और अन्य लोगों के सुपुर्द कर गया। उनको आदेश था कि वह सचेत रहे और शिविर को कर्रा तक पहुंचाये। वह शेखान नामक गांव से रवाना हुआ जो माणिकपुर के अधीन है और रविवार की सायंकाल उसने हाथी पर बैठकर नदी पार की। वर्षा का आरम्भ था और नदी में बाढ़ आ रही थी, फिर भी अकबर ने उसमें अपना हाथी चला दिया और नदी पार कर ली, उस समय उसके पास केवल 11 आदमी थे। जब रात हुई तो बादशाह ने और उसके साथियों ने नदी के तट पर विश्राम किया। विद्रोही लोग एक कोस की दूरी पर थे। उसी समय मजनूं खां और आसफ खां दरबार में आये। मजनूं खां और अन्य लोगों की सम्मति थी कि उसी रात को शत्रु के शिविर पर टूट पड़ना चाहिये। आसफ खां ने कहा कि बादशाह बहुत अच्छे स्थान पर ठहरा हुआ है और इस समय आक्रमण करना उचित नहीं है, इसके अतिरिक्त दिन में लड़ाई अच्छी होती है। बादशाह को उसकी सम्मति अच्छी लगी। उसने आदेश दिया कि प्रतिपहर शत्रु की खबर आनी चाहिये। कहीं ऐसा न हो जाये कि विद्रोहियों को उसके आगमन की खबर लग जाये और वे चले जायें।

अली कुली और बहादुर अपने अभिमान के कारण निश्चिंत थे और उन्होंने खबर मंगवाने की भी व्यवस्था नहीं की थी। जब शाही सेना आ पहुंची थी जब वे मद्यपान करने और प्रेमिकाओं के साथ विलास में व्यस्त थे। बड़ी-बड़ी दावतें हो रही थीं एक आदमी ने आकर खबर दी कि बादशाह ने गंगा पार कर ली है और उसके पास बहुत बड़ी सेना है परन्तु अली कुली और बहादुर ने समझा कि यह आसफ खां और मजनूं खां की युक्ति है। उसको यह भी ख्याल था कि बादशाह के साथ बहुत थोड़ी-सी सेना है इसलिये 4000 अनुभवी सवारों में फूट डालने का प्रयत्न किया गया है।

दूसरे दिन प्रात:काल अकबर ने अपनी सेना का व्यूह बनाया। मध्य भाग में वह स्वयं रहा। दाहिने भाग का नेतृत्व मजनूं खां काकशाल को दिया ओर बायें भाग को आसफ खां के सुपुर्द किया। मुहिब्ब खां और कितने ही वीर हरावल (अग्रसेना) में रक्खे गये। सूर्योदय के समय अकबर ने खानेजमा पर आक्रमण किया। मजनू खां को आदेश हुआ कि वह शीघ्रता से सेनासहित आगे बढ़े। अत: वह आगे बढ़ कर शत्रु से भिड़ गया। कुछ समय बाद आसफ खां को भी ऐसा ही आदेश दिया गया। तब घमासान युद्ध हुआ तो शत्रु सेना भाग निकली। विजयी सैनिकों ने उनका अली कुली खां की पंक्ति तक पीछा किया। बादशाह के साथ केवल 500 या 600 आदमी थे तो भी उसकी विजय हुई। उस भगदड़ में एक सवार के घोड़े की अली कुली खां के घोड़े से टक्कर हो गई तो अली कुली खां की पगड़ी गिर पड़ी। फिर उसने बहादुर खां को आगे बढ़ाया जो मजनूं खां तक जा पहुंचा। परन्तु उसके घोड़े के तीर लग गया तो उसने बहादुर खां को गिरा दिया। तब सैनिक लोग उस पर टूट पड़े। वजीर जमील ने उसको पकड़ लिया परन्तु कुछ लेकर उसे छोड़ दिया। फिर मजनूं खां के नौकर ने उसको पकड़ लिया। विजयी लोगों ने बहादुर खां को घेर लिया और उसको बाणों से छेद डाला।

बादशाह घोड़े पर सवार था और अली कुली तथा बहादुर के विषय में पूछताछ कर रहा था। इसी समय बहादुर खां को उसके सामने उपस्थित किया गया। बादशाह ने दयापूर्वक कहा "बहादुर हमने तुम्हारे साथ क्या बुराई की थी कि तुमने यह सब उपद्रव व उत्पात किया" बहादुर ने लज्जा से सिर झुका लिया और कुछ नहीं कहा। बार-बार पूछने पर उसने कहा कि जो कुछ हुआ उसके लिये ईश्वर की प्रशंसा करनी चाहिये। अफसरों के आग्रह से शाहबाज खां और बंसीदास कम्बों को आदेश हुआ कि उसका सिर काट दिया जाये। उसी समय अली कुली के एक विश्वासपात्र सरदार शहरयार कुल को वीर लोग पकड़ कर लाये। फिर बादशाह ने अली कुली खां के विषय में पूछताछ की। कुछ लोगों ने कहा, वह रणभूमि से भाग गया है और कुछ ने कहा, वह मारा गया है। तब अली कुली खां के एक फौजदार प्रधान महावत को प्रस्तुत किया गया जिससे पूछताछ करने से मालूम हुआ कि अली कुली खां को ऐसे शाही हाथी ने मार डाला जिसके केवल एक ही दांत है। उसके पश्चात् उस हाथी को भी पहचान लिया गया। फिर आदेश दिया गया जो कोई एक मुगल का सिर लायेगा उसको एक सुवर्ण मुद्रा और जो एक हिन्दुस्तानी का सिर लायेगा उसे एक रुपया पुरस्कार स्वरूप दिया जायेगा। तब लोग दौड़े और बहुत-से सिर लाये गये। उन्हें पहचाना गया और सबको यथोचित पुरस्कार दिया। तब एक आदमी अली कुली खां का सिर लेकर आया जो एक वृक्ष के नीचे पड़ा हुआ था। फिर भी यह निश्चय नहीं हुआ कि यह उसका सिर है। परन्तु अरजानी हिन्दू ने जो अली कुली खां का शक्तिशाली सेवक था अली कुली के सिर को देख कर बड़ी आह भरी। उसने आगे आकर अली कुली के सिर को अपने हाथ में लिया और फिर अपना सिर कई बार फोड़ा।

मुहम्मद बेग काकशाल का दावा था कि उसके तीर से अली कुली का प्राणान्त हुआ है। वास्तव में बात यह थी कि काकशाल के तीर से जब अली कुली के मर्मान्तक वेदना हो रही थी तो सोमनाथ महावत ने अली कुली पर अपना हाथी पेल दिया। तब अली कुली ने उससे कहा, मैं विद्रोहियों का नेता हूं, मुझे बादशाह के पास ले चलो, तुमको अच्छा पुरस्कार मिलेगा। जब उसको हाथी से कुचल दिया गया। एक आदमी उसके सिर को डंडे पर रख कर ला रहा था तो रास्ते में ग़ालिब नाम के एक व्यक्ति ने उसको छीन लिया और बादशाह के सामने पेश कर पुरस्कार मांगा। तब बादशाह ने घोड़े से उतर कर ईश्वर को धन्यवाद दिया और सैनिक अधिकारियों को तथा अन्य लोगों को उनकी सेवाओं के अनुरूप पुरस्कार दिये या उनकी पदोन्नति की गई। तब अली कुली खां और बहादुर के सिर आगरा, दिल्ली, मुल्तान और साम्राज्य के अन्य स्थानों में घुमाये गये, साथ ही उसने अपनी विजय की सूचना भी सर्वत्र भेजी। इससे शाही सेवकों को अपार हर्ष हुआ। यह विजय सकरावल नामक गांव के समीप प्राप्त हुई थी अब उसका नाम फतहपुर रक्खा गया।

इस विजय के बाद बादशाह उसी दिन इलाहाबाद के प्रान्त में चला गया क्योंकि वहां कुछ राजद्रोही उत्पात मचा रहे थे। वहां उसने एक रात व्यतीत की। वहां कुछ ऐसे लोग थे जो अली कुली से जा मिले थे। उनमें एक शेख यूसुफ चुली था। ऐसे लोगों को पकड़ लिया गया। इलाहाबाद में दो दिन व्यतीत करके बादशाह ने तीसरे दिन बनारस की ओर

प्रयाण किया। वहां अली कुली और बहादुर के बहुत-से सैनिकों ने जिनमें मुर्तजा कुली था, बादशाह को सलाम किया। उसने अपनी सहज दयालुता के कारण उनके अपराध क्षमा कर दिये। बहादुर खां की स्त्रियां और नर्तकियां शाही सेवकों के हाथ में पड़ गईं और ख्वाजा आलम जो बहादुर का ख्वाजासरा था बादशाह की सेवा में रहने लगा। बनारस के लोगों ने बादशाह के आने पर दरवाजे बन्द कर दिये थे इसलिये बादशाह ने आदेश दिया कि लोगों को लूट लिया जाये परन्तु फ़िर शीघ्र ही उनको क्षमा कर दिया गया। शिहाब खां को कुछ सेना के साथ जौनपुर की रक्षा और हुकूमत के लिये भेजा गया। इसी प्रकार कुलीच खां को सिरहारपुर रवाना किया गया, जहां उजबेगों के कुछ कुटुम्ब रहते थे। बनारस में तीन दिन व्यतीत करके बादशाह जौनपुर के लिये रवाना हुआ और वहां दूसरे दिन पहुंच गया। वहां भी अली कुली के लोगों पर उसने कृपा की। बादशाह वहां तीन दिन ठहरा और लोगों को शान्त किया। वहां से कर्रा की ओर प्रयाण किया। सारी यात्रा तीन दिन में ही पूरी करके वह कर्रा के नाव घाट पर गंगा नदी पर पहुंचा। उसके साथ केवल चार या पांच आदमी ही लग सके। नदी को नाव द्वारा पार करके वह कर्रा दुर्ग में ठहरा। माणिकपुर के पास ख्वाजा आलम भाग गया था परन्तु उसको फिर पकड़ लिया गया। उस नगर से एक आदेश जारी हुआ कि मुनीम खां खानखाना दरबार में हाजिर आये। उस प्रदेश के जागीरदारों को अपनी-अपनी जागीरों पर जाने की इजाजत दे दी गई। कुछ जागीरदार विद्रोहियों से जा मिले थे और अब वे पकड़े गये थे। इनमें उल्लेख के योग्य खान कुली उजबेग, यार अली आलम शाह बदख्शी, मीर शाह बदख्शी, याह्या बख्शी और चलमा खां थे। चलमा खां मिर्जा असकरी का सौतेला भाई था। इन सब को मस्त हाथियों से कुचलवा कर मार डाला। मिर्जा मिराक मसहदी अलीकुली का विशेष विश्वासपात्र था। यह शाही शिविर में से भाग गया था और कर्रा में पकड़ा गया था। सब का इस व्यक्ति के सामने वध करवाया गया और फिर उस पर एक हाथी छोड़ दिया गया। हाथी ने उसको सूंड में लपेट कर दबोच दिया और फिर इधर से उधर भूमि पर फेंका। हाथी को उसे मार डालने का संकेत नहीं दिया गया था इसलिये हाथी उससे खेल करता रहा और उसे मारा नहीं। पाचं दिन तक उसको हाथी के सामने इसी प्रकार डाला जाता रहा। अन्त में दरबारियों ने बीच-बचाव किया और कहा कि यह सैयद है इसलिये उसको प्राणदान दे दिया गया। इसी अवसर पर जय-तवाची शाहनागिर ख्वाजा को दरबार में लाया गया। शाह नासिर ख्वाजा विद्रोहियों का एक मुखिया था। उसका भी वध करवा दिया गया।

आदेशानुसार मुनीम खां खान खाना आगरा से कर्रा आया। बादशाह ने उसको अली कुली और बहादुर की सारी जागीरें जो जौनपुर, बनारस और गाजीपुर में थीं दे दीं और वह सफल होकर जौनपुर चला गया। बादशाह की सवारी 28 जून, 1567 को राजधानी की ओर चली। कूरा नामक कस्बे में जो फरहत खां की जागीर में था, बहुत बड़ा भोज हुआ। इटावा में सुजात खां ने भी ऐसा ही भोज दिया। अन्त में 18 जुलाई, 1567 को बादशाह आगरा पहुंचा।

इसकन्दर के विरुद्ध मुहम्मद कुली खां बरलास के नेतृत्व में सेना भेजी गई थी। उसका वृत्तान्त निम्नलिखित है—

यह सेना अवध पहुंची। इसके आगमन की खबर सुनकर इसकन्दर अवध के दुर्ग में बैठ गया। शाही अधिकारियों ने दुर्ग को घेर लिया और तोपें चलाने लगे। नगर की ओर एक ऊंची पहाड़ी है जो स्वर्गद्वारी कहलाती है। वहां इसकन्दर ने अपने बहुत-से अनुयायी खड़े कर दिये थे, जिनमें बहुत-से बन्दूकची भी थे। उद्देश्य यह था कि तीरों से और बन्दूक की गोलियों से वे किसी को नगर में आने से रोकें।

दुर्ग को जीतने के लिये मुहम्मद कुली खां बरलास ने कितने ही वीर सैनिकों को नियुक्त किया। उन्होंने विद्रोहियों को पीछे धकेल कर नगर और दुर्ग पर ऐसा कब्जा कर लिया कि कोई भी आदमी खिड़की से बाहर अपना सिर नहीं निकाल सकता था। अब उजबेग लोगों का अन्त आ गया। इसी बीच में खबर आई कि अली कुली और बहादुर मारे गये और शाही सेना की विजय हो गई। यह खबर नगर के बाहर और भीतर फैल गई, जिससे शाही सेवकों का जोश बढ़ा और शत्रु हतोत्साह हो गया। इससे पहले भी राय पत्तरदास ने राजा टोडरमल को पत्र द्वारा सूचित कर दिया था कि शाही सेना को विजय प्राप्त हो गई है तथा अली कुली और बहादुर मारे जा चुके हैं। यह खबर शाही सेना के अवध पहुंचने से पहले ही आ गई थी परन्तु साधारण लोग इस खबर को बनावटी समझते थे। जब नई खबर आई तो सिकन्दर ने इसको गुप्त रखना चाहा और युक्ति करके उसने रहमान कुली कुशबेगी को यह कह कर बुलाया कि बहुत-सी बातें करनी हैं। शाही सेवक इस पर सहमत नहीं हुए। अन्त में उसने अपने एक विश्वस्त सेवक को जिसका नाम हाजी उगलान था, उन अधिकारियों के पास भेजा। अधिकारियों ने उससे बात की और यह व्यवस्था हुई कि रहमान कुली, हाजी उगलान के साथ जाये और समझौता करके वापस आ जाये। दोनों उसी दिन गये और वापस आ गये। उन्होंने सूचना दी कि इसकन्दर को अपने पिछले कार्यों पर बड़ा पश्चात्ताप है और वह चाहता है कि अधिकारी लोग बीच-बचाव करके उसको दरबार में उपस्थित होने का अवसर दें। वह चाहता था कि किसी नियत स्थान पर पहले वह और अधिकारी मिले और शपथ लेकर समझौते की पुष्टि करे। अगले दिन ईद कुर्बान था इसलिये उसकी इच्छा पूरी कर दी गई।

सारांश यह है कि इसकन्दर आगा-पीछा करके शाही सेवकों को टालता रहा और अनेक बहाने करता रहा। फिर एक रात वह दुर्गद्वार से बाहर आया जो नदी की ओर खुलता था और कुछ नावों के द्वारा, जो उसने पहले से ही तैयार रखी थी, वह खतरे के भंवर से अधमरा होकर निकल गया। जब प्रातःकाल हुआ तो शाही सेवकों को उसके भाग जाने का पता लगा। वे तुरन्त ही नगर में घुस कर विजय के बाजे बजाने लगे। सिकन्दर के पास उस ओर नावें नहीं थीं इसलिये उसका पीछा करने में दो या तीन दिन का विलम्ब हुआ क्योंकि उनको नाव घाटों से नावें मंगानी पड़ीं। इसी बीच में इसकन्दर ने अपने कुटुम्ब की रक्षा की व्यवस्था कर दी और शाही अधिकारियों से कहलाया कि मैं अब भी अपने वचन पर आरूढ़ हूं और नदी को मैंने इसलिये पार किया है कि मैं लोगों से डरता हूं। अब मैं चाहता हूं कि मुहम्मद कुली खां, मुजफ्फर खां और राजा टोडरमल नाव में बैठकर नदी के मध्य में पहुंचे। मैं भी इन आदमियों के साथ वहां आकर उनसे सलाम करूंगा और उन्हीं

से सुनूंगा कि क्या समझौता हुआ है। जब मेरा चित्त शान्त हो जायेगा तब मैं दरबार में जाऊंगा। तीनों बड़े सरदारों ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। इसकन्दर खां दूसरे तट से चार-पांच विश्वस्त व्यक्तियों के साथ नाव द्वारा आया और नदी के बीच में बातचीत हुई। शाही सेवकों ने शपथ लेकर उसको समझाने के लिये जो करना चाहिये था, किया, परन्तु इसकन्दर ने अपने वचन नहीं निभाये और कहा कि ''मैंने अनेक अपराध किये हैं इसलिये अभी दरबार में जाने का मेरा साहस नहीं होता। आवश्यक यह है कि मेरे अपराध क्षमा कर दिये जायें और मेरी जागीर पूर्ववत् बनी रहे और इसी प्रान्त में सेवा करने के लिये मुझ को नियुक्त कर दिया जाये। तब मैं अच्छी सेवा करके शाही कृपा का पात्र बन सकूंगा। उसके हृदय में एक बात थी और जीभ पर दूसरी बात। इसलिये वह व्यर्थ बातें करके समय नष्ट करता रहा। यद्यपि वर्षा हो रही थी तो भी वह दो मंजिल नदी के नीचे की ओर चला गया और यह झूठी बात कहलाई कि नदी के बहाव के कारण उसकी नाव चली गई है। जब शाही सेवकों ने देखा कि वह धोखा देने की युक्तियों कर रहा है तो उन्होंने नदी पार करके उसका पीछा किया। वह कीचड़ और बाढ़ को पार करके गोरखपुर पहुंच गया। वहां सुलेमान कुली नामक एक उजबेग था जो अफगानों की ओर से नाव घाट पर कब्जा किये हुए था। उसने नावें इकट्ठी करके बड़ी शीघ्रता से इसकन्दर को उसके आदमियों के साथ नदी पार उतार दिया। इस प्रकार उसको बादशाह के क्रोध से बचा लिया। बड़े-बड़े शाही अफसर अफगान राज्य की सीमा पर पहुंचे परन्तु अभी दरबार से यह आदेश नहीं आया था कि वे उस राज्य में प्रवेश कर सकते हैं, इसलिये वे रुक गये और दरबार में उन्होंने सारी खबर भेज दी। यह खबर बादशाह को उस दिन मिली जब वह आगरे पहुंचा तो आदेश हुआ कि बचे-खुचे लोग साम्राज्य से बाहर निकल गये हैं इसलिये शाही सेवकों ने जो कुछ किया है उसी पर वे सन्तोष करें। सरकार अवध मुहम्मद कुली खां बरलास को जागीर में दे दिया गया और दूसरे अधिकारियों को दरबार में बुला लिया गया। जब यह आदेश शाही सेवकों को प्राप्त हुआ तो उन्होंने मुहम्मद कुली खां को उसकी जागीर में रख दिया और वे राजधानी की ओर रवाना हो गये तथा वहां पहुंच कर वे दरबार में उपस्थित हुए।

***

प्रकरण 63

चित्तौड़ दुर्ग की विजय के लिए अभियान

19 सितम्बर, 1567 को अकबर ने हिन्दवाड़ा की विजय के लिये प्रयाण किया। जब वह शिव सुपार नामक दुर्ग के निकट पहुंचा तो उसने वहीं शिविर लगवाया और उसे मालूम हुआ कि दुर्ग खाली पड़ा है। बादशाह के आगमन से पहले ही रणथम्भौर के दुर्गाध्यक्ष राव सुर्जन के नौकर भयभीत होकर कृषकों के साथ वहां से भाग गये थे। अकबर ने यह दुर्ग

नजर बहादुर के सुपुर्द कर दिया और फिर वहां से रवाना होकर छः मंजिल के बाद उसने कोटा नगर के पास अपना शिविर लगवाया और उस दुर्ग और प्रदेश को शाह मुहम्मद कन्धारी के सुपुर्द करके रवाना हुआ और गागरान दुर्ग के पास जाकर ठहरा। यहां लेखक का बड़ा भाई शेख अबूल फैजी दरबार में आया। उस समय बादशाह चित्तौड़ विजय का विचार कर रहा था।

***

प्रकरण 64

मालवा के विद्रोह का दमन

फैजी ने लिखा है कि मैं शाही राजसिंहासन के सामने बैठ गया और बादशाह की तारीफ में कविता पढ़ने लगा तो ईराक और खुरासान के कवि मेरी कविता की प्रशंसा करने लगे और कहने लगे, यह ज़ादूगर कौन है इसकी जबान से मोती बरस रहे हैं। दूसरे ने कहा, यह नया तोता कौन है, यह कोयल की-सी बोली बोलता है। बादशाह ने मुझ से ऐसी कृपापूर्वक बात की कि दरबार में आने से जो मुझे डर लगा था जाता रहा। उसने कहा, ये हैं तोते, तुमको यह वाणी किसने सिखाई है और तुम्हारी काव्य-कल्पना को किसने जगाया है। तुम्हारे उच्च छन्दों की नींव किसने डाली है। मैंने उत्तर दिया, आपके साम्राज्य की शान्ति से मैंने सब कुछ सीखा है। मेरा पिता मेरा गुरु था, उससे बढ़कर और अधिक पवित्र व्यक्ति कोई नहीं है। उसी ने मेरे आन्तरिक वेदना की चिकित्सा की है।

बादशाह चाहता था कि राणा को दण्ड देने के लिए वह स्वयं जाये और कुछ अधिकारियों को मालवा भेजा जाये, जो मुहम्मद सुल्तान मिर्जा के पुत्रों के विद्रोहों को शान्त करे। यह सेवा शिहाबुद्दीन अहमद खां, शाह बुदाग खां मुराद खां, हाजी मुहम्मद खां शिस्तानी और अन्य लोगों के सुपुर्द की गई। इन लोगों की मालवे में जागीरें थीं। इन्होंने तैयारी करना शुरू कर दिया और गागरान दुर्ग से रवाना होकर वे निरन्तर यात्रा करते हुए उज्जैन पहुंच गये तो मिर्जा लोग भागकर गुजरात चले गए। जब उन लोगों को मालूम हुआ कि शाही सेना राजधानी से कूच करती हुई आगे बढ़ रही है तो उलूग मिर्जा, जो सबसे बड़ा भाई था इब्राहीम हुसेन मिर्जा और मुहम्मद हुसेन मिर्जा के पास पहुंच गया, जो उज्जैन में थे वह उनमें शामिल हो गया। इन लोगों ने यह सुनकर कि शाही सेना गागरान आ पहुंची है, भयभीत होकर मांडू की ओर प्रस्थान किया। वहां उलूग मिर्जा की मृत्यु हो गई। उसके दूसरे भाईयों ने देखा कि शाही सेना का सामना करना उनकी शक्ति से बाहर है, तो वे गुजरात की ओर भाग गये और चंगेज खां से जा मिले। चंगेज खां, सुल्तान महमूद गुजराती का दास था। महमूद की मृत्यु के बाद उसने चांपानेर, भड़ौच और सूरत आदि दुर्ग दबा लिये

थे। गुजरात में भी मिर्जा लोगों ने अच्छा व्यवहार नहीं किया। उनमें फूट फैल गई ओर उनके आत्मविनश की तैयारियां हो गईं। इसका पूरा विवरण यथास्थान दिया जायेगा। सारांश यह है कि शाही सेना ने मालवा से कूड़ा-कचरा साफ कर दिया और फिर जागीरदार लोग अपनी जागीरों को चले गये। उन्होंने दरबार में अपनी विजय की खबर भेजी और लिखा कि विद्रोही लोग शाही इलाके को छोड़ कर भाग गये हैं।

***

प्रकरण 65

बादशाह द्वारा चित्तौड़ दुर्ग का घेरा

इसका अनुवाद मेजर प्राइस ने किया है

जब मालवा में युद्ध करने की व्यवस्था करने के निमित्त शाही शिविर गागरान दुर्ग के समीप लगा हुआ था तो आसफ खां और वजीर खां को जिनकी जागीरें पास ही थीं मांडल के दुर्ग पर आक्रमण करने के लिये आदेश दिया गया। यह राणा का दृढ़ दुर्ग था और रावत बलवीर सोलंकी उसका दुर्गाध्यक्ष था, परन्तु बादशाह के प्रभाव से वह जीत लिया गया। जब मालवा के लिये सेना भेजी गयी तो बादशाह के पास कम सेना रह गई, फिर भी ईश्वर पर भरोसा करके बादशाह ने प्रयाण करने का आदेश दिया। विचार यह था कि शाही सेना को थोड़ा समझा कर राणा पहाड़ियों से बाहर निकल जायेगा और इस प्रकार उसको समाप्त किया जा सकेगा। परन्तु राणा समझता था कि शाही सेना के साथ दुर्ग के घेरने के साधन नहीं हैं इसलिए किलों को जीतने का प्रयास नहीं किया जायेगा। राणा ने चित्तौड़ के दुर्ग को और दृढ़ किया और उसमें इतना खाने-पीने का सामान भेज दिया जिससे वर्षों तक निर्वाह हो सकता था। राणा का खयाल था कि इस दुर्ग को जीता नहीं जा सकता। राणा ने दुर्ग में 5000 वीर राजपूत रक्खे और आसपास के प्रदेश को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया जिससे खेतों में घास का एक तिनका भी न रहा। फिर राणा स्वयं पहाड़ी प्रदेश में चला गया। जब्र शाही सेना चित्तौड़ के निकट पड़ी हुई थी तो बादशाह ने यह उचित नहीं समझा कि राणा का पीछा किया जाये और पहाड़ियों में घुसा जाए। ईश्वर की प्रेरणा से उसने चित्तौड़ दुर्ग को छीन लेने का निश्चय किया। यह दुर्ग ही राणा की शक्ति का आधार था और उसके राज्य का केन्द्र था। 20 अक्टूबर, 1567 को बादशाह दुर्ग के बाहर निकट ही आ पहुंचा और वहां शाही डेरे खड़े किये गये। उस समय बड़ी जोर की आँधी आई, मेघ गर्जन हुआ और बिजली चमकी, परन्तु एक घण्टे पश्चात् आकाश स्वच्छ हो गया और दुर्ग थोड़ी दूर पर दिखाई देने लगा। अगले दिन बादशाह उस पहाड़ी के नीचे जा पहुंचा, जिस पर यह दुर्ग स्थित है। फिर कुछ दरबारियों के साथ उसने उस पर्वत का चक्कर लगाया,

उसके साथ भूमि नापने वाले थे। उन्होंने बतलाया कि दुर्ग का वृत्त 2 कोस है, बादशाह ने बख्शियों को आदेश दिया कि वे अपनी-अपनी तोपें जमायें। इस प्रकार दुर्ग को सब ओर से घेर लिया। इस कार्य में एक मास लगा। साथ ही कुछ अधिकारी राणा के राज्य को उजाड़ने के लिये और विद्रोहियों को दण्ड देने के लिये भेजे। आसफ खां को कुछ अधिकारियों के साथ रामपुर भेजा गया, जिसको उसने तलवार के बल से जीत लिया। इसकी बादशाह ने प्रशंसा की, ऐसा सुना गया। फिर राणा उदयपुर और कुम्भलनेर चला गया है तो हुसेन कुली खां को आदेश हुआ कि उसको पकड़े। तब हुसेन अली खां राणा की राजधानी उदयपुर पहुंचा और वहां उसने विद्रोहियों का वध किया। उदयपुर, कुम्भलनेर में जहां भी वह कुछ लोगों का एकचित्त देखता था उनको तलवार से समाप्त करवा देता था। उसने बहुत-सा सामान लूटा और राणा को तलाश किया। परन्तु राणा का पता नहीं लगा तो शाही आदेशानुसार वह वापस लौट आया।

गुजरात की घटनायें

जब शाही सेना दुर्ग के घेरे में लगी हुई थी तो बादशाह ने सुना कि इतमाद खां गुजराती को चंगेज खां और मिर्जाओं ने हरा दिया है और वह डूंगरपुर आ गया है। लगभग इसी समय इतमाद खां की भेजी हुई एक दरखास्त और उपयुक्त भेटें मिलीं। बादशाह राजदूतों से अनुग्रहपूर्वक मिला और हसन खां खानजादा के साथ एक स्नेहसूचक पत्र देकर विदा किया। उस समय इतमाद खां को स्वयं आने का अवसर नहीं मिला। हसन खां गुजरात से आगरा आया और दरबार में हाजिर हुआ।

चित्तौड़ विजय के प्रयत्न

अकबर चित्तौड़ दुर्ग की विजय के लिये लालायित था। उसने खाने आलम और आदिल खां से प्रारम्भिक आक्रमण करवाया परन्तु वह विफल हुआ तो अकबर ने कहा इसमें जल्दबाजी की गई थी। तब आदेश दिया गया कि दुर्ग की प्राचीर और बुर्जा में सुरंग लगाये जाये और उनको बारूद से भरकर आग लगाई जाये। फिर एक स्थान पर सबात बनाया जाये। दुर्ग के चारों ओर तोपें लगाई गई थीं परन्तु इनके तीन मंच प्रमुख थे। एक तोप मंच लाकूटा द्वार के सामने था। वह स्वयं अकबर के अधीन था। परन्तु हसन खां चगताई, रायपत्तर दास, काजी अली बगदादी, इखितयार खां फौजदार, और काबिर खां के सुपुर्द किया गया था। सुरंग बनाने वाले यही काम कर रहे थे। दूसरा तोप मंच सुजात खां, राजा टोडरमल और कासिम खां, मीर बरु-बहर के सुपुर्द था। इस मंच पर घोर वर्षा के समय एक ढका हुआ मार्ग बनाया गया था, जिसकी लम्बाई एक बाण की मार के बराबर थी। तीसरा तोप मंच ख्वाजा अब्दुल मजीद असद खां और वजीर खां तथा अन्य प्रसिद्ध वीरों के अधीन था। भारी तोप ढाली गई जो आधा मन का गोला फेंक सकती थी। दुर्ग में से सांडा सिलहदार और साहिब खां आये और उन्होंने अनुनय विनय की और कहा कि बादशाह के दरबार में प्रतिवर्ष कर भेज दिया जायेगा और हम बादशाह की प्रजा बन जायेंगे। कई अधिकारियों ने यह प्रस्ताव पसन्द किया और बादशाह से इस विषय में निवेदन किया। उन्होंने सलाह

दी कि सरकार से समझौता करके घेरा उठा लिया जाय परन्तु अकबर ने यह बात नहीं मानी। उसने कहा कि राणा स्वयं दरबार में आये तभी घेरा उठाया जा सकता है। जब समझौता नहीं हुआ तो लड़ाई और भी जोर से होने लगी। दुर्ग में बड़े चतुर गोलेबाज थे जो शाही सेना पर निरन्तर गोलों की वर्षा करते थे। शाही सेना के लोग कच्चे चमड़े की ढालों द्वारा अपनी रक्षा करते थे और सबात के निर्माण मे कठिन परिश्रम कर रहे थे। तथापि प्रतिदिन लगभग 200 आदमी जाते थे। सबात का काम भी चल रहा था और सुरंगें आगे बढ़ रही थीं। मजदूरों को चांदी और सोना मिट्टी की भांति दिया जाता था। सबात के दोनों ओर उन्होंने मिट्टी की इतनी चौड़ी दीवार बना दी थी कि तोप के गोले उसमें प्रवेश नहीं कर सकते थे। सुरंगें बनाने वाले दुर्ग प्राचीर की नींव तक पहुंच गये। उन्होंने प्राचीर के नीचे ऐसी दो सुरंगें बनाईं जो एक-दूसरे से मिली हुई थीं। एक सुरंग में 120 मन और दूसरी में 80 मन बारूद भरा गया था। यह आदेश दिया गया था कि जब सुरंगों में आग लगाई जाये तो वीर और साहसी लोग तैयार खड़े रहें और प्राचीर टूटते ही वे शीघ्रता से दुर्ग पर अधिकार कर लें। 17 दिसम्बर, 1568 को बारूद में आग लगाई गई तो दुर्ग जड़ से उखड़ कर हवा में उड़ गया और वहां खड़े हुए भाग्यहीन सैनिक भी समाप्त हो गये। दूसरी सुरंग की बत्ती ने आग नहीं पकड़ी परन्तु आक्रमणकारियों ने यह समझ कर कि प्राचीर नष्ट हो गई है उसकी ओर प्रवेश करने के लिए झपटे। तत्काल ही दूसरी सुरंग भी भभक उठी। जो सैनिक प्रवेश कर रहे थे और जो उनको रोकने के लिये तैयार थे दोनों ही उस भयंकर विस्फोट में नष्ट हो गये। उनके हाथ-पैर इधर-उधर उड़ गये और पत्थर मीलों दूर जा पड़े। विस्फोट की ध्वनि 50 कोस और इससे भी अधिक कोस तक पहुंची और जिन्होंने सुनी, वे सब आश्चर्यान्वित हो गये। वास्तव में दोनों सुरंगों की एक ही बत्ती थी जिसको एक ओर से सुलगाया गया था इसलिये एक सुरंग में पहले आग लगी, दूसरी में बाद में। वीर लोगों ने इस पर विचार किये बिना ही आक्रमण कर दिया। बादशाह ने तो आदेश दिया था कि बत्ती को दो स्थान पर सुलगाया ज़ाये। परन्तु कबीर खां और दूसरे निरीक्षकों ने अपने ही विचार के अनुसार काम किया अतः जो होनहार थी, वह हुआ। लगभग 200 वीर मारे गये, जिनमें 100 तो बड़े प्रसिद्ध थे। इनमें से 20 से बादशाह स्वयं परिचित था। इन लोगों में सैयद अहमद का पुत्र सैयद जमालुद्दीन था। वह बांरा का सैयद था और उस पर बादशाह की बड़ी कृपा थी। दूसरे लोगों में मीरत बहादुर और मुहम्मद सालह था जो मीरात खां कुलाबी का पुत्र था। यह अपने लड़कपन से ही वीर और शक्तिशाली था। इनके अतिरिक्त हयात सुल्तान, शाहअली इशाक आका, यजदान कुली, मुहम्मद बिलोच, जान बेग। यार बेग, शेर बेग, यशावल बाशी और मीरात बहादुर थे। लगभग 40 लोग पर्वत की घाटियों में छिपे हुए थे, मिट्टी और ईटों में दब गये। जब दुर्ग पर विजय प्राप्त हो गई तो पता लगाया गया कि वे किस प्रकार नष्ट हुए, शत्रु के 40 आदमी मारे गये। जब इस दुर्घटना का पता दूसरे वीरों को लगा तो वे युद्ध में कूद पड़े। विरोधियों के एक स्थान पर अपने जीवन का बलिदान कर दिया और दूसरे स्थान पर बड़े परिश्रम से एक प्राचीर खड़ी की। यह प्राचीर भी उतनी ही लम्बी और चौड़ी थी। उसी दिन आसफ खां वाली सुरंग में बत्ती लगाई गई परन्तु उसने आग नहीं पकड़ी, लगभग 30 दुर्गरक्षक मारे गये। यद्यपि शाही सेना की कोई

क्षति नहीं हुई परन्तु घेरा आगे नहीं बढ़ां। इस दुर्घटना के कारण दुर्गरक्षकों का साहस और बढ़ गया। परन्तु अकबर और अधिक परिश्रम करने लगे। दुर्गरक्षकों में तो हर्ष और जोश था परन्तु अकबर शान्त और गंभीर था। उसने सोचा कि यह काम योजना के बिना किया गया है और जोशीले लोगों ने त्वरा की है। अब अकबर सबात के निर्माण में व्यस्त हो गया, वह समझता था कि दुर्ग को छीन लेने का यही सर्वोतम उपाय है। वह बार-बार सबात के निर्माण को देखा करता था और दुर्ग के समीप पहुंच कर उन दुर्गरक्षकों पर गोलियां चलाया करता था जो दिखाई दे जाते थे। एक दिन वह लाकोट दरवाजे वाले तोप मंच पर आया तो उसने देखा कि प्राचीर की आड़ में उसके योद्धा लोग घेरे में लगे हुए हैं। वहां खड़े हुए अकबर ने रन्ध्रों में से गोलियां चलाईं। उससे दार रंध्र से दूर जलाल खां खड़ा हुआ था और प्राचीर के ऊपर अपनी ढाल रख रक्खी थी। उसमें से देख रहा था कि दुर्गरक्षक गोलियां कैसे चला रहे हैं। वीर लोग तोपमंच पर खड़े हुए एक दुर्गरक्षक का निशाना देख रहे थे और उसकी कला की प्रशंसा कर रहे थे। उसने कितने ही गाजियों को आहत कर दिया था, उसका निशाना कभी चूकता नहीं था। एकाएक उसने जलाल खां के सिर पर निशाना लगाया। जलाल खां को गोली तो लग गई परन्तु अति क्षति नहीं हुई। अकबर ने कहा, जलाल खां यह बंदूकची दिखाई नहीं देता है यदि वह दिखाई दे तो मैं तुम्हारा बदला लूंगा। उस व्यक्ति की बंदूक रंध्र में से निकली हुई थी। अकबर ने उसी पर गोली चलाई और कहा, मैं तुम्हारा बदला बन्दूक से ही लूंगा। अकबर की गोली रंध्र में से पार होकर उस बंदूकची को लग गई, उस समय तो इसका पता नहीं लगा परन्तु बन्दूक की नाल रन्ध्र में नीची हो गई। जिससे जाना गया कि बंदूक वाले को गोली लग गई। फिर मालूम पड़ा कि मारा गया था उसका नाम इस्पाईल था, वह बंदूकचियों का अफसर था। बादशाह के हाथ से इस प्रकार कितने ही दुर्ग सैनिक मारे गये थे। एक दिन अकबर चित्तौड़ी बुर्ज के पास वाले तोप मंच पर आया, वह धीरे-धीरे एक स्थान की ओर जा रहा था जहां पर गोलियों और गोलो की वर्षा हो रही थी। उसके मन में किसी प्रकार का भय नहीं था। एकाएक तोप का एक बड़ा गोला उसके पास गिरा जिससे उसके 20 वीर मारे गये। दूसरे दिन खाने आलम को एक गोली लगी। वह अकबर के पास ही खड़ा हुआ था यह उसके कवच में चली गई। परन्तु अन्दर जाते-जाते ठंडी हो गई। एक दिन मुजफ्फर खां को भी गोली लगी परन्तु उसकी कोई क्षति नहीं हुई। इस प्रकार घेरे में ईश्वर ने कई लोगों की रक्षा की।

राजा टोडरमल और कासिम खां, मीर बर्रुबहर के निरीक्षण में सबात का काम पूरा हो गया। सवात के ऊपर भी कोठड़ियाँ बनाई गई थीं अकबर स्वयं दो रात और एक दिन एक कोठड़ी में ठहरा था। घिरे हुए लोग भी वीरतापूर्वक लड़े थे। अकबर सबात पर बैठा वीरों के कार्य देख रहा था। इन दो रातों और एक दिन में वीर लोगों ने न भोजन किया न नींद ली, इससे दोनों पक्ष थक गये थे। अंत में 23 फरवरी, 1568 को दुर्ग पर बादशाह का अधिकार हो गया।

दुर्गविजय

एक रात को दुर्ग पर सब ओर से आक्रमण किया गया और प्राचीर को स्थान-स्थान पर तोड़ दिया गया। यह प्रत्यक्ष दिखाई दे रहा था कि दुर्ग नष्ट होने वाला है। सबात के पास विजयी सेना आगे बढ़ रही थी। आधी रात को दुर्गरक्षक टूटी हुई प्राचीर के पास आये तो कुछ लोग तो मारे गये और दूसरे लोगों ने टूटी हुई प्राचीर में मखमल, रूई, लकड़ियां और तेल भर दिया। जब मुसलमान आक्रमण करते तो वे लोग इसमें आग लगाते और शाही सैनिक प्रवेश नहीं कर सकते।

जयमल की वीरगति

उस समय अकबर ने देखा कि एक कवचधारी व्यक्ति टूटी हुई प्राचीर की मरम्मत करवा रहा है, उसके कवच में हजार मेखें थीं। जो सरवारी का चिन्ह था परन्तु अकबर यह नहीं जानता था कि वह कौन है। अकबर ने संग्राम नामक अपनी बंदूक से उस पर निशाना लगाया और फिर शुजात खां और राजा भगवंतदास से कहा मुझे ऐसा मालूम होता है कि उस आदमी को गोली लग गई है। खानेजहां ने कहा कि यह व्यक्ति रात भर वहीं था और प्राचीर की मरम्मत करवा रहा था अब वह दुबारा नहीं आये तो मान लेना चाहिये कि वह मारा गया। जब जब्बार अली दीवाना ने सूचना दी कि शत्रु दिखाई नहीं देते। उसी समय दुर्ग में कई स्थानों पर आग की ज्वालाएं उठती हुई दिखाई दीं। राजा भगवानदास ने समझ लिया कि यह जौहर की ज्वाला है। भारत में यह प्रथा है कि जब कोई महा विपत्ति आ जाती है तो चंदन आदि की लकड़ियों का बहुत बड़ा ढेर लगाया जाता था, उसमें दूसरी लकड़ियां मिलाकर तेल डाला जाता है, फिर कठोर हृदय वाले विश्वस्त लोगों के सुपुर्द स्त्रियां सौंप दी जाती हैं। जब यह निश्चय हो जाता है कि पराजय हो गयी और वीर लोग मारे गये तो स्त्रियों को जला कर खाक कर दिया जाता है। अब यह पता लग गया था कि अकबर की गोली से ही दुर्गाध्यक्ष जयमल मारा गया था और यह ज्वालाएं जौहर की ही थीं। एक जौहर फत्ता के मकान में किया गया था और एक राणा के मुख्य सेवकों ने किया था तथा एक राठोड़ों ने किया था, इनमें साहिब खां मुख्य था। एक बहुत बड़ा जौहर चौहानों की हवेली में हुआ था जहां का मुख्य सरकार ईसरदास था। लगभग 300 स्त्रियां इसमें जल मरी थीं। उस दिन जयमल के मारे जाने पर सबका उत्साह भंग हो गया था और टूटी प्राचीर के पास कोई दिखाई नहीं देता था, तो भी गाजियों को सब ओर से एकत्र करके सावधानी बरती गई और आदेश दिया गया कि प्रातःकाल दुर्ग में प्रवेश किया जायेगा। प्रातःकाल योद्धाओं ने दुर्ग में प्रवेश करके पराजित लोगों को मारना और बांधना शुरू किया। राजपूतों ने प्राणपण से युद्ध किया और मारे गये। तब अकबर ने आदेश दिया कि सबात के सामने से कुशल हाथी लाये जायें तब गिर्दबाज घोकर और मधुकर तथा जंगिया तथा सब्दालिया और कादिरा नामक हाथी मंगवाये गये। अकबर एक विशाल हाथी पर सवार हुआ, उसके साथ कई हजार प्यादे थे। ईसरदास चौहान ने मधुकर नामक हाथी की सूंड पर खंडार मारा और एक हाथ से उसका दांत पकड़ा और कहा, मेरे इस कार्य की खबर

अकबर को दे देना। एक राजपूत ने जंगिया नामक हाथी की सूंड अपनी तलवार से काट डाली, फिर भी मरने से पहले वह खूब लड़ा। उसने 30 आदमियों को पहले ही आहत कर दिया था, अब 15 को और मार डाला। कादिर नामक हाथी इस शोर को सुनकर दुर्ग में घुस गया और एक तंग मार्ग पर उसने कितने ही लोगों को कुचल डाला। उस समय प्राचीर पर खड़ा हुआ अकबर इस दृश्य को देख रहा था। जब सब्दालिया नामक हाथी दुर्ग में घुसा तो एक राजपूत ने झपट कर उसकी सूंड पर घाव कर दिया परन्तु हाथी ने उसको अपनी सूंड में पकड़ने से पहले आदमी को छोड़कर दूसरे पर आक्रमण किया, यह भी अकबर ने अपनी आंखों से देखा। आरम्भ में केवल 50 हाथी ही दुर्ग में घुसाये गये थे। फिर इनकी संख्या 300 कर दी गई। इन्होंने सब राजपूतों को कुचल डाला। अकबर ने कहा था जब मैं गोविंद शरण के मन्दिर में पहुंचा तो एक महावत ने एक आदमी को अपने हाथी से कुचलवाया। हाथी उसको अपनी सूंड में पकड़ कर अकबर के सामने लाया। महावत ने कहा कि मैं इस आदमी का नाम तो नहीं जानता परन्तु वह कोई सरदार जान पड़ता है और इसके चारों ओर बहुत-से आदमियों ने प्राणों का बलिदान किया है। अंत में यह मालूम हुआ कि वह फत्ता था। जिस समय उसको बादशाह के सामने उपस्थित किया गया तो उसमें कुछ प्राण थे परन्तु फिर शीघ्र ही उसकी मृत्यु हो गई। दुर्ग में लड़ने वाले राजपूतों की संख्या तो 8000 थी परन्तु 40000 कृषक इनकी सेवा करने के लिये आ पहुंचे थे। तब अकबर ने दुर्ग में प्रवेश किया तो कुछ दुर्गरक्षक मंदिरों में घुस गये। उन्होंने समझा कि मूर्तियां उनके प्राण बचायेंगी। कुछ लोग अपने घर में ही अपने अंत की प्रतीक्षा करते रहे। कुछ लोग अपनी तलवारें लेकर मुसलमान सैनिकों का सामना करने के लिये आये और मारे गये। मंदिरों में से भी आदमी निकले और गाजियों ने उनको भी मार डाला।

प्रात:काल से मध्यान्ह तक लगभग 30000 आदमी मारे गये। कारण यह था कि 16 अगस्त, 1303 को जब सुल्तान अलाउद्दीन ने 6 मास और 7 दिन के घेरे के बाद यह दुर्ग जीता तो कृषकों को नहीं मारा गया था। क्योंकि यह लोग लड़ाई में सम्मिलित नहीं हुए थे। परन्तु इस अवसर पर उनमें बड़ा जोश और सक्रियता थी। विजय के बाद उन्होंने कई कारण बतलाये परन्तु अकबर ने नहीं माना और सबका वध करने का आदेश दे दिया और इतनों को ही बन्दी भी बना लिया।

एक आश्चर्यजनक बात यह हुई कि अकबर ने कुशल बंदूकचियों की बड़ी तलाश करवाई क्योंकि उनसे वह बड़ा तंग था। बहुत तलाश करने पर भी उनका पता नहीं चला। अन्त में मालूम हुआ कि ये लोग तरकीब करके दुर्ग से सुरक्षित निकल गये। जब विजयी सेना लूटमार करने लगी थी, तो इन बन्दूकचियों ने जिनकी संख्या 1000 थी, यह तरकीब निकाली कि अपनी स्त्रियों एवं बच्चों को अपनी पगड़ियों से बांध कर ले गये। तलाश करने वालों को इनका पता न चला। उन्होंने समझा शाही सैनिक कैदियों को ले जा रहे हैं। उनकी युक्ति सफल हो गयी और वे बच कर निकल गये। उस दिन ऐसा कोई घर एवं मार्ग नहीं था जहां पर मुर्दों के ढेर नहीं लग रहे हों परन्तु तीन स्थानों पर मारे जाने वालों की संख्या

बहुत अधिक थी। दुर्ग में राणा के महल में बहुत-से राजदूत इकट्ठे हो गये थे। वे दो-दो तीन-तीन बाहर निकले और अपने प्राणों को रण में न्यौछावर कर दिया। बहुत-से राजदूत महादेव के मन्दिर में इकट्ठे हो गये थे। उन्होंने रामपुर दरवाजे के बाहर अपने शरीर त्याग दिये। उस दिन शाही सेना में जरब अली तुआची के अतिरिक्त और कोई नहीं मारा गया। अकबर ने ईश्वर को धन्यवाद दिया और दो पहर के बाद वह अपने शिविर में चला गया, जहां वह तीन दिन ठहरने के बाद प्रशासनिक व्यवस्था की और सारा सरकार अबुल मजीद आसफ खां को सुपुर्द कर दिया। जब चित्तौड़ का घेरा शुरू हुआ था तो अकबर ने व्रत लिया था, कि विजय-प्राप्ति के पश्चात् वह पैदल ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की कब्र की यात्रा करेगा। 28 फरवरी, 1568 को उसने वापसी के नगाड़े बजवाये और तपते हुए मरुस्थल में जब बड़ी ही गरम लू चल रही थी तो उसने पैदल यात्रा करना शुरू किया। आदेश तो यह दिया गया था कि सेना सवार होकर चले। परन्तु दरबारी भी बादशाह की भांति पैदल चले और अन्तःपुर की स्त्रियां भी बादशाह के साथ-साथ पैदल चली। जब वह मण्डल कस्बे पर पहुंचा तो शगुन कुरावल ने जो आगे अजमेर गया हुआ था बादशाह के आने का समाचार सुनाया और वह वहां से वापस आया और दरगाह के फकीरों को साथ लाया, जिन्होंने कहा कि ख्वाजा साहिब स्वप्न में दिखाई दिये और उन्होंने कहा कि बादशाह अकबर ने धार्मिक भावना से प्रेरित होकर हमारी दरगाह में पैदल आने का विचार किया है इसलिये तुम लोगों को आदेश दिया जाता है कि उसको यथाशक्ति पैदल आने से रोका जाये। यदि उसको मालूम हो कि उसमें कितनी आध्यात्मिकता है तो वह मेरी ओर दृष्टिक्षेप भी नहीं करेगा। क्योंकि मैं तो एक विद्यार्थी हूं और मिट्टी में बैठा हूं। जब यह प्रार्थना बादशाह के कानों तक पहुंची तो उसी मंजिल से वह सवारी में बैठ गया और 6 मार्च, 1568 को वह अजमेर पहुंचा। अन्तिम मंजिल उसने अपने व्रतानुसार पैदल तय की और अपने निवासस्थान पर जाने से पहले उसने पवित्र दरगाह की परिक्रमा की। उसने दरगाह के सब लोगों के प्रति उदारता की। अकबर अजमेर में 10 दिन ठहरा। ख्वाजा मुईनुद्दीन सारी भलाईयों को करने वाला है। अकबर उनकी सेवा करता रहा।

सुलेमान ने अकबर को बादशाह माना

चित्तौड़ के घेरे के समय एक अच्छी बात यह हुई कि बंगाल के शासक सुलेमान ने पुनः अकबर के नाम का खुत्बा पढ़ाया। वह मुनीम खां खानखाना से मिला और उससे झूठी संधि कर ली। इसका वृत्तान्त इस प्रकार है, जब मुबारिज खां जो अदिली नाम से प्रसिद्ध था, शासन का दावेदार बना तो ताज खां करानी अपने भाइयों के साथ भाग कर बिहार चला गया और वह निरन्तर बंगाल के शासक मुहम्मद खां के साथ और उसके बाद बहादुर के समय में मिथ्याचार की बातें करता रहा। बहादुर के साथ लड़ाई करते हुए अदिली मारा गया और फिर बहादुर की भी प्राकृतिक मृत्यु हो गई। जब उसके छोटे भाई जलालुद्दीन ने बंगाल और बिहार के राज्य पर अपना अधिकार बतलाया। जलालुद्दीन से ताज खां और उसका भाई कभी-कभी तो लड़ते थे ओर कभी-कभी उससे मित्रता कर लेते थे। उन्होंने खानजमां के साथ भी मित्रता शुरू कर दी, परन्तु उनका व्यवहार मिथ्याचारपूर्ण था। अनेक

साहसी कार्य करने के बाद जलालुद्दीन की भी मृत्यु हो गई और बंगाल और बिहार का शासन ताज खां के हाथ में आ गया। ताज खां ने यह शासन धोखे से प्राप्त किया था। कुछ समय के बाद उसकी भी मृत्यु हो गई और राजशक्ति सुलेमान के हाथ में आ गई। उसने खानजमा के साथ मित्रता करके अपनी स्थिति को दृढ़ करने का विचार किया। तब बुद्धिहीन अफगान उसके पास आ इकट्ठे हुए। उसने धन और हाथियों का अच्छा संग्रह कर लिया। जब खानजमा को उचित दण्ड मिल गया और जौनपुर आदि जागीरें बादशाह ने मुनीम खानखाना को दे दीं और वापस राजधानी को चला गया तो असत उल्ला खां के पास खानजमा की ओर जमानियां था। जब खानजमा मारा गया तो असत उल्ला ने बुद्धि की दुर्बलता के कारण सुलेमान के पास एक आदमी को भेजकर मिलना चाहा और कहलाया कि मैं जमानियां आपको दे दूंगा और नमक हरामी कर लूंगा। जब खानखाना को इस बात का पता लगा तो उसको अपनी ओर मिलाने के लिये उसने आदमी भेजे। उसमें कुछ भलाई थी इसलिये उसने सलाह मान ली और जमानियां, कासिम मस्की को दे दिया, जो खानखाना का कारकून था और वह स्वयं खानखाना के समक्ष उपस्थित हुआ जो अफगान सेना जमानियां के लिये आई थी वह विफल होकर वापस चली गई। सुलेमान का प्रधान मंत्री लोदी जो अपनी बुद्धि और सज्जनता के कारण अफगानों में प्रसिद्ध था, सोन नदी के तट पर था। वह खानखाना को शान्तिप्रिय पुरुष समझता था इसलिये उससे मित्रता करके योजना बनाई कि बादशाह अकबर की सेना के प्रभाव से देश को कैसे बचाया जाये। खानखाना और लोदी ने एक दूसरे को सन्देश और भेंटे भेजीं और दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया। जब अकबर ने चित्तौड़ के विपरीत प्रयाण किया तो सुलेमान, उड़ीसा के राजा और इब्राहीम को निर्मूल करने में व्यस्त था। मुनीम खां खानखाना की ओर से उसको चिन्ता थी इसलिये उसने लोदी के द्वारा उससे संधि करना चाहा। उस समय बादशाह अकबर चित्तौड़ विजय में व्यस्त था। मैत्रीपूर्ण पत्र-व्यवहार के पश्चात् यह निश्चय हुआ कि खानखाना मिलने के लिये आये और परस्पर मिल कर संधि करें, फिर बादशाह के नाम का खुत्बा पढ़ा जाये और सिक्के जारी किये जायें। खानखाना ने सुलेमान से मिलने का निश्चय कर लिया, हितैषियों ने उसको इससे रोका, परन्तु उसने उनकी बात नहीं सुनी और तीन सौ अपने आदमियों के साथ वह पटना की ओर रवाना हो गया। इन तीन सौ आदमियों के अतिरिक्त उसके साथ मुहिब्बअली खां, इब्राहीम खां उजबेग, लाल खां बदख्शी, मीर सुल्तान वेष किबेचाक का पुत्र कूचक अली खां, मीर हसीम खां और उनके आश्रित लोग भी थे। सब मिलकर लगभग एक हजार आदमी थे। लोदी ने आकर सलाम की और उसके बाद सुलेमान का ज्येष्ठ पुत्र बायजीद आया। जब ये लोग पटना से छः कोस के अन्तर पर थे तो सुलेमान उनके स्वागत के लिये आया और आदरपूर्वक उनका आलिंगन किया। पहले तो खानखाना ने सुलेमान को अपने निवासस्थान पर एक बड़ी दावत देकर भोजन करने के लिये बुलाया। अगले दिन सुलेमान ने भी दावत दी और अकबर के नाम का खुत्बा पढ़ा तथा अकबर नाम के सिक्के भी जारी किये। सुलेमान के साथियों ने उसको सलाह दी कि मुनीम खां को पकड़ लिया जाये। उन्होंने कहा कि बादशाह चित्तौड़ की विजय में लगा हुआ है और बड़े-बड़े अधिकारी भी वहीं हैं। यदि खानखाना को मार डाला जायेगा तो राजसिंहासन के लिये

उनका मार्ग निर्विघ्न हो जायेगा। जब लोदी ने यह कपट की बात सुनी तो उसने कहा कि ऐसे बड़े भाग्यशाली पुरुष को शत्रु बनाना बुद्धि की बात नहीं है, जिसकी शक्ति का प्रकाश दिन-दिन फैलता जाता था। इसके अतिरिक्त खानखाना तो बादशाह का एक दास है जिस पर बादशाह की सुदृष्टि होती है वही खानखाना बन जाता है। यदि कुछ लोगों को मार भी दिया जायेगा तो क्या लाभ होगा। फिर इब्राहीम उनका विरोधी है और घात में बैठा हुआ है इसलिये यह योजना कैसे सफल हो सकती है। सुलेमान ने तो यह बात मान ली, परन्तु दूसरे अफगानों में मूर्खता के मद में चूर थे, इस पर ध्यान नहीं दिया। जब मुनीम खां ने यह खबर सुनी तो लोदी की सलाह से थोड़े से आदमियों के साथ सेना शिविर से रवाना हो गयी और जब बहादुर चला गया, तब अफगानों को मालूम हुआ। बायजीद और लोदी शीघ्र ही खानखाना के पास आये और उसका सम्मान करके वापस लौट गये। मुनीम खां गंगा पार करके दो-तीन मंजिल गया तो उसको चित्तौड़ विजय की खबर मिली, इससे शाही सेवकों का साहस हजार गुना बढ़ गया। सुलेमान शान्तचित्त होकर बंगाल की ओर चला गया और अपने काम में लग गया। उसने कपट द्वारा उड़ीसा पर कब्जा कर लिया और वहां के राजा को मार डाला। उड़ीसा में ही जगन्नाथ का मंदिर है। उसने शपथ खाकर और धोखा देकर इब्राहीम को भी अपने हाथ में ले लिया। इब्राहीम ने जगन्नाथ के राजा की शरण ले रखी थी, और राजसत्ता के विचार उसके मस्तिष्क में घूमा करते थे। सुलेमान ने उसका भी अन्त करवा दिया, फिर शान्त-चित्त होकर मुनीम खां अपने कर्त्तव्य का पालन करने लगा।

***

प्रकरण 66

तेरहवें इलाही सन् का आरम्भ

10 मार्च, 1568 को तेरहवां इलाही संवत् शुरू हुआ। बादशाह ने नौ रोज का त्यौहार मनाया और दरगाह की परिक्रमा करके 14 मार्च, 1568 को अजमेर से राजधानी के लिए रवाना हुआ। उसकी वापसी मेवात के मार्ग से हुई, मार्ग में शिकार करता गया, एक स्थान पर एक बहुत बड़ा शेर दिखाई दिया तो दरबारियों ने तत्काल ही उसको मार डाला, बादशाह को यह बात पसन्द नहीं आई। उसने आदेश दिया कि भविष्य में ऐसा नहीं किया जाये। उसी समय एक दूसरा शेर प्रकट हुआ। बादशाह ने उस पर तीर चलाया तो शेर आहत हो गया और एक ऊंची भूमि पर जाकर क्रोध से देखने लगा। शिकारियों ने उसको घेर लिया तब बादशाह ने उस पर गोली चलाई जो उसके कान के नीचे के चमड़े को काटती हुई निकल गई। बादशाह को दूसरी गोली चलाने का मौका ही नहीं मिला। तब उसने दस्तम खां को आदेश दिया कि आगे बढ़े। आदिल भी, जिसने प्रथम शेर मारा था और जिसके लिए उसको

फटकार पड़ी थी आगे बढ़ा। आदिल ने शेर पर तीर चलाया जो चूक गया। तब आदिल ने शेर पर आक्रमण किया और अपने खंजर से मुंह पर दो घाव कर दिये। तब शिकारी शेर पर झपटे और तलवार से वार करने लगे तो आदिल को भी तलवार का घाव लग गया जिससे वह चार मास तक कष्ट पाकर आगरे में मर गया।

13 अप्रैल, 1568 को बादशाह आगरा पहुंचा। इसी वर्ष हाजी बेगम मक्का और मदीना की यात्रा करके वहां के निवासियों को खूब पुण्यदान करे वापस आई। अकबर ने उसका हर्षपूर्वक स्वागत किया। राजधानी को लौटने पर अकबर ने सोचा कि कुछ सैनिक नायको को चित्तौड़ के घेरे में सेवा करने का अवसर नहीं मिला था। इसलिये उनको रणथम्भौर पर विजय करने में लगाया जाये। अतः सादिक खां, बाबा खान काकशाल, समान्जी खां, सफदर खां, बहादुर खां, दोस्त खां सहारी औन अन्य बड़े-बड़े अफसरों को अशरफ खां के नेतृत्व में इस काम के लिये भेजा गया। परन्तु सेना थोड़ी दूर जाकर वापस आ गई। कारण यह था कि इब्राहीम हुसेन मिर्जा और मुहम्मद हुसेन मिर्जा कुछ सेना खड़ी करके गुजरात से वापस मालवा आ गये थे और उन्होंने उज्जैन को घेर लिया था जिससे उस प्रदेश में बड़ी गड़बड़ मच गई थी। जब शाहबुद्दीन अहमद खां को मुराद खां और शाह बुदा खां के साथ मिर्जाओं के विरुद्ध भेजा गया था तब बादशाह चित्तौड़ पर अभियान कर रहा था और गागरान के दुर्ग के पास ठहरा हुआ था। उस समय मिर्जाओं ने यह समझ कर कि शाही सेना से लड़ाई नहीं की जा सकती, गुजरात की ओर कूच कर दिया था। वे चंगेज खां से जा मिले थे जो सुल्तान महमूद गुजराती का दास था और जिसने सुल्तान की मृत्यु के पश्चात् चांपानेर, सूरत और भड़ौच पर अधिकार कर लिया था तथा अहमदाबाद पर कब्जा करने के लिए इतिमाद खां पर सेना चढ़ाने का विचार कर रहा था। मिर्जाओं के आने पर उसने उनके साथ इतिमाद खां पर प्रयाण किया तो अहमदाबाद के समीप जोर की लड़ाई हुई जिसमें इतिमाद खां हार गया और चंगेज खां ने अहमदाबाद जीत लिया और उसने भड़ौच के पास मिर्जाओं को जागीरें दीं परन्तु मिर्जा लोगों ने वहां भी अत्याचार किये और कितने ही गांवों को दबा लिया। चंगेज खां ने उनके विरुद्ध सेना भेजी जो हार गई तथापि वह चंगेज खां का मुकाबला नहीं कर सकते थे इस लिए वह खानदेश चले गये और फिर वहां से मालवा पहुंच गये और उज्जैन जाकर उत्पात करने लगे। उज्जैन के जागीरदार मुराद खां ने अपने दुर्ग को दृढ़ बनाया और उनका सामना करने को तैयार हो गया।

जब बादशाह को इन उत्पातों की खबर मिली तो उसने आदेश दिया कि जो सेना रणथम्भौर की ओर गई है वह मालवा की ओर प्रयाण करे। यद्यपि वर्षा हो रही थी तो भी सेना ने मालवे की ओर कूच किया। बादशाह ने कुलीच खां, ख्वाजा गयासुद्दीन अली कजमीनी आदि को भी अपने दरबार से वहां भेज दिया।

जब सेना सिरोज पहुंची तो वहां का जागीरदार शिहाबुद्दीन अहमद खां तैयार होकर सेना में आ गया। इसी प्रकार सारंगपुर का फौजदार शाहबुदा खां भी आ पहुंचा। जब मिर्जाओं ने उनके आगमन की खबर सुनी तो वे घबरा कर मांडू भाग गये। तब मुराद खां और मीर

अजीबुल्ला दीवान और अन्य बड़े-बड़े अधिकारियों ने उनका पीछा किया और मिर्जा मांडू से भाग कर नर्वदा की ओर चले गये। उनके बहुत-से साथी नर्वदा में डूब कर मर गये। वहां पर उन्होंने सुना कि चंगेज खां को जझार खां हब्शी ने छल से मार डाला और गुजरात में फूट मच गई। मिर्जाओं ने समझा कि गुजरात अब उनके लिये उपयुक्त शरण स्थान बन गया और वे वहां चले गये। शाही अफसर उनका पीछा करते हुए नर्वदा पहुंच गये परन्तु गुजरात की विजय दूसरे अवसर तक स्थगित रक्खी गई थी इसलिये वे आगे नहीं बढ़े और वापस आ गये। मालवा के जागीरदार अपनी-अपनी जागीरों पर रहे और अशरफ खां, कुलीच खां, सादिक और ख्वाजा गयासुद्दीन अली दरबार को लौट गये। बादशाह को मालूम हो गया था कि उन्होंने प्रस्थान करने में और मिर्जाओं का पीछा करने में सुस्ती की थी इसलिये कुछ दिन तक वह उनसे नाराज रहा। परन्तु जब यह विदित हुआ कि झगड़ालू लोगों ने झूठी खबर दी थी तो उन पर कृपा की गई।

मिर्जाओं ने गुजरात पहुंच कर देखा कि वहां कोई शासक नहीं है तो उन्होंने चांपानेर और सूरत के दुर्गों पर अधिकार कर लिया। इब्राहिम हुसेन मिर्जा भड़ौच चला गया। रुस्तम खां नामक एक तुर्की दास ने, जिसके घर में चंगेज खां की बहन रहती थी, दुर्ग को दृढ़ बनाया और उसमें छिप गया। उत्पाती लोगों ने उसको दो वर्ष तक घेरा। रुस्तम खां बाहर निकलकर वीरतापूर्वक कई बार लड़ा, अंत में उसने संधि करके दुर्ग समर्पित कर दिया, फिर उसकी मृत्यु हो गई। मिर्जाओं के मामलों के अन्त का विवरण यथा स्थान दिया जायेगा।

इसी वर्ष बादशाह अकबर ने अत्काखेल लोगों को आदेश दे दिया कि वे लम्बे अरसे से पंजाब में हैं और वहां का प्रशासन कर रहे हैं। अब वे दरबार में आयें और दूसरे प्रान्त में शासन करें। इन लोगों के विषय में राज्यभक्ति की कई कहानियां थीं। परन्तु अकबर उन पर विश्वास नहीं करता था। उसने निश्चय कर लिया था कि पंजाब के सारे अधिकारियों और जागीरदारों को वहां से बुला लिया जाये और उस प्रान्त का प्रशासन दरबारियों में से घनिष्ट लोगों को दिया जाये। चित्तौड़ विजय के बाद जब शाही सेना वापस लौट आई तो पंजाब के अधिकारियों के नाम आदेश भेजा गया कि वे वहां से चल दें। उन लोगों ने शीघ्रता से आदरपूर्वक इस आदेश का पालन किया। अगस्त, 1568 में वे राजधानी आ पहुंचे और दरबार में हाजिर हुए। कुछ समय के बाद सरकार सम्भल मीर मुहम्मद खां को और सरकार मालवा कुतुबुद्दीन मुहम्मद खां को और सरकार कन्नौज शरीफ खां को जागीर में दिये गये। अल्का जाति में सभी वंशजों को उपयुक्त जागीरें दी गईं। मिर्जा कोका बादशाह की निरंतर निजी सेवा करता था इसलिये उसकी पंजाब वाली जागीर पूर्ववत् रहने दी और नागौर से हुसेन कुली खां को बुलाकर पंजाब प्रान्त उसके सुपुर्द कर दिया गया। जब कोका आया जो शाही सेना रणथम्भौर की विजय के लिये कूच कर रही थी। वह अभिमान के साथ गया जब उस दुर्ग पर विजय प्राप्त हो गई तो वह वापस राजधानी को आया और उसको अपने भाई इस्माइल कुली खां के साथ पंजाब का शासन करने के लिये भेज दिया। बादशाह ने देखा कि मुजफ्फर खां राजनीतिक और वित्तीय मामलों की यथोचित देखरेख नहीं कर

सकता, इसलिए इस पद पर ऐसे आदमी की नियुक्ति की जाये जो कृषकों से प्रेम करता हो और परिश्रमी हो। अतः अकबर बादशाह ने शिहाबुद्दीन अहमद खां को सरकार मालवा से बुलाकर इस पद पर नियुक्त कर दिया, उसने इस विभाग का प्रशासन करने में बड़ा परिश्रम किया। वित्त का काम बहुत बड़ा था, ऐसे अधिकारियों की कमी थी, जो रुपये का गबन न करें। इसलिये उसने वार्षिक बन्दोबस्त (जब्त-ए-हिरसाल) बन्द कर दिया और एक भूमि पर नस्क जारी कर दिया इससे गबन बन्द हो गया।

***

प्रकरण 67

रणथम्भौर दुर्ग की विजय के लिये अभियान

चित्तौड़ के विशाल दुर्ग को जीत लेने पर अकबर ने रणथम्भौर के दुर्ग को जीतने का विचार किया। यह चित्तौड़ जैसा ही था। 21 दिसम्बर, 1568 को इसके लिये अभियान शुरू हुआ। आगरा से दिल्ली पहुंच कर बादशाह ने मुसलमान सन्तों की कब्रों के दर्शन किये और बादशाह हुमायूं की कब्र पर भी गया। वहां फकीरों को दान दिया। पालम के पास उसने शिकार करके मनोविनोद किया। कई मंजिलें चलकर 10 फरवरी, 1569 को अकबर रणथम्भौर पहुंच गया। यह दुर्ग पहाड़ियों के मध्य में स्थित है इसलिये कहा जाता है कि अन्य दुर्ग नग्न हैं, इस दुर्ग ने कवच धारण कर रखा है। इस दुर्ग का वास्तविक नाम रन्तःपुर है। रन उस ऊँची पहाड़ी का नाम है जो इसके ऊपर यह दुर्ग विशाल और दृढ़ है।

उस समय सुर्जन हाड़ा इस दुर्ग का दुर्गपति था। उसने इसको कई प्रकार से दृढ़ बनाया था और इसमें खाद्यसामग्री भर कर इसको लड़ाई के लिये तैयार किया था। अकबर ने अपने शिविर में से जो एक घाटी में लगा हुआथा, बाहर निकल कर और पहाड़ी पर चढ़ कर दुर्ग को देखा और समझ लिया कि उसको जीतने के लिये क्या उपाय सोचे जायें।

अकबर की आज्ञा से सब बख्शियों ने इस पहाड़ी के सब ओर तोप मंच लगा दिये। अपार सेना ने इसको घेर लिया। दुर्ग में जाना और वहां से आना बन्द कर दिया। तोपें निरन्तर चलने लगीं। जब घेरा चल रहा था तो मेंहदी कासिम खां, मक्का की यात्रा करके वापस लौटा। उसका चित्त किंचित् विक्षिप्त हो गया था इसलिये वह गढ़ा से, जहां वह शासक था, बिना इजाजत ही चल दिया था। लज्जित होकर ईराक के मार्ग से वह कन्धार आया और वहाँ से रणथम्भौर आकर उसने बादशाह के प्रति अधीनता प्रकट की और ईराकी घोड़े भेंट किये। अकबर ने उसका कृपापूर्ण स्वागत किया। उसे खिलत प्रदान की और सरकार लखनऊ की जागीर प्रदान की।

प्रकरण 68

चौदहवें इलाही वर्ष का आरम्भ

11 मार्च, 1561 को चौदहवां ईलाही वर्ष शुरू हुआ। बहुत कुछ विचार करने पर यह विदित हुआ कि सबातों के उपयोग के बिना दुर्ग नहीं जीता जा सकता इसलिये कासिम खां, मीर बरु-बहर को आदेश दिया कि सबात तैयार करें। राजा टोडरमल को भी सबात के निर्माण की देख-भाल करने के लिये नियत किया गया। तब रन की घाटी के निकट एक बड़ा ऊंचा सबात तैयार हो गया। इसके लिये संगतरासों ने, लुहारों ने, और खातियों ने बड़ा परिश्रम किया। थोड़े ही समय में सबात किले के बराबर ऊंचा हो गया। फिर पत्थरों और लोहे के गोले फेंकने वाले बड़े-बड़े यन्त्र ऊपर चढ़ाये गये। ऐसा एक यन्त्र 400 बैलों से खींचा जाता था। यह साठ मन का पत्थर फेंक सकता था और 30 मन लोहे का गोला चला सकता था। फिर गोलियां और तोपें चलाने का हुक्म हुआ तो प्राचीरों में दरारें पड़ गईं और मकान ढेर हो गये। 19 मार्च को अकबर ने कहा "अगर दुर्गरक्षक अधीनता प्रकट करने के लिए नहीं आयेंगे तो अगले दिन दुर्ग अपना हो जायेगा।" सुर्जन का दिल बैठ गया। उसने दरबारियों के द्वारा बीच-बचाव करवाया और दूदा तथा भोज नामक अपने दो पुत्रों को दरबार में भेजा। उच्चाधिकारियों के द्वारा उन्होंने बादशाह से भेंट की। अपने पिता से अपराधों की क्षमा मांगी। तब उन दोनों को क्षमा खिलत पहना कर वापस अपने पिता के पास भेज दिया। सुर्जन ने अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा करने के लिये प्रार्थना की कि एक दरबारी आकर उसको ले जाये और अक़बर से मिला दे। अकबर ने यह प्रार्थना स्वीकार की और हुसेन कुली खां को इस काम के लिये नियुक्त किया। जब हुसेन दुर्ग के समीप पहुंचा तो सुर्जन ने बाहर आकर उसका स्वागत किया और फिर वह उसको अपने निवास स्थान पर ले गया। 22 मार्च को सुर्जन दुर्ग से बाहर आकर शाही दरबार में हाजिर हुआ और उपयुक्त भेटों के साथ उसने दुर्ग की चाबियां, जो सोने और चांदी की बनी हुई थीं अकबर को अर्पित कर दीं। सुर्जन के साथ कृपापूर्ण व्यवहार किया गया जिससे उसको शान्ति हो गई और वह अपने को सुरक्षित समझने लगा। उसने कुछ दरबारियों द्वारा कहलाया कि मैं तीन दिन दुर्ग में रहकर अपने कुटुम्ब आदि के बाहर लाऊंगा और तत्पश्चात् दुर्ग शाही सेवकों के सुपुर्द करके मैं राजधानी के लिये रवाना होऊंगा। मेरे पुत्र बादशाह के साथ रहेंगे। अकबर ने यह प्रस्ताव स्वीकार करके उसको जाने की ईजाजत दे दी। सुर्जन ने तीन दिन पश्चात् दुर्ग मिहतर खां को, जो एक बड़ा शाही अफसर था, सुपुर्द कर दिया। सुल्तान अलाउद्दीन को इस दुर्ग को जीतने में एक वर्ष लगा था। परन्तु अकबर ने इसको एक मास में ही जीत लिया। जब अकबर ने दुर्ग में प्रवेश किया तो अल्लाह अकबर के घोष से आकाश गूंज उठा।

जब रणथम्भौर की व्यवस्था कर दी गई तो ख्वाजा जहाँ और मुजफ्फर खां को आदेशानुसार दाहिने मार्ग से राजधानी की ओर प्रस्थान करने को कहा गया और अकबर

अपने घनिष्ठ दरबारियों के साथ प्रसिद्ध दरगाह की यात्रा पर रवाना हो गया। मार्ग में वह प्रतिदिन शिकार करता था। अन्त में वह अजमेर पहुंच गया और दरगाह में गया और वहाँ के लोगों में रुपये उछाले। वह जब तक अजमेर ठहरा प्रतिदिन दरगाह में जाया करता था, फिर वह राधानी की ओर रवाना हुआ।

जब अकबर आमेर उतरा तो राजा भगवानदास ने सच्चे दिल से उसका स्वागत किया और एक भोज दिया तथा अच्छी-अच्छी भेंटें अर्पित कीं। फिर शाही शिविर कूच दर कूच रवाना हुआ। मार्ग में बादशाह को दरबार खां की मृत्यु की खबर मिली जिससे बादशाह को बड़ा दुःख हुआ। दरबार खां की वसीयत के अनुसार उसको स्वामिभक्त कुत्ते की कब्र के नीचे की ओर दफनाया गया। उसने वहाँ अपने लिये पहले से ही गुम्बद बनवा लिया था। अकबर ने उसके बच्चों पर कृपा की। 11 मई, 1569 को अकबर आगरा पहुंच गया और बंगाली महल में गया। इसका निर्माण अभी हाल ही हुआ था।

***

प्रकरण 69

कालिंजर दुर्ग की विजय

कालिंजर दुर्ग पन्ना के राजा रामचन्द्र के अधिकार में था। अफगानों की विपत्ति के दिनों में उसने बिजली खां को एक बड़ी धनराशि देकर यह दुर्ग ले लिया था। बिजली खां, बिहार खां का पुत्र था। जब शाही सेना रणथम्भौर के विरुद्ध प्रयाण करने लगी तो मजनू खां काकसाल, शाहम खां जलेर और अन्य अधिकारियों को जिनकी पूर्वी प्रान्तों में जागीरें थी, आदेश दिया गया कि कालिंजर के दुर्ग को जीत ले। आदेशानुसार उन्होंने दुर्ग को घेर लिया और दुर्गरक्षकों की ऐसी स्थिति हो गई कि कोई दुर्ग के बाहर सिर नहीं निकाल सकता था। जब रणथम्भौर और चितौड़ की विजय की खबर आई तो सबने देखा कि अधीनता प्रकट कर देने के सिवाय अब अन्य कोई उपाय नहीं है। राजा रामचन्द्र में कुछ बुद्धि थी उसने शरण की प्रार्थना की और फिर दुर्ग शाही सेवकों के सुपुर्द कर दिया और भेंटे और दुर्ग की चाबियां अपने कारिन्दों के साथ शाही दरबार में भेज दीं तथा चित्तौड़ और रणथम्भौर की विजय पर बधाई दी और मजनू खां काकसाल को दुर्गाध्यक्ष नियुक्त कर दिया गया।

इसी वर्ष एक घटना यह हुई कि कजली राजा का राजदूत दरबार में आया। कजली भारत का एक प्रान्त है जो मलवाबार के समीप स्थित है। वहाँ का राजा अपने देश और धन के लिये प्रसिद्ध था। उसको जोगियों से बड़ा लाभ पहुंचा था इसलिये वह उनका सम्मान करता था और उनके से ही कपड़े पहनता था। वह बहुत अर्से से अकबर की सेवा में भेंटे

भेजने का विचार कर रहा था परन्तु दूरी के कारण और अन्य भौगोलिक कठिनाइयों के कारण वह अपनी इच्छा पूरी न कर सका। इसके अतिरिक्त उसके सेवकों में से कोई भी इतनी दूर आने को तैयार नहीं था। तब उसके मंत्री के पुत्र ने यह काम करना स्वीकार किया। उससे राजा ने कहा, ''मेरे पास एक चाकू है जो इस देश के प्राचीन वैद्यों ने बनाया है, प्रत्यक्ष में इसमें कोई गुण नहीं है परन्तु इससे जिसको भी छूआ जाय उसकी सूजन दूर हो जाती है। तुम इसको ले जाओ और अकबर को भेंट करना। राजदूत आ गया परन्तु बहुत अर्से तक वह बादशाह के दरबार में हाजिर नहीं हो सका। फिर राजा बीरबल ने उसका परिचय करवाया। राजदूत ने वह चाकू भेंट किया तो अकबर ने उस पर कृपा करके पुरस्कार दिया। फिर वह इजाजत लेकर अपने देश को लौट गया। यह चाकू अब तक शाही कोष में रखा हुआ है। मैंने स्वयं बादशाह से सुना है कि इससे दो सौ से अधिक रोगियों को लाभ हो चुका है।''

***

प्रकरण 70

शाहजादा सलीम का जन्म

उससे पहले अकबर के कई सन्तानें हो चुकी थीं परन्तु वे जीवित नहीं रहीं। अतः अकबर को संतान की बड़ी प्रबल अभिलाषा थी। जब जयपुर की राजकुमारी गर्भवती हुई तो अकबर को आशा हुई कि पुत्र प्राप्ति होगी, तब बेगम को शेख सलीमुद्दीन चिश्ती के मकान के समीप ठहराया गया। अकबर समझता था और उसको सलाह भी दी गई थी कि शेख के आशीर्वाद से पुत्र की प्राप्ति होगी। तब 30 अगस्त, 1569 (जलाली सन् 491 के 24 शहरीयवर) को शाहजादा सलीम का जन्म हुआ। इसके उपलक्ष में साम्राज्य पर कैदी आजाद किये गये। बड़ा उत्सव मनाया गया, उस समय ऐसा विश्वास था कि नवजात शिशु को कुछ अर्से तक पिता के सामने नहीं ले जाया जाय। उस समय अकबर फतेहपुर सीकरी में था भी नहीं। इस प्रचलित भावना का आदर करने के लिये अकबर तत्काल फतेहपुर सीकरी नहीं गया। पुत्र जन्म शेखसलीम के सान्निध्य में हुआ था इसलिये समझा गया कि उसके आशीर्वाद से ही हुआ है। अतः शाहजादे का नाम सलीम रक्खा गया। ज्योतिषियों ने जन्मपत्रियां बनाईं। कवियों ने कविताएं लिखीं। ख्वाजा हुसेन मर्व निवासी ने एक कसीदा लिखा जिसकी प्रत्येक प्रथम पंक्ति से उसके राज्यारोहण की तारीख निकलती थी और दूसरी पंक्ति से शाहजादे की जन्मतिथि निकलती थी तथापि कविता में सुन्दरता की कोई कमी नहीं थी। 21 नवम्बर, 1569 को अकबर को एक पुत्री का जन्म हुआ जिसका नाम खानम रक्खा गया।

***

प्रकरण 71

अकबर की अजमेर यात्रा

अकबर ने व्रत लिया था कि यदि ईश्वर उसकी अभिलाषा पूर्ण करेगा अर्थात् उसको पुत्र प्राप्ति होगी तो वह आगरे से अजमेर तक ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की दरगाह की यात्रा करने के लिये जायेगा और दरगाह में ही ईश्वर को धन्यवाद देगा। इस व्रत की पूर्ति के लिए 20 जनवरी, 1570 को उसने यात्रा का आरम्भ किया और प्रति दिन वह 10 या 12 कोस और कभी इससे भी अधिक चला। वह आगरा से निम्नलिखित स्थानों पर ठहरता हुआ अजमेर पहुंचा।

(1) मन्धाकर
(2) फतेहपुर
(3) खानवा के पास होकर गया और जूना के समीप ठहरा
(4) करोहा
(5) बसावर
(6) टोडा
(7) कलावली
(8) खारन्दी
(9) जीसा
(10) हंस महल के पास होकर गया और फूल महल पर डेरे लगे।
(11) सांगानेर
(12) न्यौता के समीप
(13) झाक जो मुइजा बाद के निकट है।
(14) साखूं
(15) कजबिल
(16) ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की दरगाह अजमेर

बादशाह सीधा दरगाह में गया और भूमि पर माथा रखकर उसने सहायता के लिये प्रार्थना की, उसने अजमेर में कई दिन भक्ति में व्यतीत किये और अच्छे कार्य किये। दरगाह के सेवकों को दान दिया। दान में अच्छी बड़ी धनराशि दी गई थी उसके विभाजन के विषय में शेख हुसेन और दरगाह के सेवकों में विवाद खड़ा हो गया। तब अकबर ने मामले की जांच करने के लिये विश्वस्त लोग नियुक्त किये। कुछ लोग ख्वाजा मुईनुद्दीन के वंशज होने का दावा करते थे। परन्तु जांच करने से प्रगट हुआ कि यह दावा सच्चा नहीं था इसलिये अकबर ने जो दरगाह शेख मुहम्मद बुखारी के सुपुर्द कर दी यह हिन्दुस्तान के सैयदों में

अपने ज्ञान और भक्ति के लिये प्रसिद्ध था। अकबर ने दरगाह के प्रबन्ध की, यात्रियों की देखरेख की और मस्जिदों और खानकाओं के निर्माण की भी व्यवस्था की। इसके उपरान्त वह दिल्ली के मजारों और दरगाहों की यात्रा के लिये रवाना हुआ और फरवरी-मार्च, 1570 में वह दिल्ली पहुंचा और सब मजारों पर गया। उसने कुछ दिन लोगों के साथ न्याय करने में बिताये।

***

प्रकरण 72

पन्द्रहवें इलाही वर्ष का आरम्भ

पन्द्रहवें इलाही वर्ष का प्रारम्भ 11 मार्च, 1570 को हुआ। इस वर्ष भी अकबर ने पुराने मजारों के निवासियों को दान दिया और हुमायूं की कब्र पर गया। फिर वह आगरा की ओर चला और जमना नदी को पार किया गया, मार्ग में चांदनी में उसने हिरणों का शिकार किया। इस प्रकार मनोविनोद करता हुआ 2 मई, 1570 को आगरा पहुंचा। इस वर्ष के आरम्भ में शुजात खां ने जो एक बड़ा और कृपापात्र अधिकारी था, अकबर को भोज दिया। अकबर ने उसका निमंत्रण स्वीकार किया। शुजात खां ने बड़े विनीत भाव से स्वामिभक्ति प्रगट की। अकबर ने उसके यहाँ बड़े आनन्द से एक दिन और एक रात व्यतीत किया।

***

प्रकरण 73

शाहजादा शाह मुराद का जन्म

7 जून, 1570 को फतेहपुर में शेख सलीम के निवास्थान पर अकबर के पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम शाह मुराद रक्खा। इसके उपलक्ष में बड़ी दावतें हुईं और बख्शीशें दी गईं। कवियों ने इस अवसर पर कविताएं लिखीं और पुरस्कार प्राप्त किये। यूनानी विधि और भारतीय ज्योतिप के अनुसार जन्मपत्रियां तैयार हुईं। बादशाह को बधाई देने के लिये और पूर्वीय प्रान्तों के प्रशासन के विषय में कुछ मामलों का निर्णय करने के लिये मुनीम खां खानखाना जौनपुर से दिल्ली आया और अकबर से मिला।

***

प्रकरण 74

अकबर की अजमेर यात्रा और अन्य शुभ घटनाएं

23 सितम्बर, 1570 को ख्वाजा साहिब का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिये अकबर अजमेर की ओर रवाना हुआ और मन्धाक ठहरा। वहाँ मुनीम खां खानखाना ने पूर्वी प्रान्तों का राजकाज निपटाने के हेतु जाने की ईजाजत ली। अकबर अजमेर की ओर प्रयाण करने लगा। मार्ग में मनोविनोद के लिये शिकार करता गया। अजमेर पहुंचने पर उसने कई दिन दरगाह में लगाये और वहाँ के सेवकों में बख्शीसें बांटी।

इस समय अजमेर के दुर्ग का जीर्णोद्वार और विस्तार करने का आदेश दिया गया। इसके अन्दर बड़े और छोटे सब प्रकार के लोगों के मकान थे। नगर के पूर्व की ओर दरबार हाल बनाये गये। तीन साल में दुर्ग की सब ईमारतें तैयार हो गईं और चौथे वर्ष बादशाह ने उनमें प्रवेश किया। दूसरे अमीरों और अधिकारियों ने बादशाह के आदेशानुसार अपने लिये उपयुक्त हवेलियां बनवा लीं और बाग लगवा लिये। फिर 3 नवम्बर, 1570 को अकबर नागौर की ओर प्रयाण करने लगा और वहाँ एक दिन ठहरा। वहाँ के सूबेदार खान किला ने एक बड़े भोज की व्यवस्था की। अकबर ने उसके यहाँ जाकर उसको सम्मानित किया।

उसी समय अकबर की दृष्टि एक तालाब पर पड़ी। गांव के लोगों ने उससे निवेदन किया कि गाँव की सुख-समृद्धि यहाँ के तीन तालाबों पर निर्भर है। एक तालाब कायदानी, दूसरा शम्स तालाब और तीसरा कूकर तालाब कहलाता है। कालान्तर में ये तीनों मिट्टी से भर गये हैं और जल के अभाव के कारण लोग अपने मकानों को छोड़ कर अन्यत्र चले गये हैं। तब अकबर ने जनहितार्थ कूकर तालाब को गहरा खोदने का आदेश दिया और उसका नाम शुक्र तालाब रखा। इसका असली नाम कूकर इसलिये दिया गया था कि नागौर का एक व्यापारी अपनी स्थिति बिगड़ जाने के कारण अपने कुत्ते को एक धनवान आदमी के सुपुर्द करके धनोपार्जन करने के लिये दूर देश चला गया था। फिर वह धन कमाकर वापस आया तो कुत्ते को इतनी प्रसन्नता हुई कि वह हर्ष के आवेष में मर गया। उस कुत्ते के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिये उस व्यापारी ने तालाब बनाकर उसका नाम कूकर तालाब रखा था।

जब अकबर इधर की ओर पहुंचा तो मालदेव का पुत्र चन्द्रसेन उसे सलाम करने के लिये आया। चन्द्रसेन भारतवर्ष का एक बहुत बड़ा जागीरदार था। उसका कृपापूर्वक स्वागत किया गया। बीकानेर का राय कल्याणमल अपने पुत्र रायसिंह के साथ आया और उनका भी स्वागत हुआ। अकबर के निकटवर्ती लोगों के द्वारा कल्याणमल ने निवेदन करवाया कि मेरे भाई कहान की पुत्री को बादशाह अपने अन्त:पुर में सम्मिलित

कर ले। अकबर ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और लड़की को अन्तःपुर में बुला लिया गया।

बाजबहादुर ने मालवा छोड़ा। तब से उसकी प्रतिष्ठा बहुत कम हो गई थी और वह दर-दर पर भटकता फिरता था। पहले तो वह बगलाना की जागीरदार बहारजी के पास गया। फिर वहाँ से चंगेज खां के पास पहुंचा। तदन्तर शेर खां फौलादी से जा मिला। वहाँ से वह निजामुल्मुल्क के पास दक्षिण में गया परन्तु सर्वत्र उसकी हानि ही हुई, अन्त में उसने राणा की शरण ली। जब अकबर ने उसकी विपत्ति का वृत्तान्त सुना तो एक सेवक को आदेश दिया कि उसको दरबार में ले आये और इस सेवक का नाम हसन खां खजांची था। हसन खां बाजबहादुर को दरबार में ले आया तो उस पर कृपा की गई।

किसी दरबारी ने अकबर से निवेदन किया कि जैसलमेर का शासक रावल हरराय शाही सेवक बनने के लिये तैयार है और चाहता है कि उसकी लड़की को शाही अन्तःपुर में सेवार्थ ले लिया जाये परन्तु कई रुकावटों के कारण रावल दरबार में नहीं आ सकता। वह चाहता है कि किसी एक दरबारी को उसके पास भेज कर स्वीकृति का समाचार दिया जाये और वही राजकुमारी को दरबार में ले जाये। अकबर ने यह प्रार्थना स्वीकार कर ली और राजा भगवन्तदास को इस काम के लिये रवाना किया। वह इस काम को पूरा करके उस समय वापस आया जब अकबर नागौर से वापस लौट रहा था। राजकुमारी को शाही हरम में दाखिल कर लिया गया। जब बादशाह उस देश की व्यवस्था कर चुका तो उसको शेख फरीद शकरगंज की दरगाह में यात्रा करने की इच्छा हुई। यह दरगाह पंजाब के पट्टन नगर में है। वह सादीन खां, बेग नूरी खां और अन्य अनेक सेवकों को वहीं छोड़ कर पट्टन गया।

***

प्रकरण 75

शेख फरीद शकरगंज का संक्षिप्त वृतान्त, जंगली गधों की शिकार

यह शेख उस युग का एक साधु था और इन्द्रीय परायणता का प्रबल विरोधी था। इसका पूर्वज फरुख शाह काबुली था जो शाह काबूल कहलाता था। चंगेज खां के समय में शेख फरीद का एक पूर्वज जिसका नाम काजी सईद था, लाहौर आकर कसूर के कस्बे में रहने लग गया। सुल्तान बलबन ने उसके आगमन को सम्मानप्रद समझ कर उसका बड़ा आदर किया। शेख फरीद मुलतान जाकर उन विद्याओं को पढ़ने में व्यस्त हो गया जो उस

समय भारत में प्रचलित थी। तब उसकी तरफ ख्वाजा कुतुबुद्दीन कूसी का ध्यान आकर्षित हुआ। कुतुबुद्दीन ख्वाजा मुईनुद्दीन का उत्तराधिकारी था। कुतुबुद्दीन ने फारीद को अच्छा उपदेश दिया और अच्छे मार्ग पर लगाया। फरीद ने सब ओर से अपना मन हटाकर ख्वाजा की सेवा में लगा दिया जिसके फलस्वरूप उसमें बड़ी-बड़ी करामातें करने की क्षमता आ गई।

मार्ग में अकबर ने सुना कि पास के वन में जंगली गधों का एक झुण्ड है तो उनका शिकार करने के लिये वह तीन या चार शिकारियों को साथ लेकर चल दिया। आगे जाकर वह पैदल चलने लगा। एक ही गोली में उसने एक गधे को मार डाला। बाकी गधे भाग गये। तब तपती हुई रेत में और बन्दूक हाथ में लिये हुए पैदल चलने लगा। मैदान को पार करके वह गधों के पास पहुंच गया और उनमें एक के बाद दूसरे को अपनी बन्दूक से मारने लगा। इस प्रकार उसने 13 गधे मारे। चलते-चलते वह प्यास से व्याकुल हो गया। आसपास पानी का कोई चिन्ह नहीं था। पानी वाले लोग कहीं इधर-उधर जंगल में मार्ग भूल गये थे। प्यास से अकबर इतना निर्बल हो गया कि वह बोल भी नहीं सकता था। तब एकाएक पानी वाले आ गये।

इस वर्ष एक घटना यह हुई कि भीमबर (कश्मीर में) के जमीनदार जलाल के दुष्टतावश काबूल खां को मार डाला। कबूल खां ने कश्मीर के कितने ही राजद्रोहियों को मार डाला था। जलाल ने उसके प्रति हितैषी का-सा बर्ताव किया। कबूल खां सीधा-साधा तुर्क था। उसने स्थिति की जांच नहीं की और जलाल को भलीभांति नहीं परखा तथा उसकी चिकनी-चुपड़ी बातों में आ गया। जलाल खां के कहने से उसने अपने सैनिकों को दुरस्त स्थानों पर भेज दिया और अपने पुत्र यादगार हुसेन को नौशहरा की सीमा की ओर रवाना कर दिया। दुरदर्शी लोगों ने उसको समझाया कि इस प्रकार अपने आदमियों को नहीं भेज देना चाहिये परन्तु उसने नहीं माना। जलाल कबूल खां के पुत्र को नौशहरा से पर्वत की घाटियों में ले गया। वहाँ शत्रु छिपे हुए थे जिन्होंने उसके बहुत-से आदमियों को मार डाला। यादगार हुसेन भी आहत हो गया और यह समझ लिया गया कि वह मर गया। परन्तु एक किसी जमीनदार ने कृपा करके उसकी रक्षा की। ये लोग तो इस प्रकार विपत्ति में फंस गये। उधर जलाल ने कबूल खां पर आक्रमण किया। कबूल खां के पास सेना कम थी और हिम्मत अधिक थी। 31 जनवरी, 1571 को वह बाहर निकल कर वीरतापूर्वक लड़ा परन्तु मारा गया। यह खबर सुनकर अकबर ने खानजहाँ को आदेश दिया कि इन दुष्ट जमीनदारों को नष्ट कर दिया जाये। इस आदेश के अनुसार चुने हुए लोगों का एक जत्था उस प्रदेश में पहुंचा और उन दुस्साहसी लोगों को नष्ट करने में उसने बड़ा प्रयत्न किया। उन्होंने राजद्रोह को मिटा दिया।

***

प्रकरण 76

शासन के सोलहवें वर्ष का आरम्भ

शासन का सोलहवां वर्ष 13 मार्च, 1571 को आरम्भ हुआ। उस समय अकबर का शिविर, पट्टन (पंजाब) में था। वह शेख फरीद के मजार पर गया और शक्ति प्राप्ति के लिये प्रार्थना की। जो लोग इंद्रिय परायणता के विरुद्ध युद्ध करते थे उनकी उन्नति हुई। अकबर कुछ दिन के लिये शारीरिक और आध्यात्मिक लाभार्थ वहां ठहरा। वहाँ के मछली पकड़ने के ढंग से बड़ा प्रभावित हुआ। लोग पानी में डुबकी लगाकर अपने मुंह और हाथों से मछलियां पकड़ते थे और फिर लोहे-चिमटों से काटकर उनको पानी के बाहर ले आते थे। इस वर्ष एक घटना यह हुई कि नाहीद बेगम की प्रेरणा से मीर खलीफा के पुत्र अलीखान ने ठट्टा जाने और उसको विजय करने की अनुमति प्राप्त की। इसका संक्षिप्त वृत्तान्त निम्नलिखित है :—

नाहीद बेगम का विवाह मुहिब्ब अली खां से हुआ था। उसने अपनी माता हाजी बेगम से मिलने जाने की इजाजत ली, उसके आने से पहले ही मिर्जा ईसा की मृत्यु हो गई थी और उसके स्थान पर मुहम्मद बाकी ठट्टा का शासक बन गया था। बुद्धि की कमी के कारण उसने बेगम का आगमन लाभकारी नहीं समझा बल्कि हाजी बेगम के साथ दुर्व्यवहार किया। इससे बेगम अप्रसन्न हुई और खान बाबा तथा मिस्कीन तरखान आदि दुष्ट लोगों ने उससे मिलकर मुहम्मद बाकी को पकड़ लेने की कोशिश की। बाकी को इसका पता लग गया तो उसने इस दल को निर्मूल करने का प्रयत्न किया। खान बाबा और हाजी बेगम उसके हाथ में पड़ गये तो उसने खान बाबा का वध करवा दिया और हाजी बेगम को कारागार में रख दिया और वहीं उसकी मृत्यु हुई। नाहीद बेगम अपने साहस और कौशल के द्वारा बचकर बकर चली गई। बकर के सुल्तान महमूद ने उससे मिलकर काम करने का प्रस्ताव किया और कहा यदि मुहिब्ब अली खां और उसका पुत्र मुजाहिद खां थोड़ी-सी सेना लेकर आयेंगे तो वह उनसे मिल जायेगा और शाही सेवक ठट्टा को जीत लेंगे। बेगम ने उसके शब्दों पर विश्वास करके और दरबार में आकर निवेदन किया कि उपरोक्त व्यक्तियों को ठट्टा जाने की इजाजत दे दी जाये। जब उसने बारबार आग्रह किया तो उसे ठट्टा जाने की इजाजत मिल गई।

नाहीद बेगम कासिम खां कोका की पुत्री थी। कोका बादशाह बाबर का स्वामिभक्त सेवक था। ऐसा प्रगट होता है कि उबेदुल्ला खां के साथ लड़ाई हुई, उसमें विजय प्राप्त नहीं हुई और बाबर शत्रु के हाथ में पड़ गया। तब स्वामिभक्त सेवक ने आकर कहा, बादशाह तो मैं हूं, तुमने मेरे इस सेवक को क्यों पकड़ लिया है। इस स्वामिभक्ति की उक्ति से बादशाह के प्राण बच गये और शत्रु ने कासिम खां कोका को मार डाला तब बादशाह ने उसके कुटुम्ब को अपने संरक्षण में ले लिया। हाजी बेगम मुकीम मिर्जा की पुत्री थी। मुकीम मीर जुल्लून का पुत्र था। हाजी बेगम ने अपना दूसरा विवाह मिर्जा हसन से किया

था और फिर तीसरा विवाह मिर्जा ईसा से किया। उसकी पुत्री नाहीद बेगम का लालन-पालन शाहजादी की भांति हुआ था और उसका विवाह मुहिब्ब अली खां से किया गया था जो खलीफा का पुत्र था। इसने स्वामिभक्तिपूर्वक सेवा की थी।

अन्त में जब यह लोग बकर के पास पहुंचे तो सुल्तान महमूद ने कहलाया ''मैंने जल्दी में वचन दे दिया था मैं इस अभियान में आपका साथ नहीं दे सकता यदि आप ठट्टा जाने पर तुले हुए हैं तो जैसेलमेर के मार्ग से जायें मुहिब्ब अली के सामने कठिनाई आ गई। न तो वह वापस मुड़ सकता था न उसको आगे बढ़ने का साहस होता था। परन्तु मुहिब्ब अली को अकबर जैसे महासम्राट् की सहायता का भरोसा था इसलिये उसने बकर पर आक्रमण करके सुल्तान महमूद से लड़ाई लड़ने का निश्चय किया। दोनों सेनाओं का मुकाबला मतीला के पास हुआ (सरकार मुल्तान में) मुहिब्ब अली खां और मुजाहिद अली के साथ 200 से अधिक सैनिक नहीं थे। सुल्तान महमूद के पास 2000 थे। परन्तु जोर की लड़ाई के बाद छोटी सेना विजयी हुई। दूसरी सेना भाग कर एक दुर्ग में बन्द हो गई। तब विजयी लोगों ने दुर्ग को घेर लिया। दुर्ग के अन्दर के लोग प्राणभिक्षा मांग कर बाहर निकल गये। जब दुर्ग जीत लिया और विजयी लोगों को आत्मविश्वास हो गया तो लोगों ने बकर की विजय के लिए तैयारी की। बादशाह के सौभाग्य से शत्रुपक्ष में फूट हो गई। मुबारक खां जो सुल्तान महमूद का खासा खेल था मुहिब्ब अली से आ मिला। खासा खेल के साथ 1500 आदमी थे। इसका प्रत्यक्ष कारण यह था कि उस प्रदेश के दुष्ट लोगों ने मुबारिज खां के पुत्र बेगम ओधली पर यह संदेह उत्पन्न करवा दिया कि सुल्तान महमूद की एक स्त्री के साथ उसकी घनिष्ठता है। सुल्तान महमूद ने इसकी पूछताछ नहीं की और उसको कुटुम्ब निर्मूल करने का प्रयास करने लगा। मुबारक खां भी ईमानदार नहीं था, वह भी मुहिब्ब अली को छोड़ कर भाग जाने का अवसर देख रहा था। मुहिब्ब अली खां ने उसको मरवा दिया और उसके आदमियों को रिश्वत देकर अपने साथ कर लिया तथा उन्हें बकर के घेरे में लगा दिया। उसका भाग्य प्रतिदिन बढ़ता जाता, इसलिये उसको दुर्ग पर विजय प्राप्त हो गई इसका वर्णन यथास्थान किया जायेगा।''

शाहजादा शाहमुराद का स्वास्थ्य कुछ अच्छा नहीं था इसलिये बादशाह पाकपट्टन में कुछ दिन ठहरा। जब शाहजादा स्वस्थ हो गया तो 16 अप्रैल, 1571 को वापसी की नौबतें बजीं। प्रतिदिन शिकार होता था। एक दिन शिकारियों ने सूचना दी कि पास ही कई चीतें हैं तो बादशाह उनकी तलाश में चला। उस दिन 6 चीतें पकड़े गये। उनमें एक का नाम मदन कली रखा गया, उसको शाही चीतों का मुखिया बनाया गया। जब शाही ध्वज दीपालपुर पहुंचे तो खान अजीम मिर्जा कोका ने जिसकी उस जिले में जागीर थी, निवेदन किया कि बादशाह उसके घर पर आये। अकबर उसकी प्रार्थना स्वीकार करके उसके मकान पर गया। मिर्जा कोका ने बहुत बड़ा भोज तैयार करवाया और भेटें प्रस्तुत कीं। वहाँ से चल कर 17 मई, 1571 को बादशाह लाहौर पहुंचा। वहाँ वह हुसेन कुली खां के मकान पर गया और उसको सम्मानित किया। वहां की व्यवस्था करने के बाद बादशाह ने हिसार के मार्ग से जाने का निश्चय किया। वह मुईनुद्दीन चिश्ती की दरगाह की यात्रा भी करना चाहता था इसलिये वह उधर की ओर प्रयाण करने लगा।

एक घटना यह घटी कि बादशाह ने लश्कर खां को उचित दंड दिया, इसका वृत्तान्त निम्नलिखित है :—

सांसारिक मद के कारण लश्कर खां ने समता का मार्ग त्याग दिया और अनेक अनुचित कार्य किये। मूर्खतावश उसने एक दिन दरबार में ही मद्यपान किया और उत्पात मचाया। जब बादशाह को इसकी खबर लगी तो लश्कर खां को घोड़े की पूछ से बांध कर घुमाया गया और फिर कारागार में रख दिया गया। बादशाह ने लश्कर खां का कार्य शाहबाज खां के सुपुर्द कर दिया। उस समय वर्षा ऋतु थी परन्तु बादशाह प्रतिदिन अपने कर्तव्य का पालन करने के लिये प्रयाण करता था। मार्ग में शिकार करता हुआ वह 21 जुलाई, 1571 को अजमेर पहुंच गया। ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की दरगाह में गया और शक्ति के लिये याचना की। दरगाह से सम्बन्धित लोगों की अभिलाषायें पूर्ण करके उसने राजधानी की ओर कूच किया और बृहस्पतिवार 17 रबी-उल-अव्वल को वह फतेहपुर पहुंच गया, वहाँ उसने शेख सलीम के मकान में निवास किया।

अकबर बादशाह के शाहजादे सीकरी में उत्पन्न हुए थे और शेख सलीम वहाँ रहता था इसलिए बादशाह को इच्छा हुई कि इस स्थान का वैभव बढ़ाया जाय। अत: उसने आदेश दिया कि शाही उपयोग के लिए वहाँ भव्य भवनों का निर्माण होना चाहिए। छोटे और बड़े राज्याधिकारियों ने और प्रजा के लोगों ने अपने लिए सुन्दर मकान बनवा लिये। इस नगर के चारों ओर पत्थर की प्राचीर खड़ी कर दी गई। थोड़े-से समय में ही एक बड़े नगर का निम्रण हो गया और उसमें मनोहर महल बन गये। खान काह स्कूल और स्नानागार जैसी लोकोपकारी संस्थाओं का निर्माण हो गया और एक बड़ा बाजार बना दिया गया, नगर के निकट सुन्दर बाग लगा दिये गये। यह नगर ऐसा बन गया कि संसार इससे ईर्ष्या करने लगा। बादशाह ने इसका नाम फतहाबाद रखा था परन्तु लोगों में फतेहपुर प्रसिद्ध हुआ।

मुजफ्फर खां ने आगरे में अपने लिए मकान बनवाया था। उसकी यह इच्छा थी कि बादशाह वहां आये और आतिथ्य स्वीकार करे। जब प्रार्थना की गई तो बादशाह ने स्वीकार कर ली और वह फतेहपुर से राजधानी आगरा को गया। मुजफ्फर खां ने बड़ा आनन्द मनाया, फिर बादशाह वहां से वापस फतेहपुर आ गया।

***

प्रकरण 77

शासन के सत्रहवें वर्ष का आरम्भ

11 मार्च, 1572 को शासन के सत्रहवें वर्ष का आरम्भ हुआ।

सिकन्दर खां का दरबार में आना

यह पहले लिखा जा चुका है कि सिकन्दर खां उज बेग अपनी सहज और कुत्सित प्रकृति के कारण दुष्ट अली कुली खां के साथ होकर राजद्रोह करने लग गया था। जब अली कुली की मृत्यु हो गई तो विद्रोह का अन्त हो गया तो इसकन्दर खां ने अपनी दुष्टता और दुर्भाग्य के कारण सुलेमान अफगान का साथ देना शुरू कर दिया और कुछ समय तक उसके साथ रहा। फिर भयभीत होकर उसने मुनीम खां खानखाना को प्रार्थना-पत्र भेजा जिसमें लिखा कि जो कुछ हुआ है वह मेरे अज्ञान का फल है, अब मैं त्रस्त हूं। कपटी अफगानों ने सुलेमान उजबेग को मार डाला है और अब मुझे मारने का विचार कर रहे हैं। यदि आप शाही दरबार में मेरे लिये बीच-बचाव करेंगे तो मेरे प्राण बच जायेंगे और मेरा अगला जीवन भी सुधर जायेगा। तब मुनीम खां ने यह पत्र शाही दरबार में भेज दिया और साथ ही अपनी ओर से भी प्रार्थना की। बादशाह ने अनुग्रहपूर्ण उत्तर दिया और उसको आशा दिलाई। खानखाना को आशा नहीं थी कि सिकन्दर खां को क्षमा दे दी जायेगी। अतः जब उसको बादशाह का पत्र मिला तो उसने भूमि पर लेट कर इस कृपा के लिये धन्यवाद दिया और इसकन्दर खां को बुलाया। इस सुसमाचार को मिलते ही इसकन्दर खां सुलेमान उजबेग के पुत्र यूसुफ खां को अपने साथ लेकर तथा अफगानों को छोड़कर आ गया। खानखाना उससे कृपापूर्वक मिला और उन दोनों को अपने साथ लेकर दरबार में गया। मुनीम खां के कहने-सुनने पर उन दोनों पश्चात्तापकारियों को क्षमा दे दी गई और उन पर अनुग्रह किया गया। थोड़े समय में खानखाना को शाही अनुग्रह से लाद दिया गया और पूर्वी प्रान्तों में भेज दिया गया। सिकन्दर खां को सरकार लखनऊ की जागीर देकर विदा किया गया।

अब्दुल्ला खां उजबेग का राजदूत आया

तुरान के शासक अब्दुल्ला खां उजबेग ने अकबर की कीर्ति और महानता से प्रेरित होकर हाजी अल्तमश को अपना राजदूत बनाकर भेजा। जो अपने साथ आदर और स्नेहपूर्ण पत्र लाया और अपने देश की दुर्लभ और विचित्र वस्तुयें भेंटस्वरूप लाया। पत्र में लिखा था कि "दोनों शासकों में प्राचीन सम्बन्ध है। अब यह मैत्री और नई होनी चाहिये जिससे मैं तुरान के अन्य शासकों के विरुद्ध जोरदार कार्यवाहियों कर सकूं। इस मित्रता से मैं शान्ति का अनुभव करूंगा और विश्वविजयी सेनाओं के प्रहारों का मुझ को कोई भय नहीं रहेगा। अपने कार्य की सफलता के लिये उसने मुनीम खां खानखाना और खान आजिम मिर्जा कोका को भेटें भेजीं और उनसे निवेदन किया कि वे मित्रता की नींव डालें। अकबर बादशाह राजदूत से कृपापूर्वक मिला और फिर उसको बिदा कर दिया। उसके साथ भारत की दुर्लभ वस्तुयें भेंट स्वरूप भेजी।

इन दिनों अकबर को चौपड़ के खेल का बड़ा शौक हो गया था, इसके लिये उसने विशेष नियम बनाये थे। साथ ही बड़ी दावतें और मनोविनोद हुआ करते थे। एक दिन जफर खां कई बार चौपड़ के खेल में हार गया तो अपनी शुद्ध योग्यता के मद में उसने भद्दा और

पाशविक व्यवहार किया। तब बादशाह का उस पर कोई भरोसा नहीं रहा और उसको दूर देश में भेज दिया जिससे उसके मस्तिष्क का सुधार हो सके।

***

प्रकरण 78

गुजरात विजय के लिये शाही सेना का प्रयाण

जब सुल्तान महमूद की मृत्यु हो गई तो सैयद मुबारक इतिमाद खां और इमादुल मुल्क अपने-अपने हितों की वृद्धि में लग गये और उन्होंने सुल्तान अहमद के एक पुत्र को गद्दी पर बैठा दिया। वह बालक ही था। जब वह समझदार हुआ तो उसको समाप्त करके उन्होंने एक अकुलीन और निकम्मे लड़के को जिसका नाम नन्नू था प्रस्तुत किया और यह प्रकट किया कि वह सुल्तान महमूद का पुत्र है। उसका नाम मुजफ्फर शाह रखा और फिर वे अपना-अपना स्वार्थ सिद्ध करने लगे। अहमदाबाद और खम्बात इतिमाद खां के अधिकार में आ गये। सरकार पाटन पर मूसां खां और शेख फूलादी ने और सूरत, भडौंच, बड़ौदा और चांपानेर पर इमादुलमुल्क के पुत्र चंगेज खां ने अधिकार कर लिया। दन्दू का और दुल्का आदि सैयद मुबारक के पौत्र सैयद हामीद के हाथ में आये। जूनागढ़ और सोरठ के जिले अमीन खां गोरी को मिले। इतमाद खां ने चालाकी से उस अकुलीन लड़के को अपने कब्जे में रखा और इस प्रकार अपने दिन व्यतीत करने लगा और सारे प्रान्त में अत्याचार और अनाचार फैल गया। इसी बीच में जब चंगेज खां की मृत्यु हो गई तो शेर खां फूलादी के कहने से नन्नू अहमदाबाद से भाग कर पाटन आ गया। तब शेर खा फूलादी और कई बदमाशों ने एक सेना खड़ी करके अहमदाबाद को जीतने की तैयारी की। इतमाद खां अहमदाबाद के दुर्ग में छिप गया और मिर्जाओं से सहायता मांगी। तब बड़ा उत्पात खड़ा हो गया। बादशाह ने सोचा कि गुजरात का मामला महत्वपूर्ण है इसलिये वह तैयारी करने लगा। मिर्जा यूसुफ खां फतू, राजा बीरबल के साथ एक बड़ी सेना पंजाब की ओर हुसेन कुली खां को मदद देने के लिये रवाना की गई। अकबर को यह आशंका थी कि अदूरदर्शी लोगों के बहकाने से कहीं हकीम मिर्जा विद्रोह करने लगे। हुसेन कुली खां के नाम आदेश जारी हुआ कि नगर कोट को साम्राज्य से मिला कर राजा बीरबल को दे दिया जाये क्योंकि वहाँ के जमीदार राजा बुद्ध चन्द को अपनी कुसेवा के कारण दण्ड दिया जा चुका है। यदि आवश्यक हो तो एक बड़ी सेना दुर्ग को घेर कर जीत ले। इसी प्रकार समझदार लोग प्रत्येक दिशा में भेजे गये और 4 जुलाई, 1572 को गुजरात की विजय के लिये बादशाह स्वयं फतेहपुर से रवाना होकर डाबर में ठहरा।

बाबा खान काकशाल को दण्ड

शाहबाज खां अमीर तुजक था। शाही सवारी की व्यवस्था करना उसके सुपर्द था।

बाबा खान काकशाल अज्ञानी तुर्क था। उसने शाहबाज खां के प्रति धृष्टता और असमझता का व्यवहार किया। जब अकबर को इसकी सूचना दी गई तो उसने आदेश दिया कि काकशाल को कठोर दण्ड दिया जाये जिससे स्वयं उसको और दूसरों को शिक्षा मिले।

चीता-ए-खास

मार्ग में शाही शिविर सांगानेर में लगा हुआ था वहाँ चीतों द्वारा शिकार हुई इसके लिये कई दल बनाये गये और प्रत्येक दल के सुपुर्द चीते किये गये। अकबर स्वयं कुछ सेवकों के साथ शिकार करने गया। एकाएक दोनों के सामने एक नाला आया जो 25 गज चौड़ा था। हिरण डेढ़ मील की ऊंचाई तक कूद कर नाले के दूसरी तरफ पहुंच गया। चीते ने भी ऐसा ही किया और नाला पार करके हिरण को पकड़ लिया। इस आश्चर्यजनक घटना को देख कर दर्शक चकित हो गये। उनमें बड़ा हर्ष और आश्चर्य था। अकबर ने चीता का पद बढ़ा कर उसको चीता-ए-खास नियुक्त किया और आदेश दिया कि सम्मानार्थ उसके सामने ढोल बजाया जाये।

पैदल यात्रा

26 जुलाई, 1572 को प्रथानुसार अकबर एक मंजिल पैदल चल कर अजमेर पहुंचा और मुईनुद्दीन चिश्ती की मजार की परिक्रमा करने के लिये चला। मार्ग में खोजारियो ने सूचना दी कि एक बलवान शेर यात्रियों की घात में बैठा रहता है, मौका देखकर उनको मार डालता है। अकबर ने समझा कि ऐसे घातक पशुओं का वध करना बादशाह का कर्तव्य है। इसलिये वह शिकार के लिये चला और शेर मार डाला।

कब्र की परिक्रमा

जब अकबर ख्वाजा मुईनुद्दीन की कब्र पर पहुंचा तो लोगों को बड़ा हर्ष हुआ। उसने परिक्रमा की और ख्वाजा से प्रार्थना की कि बादशाह ने लोगों को बड़ा दान दिया। अगले दिन उसने अजमेर के दुर्ग को देखा जो एक पहाड़ी पर स्थित है। उस पर उसने सईद हुसेन खण्डसुआर के मजार के दर्शन किये। लोग कहते हैं कि यह सईद जैनुल आबदीन का वंशज था परन्तु खोज करने पर मालूम हुआ कि यह शिहाबुद्दीन गोरी का सेवक था और जब गोरी भारत-विजय के बाद स्वदेश को लौटा तो उसने सईद हुसेन खण्डसुआर को अजमेर में शिकदार नियुक्त किया था और वहीं इस सईद की मृत्यु हुई थी। कालान्तर में लोग उसको संत मानने लगे और यात्री लोग उसकी मजार की परिक्रमा करने आने लगे। बादशाह ने लोकमत स्वीकार करना ठीक समझ कर सईद से सहायतार्थ प्रार्थना की।

अग्र प्रयाण

बारह अगस्त, 1572 को खान किला को गुजरात की ओर आगे रवाना किया गया। उसके साथ अशरफ खां, शाहकुली खां, मेहरम शाहबुदाग खां, सईद महमृद खां, कुलीच खां, सादिक खां, शाह फखरुद्दीन, हैदर महम्मद खां, अखतर बेगी, सईद अहमद खां,

कत्लक कदम खां, मुहम्मद कुली खां तुकवाई, खर्रम खां, बेग नूरी खा, बेग मुहम्मद खां, मुहम्मद कुली खां जो खान किला का दामाद था। मिहर अली खां सिल्दूज, सईद अब्दुल्ला खां, मीरजादा अली खां और बहादुर खां भेजे गये। एक सितम्बर, 1572 को बादशाह ने भी अजमेर से प्रयाण किया। वह मार्ग में शिकार करना चाहता था और यह भी देखना चाहता था कि जो सेनानायक आगे भेजे गये हैं वे कैसा काम करते हैं। वह यह भी चाहता था कि यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र गुजरात प्रान्त शाही सेवकों के हाथ में आ जाये और इस प्रकार वहाँ के उत्पीड़ित लोगों के दुख दूर हो जायें। दो मंजिल के बाद शाही सेना नागौर से दो मंजिल दूर रह गई। वहाँ बादशाह को पुत्र जन्म का समाचार और विजय-प्राप्ति की खबर मिली।

***

प्रकरण 79

शाहजादा दनियाल का जन्म

जब अकबर अजमेर की ओर जा रहा था तो एक बेगम के प्रसव होने वाला था और वह यात्रा के कष्ट को सहन नहीं कर सकी थी। तलाश करने पर एक मकान मिला जो मुईनुद्दीन की दरगाह के किसी सेवक का था। उसको खाली करवा कर बेगम को वहाँ रखा गया। जब बादशाह का शिविर फलांदी में था (मारवाड़ सरकार नागौर) तो अजमेर से ऊंट सवारों ने आकर सूचना दी कि 9 सितम्बर, 1572 को शाहजादे का जन्म हुआ है। यह समाचार सुनकर अकबर ने भूमि पर सिर टिका कर भगवान से प्रार्थना की और बड़ी दावतें दीं। उसने समझा कि शाहजादे का जन्म गुजरात विजय की पूर्व सूचना है। लोगों को बड़े इनाम और बख्शीशें मिलीं। नये शाहजादे का नाम सुल्तान दनियाल रखा गया। कवियों ने कविताओं द्वारा बधाइयां दीं, एक आदेश जारी किया गया कि जब यह बच्चा एक मास का हो जाय तो उसको अजमेर भेज दिया जाये और उसका लालन-पालन राजा बिहारीमल की रानी के सुपुर्द किया जाये। 17 सितम्बर, 1572 को बादशाह का शिविर नागौर में लगा।

लेखक का कथन

मेरी शिक्षा अरबी से शुरू हुई थी। फारसी भाषा का मुझे इतना ज्ञान नहीं था जितना अरबी का। मेरे पिता का मुझ पर बड़ा स्नेह था, वह चाहता था कि मैं विज्ञान (उलूममुक्तसबी) का अध्ययन करूं। परन्तु मैं 5 वर्ष का था तभी से मेरा ध्यान सांसारिक विषयों से हटने लग गया था, मेरे पिता को एकान्त पसन्द था, वह सांसारिक कोलाहल से दूर रहता था और उसका जीवन संतोषमय था। मेरे दूसरे भाइयों की उपेक्षा वह मुझ से अधिक प्रेम करता था और मुझे उन्होंने सब प्रकार के कुप्रभाव से बचाया था। कुछ ज्ञान

प्राप्त करने पर मैंने देखा कि इतिहास का क्षेत्र खाली पड़ा है। इतिहास लिखने वाले चाटूकार और बकवासी हैं और झूठ और सच को मिश्रित करके संसार के सामने रखते हैं। पहले तो मैं संसार को उपदेश देने वाला कोई ग्रंथ लिखना चाहता था परन्तु मैं फिर विचार करने लगा कि यदि मुझे अवकाश मिलेगा तो मैं ऐसा इतिहास लिखूंगा जो मनुष्यों के स्वभाव के उपयुक्त होगा और सत्य के रहस्यों का संक्षेप में वर्णन करूंगा। मुझ से कहा गया कि तुम्हारे भव्य ग्रंथ को कौन पढ़ेगा और तुम्हारे सत्य का कौन आदर करेगा। तुम लोकभाषा क्यों नहीं बोलते हो। तो मैंने उत्तर दिया कि मुझे जनसमूह से क्या मतलब है, मैं तो संसार के अद्वितीय व्यक्ति के लिये भोजन तैयार कर रहा हूं। मैंने इतिहास लिखने का निश्चय कर लिया परन्तु समय-समय पर कठिनाइयां आईं और परेशानियां हुईं जिससे मेरा चित्त क्षुब्ध हो जाता था। प्रत्यक्ष में तो मैं इतिहास लिखने में व्यस्त था और अन्य किसी बात की चिन्ता नहीं करता था। परन्तु कटुताएं और कठिनताएं मुझे क्षुब्ध कर देती थीं। इसलिये मैं उस अनुपम दाता से मन ही मन प्रार्थना किया करता था कि मेरे अंधेरा हृदय को प्रकाशित करे। अन्त में मैंने ईश्वर की प्रेरणा से इतिहास लिख कर शहंशाह की सभा में पेश किया। ईश्वर को धन्यवाद है कि मैंने द्वितीय भाग भलीभांति लिख दिया है। लिखते समय भाषा मेरी थी। प्रेरणा बादशाह की थी यदि ईश्वर ने मुझे समय दिया और भाग्य ने उत्साह प्रदान किया तो मैं इस महान ग्रंथ को पूर्ण कर दूंगा।

***

इस ग्रन्थ के अनुवादक और संक्षेपक डॉ. मथुरा लाल शर्मा हर्बट कालेज कोटा, महाराजा कालेज, जयपुर के प्रिंसिपल, इतिहास विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर के अध्यक्ष, इंडियन हिस्टोरिकल रिकार्डस कमिशन के मेम्बर, निर्देशक राजस्थान स्टेट आरकाइज, इंडियन अकादमी के सदस्य आदि पदों पर काम कर चुके थे और कुछ समय के लिए राजस्थान विश्वविद्यालय के उप-कुलपति भी रहे थे। इसके बाद आप राजस्थान इन्स्टीटयूट ऑफ हिस्टोरिकल रिसर्च के सम्मानित अध्यक्ष रहे और लगभग 25 विद्यार्थी आपके पास काम करके राजस्थान विश्वविद्यालय से पी.-एच.डी. की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं। आपने इतिहास विषय पर लगभग 20 पुस्तकें लिखी हैं और लगभग इतनी ही पुस्तकों का अंग्रेज़ी और फारसी से हिन्दी में अनुवाद किया है। लगभग गत ग्यारह वर्ष तक आपने जर्नल ऑफ द राजस्थान इंस्टीटयूट का सम्पादन किया और लगभग एक सौ शोध-पत्र विभिन्न मासिक पत्र-पत्रिकाओं आदि में प्रकाशित हो चुके थे अब आप स्वर्ग सिधार गये।

(दो भागों का मूल्य)

₹ 950/-

RADHA PUBLICATIONS

4231/1, Ansari Road, Daryaganj
New Delhi-110002
Phones : 23247003, 23254306
website. radhapublications.com